"This book has been published under the University Grants Commission's Scheme of Publication of learned/research work including doctoral thesis"

प्रकाशक : पंचशील प्रकाशन
फिल्म कालोनी, जयपुर–302003

मूल्य : पचास रुपया

संस्करण प्रथम, 1979

मुद्रक : जयपुर मान प्रिन्टर्स
चौड़ा रास्ता, जयपुर–302003

KUSHAL LABH KE KATHSAHITYA KA LOKTATWIK ADHYAN
By Dr. Rukmani Vaish Price Rs. 50 00

आमुख

मध्ययुगीन राजस्थानी कवियों में वाचक कुशललाभ का अपना विशेष स्थान है। यद्यपि कुशललाभ के कृतित्व के साहित्यिक पक्ष पर विद्वानों ने पर्याप्त विचार-विमर्श किया है तथापि उनके आख्यान काव्यों में गर्भित प्रभूत लोकतात्विक सामग्री के अध्ययन विवेचन की ओर अद्यावधि कोई प्रयास नही किया गया है। प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध उसी दिशा में एक विनम्र प्रयास है। चूंकि ये पद्याख्यान स्वरूपत कथात्मक अथवा आख्यान परक हैं। अत इनके इस स्वरूप का बोध करने हेतु हमने इसे व्यापक अर्थ मे 'कथा साहित्य' शीर्षक से अभिहित किया है। अत उक्त प्रयोग को पद्याख्यानो के पर्याय रूप मे ही ग्रहण किया जाये।

कुशललाभ के काव्याख्यान राजस्थान के सामाजिक एव सांस्कृतिक जीवन से ओतप्रोत हैं। ये कथा काव्य राजस्थान के बड़े भाग के जन-जीवन का प्रतिनिधित्व करते हैं। इस विषय पर कार्य करने की प्रेरणा सर्वप्रथम मुझे लोकसाहित्य के ख्यातिलब्ध विद्वान् डा. सत्येन्द्र से मिली।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध आठ अध्यायो मे विभक्त किया गया है। इस प्रबन्ध के प्रथम अध्याय मे कवि के युग की परिस्थितियो पर अवलोकन किया गया है। द्वितीय अध्याय मे कवि का-जीवन परिचय, साहित्य निर्माण की रुचि, वैराग्य की ओर झुकाव तथा स्वर्गवास आदि पर विचार किया गया है।

तृतीय अध्याय मे-कवि के सम्पूर्ण कृतित्व का परिचय देते हुये उनका विषयगत वर्गीकरण किया गया है। चतुर्थ अध्याय मे पात्रो का वर्गीकरण किया गया है तथा कुशललाभ के आख्यान काव्यों मे आये हुये पात्रो का चरित्रांकन किया गया है।

पचम अध्याय साहित्यिक मूल्यांकन का है। यह दो भागो मे विभाजित है भाव पक्ष और कला-पक्ष। भावपक्ष के अन्तर्गत शृंगार के दोनो पक्ष सयोग एव वियोग शृंगार के अतिरिक्त कथा मे प्रयुक्त अन्य रसो पर भी विचार किया गया है। कला पक्ष के अन्तर्गत भाषा, शैली, लोकोक्तियाँ एव मुहावरे, अलकार, छद प्रयोग, प्रकृति चित्रण एव सवाद सौष्ठव आदि निरूपित हुये हैं।

षष्ठ अध्याय मे कुशललाभ के पद्याख्यानो के मूल-स्रोतो पर विचार किया गया है । परम्परा से प्रचलित स्रोत को कुशललाभ ने नवीन ढग से किस प्रकार सजोया है इसका यहाँ विवरण विश्लेषण है ।

सप्तम अध्याय समाज एव सस्कृति का है । इसमे पहले समाज के अन्तर्गत वर्ण व्यवस्था, पारिवारिक जीवन, सस्कार, समाज मे नारी का स्थान, शिक्षा, पर्दा-प्रथा, वेश्यावृत्ति, रीति-रिवाज एव मान्यताएँ, रहन-सहन, आभूषण एव शृगार, खान-पान, मनोरजन, सार्वजनिक उत्सव, पर्व एव त्यौहार आदि का विवेचन करते हुये उस समय के आर्थिक एव राजनैतिक जीवन का अध्ययन किया गया है । सस्कृति के अन्तर्गत ललित कलायें, सगीत एव नृत्य कला वास्तुकला काव्यकला पर विचार करते हुये धर्म एव दर्शन के स्वरूप निरूपित हुये हैं ।

अष्ठम अध्याय मे कवि के पद्याख्यानो मे प्राप्त कथानक रूढियो का उल्लेख करते हुये यह बताया गया है कि कवि इनमे नवीनता का समावेश कितने मौलिक और अनूठे ढग से करने मे सफल हुआ है । साथ ही डा सरीन व स्टिथ थामसन की अभिप्राय प्रणाली के आधार पर कथानक रूढ़ियो का वैज्ञानिक अध्ययन भी प्रस्तुत किया गया है ।

अन्त मे परिशिष्ट दिया गया है जिसमे उन पुस्तको एव पत्र-पत्रिकाओ की सूची दी गई है जो अध्ययन मे सहायक हुई हैं । प्रकाशित पुस्तको के अतिरिक्त हस्त-लिखित ग्रथो के नाम एव प्राप्ति स्थान भी परिशिष्ट मे दिये गये है ।

शोध-प्रबन्ध को पूर्ण करने मे मुझे जिन विद्वानो का सहयोग प्राप्त हुआ उनमे सर्वप्रथम स्थान मेरे शोध निर्देशक श्री सुरेन्द्र उपाध्याय का है । मैं उनकी सर्वाधिक आभारी हूँ ।

शोध-प्रबन्ध के विषय के चुनाव के लिये मुझे जिन विद्वानो ने अपने अमूल्य परामर्श दिये उनमे मैं अपने हिन्दी विभाग के भूतपूर्व अध्यक्ष एव हिन्दी साहित्य मे लोक साहित्य के महान् पारखी विद्वान् आदरणीय डा. सत्येन्द्र की आभारी हूँ । आपने अपने अमूल्य क्षणो मे भी बड़ी सहजता एव सरलता से विषय के बारे मे बताते हुये कहा था कि ये विषय अपने रूप मे व्यापक एव महत्वपूर्ण होगा । विषय के चुनाव के अतिरिक्त मुझे आपने समय-समय पर अपने अमूल्य सुझाव देकर मेरा मार्ग दर्शन किया । मैं उनके इस अपार वात्सल्य एव दिशा निर्देशन की आभारी हूँ ।

श्री अगरचन्द जी नाहटा, श्री रामवल्लभ सोमाणी डॉ. कस्तूरचन्द कासलीवाल, श्री गजसिंह जी राठोर एव श्री आचार्य विनयचन्द्र ज्ञान भडार के सभी महानुभाव तथा विशेष रूप से जालौर के मुनि श्री कल्याण विजय जी एव मुक्तिविजय जी जिन्होंने विश्वास के साथ अनेक हस्तलिखित ग्रथ मुझे भेजकर अपनी साधु प्रवृति का परिचय दिया, इन सभी विद्वानो की भी मैं आभारी हूँ ।

राजस्थानी के महान् विद्वान् आदरणीय डॉ शंभुसिंह मनोहर की सहजता एव सरलता को क्या सहज ही भुलाया जा सकता है . उनकी मैं हृदय से आभारी हूँ ।

डा. व्रजमोहन जावलियाँ जिन्होने उदयपुर रहते हुये भी सदैव अपने अमूल्य सुझावो द्वारा मुझे अपार सहायता तो दी ही साथ ही अनेक हस्तलिखित ग्रथो की प्रतिलिपियाँ करवा के मुझे जो सहज स्नेह दिया है उसे मैं कभी भुला नही सकती । कार्य मे विलम्ब होने पर अनेक बार उन्होने गति से कार्य करने के लिये मेरा उत्साह बढाया जिससे मुझे शोध कार्य पूर्ण करने मे प्रेरणा और गति मिली । इन सबके लिये मैं डा जावलियाँ की हृदय से कृतज्ञ हूँ । साथ ही डॉ. रामप्रकाश कुलश्रेष्ठ की आभारी हूँ जिन्होने कथानक रूढियो के वैज्ञानिक अध्ययन मे अपार सहयोग दिया ।

हस्तलिखित ग्रथो के संकलन के लिये क्षेत्रीय कार्य मे मुझे अपने पति श्रीयुत् वैश्य साहब का सर्वाधिक सहयोग मिला है विज्ञान मे रुचि रखते हुये भी आपने मेरे शोध-प्रबन्ध को सम्पूर्ण कराने मे अत्यधिक रुचि ली और मधुर झिडकियो एव सतत् प्रेरणा से प्रबन्ध पूर्ण करने मे मेरा उत्साहवर्द्धन किया, उनके प्रति मैं किस प्रकार आभार प्रकट करू उनके लिये मेरे पास शब्दो की दरिद्रता के अतिरिक्त कुछ भी नही है ।

राजस्थान विश्वविद्यालय पुस्तकालय के अध्यक्ष एव अन्य सदस्यो के प्रति भी मैं आभारी हूँ जिन्होंने समय-समय पर बाहर से हस्तलिखित ग्रथ मगवा कर मुझे सहायता प्रदान की ।

अन्त मे. उन सभी विद्वानो एव महानुभावो के प्रति—जिन्होने प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप से मुझे इस कार्य मे सहायता प्रदान की है और जिनके उत्तम ग्रथो का मैंने लाभ उठाया है—आभार प्रकट करना भी अपना कर्तव्य समझती हूँ । कदाचित मेरे अकिंचन प्रयास के द्वारा अन्य लोक साहित्य मर्मी विद्वानो की दृष्टि इस विषय के महत्व को स्वीकारते हुए इसके अध्ययन की ओर मुड सकेगी, यदि ऐसा हो सका तो मैं अपने श्रम की सार्थकता अनुभव कर सकूँगी । अस्तु ।

रुक्मिणी वैश्य

श्रद्धेय अम्मा को

जिनका वरद हस्त ही
मेरा पथ प्रदर्शक रहा।

रुक्मिणी वैश्य

विषय-सूची

प्रथम अध्याय

कुशल लाभ का युग

कुशललाभ के युग की परिस्थितियां

राजस्थानी साहित्य का मध्यकाल सभी दृष्टियो से उत्थान एव पतन का युग रहा है। इस युग की दीर्घ अवधि मे विभिन्न परिवर्तन हुये तथा विभिन्न वशो के व्यक्ति राजगद्दी पर प्रतिष्ठित हुये, किन्तु सत्ता का यह परिवर्तन सामान्य वातावरण की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण नही था। भारतीय जनता के लिए जाति धर्म एव सस्कृति की दृष्टि से ये परिवर्तन विशेष प्रभावशाली नही रहे। जनता के सामने अनेक कठिनाइया थी, फिर भी परिस्थितियो का सामना करने का साहस राजस्थानी जनता मे अपार था।

भौगोलिक परिस्थिति

राजस्थान के अधिकाश भाग रेतीले है। राजस्थान के दक्षिणी भाग मे वनस्पति के नाम पर झाडियाँ व पहाडियाँ पाई जाती हैं, जिनमे पशुओ के चरने लायक चारा पैदा हो पाता है। रेत के टीलो का नैरन्तर्य कोसो का तक पाया जाता है जहाँ फोग व खेजडा नामक झाड उगते है, जिनका उल्लेख कुशललाभ ने अपने साहित्य मे किया है।

राजस्थान के उत्तरी एव पश्चिमी भागो मे पानी की कमी है क्योकि यहाँ वर्षा बहुत कम होती है। कुओ की गहराई 250 फुट से 400 फुट तक होती है। यहाँ की भूमि रेतीली एव बजर होने से खेती कम होती है। बाजरा, मूँग, ज्वार, मोठ, तिल, सरसो, कपास, गुवार आदि वर्षा के पानी से हो जाते है। परन्तु जहाँ कुओ मे पानी प्राप्त होता है वहाँ चना, गेहूँ, अफीम, प्याज, मूली, बैंगन, धनियां, मिर्च, तरबूज, ककडी आदि भी पैदा होती है। कही-कही ऊटो से हल चला कर खेती की जाती है। अधिकतर लोग भेड, बकरी, गाय, ऊट आदि पशु पालते हैं। कभी-कभी अकाल पडने पर जनता को बडा कष्ट होता है। प्राचीन काल मे अकाल पडने पर 'ऊचाले' की प्रथा थी अर्थात् राजा प्रजा सहित दूसरे राज्य मे चला जाता था जैसा

कि ढोला मारू चौपई मे राजा पिंगल पूगल मे अकाल पडने पर सपरिवार नल के देश मे चला जाता है और सुकाल होने पर ही वापस आता है।

यहाँ सर्प भी अधिक होते हैं विशेषकर 'पीना साँप' जो काटता नही है, कहते है कि जगल मे सोने वाले व्यक्ति के वक्ष पर यह बैठ जाता है और उसके श्वास के साथ अपनी विषैली सास छोडता रहता है जिससे मनुष्य मर जाता है। लहसन व प्याज की वदवू से यह आदमी के पास नही आता। इसीलिये यहाँ के लोग प्याज व लहसन का प्रयोग अधिक करते हैं।

रेगिस्तान होने से यहाँ की मुख्य सवारी ऊँट है। घोडो का प्रयोग भी सवारी के लिये किया जाता है। यहाँ ऊँट उत्तम जाति के होते थे जिसकी चाल के विषय मे 'घडिये जोइण जाय' अर्थात् एक घडी मे योजन भर चला जाय, कहा गया है। योजन वर्तमान गणना के अनुसार चार कोस के वरावर होता है। लोग दूर-दूर की यात्रायें ऊँट से ही करते थे। राजा लोगो की सवारी के लिये हाथी होते थे।

सामाजिक परिस्थिति

मध्य युग तक आते आते भारतीय सस्कृति वाह्य सस्कृतियो से पूर्णत प्रभावित हो चुकी थी। राजस्थान मे इन वाह्य सस्कृतियो से अप्रभावित रहने का वहुत कुछ प्रयत्न किया गया परन्तु यह सम्भव नही हो सका, विशेष रूप से सीमान्त राज्यो में। जैसलमेर सिन्ध के सीमान्त पर वसा हुआ नगर था। सिन्ध मे मुस्लिम सस्कृति पूर्णत छा चुकी थी। अत जैसलमेर पर भी इसका प्रभाव पडना स्वाभाविक ही था। वाल विवाह, पर्दा प्रथा, वेश्यावृत्ति जैसी सामाजिक कुरीतियाँ सामान्य रूप से तो वैसे ही व्याप्त थी पर मुस्लिम सस्कृति के प्रभाव से उसने और भी अधिक जोर पकडा था। शासक मुगल या अन्य यवन वादशाहो के सम्पर्क मे आकर ऐशो आराम की जिन्दगी व्यतीत करने लगे थे। सुरा और सुन्दरी ही उनका जीवन वन गया था। क्षत्रिय का परम धर्म होता है प्रजा का पालन (क्षत्रियस्य परोधर्मं प्रजानामेव पालनम्) पर राजा लोग प्रजा का शोषण करने मे ही अपना धर्म समझने लगे थे। उनका शौर्य और तेज अव दुर्वलो को सताना पर-नारियो का अपहरण करना आदि मे ही प्रदर्शित होने लगा था। ऐसे समय मे यदि उनको प्रभावित करके उनको सन्मार्ग पर लाया जा सकता था तो केवल साधुओ के प्रभाव से ही और जैन यति कुशललाभ ने भी वही सव कुछ किया जो एक साधु को उस समय करना आवश्यक था।

मद्यपान की भाँति मुस्लिम शासक अपनी नारी सम्वन्धी दुर्वलताओ के लिये प्रसिद्ध हैं। उन्होने किसी की भी सुन्दर पत्नी, कन्या या वहन को प्राप्त करने के लिये अनेक युद्ध किये हैं। अलाउद्दीन के पद्मिनी को प्राप्त करने के लिये चित्तौड पर इसी उद्देश्य को लेकर आक्रमण किया था। अकवर जैसे सयमी शासक के हरम मे पाँच हजार स्त्रियो का होना इसी वात का प्रमाण है। ऊमर सूमरा का मारवाणी को प्राप्त करने का षडयत्र भी इसी वात का द्योतक है। इसका प्रभाव इनके सम्पर्क

मे आने वाले हिन्दू लोगो एव आश्रित कवियो पर भी पड़ा जिसका साहित्यिक परिणाम इस युग की शृंगारी कविता है ।

धार्मिक परिस्थिति

मुस्लिम राज्य के शासको का आदर्श इस्लाम धर्म के विकृत हुए सिद्धान्तो से अनुप्राणित था । उनके अनुसार हिन्दू लोगो को मुस्लिम राज्य मे जीने का अधिकार नही था । ये शासक हिन्दू जनता को इस्लाम या मौत दोनो मे से एक को स्वीकार करने के लिये वाध्य करते थे । 'जजिया' कर देकर वह मुसलमान वनने से छुटकारा पा सकते थे । जो लोग विरोध करते थे उन्हे हाथी से कुचलवा दिया जाता था । हिन्दुओ के धर्म एव संस्कृति को कुचलने के लिये इन शासको ने उनके धर्म स्थानो को नष्ट करवा दिया था । मुस्लिम शासको के आठ सौ वर्षों के निरन्तर प्रयास से भी हिन्दू जाति, उसका धर्म एव सस्कृति नष्ट नही हो सकी । मुस्लिम शासको की धार्मिक दमन की नीति की प्रतिक्रिया एव प्रतिरोध की प्रेरणा से ही उस स्वधर्म रक्षा आन्दोलन का सूत्रपात एवं प्रसार हुआ जिसे साहित्य के क्षेत्र मे भक्ति आन्दोलन कहा जाता है ।

धर्म की दृष्टि से समाज मानव धर्म के लक्षणो को सर्वथा विस्मृत कर चुका था । धार्मिक कर्म काण्डो के चक्कर मे जनता बुरी तरह फसी हुई थी । धर्म गुरुओ का प्रमुख कार्य जनसाधारण को और भी अधिक जटिलताओ मे फसाए रहना रह गया था । स्वय धर्मगुरु जिन्हे धर्म के मूल सिद्धान्तो का ज्ञान भली-भाति होना चाहिये था, वाह्य आडम्वर, जादू, टोने, तन्त्र-मंत्र और ऐसे ही अनेक अन्य विश्वासो से ग्रस्त हो रहे थे । उनका कार्य जन्म-कुण्डलिया वनाना, वाजार भाव वताना, मनुष्य के भाग्य का उल्टा सीधा निपटारा करना, भूत प्रेतो का आतक लोगो मे फैलाना, मूर्ति-पूजा और ऐसे ही दूसरे दुर्गुणो का प्रचार करना मात्र रह गया था । वे स्वय शृगार रस और कामशास्त्रीय ग्रथो का अध्ययन अध्यापन करते और जनता को भी ऐसे काव्यो को पढ़ने के लिये प्रोत्साहित करते रहते थे । कुशललाभ भी इन प्रभावों से अछूते नही रह सके, फिर भी उनके अन्य धार्मिक ग्रथो को देखते हुये हम यह मान सकते है कि उनकी रचना मे विवेकपूर्ण हैं ।

प्रस्तुत कवि जैसलमेर का निवासी था । जैसलमेर के आसपास के प्रदेश व गुजरात मे उसका भ्रमण होता रहता था । यह दोनो प्रदेश जैन धर्म से पूर्णत प्रभावित थे । हिन्दू जनता और राजाओ पर नाथ सम्प्रदाय का पूर्ण प्रभाव था । पूर्व मे वताये गये जादू-टोने, तन्त्र-मन्त्र आदि अष्ट सिद्धियो के वे स्वामी माने जाते थे । लगता है कुशललाभ जैसे प्रवुद्ध जैन साधु तक पर इनका प्रर्याप्त प्रभाव था । इसीलिये कुशललाभ ने अपने पात्रो को इन सिद्धियो से युक्त वर्णित किया है ।

जैन साधुओ का प्रमुख उद्देश्य जैन धर्म का प्रचार करना था । अत. कुशललाभ ने भी मनोरजन कथाओं के माध्यम से जैन धर्म का प्रसार जनता मे किया और

वे अपने इस प्रयास मे काफी हद तक सफल भी हुये हैं। इन आख्यान काव्यो मे जैन धर्म के सिद्धान्तो के साथ-साथ दान, शील, तप सयम के महात्म्य का प्रमुख रूप से वर्णन किया है। जन्म जन्मान्तरवाद और पूर्व जन्म के पाप पुण्यो मे अटूट आस्था भी इन कथाओ मे व्यक्त हुई है। जैन मुनि ससार को नश्वर और क्षणिक मानते है अत वे स्वय तो वीतराग होते ही हैं साथ अपने श्रावको को भी वीतराग होने का उपदेश देकर अन्त मे दीक्षित करवा देते हैं। तेजसार रास मे तेजसार मुनि सुव्रत-स्वामी से दीक्षा ले लेता है।[1] राजा भीमसेन एव हसराज भी राजपाट का त्याग कर श्रीराम मुनि मे दीक्षित होते हैं।[2]

पौराणिक एव सनातनी धार्मिक भावनाओ के प्रति जनता की गहरी आस्था थी। जनता का पौराणिक अवतारो देवी-देवताओ मे विश्वास था। ब्रह्मा, विष्णु, महेश का वर्णन एव उनकी श्रद्धा पूर्वक भक्ति का वर्णन भी कवि ने किया है। मारु मनवाछित वर के लिये शिव मदिर मे जाती है तो रूपमजरी वर देने वाली चक्रेश्वरी देवी की, मन श्रद्धा एव भक्ति से पूजा आराधना करती है।[3] सामान्य जनता पूजा अर्चना आराधना तीर्थयात्रा, स्नान सध्या व्रत आदि मे विश्वास करती थी। तीर्थो मे स्नान करना आध्यात्मिक सुख का बोध कराता है।

आर्थिक परिस्थिति

उस युग के राजा एव सामन्तो आदि उच्च वर्ग के लोगो का रहन-सहन आडम्बर पूर्ण था। किन्तु जनसाधारण का जीवन सरल एव सादा था। राजाओ के विशाल महल होते थे जिनमे ऐशो आराम के सभी साधन सुलभ थे। महलो से आती हुई चदन गुलाब अरगजा आदि की खुशबू सम्पन्नता की सूचक है। राजकुमारियाँ अपनी सखियो के साथ उपवन या मन्दिर भ्रमण को जाती थी।

जैसलमेर और मारवाड का समस्त भूभाग आये दिन सदा से ही अकालो से ग्रस्त रहा है। ऐसी स्थिति मे जनता घर द्वार छोड कर परदेशो मे चली जाती थी। ऐसी भयकर स्थिति भी होती थी कि अकाल के समय लोग अपने घर के सदस्यो को बेच देते थे। दुधारू गाये साथ ले ली जाती थी बाकी सभी पशु किसी ग्वाले के सुपुर्द कर बाहर के हरे भरे प्रदेशो मे भेज दिये जाते थे। मेवाड, हाडौती और मालवा तथा गुजरात प्रमुख रूप मे इनके गतव्य स्थल थे जहाँ ये शरण पाते थे।

वर्षा के अभाव मे यह स्थिति होती थी तो सुकाल की अवस्था मे भी कभी-

1 श्री मुनि सुव्रतस्वामी पासि, चरित्रलीधउमन उल्हासि—401
तेजसार रास रा प्रा वि प्र जोधपुर ग्र 26546

2 रिषि श्रीराम व्रत निजलही साधइ भीमसेन रिषिमही—603
भीमसेनराजहस चौपइ ला द ग्र ध 1217

3 दो स 493 भीमसेनराजहस चोपई
ला द ग्र ध 1217

कभी अकाल की स्थिति हो जाती थी। टिड्डियो और चूहो का प्रकोप प्रतिवर्ष बना रहता था। ग्राम जनता की यह स्थिति थी। दमनचक्र चलाकर अन्न और धन सग्रह करने वाले सामन्त वर्ग को भी पानी के अभाव से अपना देश छोडना पडता था। 'ढोला मारू चौपई' मे पिंगल राजा की स्थिति से यह और भी स्पष्ट हो जाता है।

महाजन वर्ग दूर देशान्तरो से व्यापार करते रहते थे। ऊँट व घोडे यात्रा व मालवाहक के रूप मे प्रयुक्त होते थे। नित्य व्यवहार की चीजें और हथियार प्रमुख व्यापारिक वस्तुयें थी। घोडो का व्यापार भी प्रमुख रूप से होता था। घोडो के सौदागरो का कुशललाभ के काव्य मे वर्णन इस तथ्य की पुष्टि करता है।

तत्कालीन समाज आर्थिक दृष्टि से बडा सम्पन्न था और देश समृद्धशाली थे। नगरो का विस्तार विशाल था। इनमे कई मजिली ऊची इमारतें एव भव्य अट्टालिकायें होती थी। उपवन सरोवर एव वाडी आदि होती थी। विभिन्न चौरासी प्रकार के व्यवसायो के बाजार थे जिन्हे 'चौरासी चौहटे' कहा जाता था। नगर सभ्यता विकसित हो चली थी। 'अजनबीपन' की भावना को कुशललाभ ने भी व्यक्त किया है। माधव दिन भर घूमता रहता है, फिर भी कोई उससे बात नही करता।

राजनैतिक परिस्थिति

तत्कालीन युग मे विशुद्ध राजनीति जैसी कोई वस्तु हमे नही मिलती है। राज्य की सर्वोच्च सत्ता राजा होता था, वह निरकुश होता था। राजा की आज्ञा ही कानून होती थी। राजा लोग अपना राज्य तक दहेज मे दे देते थे। राजा को राज्य कार्य मे सहायता देने वाला प्रधान होता था। राजपुरोहित राजा से धार्मिक कार्य करवाता था। राजा की सवारी के लिये हाथी होता था। सामन्तवाद का बोलबाला था। राजा प्रजा का हाल जानने के लिये वेप वदल कर रात्रि मे निकला करते थे। सही सूचना प्राप्त करने के लिये राजा अपने नगर के प्रसिद्ध चोरो व जुआरियो से सम्पर्क रखते थे। राजा का यह कार्य वेश्याये भी करती थी।

दण्ड व्यवस्था वडी ही कठोर थी। इसमे अपराधी का सिर काटने से लेकर देश निकाला देना आदि प्रमुख दण्ड थे। सिर काटने के लिये 'पवास' व चण्डाल नियुक्त होते थे। प्रत्येक राजा के पास सुरक्षा के लिये अपनी-अपनी सेना होती थी। छोटी-छोटी वातो पर युद्ध हो जाते थे। युद्ध का प्रमुख कारण कोई सुन्दर स्त्री होती थी या प्रतिशोध की भावना। राजा और प्रजा के सम्बन्ध वडे अच्छे थे। राजा प्रजा पालक होना था। उत्सवो मे प्रजा भी राजा के साथ भाग लेती थी। राजा के प्रदेश मे लौटने पर प्रजा ही उसका धूमधाम से स्वागत करती थी।

राजा लोग लोभी भी होते थे। राज्य के लोभ मे वे भाति-भाति के कुकर्म करते थे। राजा अपने पुत्र तक को राज्य से निष्कासित कर देता था। राज्य ब्राह्मण, स्त्री और वालक अवध्य माने जाते थे।

विक्रमादित्य प्रजा वालक की दृष्टि से एक आदर्श राजा माना जाता था।

उसका आदर्श प्रस्तुत कर साधु लोग राजाओं को सन्मार्ग पर लाने का प्रयास करते थे। राजाओं के सत्य संतुलन की परीक्षा युद्धों से होती थी। पराजित होने पर वे विपक्ष की शक्ति को स्वीकार करते हुये अपनी कन्यायें उन्हें ब्याह कर मैत्री सम्बन्ध स्थापित करते थे।

साहित्यिक परिस्थिति

साहित्यकार परिस्थिति की उपज होता है। जो परिस्थिति साहित्य को जन्म देती है, उसमें समाज व्यवस्था ही होती है। मध्यकाल के कवियों में जनसाधारण का जीवन जीने वाला कवि कोई न था। अतः राजनीतिक हलचलों से वे दूर न थे। वे जनता की आवाज सुन सकते थे पर उन्हें वाणी देने की चिन्ता उन्हें न थी क्योंकि वे जनता के कवि न थे यदि वे जनता की बात कहते तो उनका आश्रय ही छिन जाता। अतः वे अपने आश्रयदाताओं को प्रसन्न करने के लिये ही प्रशस्तियाँ लिखते रहते थे। वे जनसाधारण के बीच रहकर भी साहित्य सृजन भगवान के लिये करते रहे या अपने आश्रयदाता राजाओं के लिये।

इस युग में अनेक चारण कवि भी हुये जिन्होंने वीरों को प्रोत्साहित करने के लिये काव्य सर्जना की। साहित्यिक दृष्टि से यह युग उन्नति के शिखर पर था। इस काल में अनेक प्रमुख राजस्थानी कवि भी हुये। काव्य कला का समुचित विकास हुआ। अनेक भाषाओं में काव्य लिखे गये। राजस्थानी भाषा की रचनायें तो 14 वीं शताब्दी से ही मिलती है। इस काल के कवियों ने अपने आराध्य देव को अन्य देवों से बड़ा माना है जबकि जैन कवियों ने अपने आराध्य देव को सर्वोत्तम तो कहा है किन्तु अन्य देवों के प्रति कटु भी नहीं हैं।

तुलसी और जैन कवि दोनों ने भगवान के लोकरंजनकारी रूप की महत्ता को ही स्वीकार किया है जिनेन्द्र में राम के समान ही सौन्दर्य एवं शील की स्थापना हुई है, किन्तु शक्ति सम्पन्नता में अन्तर है। जैन कवियों के काव्यों में शांत भाव प्रधान रहा है। जैन आचार्यों ने नौ रसों में शृंगार के स्थान पर शांत को रसराज कहा है। भाषा की दृष्टि से मध्य युग के जैन हिन्दी कवियों की रचनाओं को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है। पहला भाग वि. सं. 1400 से 1600 तक तथा दूसरा 1600 से 1800 तक। प्रथम भाग अपभ्रंश के अधिक निकट होने के कारण इसमें हिन्दी का विकास तो है ही साथ ही उन पर गुजराती और राजस्थानी का प्रभाव भी स्पष्टलक्षित है।

जैन कवि विविध छन्दों के प्रयोगों में भी निपुण थे। उन्होंने अनेक नये छन्दों का प्रयोग किया। उनके पदों में यदि एक ओर भावुकता है, भक्ति है, कवित्व है तो दूसरी ओर संगीतात्मकता भी है। इनकी रचनाओं में प्राकृतिक दृश्यों का जीवित चित्रण है, जिसका कारण जैन मुनियों का प्रकृति के लगाव व सानिध्य था। उनके प्रकृति वर्णन में जो सौन्दर्य आ सका है वैसा सौन्दर्य इस युग की अन्य रचनाओं में ढूंढ पाना कठिन है।

अनुसंधान की आवश्यकता

राजस्थानी साहित्य का भण्डार अपार है। राजस्थानी के अनेक प्राचीन कवि-कथाकार तो अभी भी विद्वानो की दृष्टि से परे ही हैं। कुशललाभ भी राजस्थानी लोक साहित्य के ऐसे ही सशक्त विद्वान कवि हुये हैं। बहुत से लोग तो कुशललाभ नाम से ही परिचित नही है और जो विद्वान उनसे परिचित भी है, वे उनको ढोला मारू के लेखक के रूप मे जानते हैं।

जैन कवि कुशललाभ अपने समय के राजस्थानी साहित्य के सशक्त कवि हुये हैं। आपके लिखे ग्रथ बीस की सख्या मे अब तक प्राप्त हो चुके है परन्तु इन्ही को सब कुछ नही मान लेना चाहिये। मुझे ऐसा लगता है कि उनके अन्य ग्रथ भी अवश्य मिलेंगे। कुशललाभ के साहित्य पर आज तक किसी ने कोई गम्भीर शोध कार्य नही किया है, जब कि उनके प्रमुख आख्यान काव्य-माधवानल कामकंदला, ढोला मारू, तेजसार के रास, भीमसेन राजहस चौपई, गुणसुन्दरी चौपई आदि अनेक ऐसे लोक कथात्मक काव्य ग्रथ है जो राजस्थानी साहित्य के प्रमुख अग माने जा सकते हैं। इन ग्रथो को प्रकाश मे लाना तथा उन पर कार्य करना मुझे बहुत ही अनिवार्य प्रतीत हुआ। दूसरे राजस्थानी वातावरण मे पोषित होने के कारण मुझमे राजस्थानी साहित्य के प्रति विशेष लगाव प्रारम्भ से ही रहा। कदाचित यही कारण था कि मैं अपने इस शोधप्रबन्ध को समर्पित होकर पूर्ण करने मे सफल हो सकी।

द्वितीय अध्याय

कुशललाभ का जीवन परिचय

प्रसिद्ध अमरीकी चिन्तक एमरसन का कथन है कि—'महान व्यक्तियो का जीवन चरित प्राय सक्षिप्त होता है। उनका वास्तविक जीवन तो उनकी कृतियो मे निहित रहता है।'[1] महान व्यक्तियो का जीवन-परिचय उनके कृतित्व मे ही होता है और वही हमारा मार्ग दर्शन करता है। कवि कुशललाभ भी ऐसी ही महान् आत्मा है उनकी कृतियो के आधार पर ही हम उनका जीवन परिचय प्राप्त कर सकते हैं। जैसा कि कवि ने स्वयं अपने ग्रथो की प्रशस्ति मे अपना परिचय दिया है उससे स्पष्ट होता है कि कवि खरतरगच्छ के उपाध्याय अभयधर्म के शिष्य थे। आप जिनभद्रसूरि सतानीय युग प्रधान जिनचन्द्र सूरि जी के आज्ञानुवर्ती थे।[2] आपकी कृतियो की भाषा से आपका जन्म राजस्थान (मारवाड) मे होना सम्भव है। आपकी रचनायें स 1616 से स 1648 तक की प्राप्त होती हैं। श्री अगरचन्द जी नाहटा ने आपका जन्म स 1580 के आसपास माना है।[3] राजस्थानी के अन्य विद्वानो ने भी आपका जन्म स 1580 ही माना है। जन्म के सम्बन्ध मे ठोस प्रमाणो के अभाव मे कवि के साहित्य के आधार पर उनका जन्म स 1575 और स 1580 के बीच माना जा सकता है। 15 वी 16वी शताब्दी मे कई प्रमुख जैन सत हुये है जिन्होने उत्कृष्टतम काव्यो की सरचना की हैं। 16 वी शताब्दी के प्रारम्भ मे हमे कुशललाभ, समयसुन्दर आदि प्रमुख कवि और आचार्य मिलते हैं।

1. राजस्थानी साहित्य के ज्योतिपपुज डा० गोवर्द्धन शर्मा पृ 22 से उद्घृत
2 श्री जिनभद्रसूरि सतान अभयधर्मउवझाय प्रधान
   शास सीस कलट भति घणइ वाचक कुशललाभइ भमणइ
   भीमसेन राजहस सम्ब ध चौपई ग्र 1217-622
   ला द प्र से प्राप्त
3. 'राजस्थान भारती श्री अगरचन्द नाहटा का लेख जनवरी 1947 पृ 22

कुशललाभ का सम्बन्ध हमे जैसलमेर से ही दिखाई देता है। उनके जन्म, जन्म स्थान और परिवार के सम्बन्ध मे हमे कोई जानकारी किसी भी स्रोत से उपलब्ध नही होती है।

परिवार

साधु समाज मे सदा से यह प्रवृति रही है कि वे अपना प्रमुख परिवार अपने गुरु के परिवार को ही मानते थे। गुरु के द्वारा दीक्षित होने की अवस्था ही उनकी जन्म की अवस्था थी। कुशललाभ की भी यही स्थिति है। उन्होने प्रचुर मात्रा मे लघु और वृहद् सामान्य से उत्कृष्टतम कोटि की रचनायें हमारे सामने प्रस्तुत की हैं पर उनमे कही भी उन्होने अपने जन्म के विषय मे, जन्मावस्था के विषय मे या अपने माता पिता भाई बहन अथवा कुल के विषय मे किसी प्रकार की सूचना नही दी है। हमे जो कुछ भी सामग्री मिलती है उसके आधार पर हम इनकी शिक्षा दीक्षा और वैराग्य की ओर झुकाव के विषय मे अवश्य कुछ मान्यतायें स्थापित कर सकते हैं।

शिक्षा दीक्षा

कुशललाभ ने जिस साहित्य का निर्माण किया है उसमे, 'माधवानलकामकदला-चौपई' और 'ढोलामारूचौपई' ही ऐसी रचनाये है जो उनकी प्रारम्भिक रचनाओ के रूप मे मानी जा सकती हैं। ये रचनायें क्रमश सवत् 1616 और 1617 मे रची गई थी। इस अवस्था मे वह हरराज के आश्रित रहते हुये गुरु पद पर आसीन थे। इससे स्पष्ट है कि इस अवस्था से पूर्व ही कभी उनकी शिक्षा दीक्षा पूर्ण हो चुकी थी। सवत् 1600 मे कुशललाभ के द्वारा स्वय अपने हाथ से लिखी हुई हसदूत काव्य की एक प्रति उपलब्ध हुई है[1] जो उन्होने स्वय के पढने के लिये लिखी थी। इस प्रति मे उन्होने स्वय को मुनि उपाधि से अलकृत किया है और अपने गुरु नाम आदि का निर्देश किया है। इस ग्रथ की पुष्पिका, जिसमे उक्त सूचनायें मिलती है, निम्नलिखित रूप मे है

1 कुशललाभ ने इस काव्य की प्रतिलिपि जिनमाणिक्यसूरि के विद्यमान होते हुए की थी।

2 इनके गुरु का नाम अभयधर्म था।

3 कुशललाभ उस समय मुनि अवस्था मे पण्डित उपाधिधारी बन चुके थे।

1 सवत् 1600 वर्षे माघवदि पचम्यां दिने भौमवासरे हस्तनक्षत्रे श्री अलवर नगरे श्री खरतर-गच्छे श्री जिनमणिक्यसूरि विजयराज्ये श्री अभयधर्मोपाध्यायाना शिष्य पं० कुशललाभ मुनिना स्ववाचनार्थं विलिखे। शुभमस्तु लेखक पाठकयो ,। श्री॥
श्री अभय जैन ग्रथालय बीकानेर से प्राप्त फोटो कापी परिशिष्ट मे।

प्रतिलिपि की विशुद्धता का ज्ञान लिपि की सुन्दरता और व्यवस्थित लेखन से ज्ञात होता है। ऐसा प्रतीत होता है कि कवि इस समय तक अवश्य ही बीस पच्चीस वर्ष का रहा होगा। यह प्रति उन्होंने स्वय के पढने के लिए लिखी है इससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि इस अवस्था मे भी वह विद्यार्थी रहा होगा या विद्यार्थी जीवन से मुक्ति पाई होगी। उस काल मे सामान्यत अध्ययन की अवस्था सात से अठारह वर्ष तक होती थी अत उनका शिक्षा का प्रारम्भिक काल हम सात वर्ष की अवस्था मे या स 1580 से 1585 के मध्य कहीं स्थिर कर सकते हैं और जन्म सवत् 1575 के लगभग।

गुरु

हसदूत काव्य मे जैसा कि ऊपर बताया गया है उनके गुरु का नाम अभयधर्म मिलता है। कुशललाभ ने अपने द्वारा विरचित लगभग सभी काव्यों मे अभयधर्म को गुरु मे स्मरण किया है। अभयधर्म का अन्य नाम अभयदेवाचार्य भी मिलता है। अभयधर्म के एक गुरु भाई का नाम जयधर्म था। इन दोनो भाइयो ने सवत् 1575 मे सखवाल गोत्रीय शाह माखर की पुत्री श्रीमती अरघू श्राविका के द्वारा विहराते समय विपाक सूत्र की एक प्रति लिखकर पढी थी। विपाक सूत्र की एक प्रति मे कुशललाभ की गुरु परम्परा निम्न प्रकार दी गई है।

कालान्तर मे सवत् 1611 मे विणग्राम मे सागरचंद्रसूरि संतानीय वा. साधुचन्द्रगणि के शिष्य भावहर्षोपाध्याय के शिष्य वा हेमसार गणि ने स्ववाचनार्थ ग्रहण की। प्रति के एक पत्र पर सवत् 1615 मे ही हेमसागरगणि द्वारा दिये गये टिप्पण मे अभयधर्म को अभयदेवाचार्य भी कहा गया है।

कुशललाभ अभयधर्म के शिष्य थे इसलिये उनकी भी यही गुरु परम्परा रही है। उक्त विज्ञप्ति लेख मे एक बात दृष्टव्य है कि अभयधर्म ने इसमे कुशललाभ का नामोल्लेख नही किया है लगता है अभयधर्म और जयधर्म दोनो इस समय विद्यार्थी अवस्था मे थे। उन्होने अपनी शिष्य परम्परा नही चलाई थी। अत कुशललाभ का अभयधर्म के शिष्यत्व मे आना 1575 के बाद ही कभी रहा होगा और वह अवस्था सवत् 1580 और 1585 के मध्य या इसके बाद ही कभी मानी जा सकती है और यही अवस्था इनकी शिष्य के रूप मे दीक्षित होने की भी निर्धारित की जा सकती है।

जैन साधु परम्परा मे गुरु के द्वारा दीक्षित होने की कई श्रेणियां होती हैं उन्हे हम मुनि, वाचक, पाठक, उपाध्याय, महोपाध्याय और आचार्य रूप मे प्रस्तुत कर सकते है। जैसा कि पूर्व मे बताया जा चुका है सवत् 1580 व 1585 के बीच या इसके बाद कभी कुशललाभ शिष्य के रूप मे दीक्षित हुए होगे। सवत् 1600 मे प्रतिलिपित हसदूत की प्रति मे हम उन्हे मुनिपद पर सुशोभित पाते हैं। सवत् 1616 मे विरचित 'माधवानल कामकदला चौपई' से लगाकर सवत् 1644 मे विरचित 'शत्रुजय तीर्थ यात्रा स्तवन' तक वह स्वय को वाचक पदवी से विभूषित करते हैं। अत विभिन्न पदो पर दीक्षा का काल इन्ही के आधार पर निश्चित किया जा सकता है। कोई निश्चित तिथि का स्पष्ट निर्देश उपलब्ध न होने से हमे अनुमान के आश्रय से ही यह तिथियां सवत् 1585 सवत् 1600 या उसके बाद और सवत् 1644 के आसपास माननी होगी।

वैराग्य की ओर झुकाव

जैन साधु के लिए प्रथमत दीक्षित होने की अवस्था ही वैराग्य की ओर झुकाव होने की अवस्था मानी जानी चाहिये। पर तत्कालीन परिस्थितियो को देखते हुये हम निश्चित रूप से यह नही कह सकते कि कुशललाभ वैराग्य की ओर झुकाव के कारण ही अभयधर्म के शिष्य के रूप मे दीक्षित हुए होगे। उस काल मे अकाल की परिस्थितियो मे लोग अपने पुत्रो को जैन यतियो या जैन साधुओ को बेच देते थे, या सौप देते थे। अधिकाशत यह प्रवृति गरीब श्रावको या ब्राह्मणों व क्षत्रियो की थी। गरीब ब्राह्मण समाज जो जैन यतियो के प्रभाव मे थे बहुधा इस प्रकार का कृत्य किया करते थे। वे धनाढ्य श्रेष्ठी वर्ग भी जिन्हे जैन साधुओ या यतियो के आशीर्वाद से पुत्र की प्राप्ति होती अपनी प्रथम सन्तति को इन साधुओ की शरण मे चेलो के रूप मे बाल्यावस्था मे ही दे दिया करते थे। ऐसी अवस्था मे जैन यतियो या साधुओ के शिष्यत्व का कारण वैराग्य की ओर प्रवृति ही रहती रही हो यह बात नही है।

कुशललाभ ने भी बाल्यावस्था मे ही अभयधर्म का शिष्यत्व ग्रहण कर लिया था। अत यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि उन्होने किसी वैराग्य के वशीभूत होकर या स्वेच्छा से यह स्थिति स्वीकार नही की। उनके माता पिता ने

ही उन्हे जैन साधुओ को सौपा होगा। हिन्दु देवी देवताओ और हिन्दू धर्म की मान्यताओ के प्रति उनके ग्रथो मे प्रदर्शित आदर के भावो से एव विद्वता से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि वे किसी ब्राह्मण कुल मे उत्पन्न हुए होंगे। 'माधवानल कामकदला' और 'ढोलामारु चौपई' जैसे काव्यो को देखते हुये यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि वैराग्य का लेशमात्र भी प्रभाव उनमे नही था। वे विलासी सामन्ती जीवन से पूर्णत प्रभावित थे। उनमे वैराग्य की ओर झुकाव वृद्धावस्था मे ही दिखाई देता है। यह अवस्था 'स्तम्भन पार्श्वनाथ स्तवन' सवत् 1638 शत्रुजय यात्रा स्तवन सवत् 1644 पार्श्वनाथ दशभव स्तवन या महामाई दुर्गासातसी आदि काव्यो से स्पष्ट होती है।

राज्याश्रय

कवि कुशललाभ के द्वारा विरचित 'माधवानलकामकदला चउपई' सवत् 1616 'ढोलामारु चौपई' सवत् 1617 और पिंगल शिरोमणि (रचना काल सवत् 1618 के पूर्व सकलन सपादन काल सवत् 1635) ही ऐसे ग्रथ हैं जिनसे कवि के राज्याश्रित होने की कल्पना की जा सकती है। इन ग्रथो से स्पष्ट है कि कुशललाभ राजकुमार हरराज के गुरु थे। उन्होने हरराज को छद-शास्त्र, राजनीति, कामशास्त्र आदि की शिक्षा दी। 'पिंगल शिरोमणि' काव्य शास्त्र की शिक्षा के लिये रचा गया था जिसमे कुशललाभ की ही नही काव्य निर्माण मे हरराज की पटुता के भी दर्शन होते हैं।

राजकुमार का गुरु होने के कारण ही कुशललाभ को राज्याश्रित घोषित किया जाता है। यद्यपि यह स्पष्ट नहीं है कि उन्हे इस कार्य के लिए किसी प्रकार की वृत्ति मिलती रही हो। अपने नगर के योग्य विद्वानो के पास राजकुमारो की शिक्षा की परम्परा अति-प्राचीन काल से रही है। अत राजकुमार हरराज भी यदि कुशललाभ के पास उन्ही के उपासरे मे पढने जाता रहा हो तो भी आश्चर्य नही है। इन प्रमाणो के आधार पर तो यह घोषित करना कठिन ही है कि वह राज्याश्रित कवि रहे होंगे, पर हमारे पास एक सूत्र अवश्य ही ऐसा है जिसके आधार पर हम कल्पना कर सकते हैं कि वह राज्याश्रित रहे, हो सकते हैं। एक सूत्र विपाक सूत्र की अभयधर्म और जयधर्म द्वारा लिखित प्रति ही है जिसमे अभयधर्म अपने गुरु नागकुमारगणि को 'राजवाचनाचार्य' उपाधि से विभूषित करते है। जिसका स्पष्टत अर्थ यही लगाया जा सकता है कि वे साधारण सामान्य जनता के ही वाचक न रहकर राज-दरबार के भी धार्मिक या अन्य ग्रथो का वाचन करते रहे होंगे। यही कार्य परम्परा से नागकुमारगणि के उपरान्त अभयधर्म को और तत्पश्चात् कुशललाभ को प्राप्त हुआ होगा। कुशललाभ को हरराज का गुरु बनने का सौभाग्य, सम्भव है, इसी परम्परा मे विरासत मे मिला है। एक ही स्थान पर सुदीर्घ काल तक ठहर कर राजकुमारो के पठन-पाठन के कार्य से कुशललाभ और अभयधर्म जैन

यतियो की परम्परा के साधु प्रतीत होते है। अधिकाश जैन यतियो ने इस काल मे राज्याश्रय ग्रहण कर लिया था, गृहस्थ धर्म को स्वीकार कर लिया था और सासारिक प्रपंचो मे पडकर हिन्दू, जैन, आर्य और अनार्य सभी सस्कृतियो से चमत्कारिक बातो को लेकर सामान्य जनता और सामन्त वर्ग पर अपना प्रभाव जमाने का प्रयास किया था। कुशललाभ ने यह सब कुछ नही भी किया हो तो भी यति परम्परा मे होने के कारण राज्याश्रय ग्रहण कर लिया था।

साहित्य निर्माण की रुचि

कुशललाभ एक योग्य गुरु के शिष्य थे और योग्य गुरुओ की परम्परा के एक विद्वान। ऐसी स्थिति मे स्वाभाविक है कि परम्परा की धार्मिक ग्रथो के पठन-पाठन की लीक मे ही बँधे न रहकर वह स्वय भी स्वतन्त्र साहित्य की रचना मे रुचि लेते। साहित्य के प्रति रुचि का स्पष्ट और सर्वप्रथम प्रमाण तो उनके द्वारा प्रतिलिपित 'हसदूत काव्य' मे ही मिल जाता है। पर हमे साहित्य निर्माण की ओर उनकी रुचि का सर्वप्रथम प्रमाण उनके द्वारा विरचित 'माधवानल कामकदल चौपई' और 'ढोलामारू चौपई' तथा 'पिंगल शिरोमणि' (जो निश्चित रूप से उपर्युक्त दोनो काव्यो के काल की ही रचना है।) मे मिलता है। प्राप्त कृतियो के आधार पर साहित्य निर्माण का काल सवत् 1616 का निश्चित होता है। यह असम्भव-सा ही लगता हैं कि कवि अपने प्रारम्भिक प्रयास मे ही इतने उत्कृष्टतम काव्यो की सरचना करने मे सक्षम रहा हो। अवश्य ही उसने इससे पाँच दस वर्ष पूर्व ही इस प्रकार का अभ्यास प्रारम्भ किया होगा। यद्यपि हमारे सामने उस काल के प्रयासो का नमूना मौजूद नही है। ऐसी स्थिति मे प्राप्त कल्पना के आधार पर ही हम यह निर्णय ले सकते हैं कि कवि ने सम्यक् रूपेण अध्ययन और स्वाध्याय के पश्चात् सवत् 1600 के उपरान्त सवत् 1605 या सवत् 1610 तक साहित्य निर्माण मे रुचि को जन्म दिया होगा। प्रारम्भिक रचनाये धार्मिक भी हो सकती हैं या अन्य विषयो की स्फुट रचना रचनायें भी और वे रचनाये सामान्य कोटि की लघु काव्य रचनायें रही होगी।

प्राप्त रचनाओ मे कई एक रचनायें ऐसी हैं जिनका कोई निश्चित रचना काल हमे नही मिलता है। सम्भव है ये रचनायें इसी काल की रही हो।

स्वर्गवास

कुशललाभ के स्वर्गवास व परिस्थितियो के विषय मे भी उनके आख्यान काव्यो मे हमे कोई विशेष जानकारी नही मिलती है। इसके लिये भी हमे अनुमानो का ही आश्रय लेना पडेगा। हमने कवि के जन्म की तिथि पूर्व मे सवत् 1575 और 1580 के आसपास निश्चित की थी। उनकी अन्तिम रचना हमे सवत् 1648 की 'गुणसुन्दरी चौपई' मिलती है। इसके बाद का कोई साहित्य अद्यावधि उपलब्ध

नही है। सवत् 1575 जन्म काल मान लेने पर 'गुणसुन्दरी चौपई' के रचना काल सवत् 1648 तक उनकी आयु 68 से 73 वर्ष की हो जाती है। वैसे तो हमारे यहाँ मनुष्य की आयु सौ या एक सौ बीस वर्ष की भी मानी जाती है और एक साधु के लिये इतनी आयु प्राप्त कर लेना कोई आश्चर्य की बात नहीं। पर साधारण रूप से 60 व 80 वर्ष की अवस्था मे लोगो को मरते देखा जाता है। सवत् 1648 के पश्चात् कुशललाभ की किसी रचना का उपलब्ध न होना यही सकेत देता है कि कुशललाभ या तो इतने वृद्ध और अशक्त हो चुके थे कि वे इससे आगे किसी कृति की रचना नही कर पाये या फिर उनका देहावसान हो गया होगा। अतः जब तक कोई प्रमाण इस विषय मे उपलब्ध न हो जाये हम 'गुणसुन्दरी चौपई' की सरचना के उपरान्त ही संवत् 1650 से सवत् 1655 मे उनकी मृत्यु की तिथि निश्चित कर सकते हैं।

तृतीय अध्याय

कुशललाभ का कृतित्व

जैन कवि कुशललाभ खरतरगच्छीय उपाध्याय अभयधर्म के शिष्य थे।[1] ये अपने समय के एक सशक्त कवि एव उच्चकोटि के विद्वान हुये हैं। अपने साहित्यिक जीवन के उषाकाल मे ये जैसलमेर के राजकुमार हरराज के आश्रित थे यह कवि की 'ढोलामारू चौपई'[2] माधवानल कामकन्दला चौपई[3], एव 'पिंगल शिरोमणि'[4] आदि कृतियो की पुष्पिका (प्रशस्तियो) से स्पष्ट है। कुशललाभ की रचनायें वि सं 1616 से 1648 तक की मिलती है। इससे कवि का लम्बे अर्से तक साहित्य सेवा करना प्रमाणित होता है।

कुशललाभ की अब तक प्राप्त कृतियां

1 माधवानल कामकदला चौपई[5]	वि स 1616
2 ढोलामारू चौपई[6]	वि स 1617

1 क) आनन्द काव्य महोदधि मो 7 पृ 143
(ख) तेजसाररास—राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर ग्रथाक 26546
(ग) गुडी पार्श्वनाथ स्तवन, एल डी इन्स्टीट्यूट, अहमदाबाद—राजस्थान विश्वविद्यालय पुस्तकालय द्वारा प्राप्त हुई।

2 डा श्री ब्रजमोहन जावलिया के निजी संग्रह से प्राप्त प्रति—प्रतिलिपि काल सं 1639 चौ 736

3 गायकवाड ओरियन्टल सीरिज पृष्ठ 441 चौ 661

4 पिंगल शिरोमणि परम्परा भाग 13

5 (क) श्री आचार्य विनयचन्द्र ज्ञान भण्डार लाल भवन जयपुर पुष्टा संख्या 13615–20
(ख) गायकवाड ओरियन्टल सीरिज बडोदा प्रथम भाग 1942

6 (क) वही–
(ख) ढोलामारू रा दूहा संपादकत्रय तृतीय सस्करण 2019 परिशिष्ट 2
(ग) पृ 266 से 315

3 जिनपालित जिनरक्षित रास[1]	वि. स 1621
4 तेजसार रास[2]	वि स 1624
5 अगडदत्त रास[3]	वि. स 1625
6 पिंगल शिरोमणि[4]	वि स. 1635
6 स्तंभन पार्श्वनाथ स्तवन[5]	वि. स 1638
8 भीमसेन राजहंस चौपई[6]	वि स 1643
9 शत्रुंजय यात्रा स्तवन[7]	वि. सं 1644
10 गुण सौन्दर्य चौपई[8]	वि सं. 1648
11 नवकार छन्द[9]	
12 गौडी पार्श्वनाथ[10]	
13 श्री पूज्यवाहणगीत[11]	
14 पार्श्वनाथ दशभवस्तवन गाथा[12]	
15 दुर्गा सात्तसी[13]	
16 भवानी छन्द[14]	

---

1 (क) महिमा भक्ति जैन ज्ञान भंडार—बडा उपाश्रय—बीकानेर ग्रथाक 2570
(ख) वही—द्वितीय प्रति ग्रंथाक 2569

2 (क) मुनि श्री कल्याण विजय भडार जालौर ग्र थाक 1126
(ख) वही ग्र थाक 44
(ग) राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर ग्र थाक 26546
(घ) राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, बीकानेर ग्रंथाक 1245
(ड) वही, ग्रथाक 1566
(च) वही, ग्रथाक 2039
(छ) श्री अभयजैन ग्रंथालय बीकानेर ग्रथाक 3712

3 भण्डारकर रिसर्च इन्स्टीट्यूट, बडौदा ग्रथाक 665

4 परम्परा भाग 13

5 श्री आचार्य विनय चन्द्र ज्ञान भण्डार —लालभवन, जयपुर पु स 37/80

6 एल डी इन्स्टीट्यूट अहमदाबाद ग्रंथाक 1217

7 श्री अभयजैन ग्रंथालय बीकानेर ग्रथाक 7744

8 दि, जैन मदिर दीवानजी कामा भरतपुर बस्ता न 270

9 आचाय श्री विनयचन्द्र ज्ञान भण्डार जयपुर पुष्ठा म 3731

10 (क) राज प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जयपुर ग्रथाक 6060
(ख) कृष्णशकर तिवारीजी के निजी संग्रह से प्राप्त ग्रंथाक 300

11 ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह—अगरचन्द नाहटा

12 एल डी इन्स्टीटयूट अहमदाबाद ग्रंथाक 975

13 अनूप सस्कृत लाइब्रेरी लालगढ पेलेस बीकानेर ग्रंथाक 68 (घ)

14 (क) रा प्र वि प्र उदयपुर ग्रथाक 602 2423
(ख) श्री पूज्य जी का उपाश्रय बीकानेर—ग्रंथाक नही है (अव्यवस्थित है)

17 स्थूलिभद्र छत्तीसी[1]
18 कवित्त सवैया[2]

कृतियों का वर्गीकरण

आख्यान काव्य

लोक आख्यान
1 ढोलामारु चौपई
2 माधवानल चौपई
3 तेजसार रास
4. अगडदत्त रास
5 भीमसेन राजहंस चौपई
6 गुण-सुन्दरी चौपई

धर्म आख्यान
1. जिनपालित जिन रक्षित रास
2 स्तंभन पार्श्वनाथ
3 शत्रुजय यात्रा स्तवन
4 नवकार छन्द
5 गौडी पार्श्वनाथ
6 श्री पूज्यवाहण गीत
7 पार्श्वनाथ दशभव स्तवन
8 छदुर्गासातसी
9 भवानीछन्द
10 स्थूलिभद्र छत्तीसी

अन्य
1 पिंगल शिरोमणि
2 कवित्त सवैया

लोक आख्यान कृतियों का सामान्य परिचय

ढोलामारू का कथासार

कथा का प्रारम्भ मंगलाचरण के साथ हुआ है (प्रस्तावना के बाद राजा पिंगल का उमादेवडी के साथ घात-प्रतिघात युक्त विवाह का तथा ढोला व मारवणी के जन्म का वर्णन है। पूगल के राजा पिंगल अकाल पडने पर पुष्कर जाते हैं। नरवर के राजा नल मनौती के लिए तीर्थयात्रा निमित्त वहाँ आते हैं)

किसी समय पूगल में राजा पिंगल राज्य करते थे। राजा पिंगल का विवाह बहुत ही घात प्रतिघात के बाद सोलह वर्ष की आयु मे आबू के अधिपति सामतसिंह देवडा की पुत्री उमादेवडी के साथ हुआ। उस समय उमा देवडी की आयु बारह वर्ष की थी। इनके एक पुत्री हुई जिसका नाम मारवणी था। मारवणी जब डेढ वर्ष की थी तब पूगल मे भयकर अकाल पडा। राजा पिंगल उस दुष्काल से बचने के लिए पुष्कर आये।

1 श्री अभय जैन ग्रंथालय बीकानेर ग्रथांक 87/4509
2 वही, बीकानेर ग्रंथाक 32870

उस समय नरवर मे राजा नल राज्य करते थे । उनके कोई सतान नही थी । राजा रात दिन चिंतित रहता था और सतान हेतु देवी देवता तंत्र-यत्र औषध आदि किया करता था । एक दिन एक परदेशी ने पुष्कर यात्रा से पुत्र प्राप्ति की वात वताई । राजा ने यात्रा का सकल्प किया । सौभाग्य से राजा को पुत्र प्राप्त हुआ और उसे साल्हकुमार नाम दिया गया । मृत्यु के भय से माता ने उसे ढोला नाम दिया । कुमार जव तीन वर्ष का होता है तव पुत्र मनौती पूरी करने पुष्कर यात्रा के लिए आते हैं । राजा पिंगल व राजा नल एक दूसरे से मिलकर वहुत प्रसन्न होते हैं । राजा नल मारवणी को देखकर ढोला मे उसका रिश्ता करके विवाह कर देते है । देश मे सुकाल पडने पर पिंगलराय पूगल लौटते है । मारवणी अभी अल्प आयु सुकुमार वालिका ही थी अत उसे ससुराल न भेजकर पिंगल अपने साथ ही उसे ले आते हैं ।

मालवा मे राजा भीम राज्य करते थे उनकी सुन्दर कन्या मालवणी है । राजा नल पूगल के मार्ग सकटो को देखते हुए ढोला का विवाह मालवणी से कर देता है । ढोला के विवाह के समय भी मारवणी की वात नही वताई गई । मालवणी सास के द्वारा दिए गए उपालम्भ से मारवणी के वारे मे जानती है और वह ढोला से पूगल से आने वाले प्रत्येक पथिक को अपने अधिकार मे रखने का वचन ले लेती है ।

समय व्यतीत होता रहा और पन्द्रह वर्ष व्यतीत हो गये । एक घोडो का सौदागर नरवर से पूगल घोडे वेचने आता है । वह मारू को देखकर पिंगल राजा के खवास से उसके वारे मे पूछता है । खवास उसे मारू के वारे मे सव वात वताता है । सौदागर पिंगलराय को ढोला की दूसरी पत्नी मालवणी के बारे मे वताता है । मालवणी छुप कर यह सव सुनती है और वह विरह व्यथित हो जाती है । मारू की विरह व्यथा छुपी नही रहती माता उसकी दशा देखकर राजा को वताती है । राजा को सौदागर वताता है कि मालवणी पूगल से जाने वाले प्रत्येक पथिक को मरवा डालती है और ढोला तक सन्देश पहुँच ही नही पाते हैं । राजा पिंगल को जव यह वात ज्ञात होती है तो वे पुरोहित को भेजना चाहते हैं परन्तु मारवणी के कहने से राजा ढाढियो को भेजने के लिए तैयार हो जाते हैं । मारू ढाढियो को अपना विरह से दग्ध प्रेम सदेश ढोला तक पहुँचाने के लिए कहती है और सुध न लेने पर ढोला को उपालम्भ पर उपालम्भ देती है । ढाढी भाट वेश मे नरवर के लिए प्रस्थान करते हैं । मालवणी उन्हे याचक जानकर छोड देती है । ढाढी नरवर मे पहले भाऊ भाट से मिलते हैं और सव कुछ वता देते हैं । भाऊ भाट अवसर देखकर उन्हे ढोला से मिलवा देता है और इस प्रकार ढोला को मारवणी से पूर्व विवहिता होने की वात ज्ञात होती है । ढोला ढाढियो को इनाम आदि देकर उनके साथ भाऊ भाट को भी भेज देता है । ढाढी व भाट पूगल पहुँच कर पिंगल राजा को ढोला के सव समाचार विस्तार पूर्वक कहते हैं ।

ढोला मारू के लिए चिंतित हैं । मालवणी प्रिय को उदास देखकर खवास से कारण पूछती है तव खवास पूगल से आने वाले पथिको एव भाऊ भाट के घात के

बारे मे बताता है। मालवणी ढोला को उदासी का कारण पूछती है। ढोला बहाने बनाता है तथा परदेश गमन की इच्छा व्यक्त करता है। परन्तु मालवणी के सामने उसके बहाने नही चलते अन्तत ढोला मारु के बारे मे बताता है और उसे लाने की इच्छा भी व्यक्त करता है। इस अप्रत्याशित एव आगत विरह की कल्पना से वह मूर्च्छित हो जाती है। होश मे आने पर वह भयानक गर्मी का, वर्षा की कीचड एव शीत की कठोरता का स्मरण करा कर ढोला को चार मास तक रोके रखती है। ढोला मालवणी से अपार प्रेम होने के कारण रुक तो जाता है परन्तु मारवणी को भुला नही पाता। ढोला का धैर्य का अन्त हो जाता है और वह पूगल प्रस्थान का दृढ निश्चय कर लेता है तब मालवणी कहती है कि उसकी सुप्तावस्था मे प्रस्थान करें। पन्द्रह दिन तक मालवणी सोती नही। आखिर प्रकृति की ही विजय होती है एक रात मालवणी को नीद आ ही जाती है और ढोला पूगल की राह लेता है। ऊँट की आवाज से मालवणी जाग पडती है परन्तु तब तक ढोला बहुत दूर निकल जाता है। मालवणी प्रिय वियोग मे दुखित हो करुण क्रन्दन करती है। वह शुक को ढोला को लौटा लाने के लिये भेजती है किन्तु वह भी निराश लौट आता है। ढोला पूगल की ओर बढता है। रास्ते मे उसे एक बनिया मिलता है वह उसे पत्र देना चाहता है पर ढोला रुकना नही चाहता वह वणिक को ऊँट पर बैठा लेता है। वणिक पत्र लिखकर खत्म करता है वही उसका गन्तव्य स्थान आ जाता है। वणिक भी ऊँट की गति देखकर आश्चर्य करता है।

मार्ग मे ढोला को ऊमर सूमरा का एक चारण मिलता है। वह ढोला को मारू सम्बन्धी भ्रामक सूचनाएँ देता है। ढोला मारू की ओर से खिन्न हो जाता है। ऐसी मानसिक ऊहापोह मे उसे मारू का एक चारण और मिलता है वह ढोला को वास्तविकता से परिचित कराता है। ढोला उसकी बातें सुनकर प्रसन्न होता हैं और पूगल की ओर आगे बढता है।

उधर मारू को स्वप्न मे प्रिय मिलता है और यह वृतात वह माता से कहती है। अगले दिन वह सखियो के साथ शाम को कुयें पर जाती है तब उसके शरीर मे शुभ शकुन उत्पन्न होते है। कुयें पर ढोला भी पानी पीने आता है। वही दोनो का प्रथम साक्षात्कार होता है। मारवणी ढोला की बातो से, उसे पहचान जाती है और तुरन्त ही वापस घर आती है। पश्चात् ढोला की आगवानी के लिये आदमी भेजे जाते हैं ढोला के आने पर सखियाँ मारवणी को सजाती है। तरह-तरह के सुख भोगता हुआ ढोला पन्द्रह दिन ससुराल मे रहता है। तत्पश्चात् ढोला के कहने पर राजा पिंगल मारू व ढोला को दहेज देकर नरवर के लिए आनन्द एव उत्साह के साथ विदा करते हैं। चलते-चलते मार्ग मे रात्रि होने पर ढोला ने पडाव डाला। यहाँ एक अप्रत्याशित घटना घटती है। मारवणी को 'पीणा' साँप पी जाता है। ढोला विलाप करता है लोग मारू की बहिन चपावती से विवाह करने के लिए समझाते हैं पर वह नही मानता तथा मारू के साथ ही चितारोहण के लिए तैयार हो जाता है। सयोग से

उसी समय एक योगी योगिन उधर से आ निकलते है। योगिनी मारू को जीवित करने के लिए योगी से अनुरोध करती है। योगी अभिमन्त्रित जल छिड़ककर मारवणी को पुन जीवित कर देता है। मारवणी के पुन जीवन पाने की खुशी मे ढोला योगिन को नौसर हार तथा योगी को वस्त्र आभूषण देता है।

ढोला शीघ्र ही नरवर पहुँचना चाहता है परन्तु दुर्भाग्य अभी उसका पीछा नही छोडता। मारू पर अनुरक्त ऊमर सूमरा घात लगाकर ढोला मारू का पीछा करता है। ढोला ऊमरा सूमरा को नही जानता अत उनके निमत्रण पर वह मद्यपान के लिये रुक जाता है। मारू के पीहर की डूमणी गीत के माध्यम से मारू को अमगल की सूचना देती है। मारवणी चिंतित होती है और ऊँट को छडी से मारती है। ढोला ऊँट को समालने आता है तव मारू ऊमर के षडयत्र के वारे मे वताती है। ढोला मारू ऊँट पर चढकर वायुवेग से चल देते हैं। ऊमर सूमरा भी घोडो से उनका पीछा करता है और अन्त मे निराश हो वापस लौटता है।

ढोला सकुशल नरवर पहुँचता है। पुत्र के पहुचने पर राजा नल वहुत उत्सव मनाते हैं और ढोला दोनो पत्नियो के साथ सुख से रहने लगता है कि एक दिन दोनो सपत्नियो मे अपने अपने प्रदेशो को लेकर वाद-विवाद हो जाता है। ढोला के हस्तक्षेप से वह कटु वाद-विवाद समाप्त हो जाता है। दोनो पत्नियो के भेद-भाव मिट जाते हैं और वे सभी सुख से रहने लगते हैं।

माधवानल कामकदला कथासार

एक समय इन्द्रपुरी मे राजा इन्द्र ने प्रसन्न होकर अप्सराओ को नाटक खेलने का आदेश दिया। अप्सराओ मे सवसे सुन्दर अप्सरा जयन्ती को अपने रूप और कला पर वडा घमड हो गया था इसलिये उसने यह सोचकर कि उसके विना नाटक हो ही नही सकता, नाटक मे भाग ही नही लिया। इन्द्र ने क्रुद्ध होकर जयन्ती को शाप दे दिया और वह शाप के फलानुसार मृत्युलोक मे शिला के रूप मे अवतरित हुई। इन्द्र ने शाप देने के वाद जयन्ती के विनती करने पर यह वरदान भी दे दिया था कि जव माधव ब्राह्मण उसका वरण करेगा तव वह शाप मुक्त हो जायेगी।

जयन्ती शिला रूप मे पुष्पावती नगरी मे अवतरित हुई। कैलाश पर्वत पर योगिराज शकर वारह वर्ष की समाधि मे अविचल वैठे थे। एक दिन समाधिस्थ अवस्था मे ही उनका मन उमा रमण के लिये चचल हो उठा और उसी अवस्था मे वह इस विचार से स्खलित हो गये। शकर के वीर्य के पृथ्वी पर गिरने की आशका तथा उसके द्वारा होने वाले सभाव्य उत्पात के विचार से प्रेरित होकर विष्णु ने प्रगट होकर उस विन्दु को अपनी अजली मे ले लिया और उसे एक कमलिनी की नाल मे रख दिया।

गगातट पर पुष्पावती नगरी मे राजा गोविंद चन्द राज करता था। इस राजा के पुरोहित शकरदास के कोई पुत्र नही था इसलिये वह वहुत दुखी रहता था। एक रात उसे शिव ने स्वप्न मे वताया कि गगातट पर जाओ वहा तुम्हे एक पुत्र मिलेगा। दूसरे दिन प्रात काल ब्राह्मण अपनी पत्नी के साथ गगातट पर गया और

एक बडे ही सुन्दर बालक को पाया । ब्राह्मण ने इसका नाम माधवानल रखा, जो बडा बुद्धिमान एव तेजस्वी था । एक दिन बारह वर्षीय बालक माधव अपने मित्रो के साथ नदी तट पर पहुचा । वहाँ शिलारूपिणी नारी को देखकर बालको ने खेल ही खेल मे माधवानल को दूल्हा बनाकर शिलारूपी नारी से विवाह कराया । माधवानल से विवाह के बाद वह शिलारूपी नारी अप्सरा बनकर आकाश मे उड गई और सभी बालक भयभीत हो देखते रह गये ।

इद्र लोक मे पहुच कर जयन्ती बहुत दु खी रहने लगी । उसे बारम्बार माधव का ध्यान आता था, वह सोचती थी कि माधव ने उसका उपकार किया है और वह माधव की विवाहिता है । एक रात वह माधव से मिलने आई और व्यथा प्रकट की । इसके बाद रोज वह माधव से छुप कर मिलने लगी । एक दिन जयन्ती सो गई अत उसे इन्द्रलोक पहुचने मे देरी हो गई जिसके कारण अन्य अप्सराओ ने जयन्ती के भेद को पा लिया और उन्होने इन्द्र से जाकर शिकायत कर दी । इन्द्र के शाप भय से जयन्ती ने थोडे दिन आना बन्द कर दिया । उसके न आने से माधव बडा दु खी रहने लगा । कुछ दिन बाद जयन्ती माधव के पास आई और उसे अपनी विवशता बताई । उस दिन से माधव स्वय इन्द्रपुरी जाने लगा । एक रात इन्द्र ने फिर अपने यहाँ नाटक का आयोजन किया । जयन्ती बडे सशय मे पड गई अन्त मे उसने माधव को भ्रमर का रूप देकर अपनी कचुकी मे रख लिया । सभा मे नृत्य करते समय वह अपने अगो को विशेष रूप से इसलिये नही मोडती थी कि कही कचुकी के बीच मे अवस्थित भ्रमर रूपी माधव दब न जाये । इन्द्र ने जयन्ती की इस दशा को बडे ध्यान से देखा और माधव रूपी भ्रमर को कचुकी मे देख बडा क्रुद्ध हुआ और उसने जयन्ती को वेश्या के रूप मे मृत्यु-लोक मे जन्म लेने का शाप दिया । इस शाप के कारण कामावती नगरी मे कन्दला वेश्या के रूप मे जयन्ती ने जन्म लिया । इधर माधव अप्सरा के प्रेम मे व्याकुल रहने लगा । अनजान मे माधव का रूप उसके लिये घातक था । नगर की सारी स्त्रियाँ उसके रूप पर मोहित थी तथा अपने घर का काम छोड़कर उसकी याद मे समय व्यतीत किया करती थी और अपने पति की ओर भी ध्यान नही देती थी । एक दिन कुछ आदमियो ने राज दरबार मे माधव के ऊपर स्त्रियो को दुश्चरित्रा बनाने का अभियोग लगाया और उसके निष्कासन की प्रार्थना की । राजा ने माधव के रूप का प्रभाव देखने के लिये उसे अपने यहाँ बुलाया जहाँ उसकी रानियाँ एव अन्य स्त्रियाँ भी थी । माधव के रूप को देखकर स्त्रियाँ विह्वल हो गई और कुछ तो अपने आपको सभाल भी न सकी । स्त्रियो की इस दशा को देखकर राजा ने माधव को निष्कासन की आज्ञा दी । माधव पुष्पावती को छोडकर घूमता हुआ कामावती पहुचा ।

इन्द्र महोत्सव के दिन राजा कामसेन के यहाँ नाटक खेला जा रहा था । मृदग आदि बाजे बज रहे थे । माधव भी राजद्वार पर पहुँचा किन्तु अन्दर से आते हुये तन्त्रीनाद एव मृदग की धुन को सुनकर अपना सिर धुनने लगा । द्वारपाल के

पूछने पर उसने बताया कि पूर्व की ओर मुँह किये जो पखावज बजा रहा है उसके अगूठा नही है इसलिये स्वर भग हो रहा है। द्वारपाल के द्वारा राजा को यह बात मालूम हुई तब उन्होंने माधव को बुलाया और बडा सत्कार किया। माधव ने कामकदला को देखा और कामकदला ने माधव को। दोनो एक दूसरे को परिचित से जान पडे। माधव सोचने लगा कि समवत यह वही अप्सरा तो नही है जिसने मुझे कुचो के बीच रख लिया था और कन्दला यह सोचने लगी कि कभी मैंने इसे अपने कुच के बीच स्थान दिया था कब दिया था स्मरण नही आता। इतने मे कदला का नृत्य प्रारम्भ हुआ और एक भ्रमर कदला के कुच के अग्र भाग पर आ बैठा। उस भ्रमर के बैठते ही स्मरण शक्ति जागृत हो गई और उसने माधव को पहचान लिया। ऐसा याद आते ही भ्रमर ने कुच पर दशन किया और कदला ने उसे पवनस्रोत से उडा दिया। नर्तकी की इस कला की ओर माधव को छोडकर किसी ने ध्यान नही दिया। अतएव माधव ने नर्तकी को पास बुलाकर राजा द्वारा प्रदत्त आभूषण कदला पर निछावर कर दिये। माधव के इस व्यवहार को राजा ने अपना अपमान समझा और उसे देश निकाले का दण्ड दे दिया। कामकदाला उसे अपने घर ले गई माधव कुछ समय तक कदला के साथ रहा और फिर कामावती छोडकर चला गया।

कदला के वियोग मे भटकता हुआ माधव राजा विक्रमादित्य के राज्य उज्जैन पहुचा और अपने वियोग दु ख से छुटकारा पाने हेतु शिव मन्दिर मे गाथा लिखी जिसे पढकर विक्रमादित्य बडा दुखी हुआ। विक्रमादित्य की आज्ञा से इस विरही को ढूंढा जाने लगा। गोप विलासनी वेश्या ने शिव मन्दिर मे माधव को ढूंढ निकाला। राजा ने वेश्या से प्रेम त्यागने को कहा लेकिन माधव के न मानने पर विक्रमादित्य ने कामावती पर चढाई करदी। कामावती मे विक्रमादित्य ने कदला की परीक्षा लेते समय माधव की मृत्यु का झूंठा सन्देशा कहा जिसके कारण कदला की मृत्यु हो गई। कदला की मृत्यु का हाल जानकर माधव भी मर गया। वेताल की सहायता से अमृत प्राप्त कर विक्रमादित्य ने दोनो को पुन जीवित किया और उसके उपरान्त विक्रमादित्य के कहने पर कामसेन ने कदला को माधव को सौंप दिया। इस प्रकार कंदला को प्राप्त कर माधव अपने पिता के यहाँ पुन लौट आया।

तेजसार रास का कर्त्ता

कुशललाभ के द्वारा विरचित कथा-साहित्य मे 'तेजसार रास' का भी प्रमुख स्थान है। इस रचना को प्रकाश मे लाने का सर्वप्रथम श्रेय जैन गुर्जर कवियो-भाग 1 के सम्पादक श्री मोहनलाल दूलीचद देसाई को है।[1] डॉ हीरालाल माहेश्वरी[2] और डॉ मोतीलाल मेनारिया[3] ने भी अपनी 'राजस्थानी भाषा और साहित्य'

1 जैन गुर्जर कविओ-भाग-1 पृ० 214-15। क स 249
2 राजस्थानी भाषा का साहित्य—डॉ० हीरालाल माहेश्वरी, पृ० 259
3. राजस्थानी भाषा और साहित्य—डॉ० मोतीलाल मेनारिया, पृ० 141

पुस्तको मे कुशललाभ की उक्त रचना का उल्लेख किया है। श्री प्रेमसागर जैन ने इस रचना को दीप-पूजा से सम्बन्धित काव्य मानते हुये कहा है कि कुशललाभ ने इसकी रचना अपने गुरु अभयदेव से प्रेरणा पाकर की थी।[1] श्री जैन द्वारा इस काव्य को दीप-पूजा से सम्बन्धित मानने के आधार 'जैन गुर्जर कविओ' भाग 1 मे उल्लिखित तीन प्रतियो मे से प्रथम स 1644 वि पौष शुक्ला 14 को राजपुर (अहमदाबाद) मे तपागच्छीय सहजविमल द्वारा प्रतिलिपि प्रति है, जिसकी अंतिम पुष्पिका मे इसे 'दीप-पूजा विषये रास' सज्ञा दी गई है। श्री अगरचन्द नाहटा ने भी कुशललाभ के कृतित्व के परिचय विषयक अपने एक लेख मे उक्त रचना 'तेजसार रास' का भी उल्लेख किया है।[2] पर सामान्य सूचना को छोडकर इस रचना पर अद्यावधि कोई विशेष प्रकाश नही डाला गया है।

415 छन्दो मे विरचित यह लघु काव्य काल्पनिक पात्र और घटनाओ से युक्त जैन-दर्शन के प्रचार-प्रसार का साधनरूप एक आख्यान है। इसमे मुख्य पात्र बनारस के राजकुमार तेजसार के जन्म और जीवन से सम्बन्धित चमत्कारी वर्णन प्रस्तुत किया गया है और अनन्त ऐश्वर्य और भोगो के उपभोग के उपरान्त तेजसार को दीक्षा दिलाकर कथा की सुखप्रद समाप्ति की गई है। सरल सहज-प्रवाहमयी राजस्थानी भाषा मे विरचित इस आख्यान मे भाव-सौष्ठव, मार्दव, ऋतुता, सहज अभिव्यक्ति, धार्मिक अभिव्यजना के साथ-साथ भारतीय आर्य सस्कृति और लोक तत्त्वो का सम्यक् समावेश मिलेगा।

अपने अनुसधान कार्य के लिये यात्रा करते समय मुझे कुशललाभ कृत उक्त काव्य की कई एक प्रतियाँ प्राप्त हुई है। पर मेरे आश्चर्य की कोई सीमा न रही, जब मुझे जालौर स्थित इतिहासवेत्ता मुनि श्री कल्याणविजय जी के ग्रन्थ भडार का अवलोकन करते समय इस भण्डार मे वही ग्रथ रचयिता के रूप मे वृहत्तपागच्छीय वाचक जयमदिर के नाम से मिला।[3] प्रारम्भिक वदना एव अन्तिम प्रशस्ति मे रचयिता के नाम, रचना स्थान, गुरु नाम और गच्छ-नाम मे अन्तर के अतिरिक्त कथा भाग मे प्रारम्भ से अत तक भाषा, शैली या छन्दक्रम आदि किसी मे भी कोई अन्तर नही मिलता है। इसी भण्डार मे कुशललाभ विचरित सस्करण की भी एक प्रति प्राप्त हुई है।[4]

उक्त जयमदिर सस्करण की दो और प्रतियाँ मुझे राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान के बीकानेर स्थित शाखा कार्यालय मे भी मिली हैं[5] इनमे से एक का लिपि

1 हिदी जैन भक्ति काव्य और कवि—डॉ० प्रेमसागर जैन, पृ० 118
2. राजस्थान भारती—भाग 1, अक 4, जनवरी 1947, पृ० 22
3 मुनि कल्याणविजय-ग्रन्थ भण्डार—जालोर-ग्रन्थाक 194/1126 (पत्र स० 13)
4 मुनि कल्याणविजय-ग्रन्थ भण्डार, जालोर-ग्रथाक 194/1124 (पत्र स० 1223)
5 राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, शा का. बीकानेर
(1) ग्रन्थांक 1544 (तेजसार नृपरास), (2) ग्रन्थांक 1569 तेजसार चौपई।

काल स 1675 वि. है

कुशललाभ सस्करण की प्रतियो मे अन्तिम प्रशस्ति निम्नाकित है

श्री खरतगछि सहि गुरुराय, गुरु श्री अभयधर्म उवझाय ।
सोलहसइ चौवीसि सार, श्री वीरमपुर नयर मझारि ।।15

अधिकारे जिन पूजा तणइ, वाचक कुशललाभ इम भणइ ।
जे वाचइ नइ जे सामलइ, तेहना सहु मनोरथ फलइ ।।16

उपर्युक्त प्रशास्ति से निम्नलिखित निष्कर्ष निकलता है

1 वाचक कुशललाभ खरतगच्छ के साधु थे ।
2 उनके गुरु का नाम उपाध्याय अभयधर्म था ।
3 कुशललाभ ने उक्त तेजसार रास की रचना सवत् 1624 मे की ।[1]
4 आपने इस ग्रथ की रचना वीरमपुर नगर मे की ।

जबकि जयमदिर संस्करण की अन्तिम प्रशस्ति निम्न प्रकार है

श्री वडतपगछ सहिगुरुराय, गुरु श्री जयप्रभ उवझाय ।
सवत् पनरसइ बाणू सार, श्री त्रबावती नयर मझारि ।।13

अधिकारि जिन पूजा तणइ, वाचक जयमदिर इम भणइ ।
जे वाचइ नइ जे सामलइ, तेहना सकल मनोरथ फलइ ।।14

1—वाचक जयमदिर बडतपगच्छ (वृहद्तपागच्छ) मे सबधित था ।
2—उसके गुरु का नाम उपाध्याय जय-प्रभ था ।
3—जयमदिर ने तेजसार रास को रचना स 1592 मे की ।
4—ग्रथ की रचना त्र बावती मे की गई ।

दोनो सस्करणो मे प्राप्त रचयिता के नाम रचना सवत्, रचना स्थान, रचयिता के सम्प्रदाय (गच्छ) और उनके गुरुनामो से युक्त सूचनिका मे अन्तर ने हमारे सामने एक विकट समस्या उत्पन्न कर दी है । 'तेजसार रास' नाम की इस रचना का रचयिता ऐसी स्थिति मे किसे माना जाय कुशललाभ को या जयमदिर को ?

यश अथवा अर्थ-प्राप्ति की लालसा से अन्यो की कृतियो मे अनधिकृत रूप से अपनी छाप लगाकर की जाने वाली तस्करी सदा से होती आई है पहले भी होती थी और आज भी होती है । द्रुतगामी यातायात के साधनो के कारण आज के युग मे प्रकाशित सामग्री मे की जाने वाली तस्करी का पता सम्यक् अनुशीलनशील पाठको मे से किसी न किसी को तत्काल लग ही जाता है जबकि पूर्वकाल मे दूरस्थ स्थानो से

1 तेजसार रास के कुशललाभ संस्करण की कुछ प्रतियाँ ऐसी भी मिली हैं जिनमे रचना काल स० 1634 वि० दिया गया है ।

चुराकर अन्यत्र लिपिबद्ध की जाने वाली कृतियो का उपभोग निश्चितता से किया जा सकता था। ऐसी कई एक रचनाओ का पता चला है जिनकी ख्याति अब तक तस्करो के नाम के साथ सम्बद्ध थी पर आज के अन्वेषको ने वास्तविक रचयिताओ का पता लगाकर पुन सत्य की स्थापना की है। महाराणा कुम्भकर्णकृत 'सगीतराज' को हम उदाहरण के रूप मे रख सकते हैं, जो अनूप सस्कृत पुस्तकालय मे प्राप्त एक परिवर्तित पाठयुक्त प्रति के आधार पर किन्ही महाराजा कालसेन के नाम से ख्याति प्राप्त कर चुकी थी। डॉ व्रजमोहन जावलिया ने 'महाराणा कुम्भकर्ण कृत सगीतराज और कालसेन' शीर्षक एक शोधपूर्ण लेख मे इस रहस्य का उद्घाटन किया है।[1] राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर से प्रकाशित टॉड कृत 'पश्चिमी भारत की यात्रा' का श्री गोपालनारायण बहुरा कृत हिन्दी अनुवाद का उदाहरण आज के युग की तस्करी के रूप मे प्रस्तुत किया जा सकता है—जिसकी सामान्य परिवर्तन के साथ एक प्रसिद्ध इतिहासकार के अनुवाद के रूप मे इलाहाबाद के एक प्रकाशक ने प्रकाशित किया है। इस प्रकार की तस्करियो मे ऐसी कुछ स्खलन अवश्य रह जाती हैं जो कभी न कभी तो सत्य का उद्घाटन अवश्य कर ही देती हैं। इन ग्रथो मे भी ऐसी रचनाएँ रह गई हैं।

उक्त तेजसार रास के साथ भी ऐसी ही समस्या है। यह तो स्पष्ट है कि कुशललाभ या जयमदिर दोनो मे किसी एक पर चोरी का आरोप लगाया जा सकता है पर यह आरोप किस पर लगाया जाय यह विचारणीय है। दोनो सस्करणो के अन्तिम प्रशस्ति छन्दो मे ऐसी कोई रचना हमे दृष्टिगोचर नही होती जो निर्णय लेने मे सहायक हो सके। दोनो ही रचनाओ मे रचना सवत् के साथ न तो तिथि दी गई है और न ही वार का निर्देश, जिन्हे पचाग (एफेमेरीज) से सवत् मिलाकर किसी को जाली घोषित करने मे हम सक्षम हो सकें। ऐसी स्थिति मे रचना-तिथि की प्राचीनता के आधार पर कोई भी पाठक जयमदिर की प्रति को मूल और कुशललाभ सस्करण को जाली कहते हुए नही हिचकिचाएगा। पर यह कुशललाभ के प्रति अन्याय होगा। जयमदिर सस्करण की कोई प्रति जब तक कुशललाभ सस्करण के रचना सवत् से पूर्व की नही मिल जाय इस आधार पर सत्य का अन्वेषण कर पाना कठिन ही नही असम्भव कार्य है।

फिर भी कुछ सिद्धान्त अवश्य स्थापित किये जा सकते है, जिनके आधार पर रचयिता का पता लगाया जा सके। वे हैं रचना की भाषा, शैली तथा रचयिताओ की इस ग्रथ के रचनाकाल से पूर्व की प्रतिभा और समाज मे प्रतिष्ठा। जयमदिर और जयप्रभ नाम के साधुओ का उल्लेख हमे अवश्य मिलता है पर प्रस्तुत ग्रथ को छोडकर न तो कही उनके मध्य गुरु-शिष्य सबध का पता लगता है और न वृहद्तपा-गच्छ से ही उनके सबंध का। उक्त जयमदिर रचित और कोई प्रति भी हमे नही मिली,

1 विश्वम्भरा–रेऊ विशेषाक–वर्ष 4 अंक 1-2-3 और वर्ष 5 अक 1 (1967-68)

जिसके आधार पर उसकी प्रतिभा का परिचय मिल सके। इसके विपरीत कुशललाभ ने इस रचना के रचनाकाल स 1624 से पूर्व विरचित अपनी रचनाओ पिंगल शिरोमणि (र का 1575 वि) माधवानल कामकदला चौपाई (र का. स 1616 वि), ढोलामारू री चौपाई (र. का स 1617 वि) आदि उनके प्रौढ़ रचनाओ के आधार पर राज्य और समाज मे पर्याप्त सम्मान और यश तथा समवत. अर्थ की भी प्राप्ति कर चुका था। ऐसी स्थिति मे यह सम्भव प्रतीत नही होता कि उसने 'तेजसार रास' जैसी रचना की, जो उत्कृष्ट कोटि की होते हुए भी माधवानल कामकदला चौपाई और ढोला मारू की चौपाई के स्तर की नही ठहरती, कुशललाभ ने चोरी की हो विशेष रूप से यह इसलिए भी असमव था कि यह रचना उसी के काल की थी और स. 1624 तक के 32 वर्ष के जीवन मे इस रचना ने अवश्य ही जनता मे प्रसार पा लिया होगा। त्र्ंबावती से नातिदूर वीरमपुर तक इस रचना ने इस अवधि मे प्रसार न पाया हो और सदा भ्रमणशील रहने वाले जैन साधुओ की दृष्टि से यह अस्पृष्ट रह पाई हो यह सभव नही लगता। ऐसी अवस्था मे कुशललाभ जैसे प्रतिष्ठा सम्पन्न व्यक्ति पर आरोप लगाते समय हमे कुछ सोचना पडेगा।

जो व्यक्ति ढोला मारू री चौपाई मे भी प्राचीन दोहो का उपयोग करते समय स्पष्ट निर्देश कर सकता है कि दोहे उसके द्वारा विरचित नही, 'घणा पुराणा अछइ', वह तेजसार रास मे ऐसी अनीति का व्यवहार क्यो करता। यह विचारणीय है। रचना की भाषा और शैली मे भी माधवानल कामकदला चौपाई आदि रचनाओ से कोई विशेष अन्तर नही लगता। दोनो सस्करणो के अतिम प्रशस्ति छन्द ही वास्तविक रचयिता के अन्वेषण मे निर्णायक सिद्ध हो सकते है। सूक्ष्मावलोकन से हमे पता चलेगा कि कुशललाभ सस्करण के प्रशस्ति-छन्द मे किसी प्रकार का छन्दो भग अथवा त्रुटि नही है, जबकि जयमदिर सस्करण के प्रशस्ति-छन्द स 13 मे 'श्रीवडतपगच्छ सहि गुरुराय, गुरू श्री जयप्रभ उवझाय' मे ऐसा प्रतीत होता है जैसे 'जयप्रभ' नाम बलात् जोडा गया हो। यही स्थिति 'वडतपगछ' शब्द की है। लगता है अपने सम्प्रदाय और परम्परा के आचार्यों को ख्यातिदान के मोह के वशीभूत किसी ने कुशललाभ की रचना के प्रशस्ति-छद मे उक्त परिवर्तन कर दिया होगा। जो कालान्तर मे परिवर्तित सस्करण से की जाने वाली प्रतियो मे भी हो गया और उपलब्ध हुई प्रतियाँ भी इसी का परिणाम है। अत यही मानना उचित होगा कि 'तेजसार रास' का वास्तविक रचयिता कुशललाभ ही रहा होगा जयमदिर नही।

फिर भी इस अनुभूति के आधार पर कि राज्याश्रय प्राप्त व्यक्तियो मे अर्थ और यश लिप्सा हेतु अनैतिकता का समावेश हो जाता है कुशललाभ ने भी राज्याश्रय प्राप्त कर प्रमादवश दूसरो की रचना पर अपनी छाप छोड दी हो रेवल्पाश मे इस तर्क पर विचार किया जा सकता है और उसका निर्णय स 1624 से पूर्व की जयमदिर-विरचित किसी प्रामाणिक प्रति के मिल जाने पर ही हो सकता है।

तेजसार रास का कथासार

किसी समय बनारस नगरी मे वीरसेन राजा राज्य करता था। एक रात उसकी रानी पद्मावती स्वप्न मे प्रज्वलित दीपक देखती है, स्वप्न निमेषी बताते हैं कि रानी तेजस्वी पुत्र को जन्म देगी। समय पूर्ण होने पर रानी पुत्र को जन्म देती है जिसका नाम तेजसार रखा जाता है। तेजसार जब सात वर्ष का था माता का देहात हो जाता है और राजा दूसरा विवाह कर लेता है। उस रानी से विक्रमसिंह नामक पुत्र होता है वह तेजसार से द्वेष रखता है। राजा को भी मत्री, पुत्र आदि तेजसार के विरुद्ध भडकाते हैं जिससे वीरसेन तेजसार से रुष्ट हो जाता है और तेजसार एक रात महल छोडकर निकल जाता है और त्रबावती नगर पहुँच जाता है।

त्रबावती मे त्रबकसेन राज्य करता था। तेजसार गुरु के पास रहकर विद्या प्राप्त करने लगा। एक बार तेजसार जगल से खडपूले लाते समय मार्ग भूल जाता है। मार्ग मे उसे एक भयकर राक्षस मिलता है जो तेजसार को देख अपना भक्ष्य जान बडा प्रसन्न होता है। राक्षस के पैर कोमल तथा दृष्टि तीव्र थी। तेजसार इसका कारण जानकर राक्षस के चगुल से बच निकलता है, बदले मे राक्षस उसे विद्या सिखाता है। वह वापस अपने गुरू के पास आ जाता है और सोचता है कि प्रति दिन पाँच सौ गठ्ठर घास के लाये जाते है घर मे कोई पशु नही है अत यह घास कहाँ जाता है। एक दिन वह देखता है कि पडयाणी मध्य रात्रि को वस्त्र उतारकर घास मे लौटते ही रासभी होकर सारा चारा चर जाती है। कुमार जान जाता है कि यह सिकोत्तरी है अत वह सभी विद्यार्थियो को अपनी बुद्धि से राक्षस द्वारा दी गई विद्या के प्रयोग से बचा लेता है। सिकोत्तरी से छूट कर वह अपने आपको जगल मे पाता है। वन मे ही वह एक सुन्दर नारी को बधी हुई देखता है जिसे जोगी ने अपनी सिद्धि हेतु बाँधा है राजकुमार उस योगी से कन्या को छुडाता है। बदले मे योगी उसे रूप परिवर्तन और अदृश्य होने की विद्या सिखाता है।

राजकुमारी का नाम विजयश्री है, वह केवली द्वारा की गई भविष्यवाणी द्वारा तेजसार को पति रूप मे पाने की बात बताती है और तेजसार को सामने देख प्रसन्न होती है। मार्ग मे विजयश्री को प्यास लगती है, कुमार उसे शीतल-मधुर जल पिलाता है और दोनो जलक्रीडा भी करते है विजयश्री थकी होने के कारण सो जाती है, कुमार तलवार ले उसकी रक्षा हेतु इधर-उधर घूमता हुआ। हिरणो के झुण्ड के साथ जाती एक सुन्दर कन्या एणामुखी को देखकर उसे पत्नी रूप मे पाने की इच्छा करता है, देखते-देखते वह कन्या अदृश्य हो गई, इधर विजयश्री भी उसे नदी किनारे नही मिलती। राजकुमार चिंतित हुआ उनकी खोज मे निकलता है। एक जगह वह पाँच सुन्दर कन्याओ को देखता है जिसमे विजयश्री भी होती है, वह उन पाचो से विवाह कर लेता है और विद्याधरी को पटरानी बना लेता है।

वह सुख से रहने लगता है कि एक दिन विद्याधरी का भाई विद्याधर खल-

नायक के रूप मे आता है और तेजसार को अपनी अलौकिक शक्ति से युद्ध करवाता है और उसे नदी मे गिरा देता है।

नदी से निकल कुमार अपनी पाचो नारियो के वियोग मे दुखी हुआ वन मे घूमता रहता है कि उसे एक नारी तथा कुमारी रोती हुई दिखाई देती है। यह कुमारी पद्मावती है जिसके लिए पडितो ने कहा था कि इसका होने वाला पति सारे राज्य का अधिकारी होगा। राज्य प्राप्त करने के लिए ही इस नगर मे भयकर युद्ध हो रहा था उसी समय सेना राजकुमारी को घेर लेती है लेकिन तेजसार अपनी मत्र विद्या से सेना को स्तम्भित कर सहार कर देता है। कन्या का पिता व्रजकेसरी बहुत प्रसन्न होता है और वह पुष्पावती का विवाह तेजसार से कर देता है। वज्रकेसरी का शत्रु सूरसेन भी उसकी वीरता से प्रसन्न हो अपनी कन्या भी उसे व्याह देता है।

इधर विद्याधर अपनी बहन को मार चारो कन्याओ से विवाह करना चाहता है, परन्तु विजयश्री विद्याधर को मारकर सभी को बचा लेती है और वे सभी तेजसार का पता लगाकर उसके पास आ जाती हैं। तेजसार सातो रानियो के साथ सुख से रहने लगता है कि एक रात व्यतरी श्रीदत्ता उसे उठा ले जाती है और अपनी पुत्री एणामुखी से उसका विवाह कर देती है यह वही कन्या थी जिसे तेजसार ने मृगो के साथ देखा था।

उसी समय आकाश से नारी रूपा व्यतरी उतरी जो तेजसार की ही माता होती है माता पुत्र मिलकर प्रसन्न होते हैं। तेजसार की माता और एणामुखी की माता दोनो ही व्यतरियाँ हैं और वे अपनी अलौकिक शक्ति से वहाँ एक भव्य एव सम्पन्न नगर का निर्माण करती हैं। तेजसार का दुश्मन समरसेन युद्ध मे पराजित होता है। तेजसार अपनी सातो रानियो को भी वहीं तेजलपुर मे बुला लेता है। तेजसार की माता पुत्र को सुखी एव सम्पन्न देख अपने स्थान को चली जाती है।

कुछ समय बाद तेजसार के पिता वीरसेन अपने पुत्र को बुलवा भेजते है। तेजसार अपने पिता के पास सकुटुम्ब एव ससैन्य आ जाता है और सुख से राज्य सचालन करता हुआ रहता है। उसी समय मुनि सुव्रतस्वामी आते हैं। तेजसार के पिता मुनि से दीक्षा ले लेते है और तेजसार श्रावक हो जाता है। तेजसार की आठो रानियो से आठ पुत्रो का जन्म हुआ, उन आठो का विवाह अति उमग से किया गया और सभी को अलग-अलग स्थानो का राज्य सौप दिया गया। मुनि सुव्रत के आने पर तेजसार अपना पूर्वभव जानकर सयम की महिमा जानता है. धर्मज्ञान सुनकर तेजसार ने ससार को अस्थिर जाना और घर आकर वैराग्य धारण किया और सुव्रतस्वामी से 'चरित्र' लिया। दूसरे जन्म मे 'सिद्ध' हुआ, बाद मे श्रावक कुल मे जन्म लेकर केवल ज्ञान प्राप्त किया और शिवपुर को गया।

भीमसेन राजहंस चौपाई कथासार :

किसी समय श्रीपुर नगर मे भीमसेन राजा राज्य करता था। उनकी रानी प्रीतम मजरी थी। राजा ने एक वन (नदनवन) बनवाया उसमे विविध फलो के वृक्ष

लगवाये। राजा के मंत्री का नाम सुमति था उसका पांचवा पुत्र हितसागर राजा का मित्र था। राजा व हितसागर रनिवास सहित नन्दनवन मे आता है और वृक्षो की विशेषताएँ पूछता है और इस प्रकार आनन्द से रहता है।

उसी समय विशालपुरी मे राजा रिणकेसरी था, रानी कमलावती की पुत्री मदनमजरी रूप यौवन मे अद्वितीय है। माता पिता को उसके विवाह की चिन्ता है। उसी समय एक सन्यासी आया जिसके पास एक शुक है। वह शुक बहुत ज्ञानी था और रानी के पूछे जाने पर वह रूपमजरी का वर राजा भीमसेन बताता है। रानी यह सब बात राजा को बताती है पर राजा पुत्री को इतनी दूर नही देना चाहता है। रूपमजरी यह सब सुनती है और वह मन ही मन अपने पति को प्रणाम करती है। कुमारी सन्यासी से उस शुक को ले लेती है और उससे भीमसेन के रूप सौन्दर्य के बारे मे पूछती है।

राजा रिणकेसरी पुत्री का रिश्ता सिंघल द्वीप के सगरराय से कर देता है। महोत्सव देख दासी के द्वारा अपने रिश्ते की बात सुनकर वह दुखी होती है और कहती है कि मैं तो भीमसेन से ही विवाह करूगी। धावी यह सब बात माता को कहती है, राजा को जब यह बात ज्ञात होती है तो कुमारी को बालिका समझ कर कोई ध्यान नही देता, कुमारी भी लज्जावश पिता से कुछ नही कह पाती राजा उसी लज्जा को स्वीकृति समझ लेता है। मदनमजरी शुक को भीमसेन को बुला लाने के लिये कहती है। यही नही वह त्रिपुरा देवी जो मनोवाछित वर देने वाली है उसकी भी पूजा करके यही वर मागती है। शुक से वह शीघ्र सदेश ले जाने के लिये विनती करती है।

एक दिन राजा भीमसेन एक वृक्ष के नीचे बैठे थे तभी शुक आकर रूपमजरी का वह पत्र राजा को देता है और राजा से आग्रह भी करता है कि शीघ्र ही उस देश जाकर कुमारी के प्राणो की रक्षा करे। राजा, हितसागर को साथ ले शुक के साथ रवाना होते हैं शुक उन्हे मार्ग बताता चलता है। रास्ते मे शुक को वही सन्यासी मिलता है जो उसे बचपन मे पालता है, सन्यासी पर विपत्ती है शुक राजा से विनय कर उसे छुड़वाता है, सन्यासी भी राजकुमारी से पूर्व परिचित होता है अत राजा उससे उनका रूप सौन्दर्य पूछता है।

राजा भीमसेन विशालपुरी पहुच जाता है पर रात्रि होने के कारण वह त्रिपुरा देवी के मन्दिर मे ठहर जाता है और देवी से अपने मनोरथ पूर्ण करने के लिये प्रार्थना करता है। इसी बीच शुक राजकुमारी से सब बात जाकर कह देता है और राजकुमारी पूजा हेतु त्रिपुरा देवी के मन्दिर मे आती है। सगरराय भी कुमारी से शादी हेतु दलबल सहित आ पहुचता है। धावी से उसके आगमन की बात सुनकर रूपमजरी मूर्छित होकर पृथ्वी पर गिर जाती है। होश आने पर भीमसेन को वरण करने अन्यथा अग्नि प्रवेश की बात कहती है। रानी सगरराय से अपने भाई की पुत्री का विवाह करने को कहती है। रूपमजरी पिता के समझाने पर भी नही मानती और

रात्रि को धावी के सो जाने पर वह घर से निकल कर देवी मन्दिर में आकर देवी को उसकी इच्छा पूर्ण न करने के लिये उपालम्भ देती है और उसी के सामने अपनी वेणी से पेड की शाख के साथ फदा लगा लेती है। धावी कुमारी को अपने पास न देख वन मे उसे खोजने निकलती है कन्या को देख वह उसे बचाने के लिये शोर करती है जिसे सुनकर भीमसेन आते हैं और कन्या के बधन काटते है भीमसेन के पूछे जाने पर धावी सब वृतात बताती है। शुक भी राजा भीमसेन को वर बताता है जिससे सभी प्रसन्न होते हैं और त्रिपुरा देवी की साक्षी मे भीमसेन रूपमजरी से विवाह कर लेता है। राजा रिणकेसरी पुत्री को जीवित देख प्रसन्न होता है और सगरराय से अपनी पत्नी के भाई की लडकी का विवाह कर देता है। सागरराय इस धोखे से क्रोधित होता है और वे भीमसेन से बदला लेने के लिये अटवी मे घात लगा कर बैठ जाते हैं। मदनमजरी व भीमसेन विदा होकर उसी अटवी मे आकर विश्राम करते है और सगर की सेना द्वारा घेर लिये जाते हैं। भीमसेन अकेले ही युद्ध के लिये चल देते है रानी रथ से उतर कर वृक्ष पर चढकर सेना को देख भयभीत हो वन मार्ग से चली जाती है। भीमसेन विजय प्राप्त कर रानी को न देख दुखी होता है। शकुन प्रमाणी राजा को बताते है कि तुम्हे आज से सातवें दिन रानी मिल जायेगी। रानी भी विरह व्यथित भयग्रस्त तथा तृषाकुल हुई वन मे इधर-उधर घूमती हुई एक सरोवर के पास पहुचती है वहाँ से एक तपस्विनी उसे अपने आश्रम मे ले आती है। तरुवर के विष फल वृक्ष के बारे मे जानकर रानी तपस्विनी के चले जाने पर उसे खा लेती है। तपस्विनी उसे बचाने के लिये सहायतार्थ पुकारती है तपस्वी आकर उसका विष दूर करते हैं, इतने मे वहाँ अमगसेन आकर सूचित करता है कि भीमसेन कुशल हैं। भीमसेन अपनी रानी को देख हर्षित होते हैं। वह तपस्वी राजा और रानी को जमाई मानकर दस दिन उन्हे आश्रम मे रखते हैं और तपस्वी राजा को अदृश्य होने तथा विषधर का विष दूर करने की विद्या सिखाता है। भीमसेन विदा होकर अपने नगर श्रीपुर मे आकर आनन्द से रहने लगते हैं।

एक दिन राजा रानी सो रहे थे कि हस व हसी महल के ऊपर आकर बातें करते हैं। हस कहता है कि मैं रानी के गर्भ से अवतार लूंगा। गर्भावस्था मे रानी की दोहद पूर्ण करने के लिये जाते समय कठिनाईयो मे पड कर राजा वन मे पहुचता है वहाँ एक सन्यासी मिलता है और कनकलता कुमारी से उसका विवाह करता है। मदनमजरी अमृतफल का आहार करने की दोहद करती है जिसे हसी पूर्ण करती है। समय पूर्ण होने पर रानी को पुत्र प्राप्त होता है रानी उसका नाम राजहस रखती है। हसी अपने पूर्व पति अर्थात् राजहस से समय समय पर मिलती रहती है। राज-कुमार बडा हुआ और घोडे फेरने लगा। एक दिन वह वन मे बहुत दूर निकल गया और सरोवर देख पानी पीकर वृक्ष के नीचे विश्राम के लिये बैठा। उस वृक्ष पर एक कपि रहता था वह कुमार को सुकोमल जानकर सिह के बारे मे बताता है और पेड़ पर चढने का आग्रह करता है। कुमार शेर को मारता है जिससे कपि व सभी

वन चर प्रसन्न होते है। राजा भीमसेन अपने पुत्र को ढूंढते हुये वन मे आते हैं और पुत्र को पाकर और शेर को मारा गया जान कर प्रसन्न होते हैं। राजहस अमृतफल के प्रभाव के कारण सब भाषायें (सार्विज भाषा पशु पक्षी की भाषा) जानने के कारण फेतकारी की बात सुन अर्द्ध रात्रि मे नदी मे गिरी हुई स्त्री को निकाल कर बहुत सा धन प्राप्त करता है और श्रीपुर आकर भीमसेन राजहस को युवराज बना देता है।

अवतीपुर के राजा शधराज की पुत्री रूपमति के स्वयवर मे राजहस को भी बुलाया जाता है। राजहस हसी की सहायता द्वारा रूपमती को प्राप्त करने मे सफल होता है। कुमार एक मास अवतीपुर रहकर श्रीपुर के लिये रवाना होता है। मार्ग मे मुनि श्री राम से धर्म उपदेश प्राप्त करता है और मुनि श्री को श्रीपुर के लिये आमत्रित करता है। मुनि श्रीराम श्रीपुर आते है। धर्म व्याख्या सुनने से भीमसेन को वैराग्य उत्पन्न होता है और वे युवराज को राज्य सौप कर सयम भार ले लेते हैं और राजहस को शुद्ध भाव की महिमा कई उदाहरणों द्वारा समझाते हैं धर्म मे भी भावना प्रधान है। राजहस के पुत्र जयभद्र तथा वलिभद्र थे। जयभद्र को राज्याधिकारी बनाकर राजहस अपना अन्त समय जान कर शुद्ध ध्यान से सथारा करते हुये केवली होकर निर्वाण को प्राप्त हो जाते हैं।

जिनपालित जिनरक्षित रास[1]

इस ग्रथ की रचना स 1621 श्रावण सुदि पचमी को हुई जैसा कि कृति के अन्त मे लिखा है

> श्री खरतरगच्छि सद्गुरु राय, श्री जिनचद्र सूरि सुपसाय
> सोलहसइ इकवीसइ वरसि, श्रावण सुदि पाचमि शुभ दिवसि—85

जिनपालित जिनरक्षित एक छोटा कथा काव्य है इसमे 87 चौपाईयो मे कथा निबद्ध हैं। कथा सक्षेप मे इस प्रकार है.

किसी समय समृद्ध चपानगरी मे शत्रुओ को जीतने वाला राजा राज्य करता था। उसी ग्राम मे माकदी सेठ एव भद्रा सेठानी रहते थे। इनके दो पुत्र जिनरक्षित और जिनपाल थे। ये माता पिता से आज्ञा ले व्यापार के लिये देशाटन करते हैं। समुद्र मे तूफान आने से पोत नष्ट हो जाता है और वे दोनो बडी कठिनाई से तीन दिन बाद किनारे पर पहुचते हैं। जल और फलो का आहार करते हुये दिन व्यतीत करते हैं कि उन्हे दूर से आती हुई एक नारी दिखाई देती है तुरन्त विकराल रूप धारण कर वह उनकी बलि करना चाहती है परन्तु उन दोनो भाईयो के विनती करने पर उन्हें मारती नही और अपने आवास पर ले आती है। वह रयणा देवी सोलह

1 (क) महिमा भक्ति जैन ज्ञान भण्डार बडा उपाश्रय बीकानेर ग्रन्थाक—2569 और 2570
(ख, रा प्रा वि प्र जोधपुर ग्रन्थाक 27266

शृगार कर उन दोनो से भोग विलास के लिये आग्रह करती है और वे सब मन-वांछित सुखो का भोग करते हुये रहने लगते है ।

इसी अवसर पर सुरपति के आदेश से वह चिंतित होती है । दोनों व्यक्तियो को वह सीख देती है कि तुम्हारा घर मे मन न लगे तो पूरब, उत्तर व पश्चिम दिशा के वनो मे घूम लेना परन्तु दक्षिण दिशा मे विषधर हैं अत वहा मत जाना ऐसा कह देवी चली जाती है । रात दिन उन वनो मे घूमते हुये एक दिन वे दक्षिण वन मे आते हैं वहा विष की दुर्गंध तथा मानव अस्थिया दिखाई दी । वहा एक पुरुष को सूली पर क्रदन करते देख कर वे पूछते हैं कि किसने तुम्हारे साथ ऐसा किया है । तब वह कहता है कि तुम वणिक हो और पोत के नष्ट हो जाने से इस दिशा मे आये हो तुम अभी तो देवी से सुख भोग रहे हो किन्तु किसी भी दिन वह बिना अपराध के तुम्हे भी यहा लाकर यही करेगी । यह वृतांत सुनकर वे भयभीत हो जाते हैं । मरने के समान भय नही यह जान कर वे बचने का उपाय पूछते है । वह कहता है कि पूर्व दिशा मे वन मे एक सेलग जक्ष रहता है यदि तुम जीवित रहना चाहते हो तो जाकर उसकी सेवा पूजा करो उसके वचन सत्य प्रमाण होते है ।

दोनो भाई सेलग जक्ष के पास आकर भक्ति पूजा कर प्रार्थना करते हैं कि हमे सकट से उबारो । एक दिन वह सेलग प्रगट होकर पूछता है कि किसका पालन करू और किसकी रक्षा करू तब वे दोनो अपनी रक्षा के लिये तथा चपापुरी पहुचाने के लिये कहते हैं । वह उन्हे बचने के उपदेश देता है । सीख लेकर वे सेलग की पूंछ पर चढकर सागर पार करने लगे । रयणा देवी पुरुषो को न देखकर उन्हे सेलग की पीठ पर देख खडग हाथ मे ले क्रोध मे भर कर तीनो का अन्त करने चलती है मन में सेलग की सीख को सोचते हुये वे कहते हैं कि यह सेलग तो हमारा शत्रु है हमे तो तुम्ही से प्रेम है । तब देवी हसी और जिन रक्षित से कहने लगी कि हमे तुमसे सच्चा नेह है । जिन रक्षित को सेलग ने पूछ से नीचे गिरा दिया । देवी की खडग के टुकडे कर दिये और सेलग जिनरक्षक को चपापुरी पहुचा कर अपने घर आ गया ।

जिनरक्षक अपने घर पहुच कर सब वर्णन सुनाता है । मृत भाई के लिये शोक किया गया । इसी समय वर्द्धमान स्वामी विहार करते हुये चपानगरी आये उनसे अग चरित्र आबिल अनशन आदि को पालते हुये प्रभु को नमन करता हुआ जिनपालक के लिये पूछता है कि वह कहां अवतार लेगा । तब वर्द्धमान स्वामी विदेह क्षेत्र मे केवली होना बताते हैं । इस प्रकार जिनपाल का वृतात सुन ससार को समुद्र के समान जानकर, सेलग के समान गुरु और जैन धर्म जैसा धर्म दिखाने वाला शिव-पुरी को प्राप्त होता है ।

अगडदत्त कुमार रास

दो प्रतिया उपलब्ध (1) प्राच्यविद्या मदिर, बडौदा ग्र 14289 और द्वितीय भण्डार कर प्राच्य विद्या शोध सस्थान पूना ग्रथांक 605 प्रथम प्रति 10

पत्रो मे—पचम पत्र लुप्त। आकार 25 ३ सें मी.×10 5 सें मी. लिपिकाल 1805। दूसरी का लिपिकाल 1653। दूसरी प्रति रचना के अति-निकट है। अतः अध्ययन का आधार यही प्रति है।

रचना काल गोहनलाल दलीचन्द देसाई ने कृति के अतिमाश के आधार पर 1625 कार्तिक सुदि 15 गुरुवार रचना तिथि दी है। (गूर्जर कविओ भाग 3, खण्ड 1—पृ. 687 वडोदा वाली प्रति मे)

"सवत वाण ख सिणगार, कातिक सुदि पूनिम गुरुवार" पाठ है। इसके आधार पर 1605 कार्तिक सुदि पूनिम गुरुवार स्थिर होता है। पर यह तिथि वार एफेमेरीज से मेल नही खाती। पूना की प्रति मे भी 1625 कार्तिक सुदि 15 रविवार ही रचना तिथि दी गई है। वडोदा की प्रति मे सभवत पक्ष या रद के स्थान पर ख हो गया है। रद होता तो उसका अर्थ 2 हो जाता—शून्य के स्थान पर और तिथि ठीक वैठ जाती। अत इस कृति का रचना काल वि स 1625 कार्तिक शुक्ला (पूर्णिमा) गुरुवार ही ठीक वैठता है। कुशललाभ ने इसकी रचना वीरमपुर मे की

श्री वीरमपुर नगर मझारि, करी चउपई मति अनुसार ।।318।।

कथासार

वसतपुर का राजा भीमसेन उसकी पटरानी सोहाग सुन्दरी (सौभाग्य सुदरी)। सूरसेन उसका वलशाली सामत। उसके पुत्र का नाम अगडदत्त। पुत्र अति रूपवान। सूरसेन के वीरत्व की ख्याति सुन कर एक योद्धा आता है। राजा को प्रणाम कर आने का कारण भी वताता है। वृतान्त सुन राजा ने अपने सामत सूरसेन को वुलाया। योद्धा और सूरसेन मे युद्ध हुआ। सूरसेन मारा गया। सुभट को राजा ने सेनापति वना लिया। नाम उसका अमगसेन रखा।

सूरसेन की मृत्यु के वाद उसकी पत्नी अगडदत्त का पोपण करने लगी। कुमार की भोजन वेला मे माँ रोने लगी। कुमार ने कारण पूछा—माँ ने वताया कि उसके पिता का हत्यारा उसे हानि पहुँचाना चाहता है। माँ ने उसे अपने पति के मित्र सोमदत्त के पास पढाने के लिए चपापुरी भेज दिया। सोमदत्त ने एक व्यवहारी (वोहरे) के पास उसके भोजन और निवास की व्यवस्था कर दी। कुमार पढने लगा। एक दिन उसने गवाक्ष मे मदनमजरी नाम की कन्या को देखा वह व्यवहारी की पुत्री थी। एक दिन जव कुमार वृक्ष की छाया मे सो रहा था मदनमजरी गवाक्ष से वृक्ष की डालियो पर होती हुई उसके पास आई और अपना प्रणय निवेदन किया। उसने वताया उसका पति परदेश गया हुआ है अव अगडदत्त ही उसका प्राण है। नारी के आग्रह पर उसने अध्ययनोपरान्त उसके साथ विवाह का वचन दिया।

सोमदत्त इस घटना से परिचित था। जव अगडदत्त ने अपने घर लौटने की आज्ञा चाही तव उसने राजा के पास जाकर कुमार के विवाह की वात चलाई। राजा ने उसका समस्त परिचय प्राप्त कर उसे सम्मान दिया। इसी समय नगर के

सभी लोग एकत्र हुए। एक महाजन ने कहा नगर के सभी महाजन चोरो से संतप्त हैं और निर्धन बने जा रहे हैं। राजा ने पान का बीडा रखा और कहा जो चोर को पकड कर लायेगा। उसे सवा लाख का पारितोषिक दिया जायगा। अगडदत्त ने बीडा झेला और सात दिन मे चोर को ढूंढ लाने का वचन दिया।

वह 6 दिन तक चोर को वेश्याओ और जुवारियो के घर ढूंढता रहा। सातवे दिन वह चिंतित वृक्ष के नीचे बैठा था तभी उसने एक योगी को देखा। योगी के पूछने पर उसने बताया कि वह जुवारी है और सारा धन जुए मे हार गया है। अब वह चोरी के लिये निकला है। योगी ने उसको सुना और साथ ले लिया। कुवर ने समझ लिया वही चोर है। अत वह उसके साथ काम करने लगा।

योगी ने कुमार को दूर खडा रखा। खुद वेश बदलने गया। तत्पश्चात् दोनो चोरी करने निकले। योगी ने सागरसेवी नामक व्यवहारी के घर डाका डाला। लौटने पर योगी ने कुवर को विश्राम के लिए कहा। वह तलवार लेकर वृक्ष की कोटर मे जा सोया। अब योगी ने अपनी तलवार से वहां सोये मजदूरो की हत्या करना प्रारम्भ किया। योगी का आचरण देख कुवर ने उस पर प्रहार किया। योगी ने कुवर को अपना खजाना बताते हुये आदेश दिया यह करवाल मेरी बहन को दे देना और उससे विवाह कर लेना। बहिन की यही प्रतिज्ञा थी कि जो उसके भाई का वध करेगा उसी के साथ वह विवाह करेगी।

योगी के कथनानुसार अगडदत्त सामने खडे पर्वत पर लगे पीपल के वृक्ष की ओर बढा। वही गुफा मे योगी की बहिन वीरमती को पाया। वीरमती ने अपने भाई की हत्या का बदला लेने की दृष्टि से उसे पलग पर बिठाया और चली गई। कुमार त्रियाचरित्र का पारखी था अत एक ओर हट गया। जब वह ऊपर से शिला गिराकर नीचे आई तो कुवर को जीवित देख स्तम्भित रह गई। उसने कुमार पर प्रहार किया। कुंवर वीरमती और उसके खजाने को लेकर राजा के पास उपस्थित हुआ।

कुंवर ने मदन मजरी से विवाह किया। विदा हो जब वह ससैन्य बसन्तपुर के लिए चला तो मार्ग भूल गया। गोकुल नगर मे उसे मार्ग में आने वाली नदी, केसरीसिंह, सर्प और चोरो का सामना करने के सकटो के विषय मे बताया गया।

मदन मजरी के रोकने पर भी वह उसी मार्ग से बढा' चारो सकट एक-एक कर सामने आये। व्यवहारी रूप मे चोर आया, और उसने उसकी सेना को विषाक्त दूध पिलाया। कुवर के रथ को रोक उससे धन और स्त्री का अपहरण करना चाहा। वैरी के वार्तालाप के साथ ही मदनमजरी ने उसे वीरमती के दाम्पत्य का स्मरण दिलाया। आगे एक मस्त हाथी चिंघाडता आया। कुवर ने उसे मार

गिराया । आगे सिंह की गर्जना सुनने पर सारथी ने चकमक से प्रकाश किया और कुंवर ने सिंह को मार डाला ।

थोडा आगे बढा तो उन्हे काला साप मिला । कुंवर ने उसे बचाकर रथ को मोड लिया । इस प्रकार इन आपत्तियो से बच कर जगल पार किया । आगे एक सुन्दर सरोवर दिखाई दिया । वहाँ अर्जुन नामक चोर का गिरोह रहता था । अपने वैरी को देख अर्जुन के दो भाइयो ने अगडदत्त का मार्ग अवरोध किया । उन्होंने मदनमजरी को हरना चाहा पर अगडदत्त ने प्रहार से उन्हे दूर कर दिया ।

कुमार वसन्तपुर के समीप आया । उसके परिजनो ने उसका स्वागत किया । मार्ग मे सरोवर के समीप उसने अमंगसेन को बुलाया । उससे द्वन्द्व युद्ध किया । अगडदत्त ने उसे मार डाला । सबने कुमार की प्रशसा की ।

कुमार ने माता पिता को विदा किया । स्वय मदनमजरी के साथ बीच मे ही ठहर गया । एक विद्याधर आकाश मार्ग से उड रहा था । उसने एक नारी को परपुरुप के साथ समोग करते देखा । विद्याधर उसका घात करना चाहता था पर उसी औपध के चूर्ण के साथ सर्प ने उसे डस लिया । इस घटना को देख विद्याधर नीचे उतरा । उसे अगडदत्त मिला । वह भाग्य को कोसता हुआ विलाप करता हुआ सर्पदशित नारी को उठाकर ला रहा था । अगडदत्त मदनमजरी के साथ अग्नि-प्रवेश कर रहा था । तभी विद्याधर वहाँ आया । उसने कुमार से कहा ।ारी के लिये मरना व्यर्थ है । पर उसने इस बात को स्वीकार न कर मदनमजरी को जिलाने की विनती की ।

विद्याधर ने मत्र तत्र द्वारा नारी को जीवित किया और कहा तेरा यह प्रेम अवर्णनीय है पर नारी जाति पर कैसा विश्वास । इसी के साथ उसने पूर्ण घटना कुवर को कह सुनाई । कुवर ने विद्याधर को नवसर हार अर्पित कर विदा किया ।

विद्याधर के जाने के पश्चात् मदनमजरी ने कुवर को कहा रात काफी है अत सामने वाले देहरे मे चल कर विश्राम करना चाहिए । देहरे मे पहुच मदनमजरी ने प्रकाश करने की इच्छा करते हुए अग्नि लाने का आग्रह किया । कुवर जब अग्नि लाने गया देहरे मे तीन चोरो की आवाज सुनाई दी । कुवरी ने उनका परिचय प्राप्त करते हुए अपने पति को मारकर उनके साथ चलने का आग्रह किया । चोरो ने पहले सशय किया पर बाद मे स्वीकृति दे दी । स्वीकृति पर नारी ने दीपक जला दिया । जब अगडदत्त अग्नि लेकर आया उसने प्रकाश का कारण पूछा । मदनमजरी ने कुंवर द्वारा जलाई अग्नि का प्रतिबिंब दिखाकर उसके सशय को दूर किया । अगड़दत्त ने मदनमजरी की बात मानकर खड्ग उसे दे दिया । स्वय अग्नि प्रज्वलित करने लगा । मदनमजरी ने कुवर पर खड्ग का वार किया । पर वह कुवर से दूर जा गिरा । कुमार के पूछने पर उसने बताया मैंने उसे उलटा पकड लिया था ।

चोरो ने वृतान्त देखा। मन मे भयभीत हो सोचने लगे संसार कैसा स्वार्थी है। पत्नी भी पति की हत्या कर देती है। इस घटना ने उन्हे वैरागी बना दिया। वे वहा से रवाना हुए। उन्हे मार्ग मे मुनि मिले। उन्होंने उनके पास दीक्षा ली।

अगडदत्त पत्नी सहित घर पहुँचा। पुत्रवान हुआ। एक दिन अगडदत्त प्रवीन के साथ घूमता हुआ उस स्थान पर पहुँचा जहाँ भुजगम नामक चोर अपने मायियो सहित तपस्या कर रहा था। अगडदत्त ने वैराग्य का कारण पूछा। उसने बताया यह अगडदत्त का उपकार है। अगडदत्त ने उस अगडदत्त का परिचय पूछा। भुजगम चोर ने मदनमजरी और अगडदत्त की सारी कथा सुना दी। चोर यति से घटना सुन अगडदत्त दुखी हुआ। अगडदत्त भुजगम चोर के पास दीक्षित हो गया और नवम् गवाक्ष को पार कर शिवपुरी को पहुँचा।

धर्म आख्यान

लोकआख्यानो के अतिरिक्त कुशललाभ ने कुछ धर्म आख्यान भी लिखे हैं जिनमे गीत स्तवन, सधि रास आदि हैं। ये सब स्तुति परक काव्य हैं। इन्हे स्तुति, स्तोत, सज्झाय वीनती और नमस्कार भी कहते हैं।[1] इन सब धर्म काव्यो का परिचय सक्षेप मे इस प्रकार है

श्री पूज्य वाहण गीत

यह गीत ऐतिहासिक जैन काव्य सग्रह मे सकलित है।[2] यह गीतिकाव्य सरस है भाव सुन्दर और भाषा रम्य है। कवि ने भक्तिपूर्ण भावो से श्री पूज्यवाहण के चरणो मे अपनी पुष्पाजलि अर्पित की है। कवि ने गुरु के स्तवन को ही भवसागर से पार उतरने का वाहन माना है और उसी के अनुसार इस गीत का नाम श्रीपूज्य-वाहण गीत दिया गया है।

गुरु के आगमन पर प्रवचन होता है। उनके प्रवचन को वृक्षो ने समझा है और उसी मे मस्त हो मानो वे झूम उठे है। कामिनी कोयल मधुर स्वर मे गुरु के ही गीत गा रही है। गुरु की देशना से प्रभावित होकर मानो गगन बार-बार गर्जना कर रहा है। मयूरो के नृत्य और चकोरो के नैत्रो मे गुरु उपदेश का भाव स्पष्ट दिखाई दे रहा है

प्रवचन वचन विस्तार अरथ तरवर घणा रे।
कोकिल कामिनी गीत गायइ श्री गुरु तणा रे॥
गाजइ गाजइ गगन गभीर श्री पूज्यनी देशना रे।
भवियण मोर चकोर थायइ शुभवासनारे॥ 63

गुरु का ध्यान करते ही ऐसा लगता है कि शीतल मद सुगन्धित वायु चल

1 डा० हीरालाल महेश्वरी 'राजस्थानी भाषा और साहित्य' पृष्ठ 245
2, अगरचन्द नाहटा—'ऐतिहासिक जैन काव्य सग्रह', कलकत्ता वि० स० 1994 पृ० 110-117

रही है, सम्पूर्ण विश्व सुगन्धी युक्त हो गया है। वह सुगन्धी ही गुरु का उपदेश है। गुरु की महिमा का कवि ने इस गीत में वर्णन किया है। इस गीत में कवि ने राग आसावरी ढाल सामेरी, ढाल रामगिरी, राग केदार गौडी, राग गुडमल्हार का प्रयोग किया है जिससे कवि की छन्द प्रियता का ही नहीं अपितु तत्कालीन समाज की संगीत के प्रति रुचि का भी अच्छा परिचय मिलता है। कवि ने इसमें जिन श्रावकों के नामोल्लेख किये हैं इससे यह गीत काव्य ऐतिहासिक रचना बन गई है। कवि ने इसमें रचना काल का उल्लेख नहीं किया। भाषा और गीत निर्वाह की दृष्टि से यह कवि की प्रारम्भिक रचनाओं में से एक है।

स्थूलिभद्र छत्तीसी

इसका रचना काल अज्ञात है। इसमें कुल 37 पद्य हैं।[1] यह काव्य आचार्य स्थूलभद्र की भक्ति में लिखा गया है। इसकी भाषा में सरसता एवं भावों में स्वाभाविकता है। प्रारम्भ में ही 'स्थूलिभद्र छत्तीसी' कहने की प्रतिज्ञा करते हुए कवि ने लिखा है

> शारद शरद चद्रकरि नीर्मल ताके चरण कमल चित्तलायकइ
> सुनत संतोष हुइ श्रवणकु, नागर चतुर सुनहु चित चायकइ
> कुशललाभ वुल्लनि आनदभरि सुगुरुप्रसाद परम सुख पाइक
> करिउ थूलभद्र छत्तीस अति सुन्दर पदवधवनाइक 1

यह काव्य गुरु महिमा का है। गुरु की महिमा अपार है। शिष्य कितने ही अपराध करें किन्तु उसको विश्वास रहता है कि गुरु उदार हैं और वे उसे अवश्य ही क्षमा कर देंगे

> वइसा वाइक सुणी भयउलज्जित मुपि
> सोचकरि सुगुरु कइ पास आवइ
> चूक अब मोहि परी चरण तलि सिरधरि
> आप अपराध आपइ खमावइ 37

कथासार

पूर्व देश का प्रसिद्ध नगर पाडली रिद्धि सिद्धियों से पूर्ण था। उस नगर के मन्त्री के दो पुत्र स्थूलिभद्र एवं श्रीवत थे। स्थूलिभद्र नगर वेश्या कोशा पर आसक्त था। सोलह वर्ष की अल्प आयु में ही वह संभूति विजय से दीक्षा लेकर श्रावक बन गया। गुरु की आज्ञा से स्थूलिभद्र ने अपना चतुर्मास कोशा वेश्या की चित्रशाली में विताया। वेश्या के घर रहते हुये भी स्थूलिभद्र पर उसका कोई प्रभाव नहीं पडा।

1 श्री अभयजैन ग्रन्थालय बीकानेर ग्रन्थांक 87/4209

चतुर्मास पूर्ण होने पर सभी शिष्य पुनः आश्रम मे आये। गुरु ने स्थूलिभद्र का विशेष स्वागत किया। इस व्यवहार को देख अन्य श्रावको को ईर्ष्या हुई। अगले वर्ष एक श्रावक ने गुरु के वार वार समझाने पर भी उसी वेश्या की चित्रशाली मे चतुर्मास विताने की आज्ञा ली और प्रथम रात्रि को ही उसने अपने आपको कोशा को समर्पित करना चाहा। किन्तु कोशा ने समपर्ण के लिये एक शर्त रखी कि वह नेपाल से रत्नजडित कवल लाकर उसे दे। श्रावक ने शर्त स्वीकार की और कवल लाकर कोशा को दिया। कोशा ने कवल से अपना शरीर पौंछा और उसे गदी नाली मे फैंक दिया। श्रावक द्वारा आपत्ति किये जाने पर कोशा ने उसे समझाया कि तुमने भी तो अपने रत्न जडित शरीर को गदी जगह फैंकना चाहा है। वेश्या के वचन सुन श्रावक अत्यन्त लज्जित हुआ और गुरु के चरणो मे नतमस्तक हो क्षमा याचना की। कवि ने इस रचना के माध्यम से ब्रह्मचर्य का महात्म्य वताया है।

थंमण पार्श्वनाथ स्तवन

कुशललाभ ने इस स्तवन की रचना खभात मे विक्रम सवत् 1653 मे की थी।[1] डा. प्रेमसागर जैन ने भी सवत् 1653 ही दिया है। उनकी मान्यता का आधार यही ग्रथ रहा होगा।[2]

जिनवर सब मनोकामनाओ को पूर्ण करने वाले राम लक्ष्मण द्वारा प्रभू की स्तुति करने से सात महीने और नौ दिन मे समुद्र का पानी रुक गया, यह आश्चर्य-जनक घटना देखकर उस स्थान को थमणा नाम दिया और उसी वन मे थमण पार्श्वनाथ की मूर्ति स्थापित की। उस तीर्थ की महिमा भी अपार है श्रीकृष्ण ने द्वारकापुरी मे जिणवर की स्थापना की। कुतनगर मे तथा सेढका नदी के किनारे खाखरा (पलास या ढाक) के पेड़ के नीचे जिनवर की प्रतिमा स्थापित की। उस पर वालू आने से प्रतिमा ढक गई। एक गाय रोज आकर अपना दूध वहाँ डालती थी जिससे वहाँ की भूमि चिकनी हो गई। गुरु अभयदेव को रक्त पित्त का रोग हो गया था। सेढ नदी के जल मे स्नान करने एव जिनवर की पूजा व स्थापना करने से वे नीरोग हो गये। जिनवर का स्मरण करने से रोग कभी नही आते। खभात मे जिनवर की मूर्ति स्थापित की वहाँ की यात्रा करने से सभी मनोरथ पूर्ण होते हैं।

सस्कृत मे स्तम्भन पार्श्वनाथ को लेकर अनेक स्तुति-स्तोत्रो की रचना होती रही है। तरुण प्रभाचार्य और जिन सोमसूरि के स्तमन पार्श्वनाथ स्तवनो का

1 (क) श्री दिगवर जैन मदिर वधीचन्दजी जयपुर गुटका न० 92
(ख) श्री आचार्य विनयचद्र ज्ञान भण्डार जयपुर ग्रंथाक 37/80

2. डा० प्रेमसागर जैन—हिन्दी जैन भक्ति काव्य और कवि—पृ० 119

संकलन 'मन्त्राधिराज कल्प' मे हुआ है । हिन्दी मे कुशललाभ का थमण पार्श्वनाथ स्तवन उसी परम्परा मे आता है ।

इसमे रचना सम्बन्धी कोई छन्द दृष्टिगत नही होता है, किन्तु जैन गुर्जर कविओ, भाग 3, खण्ड एक के सम्पादक ने आदि और अन्त प्रस्तुत कर 'सवत् 1638 चैत्र सुदी 11 भीमे खभायते मध्ये खरतरगच्छे वा कुशललाभगणि लि' लिखा है ।[1] इन पक्तियो से कृति की रचना तिथि वि स 1638 चैत्र सुदि 11, मगलवार निर्धारित होती है, जो एफरमैरिज से भी प्रमाणित होती है । इसके अतिरिक्त यह प्रति स्वय कुशललाभ की स्वलिखित होने के कारण अपने आपमे प्रमाणिक एव महत्वपूर्ण है ।

गौड़ी पार्श्वनाथ स्तवन्[2]

कवि के यह कृति अभी अप्रकाशित है । इसकी कई प्रतियाँ उपलब्ध हैं । कही-कही यह गौडी पार्श्वनाथ छद के नाम से भी मिलती है ।

गौडी पार्श्वनाथ की वहुत सी प्रतिमाएँ है । उनके दर्शन मात्र से रोग शोक दूर हो जाते है । श्री यशोविजय का सस्कृत मे लिखा हुआ 'गौडी पार्श्वनाथ स्तवन्' अत्यधिक प्रसिद्ध है । कुशललाभ की यह रचना जैन शैली मे विरचित राजस्थानी भाषा की रचना है । इसमे 23 पद्य हैं ।[3] स्तवन मे गौडी पार्श्वनाथ की भक्ति ही मुख्य है । कवि ने प्रारम्भ मे उस सरस्वती की हाथ जोडकर वन्दना की है, जो सुराणी है, स्वामिनी है और वचन विलास की ब्रह्माणी है वह एक ऐसी ज्योति है जो समूचे विश्व मे व्याप्त है

सरसति सामनी आप सुराणी, वचन विलास विमल ब्रह्माणी
सकल ज्योति संसार सामाणी पाय प्रणमु जोडि जुग पाणि 1

गौडी पार्श्वनाथ की वन्दना केवल नर ही नही, किन्तु असुर इन्द्र देव व्यतर और विद्याधर आदि सभी करते हैं । भगवान पार्श्वनाथ ससार के नाथ हैं । भगवान के दर्शन उस चिन्तामणि के समान है जो सभी मनोवाछनाओ को पूरा कर देती है । जिनके दर्शनो मे ऐसी शक्ति हो, उसकी महिमा अपरम्पार है ।[4]

1 सपादक मोहनलाल दलीचद देसाई, पृ० 687

2 (क) राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जयपुर ग्रंथाक 6060
(ख) कृपाशकर तिवाडी जी के निजी सग्रह से प्राप्त ग्रथाक 300
(ग) लूणकरणजी का मन्दिर जयपुर गुटका न० 66

3 (क) जैन गुजर कविओ पहला भाग पृ० 216
(ख) रा प्रा वि प्र जयपुर ग्रथाक 6060

4. जगनाथ पास जिणवर जयौ, मनकामतचितामणी
कवि कुशललाभ सपतिकरण सोघवल धीग गोडीधणी—22
अन्तिम कलश

नवकार छन्द[1]

इसमे कुल 19 छन्द है। यह भक्तिपरक रचना है। कवि ने जैन धर्म के अनुसार भगवान जिनेश्वर की वन्दना की है। जैन धर्म का महामन्त्र नवकार मन्त्र है। कवि ने इससे पचपरमेष्ठी की वन्दना की है। यह मन्त्र सब मनोरथो को सिद्ध करने वाला है

वाछित पूरण विविधरे श्री जिणसासणसार
निहचेसु नवकार जप, निर्त जपता जयकार 1

पचपरमेष्ठी का नित्य जाप ससार की सुख सम्पत्तियो को प्राप्त कराता है और सिद्धि भी प्रदान करता है। एकचित्त से पचपरमेष्ठी की आराधना करने से अनेक अभिलषित ऋद्धियाँ प्राप्त हो जाती है।

नित्य जपी ये नवकार सार सपत्ति सुखदायक
सिद्ध मत्र ए शाश्वतो इम जप श्री जग नायक

× × ×

नवकार सार ससार छे कुशललाभ वाचक कहे
एकचित्त आराधता विविध रिद्ध वाछित लेहे 18

भवानी छंद [2]

यह प्रति राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान उदयपुर से प्राप्त हुई है। यही प्रति भवानी छद के नाम से भी प्राप्त है,[3] दोनो मे कोई महत्वपूर्ण अन्तर नही है। यह देवी का स्तुति परम काव्य है। इस पृथ्वी पर शिव से प्राप्त सिद्धि से छद शास्त्रीय नियमो के आधार पर रचना करने वाले अनेक कवि हुये हैं। कवि अपने आपको मूर्ख मतिहीन एव तुच्छतर मानता है परन्तु अपनी जिह्वा को पवित्र करने के लिये देवी के गुणगान करता है। देवी की भक्ति से राज्य रिद्धि, सौभाग्य एव मनोहर भक्ति प्राप्त होती है

राज रिद्धि सोभागरस महुत मनोहर मत्ति
परिघल सुपरिपद पामीइ जु सेवीइ सगति ॥3॥

कवि ने उकार को सबका सार बताया है

उकार सार अपरपार नाद भेद निरभेद निरतर
सकल रुप जोति सहसकर नमो निरजन नाथ निरतर—1—

1. श्री आचार्य विनयचद्र ज्ञान भण्डार जयपुर ग्रथाक 37/31
2 (क) रा प्रा वि प्र उदयपुर ग थाक 602/2423
(ख) श्री पूज्य जी का उपाश्रय बीकानेर
3. श्री पूज्यजी का उपाश्रय बीकानेर

मनुष्य ही नही इद्रादिक देव भी भगवती की सेवा करके स्वर्ग मे अपना अविचल राज्य पाते हैः

इद्रादिक सुर असुर सदा तुझ सेवा सोरे
स्वर्ग मृत्यु पाताल अचल तुम चि आधारें।

देवी सब सुख सपत्ति और सतान देने वाली है

मुझ मन तुम आधार कृपा अम्ह ऊपर कीजे
सुप सम्पति सतान दान मन वछित दीजे ।

कृति मे रचना काल से सबधित कोई छद नही है। उदयपुर वाली प्रति मे एक कलस अधिक है ।[1]

शत्रुजय यात्रा स्तवन

इसकी एक ही प्रति अपूर्ण प्राप्त हुई है ।[2] इस प्रति के दो पत्र है जिसमे 75 गाथायें हैं । ग्रन्थ के प्रारम्भ मे यात्रा सदर्भ मे निम्न पक्तिया मिलती हैं

सोलचम्माला वछरइ माघमास सुदि पब्यइ
दसमी दिनि रविवारह सहू लोक समब्यइ ।। 18।।

ये पक्तिया रचना तिथि की ओर सकेत करती हैं तथा 'एफरमरिज' से मिलाने पर यह तिथि प्रामाणिक भी सिद्ध होती है। इससे ऐसा ज्ञात होता है कि सं 1644 की माघ सुदि 10, रविवार को यात्रा प्रारम्भ की तथा चैत्र सुदि पचमी को यात्रा पूर्ण हुई हो

चित्री सुदि पचकि विरचि पूज विसाल
सहू सघ समुखइ तिहा पहिरी इद्र माल ।।74।।

कवि ने शत्रुजय यात्रा का महत्व इस कृति मे बताया है। इसमे खरतर-गच्छीय जिनचन्द्र के साथ शत्रुजय तीर्थ की यात्रार्थ निकाले गये सघ का वर्णन निहित है .

सघ साधु चोरासी गच्छना आ मिल्या जात्र अधिका रइ
खरतर सायइ सुख घणु मिल्यातेण प्रकारइ ।।24।।

1 इद्रादिक सुर असुर सदा तुझ सेवा सोरें।
स्वर्ग मृत्यु पाताल अचल तुमचि आधारें ।।
गिरि गुह्वर वर विवर नगर पुरवर त्रिक चाचर।
आय छवि आणद शक्ति खेलें सचराचर ।।
शिव सगति युगति खेलि सदा विविध'रूपविश्वेरी
कवि कुशललाभ कल्याण करि जय जय जगदीश्वरी—48
इति श्री सर्वव्यापी जगदबाजी छद समाप्त ।।श्री।।

2 श्री अभयजैन ग्रंथालय बीकानेर ग्रंथांक 7744

कवि ने शत्रुजय यात्रा की महत्ता प्रतिपादित करते हुये यह भी बताया है कि मार्ग मे मुगलो के साथ युद्ध मुगल शासको की लूटमार की प्रवृत्ति का परिचायक हैं। इसके साथ ही कवि ने जैन समाज की सपन्नता का परिचय यह कह कर किया है कि सघ ने स्वर्ण मुद्रायें देकर मुगलो से अपना पीछा छुडाया ।[1]

दुर्गा सात्तसी :[2]

दुर्गा सात्तसी कुशललाभ की स्तुति परक रचना है। इसकी दो प्रतिया प्राप्त हैं जिनमे एक अपूर्ण है। रचना मे कही भी रचना काल का सकेत नही मिलता। इसमे कुल 366 छद है। प्रथम 362 छदो मे कवि ने भवानी का जन्म तथा उनके द्वारा किये गये कार्यों का वर्णन किया है, अतिम चार छन्दो मे दुर्गा सात्तसी का महत्व बताया है।

सस्कृत की, 'दुर्गा सप्तशती' की परम्परा मे ही कुशललाभ की 'दुर्गा सात्तसी' है। देवी की शक्ति अजय है वही देवताओ की रक्षा करने वाली तथा असुरो का संहार एव मानव कल्याण करने वाली है। जो एक मन से देवी की आराधना करता है उसे दुख विघ्न नही व्यापते—

जं मुनि सामलै एकणिमन्न विघ्न वीचरित दापुं वृन्न
नरपत एकताइ सारथ नाम गजीयातास दाणवेगाम

कुशललाभ की 'दुर्गा सात्तसी' का मूल स्रोत मार्कण्डेय पुराण का दुर्गा महात्म्य है। कवि ने इस पौराणिक आख्यान को बिल्कुल उसी रूप मे प्रस्तुत नही किया है बल्कि आवश्यकतानुसार परिवर्तन भी किये है।

सस्कृत की दुर्गासप्तशती अध्यायो मे विभाजित है जबकि कवि ने कोई अध्याय निरुपित नही किया। दुर्गा सात्तसी मे हमे मूल कथा जैसा रणकौशल और और देवी महात्म्य विस्तार से नही मिलता।

राजा सुरथ और वैश्य 'जगल मे मिलते अवश्य हैं किन्तु वे अपना परिचय एक दूसरे से नही लेते और ना ही कवि ने उनके अन्तर के द्वन्द्व को दर्शाया है। इसमे कथा स्वय कवि कहता है। मार्कण्डेय तो मात्र सकेत करते हैं की वैश्य और राजा देवी की कथा सुनना चाहते हैं। आलोच्य कृति मे मधु और कैटभ का जन्म कान से होता है कान के मैल से नही। देवताओ और राक्षसो के बीच सौ वर्ष तक हुए युद्ध का वर्णन नही है। मधु कैटभ वध के बाद कवि ने महिषासुर और देवताओ का युद्ध वर्णन किया है।

1 तिहां थकी संघ सभाधर चाल्या, मुगलजीत द्रव्य नआल्या
वेपउ पुण्य तणु परमाण सकट भागा थया मंडाण—49
श्री अभयजैन ग्रंथालय बीकानेर ग्रंथांक 7744

2 अनूप सस्कृत लाइब्रेरी लालगढ पैलेस बीकानेर ग्रंथांक 68 (घ)

दुर्गा सप्तशती मे शुंभ का कहा संदेश ही सुग्रीव देवी को सुनाता है जबकि इस कृति मे शुंभ सुग्रीव को चतुर और योग्य मानकर देवी के पास भेजता है और सुग्रीव अपनी मति अनुसार देवी से बात करता है। यह कवि की मौलिक कल्पना है।

प्रस्तुत कृति मे देवी ने विप्र कन्या के रूप मे शुंभ का वरण किया और राक्षसो के स्वामी शुंभ की आज्ञा से ही रक्तबीज को मारा। यह भी कवि की अपनी नवीन दृष्टि है।

राजा सुरथ और वैश्य की देवी की स्तुति तथा देवी द्वारा प्रदत्त वरदानो का उल्लेख भी इस कृति मे नही मिलता है। अन्त मे कवि ने देवी के विभिन्न रूपो की वन्दना की है। यह कथा संक्षिप्त होते हुये भी रोचक है।

अन्य

पिंगल शिरोमणि

पिंगल शिरोमणि कुशललाभ का संदिग्ध ग्रन्थ माना गया है। श्री नारायणसिंह भाटी ने इसका सम्पादन परम्परा मे किया है। पिंगल शिरोमणि के रचनाकाल एवं रचयिता के बारे मे विद्वानो मे मतभेद है। कवि ने प्रशस्ति

"पाडवमुनिसर मेदनी शुक्लपक्ष नभमास
तिथ नवमी रविवार तिम, जेसल हरिचदवास"

इन पक्तियो के आधार पर पिंगल शिरोमणि का रचना काल स 1575 श्रावण शुक्ला नवमी रविवार निर्धारित होता है। जो एफरमरिज से प्रमाणिक नही बैठता। श्रीमनमोहन स्वरूप माथुर ने नभ के बजाय नभस्य पाठ की कल्पना करके उसकी रचना तिथि ठीक बैठाने की कोशिश की है।[1] जो उचित नही है।

डॉ० ब्रजमोहन जावलिया पिंगल शिरोमणि का रचनाकाल 1635 मानते हैं। उन्होने पाडव मुनिसर मेदनी मे पाडव 5 मुनि 3 तथा सर के स्थान पर रस पाठ मानते हुये 6 और मेदिनी से 1 अर्थ ग्रहण कर यह तिथि निश्चित की है। ये तिथि एफरमरिज से भी सही प्रमाणित होती है।[2]

डा मोतीलाल मेनारिया, नारायणसिंह भाटी इस ग्रथ को अभयधर्म के शिष्य कुशललाभ की रचना नही मानते। उनकी मान्यता है कि किसी लिपिकार ने प्रमादवश कुशललाभ की प्रशस्ति जोड दी है। श्री भाटी ने प्रमुख आधार तो ग्रथ को ही माना है तथा बार बार प्रयुक्त –कहै एम हर राज कवि' तथा दीनो सुधार हरराज-कवि' का उल्लेख कर इसे हर राज की ही कृति मानते है।[3]

1 मनमोहन स्वरूप माथुर—शोध पत्रिका वर्ष 22 अंक 3 वाचक कुशललाभ रचनायें और रचना काल पृ 10
2 डा ब्रजमोहन जावलियां —कुशललाभ और पिंगल शिरोमणि–
3. निजी पत्र 21. 8 71 में व्यक्त विचार

श्री अगरचंद नाहटा भी संदेह करते हुये रचना काल तो 1575 मानते है परन्तु रचनाकार कुशललाभ को ही मानते हैं।[1]

पिंगल शिरोमणि को यदि हरराज की रचना मानते हैं, तो भी रचनाकाल सही नही बैठता। हरराज का शासनकाल स. 1618 से 1634 माना गया है।[2] रचना इस अवधि से पूर्व की है जबकि हरराज कुंवर ही था। ऐसी स्थिति मे हरराज का जन्म वि स 1598 के पहले मानना पडेगा।[3]

'पिंगल शिरोमणि' छंदशास्त्र है जिसे कुशललाभ ने ने अपने शिष्य और आश्रयदाता हरराज को पढाने हेतु लिखा था और स 1635 के श्रावण शुक्ला नवमी रविवार को इसे ग्रंथ का रूप दिया गया है। यही उचित जान पडता है।

कवित्त सवैया[4]

कुशललाभ की अन्य फुटकर रचना एक कवित्त सवैया मिलता है। कवि ने इसमे नायक नायिका की सयोगानुभूति का चित्रण किया है। ऐसे वर्णन कवि की लोकआख्यान रचनाओ मे भी मिलते हैं। सभव है कि यह कवित्त किसी आख्यान के लिये रचा गया हो और वह सम्मिलित न हो पाया हो। कवित्त इस प्रकार है

> विण पावस भादवो, माह विण अवो मोहरै।
> फूल पखै विण फल भयो, केलि लगी (विन वीजोरै।
> मात पिता विण पूत, पख विण पंखी उडै ।
> रामहस ढिलरै नीर विण गैवर वूडै।
> उगमै दीह दीणयर पखै, दान पखै नव षड जस।
> कवि कुशललाभ वाचक कहै, जोग सिगार कवित्त रस।

1 कुशललाभ और उनका पिंगल शिरोमणि राजस्थान भारती, भाग 1, जनवरी 1947
2 राजपूताने का इतिहास, प्रथम भाग, जगदीश सिंह गहलोत पृ 670
3 वही पृ 647
4 श्री अभयजैन ग्रंथालय बीकानेर ग्रंथांक 32870

चतुर्थ अध्याय

पात्र एवं चरित्र चित्रण

आख्यान काव्यो मे पात्रो की अनिवार्यता असंदिग्ध है । ये पात्र ही हैं जो कथा को जन्म देते हैं और उनके ही सहारे कथावस्तु आवश्यक विस्तार पाती है । पात्र ही कथानक मे अलौकिकता लाते है और ये ही कथावस्तु मे नये मोड लाकर पाठको के सन्मुख जीवन की सभी परिस्थितियो को रखते हैं । यदि वास्तविक रूप मे देखें तो ज्ञात होगा कि पात्र ही कथा की वह आधार शिला है जो कथा के निर्माण मे योग देते है । दूसरे शब्दो मे हम ये भी कह सकते हैं कि पात्रो के अभाव मे कथा की रचना-प्रक्रिया असम्भव होती है । कथाकार समाज से प्राप्त अनुभवो को पात्रो के माध्यम से ही व्यक्त करता है ।

कल्पना के माध्यम से पात्रो मे जिन विशेपताओ का उल्लेख किया जाता है वे कथा के चरित्र विकास को मुखर करती है । पात्रो की विविधता कथावस्तु मे रोचकता एव नवीनता लाती है । "पात्र, कथात्मक साहित्य का अन्यतमतत्व, एवं चरित्र वे व्यक्ति हैं जिनके द्वारा कथा की घटनाएँ घटती हैं अथवा जो उनसे प्रभावित होते हैं । इन्हीं व्यक्तियो के क्रिया-कलापो से कथानक और कथावस्तु का निर्माण होता है । अत भले ही किसी कृति मे घटनाओ की बहुलता और प्रधानता हो पात्रो या चरित्रो का उसमे अभाव नही हो सकता । कथा की कल्पना मे ही पात्रो की विद्यमानता निहित है ।"[1]

कथा की घटनायें तो प्राय पात्रो के स्वभाव और प्रकृति से ही प्रसूत होती है । उसके वातावरण या देशकाल का निर्माण चरित्रो को स्वाभाविकता और वास्तविकता प्रदान करने के लिये ही किया जाता है । कथनोपकथन घटनाओ से भी अधिक चरित्र को ही व्यजित और प्रकाशित करता है तथा कथा के उद्देश्य की महत्ता भी

1, जैन कथाओ का सास्कृतिक अध्ययन लेखक श्रीचन्द्र जैन प्रथम संस्करण 1971

चरित्र में ही निहित होती है।[1] कथा के पात्रों को किस प्रकार उपस्थित किया जाय, यह कथाकार की रुचि और उद्देश्य पर निर्भर है।
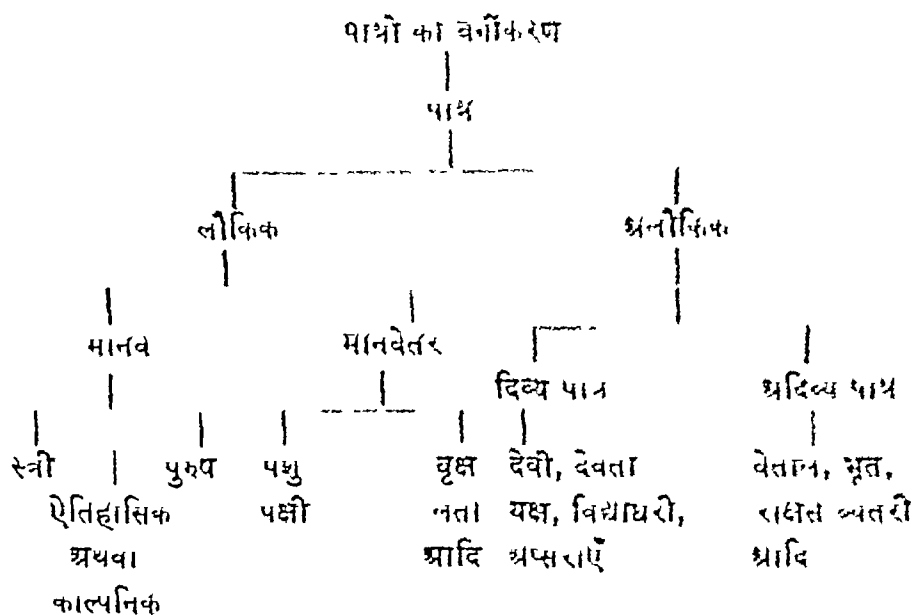
ढोला मारू के पात्र और चरित्र चित्रण

मानव पात्र

मानव पात्रों में प्रमुख रूप से ढोला, मारवणी, मालवणी व ऊमर-सूमरा आते हैं।

ढोला

ढोला कथा का नायक है, जिसका वास्तविक नाम साल्ह कुमार है। कथा का समस्त कथानक ढोला के इर्द-गिर्द घूमता है। ढोला नरवर के राजा नल का पुत्र है। तीन वर्ष की अल्पायु में उसका विवाह पिंगल पुत्री मारवणी से होता है। मार्ग के संकटों को जानते हुए तथा ढोला को इस विवाह से अनभिज्ञ रखते हुये, उसके माता पिता उसका दूसरा विवाह मालवा कुमारी मालवणी से कर देते हैं।

आचार्य विश्वनाथ के अनुसार नायक दाता, कृतज्ञ, पण्डित, कुलीन लक्ष्मीवान, लोगों के अनुराग का पात्र, रूपवान युवा एवं उत्साह युक्त तेजस्वी चतुर, सुशील

1 हिन्दी साहित्य कोष भाग 1 पृष्ठ 488।

पुरुप होता है ।[1] नायक चार प्रकार के बताये गये हैं धीरोदात्त, धीर ललीत, धीरोद्धत, धीर प्रशांत ।[2] धीर ललीत नायक निश्चित, अति कोमल स्वभाव वाला और सदानृत्य गीतादि कलाओ मे अनुरक्त रहता है ।[3] ढोला मे इन गुणो की विद्यमानता है, अत वह नायक पद के सर्वथा योग्य है । इसमे प्रणय विलासिता, गुण ग्राहता, कला प्रेम, कोमल स्वभाव, जीवन को सुख से भोगने की लालसा, उत्साह आदि गुणो का भडार है । इस दृष्टि से ढोला को धीर ललीत नायक के रूप मे हम पाते हैं ।

ढोला के प्रेम का स्वरूप उस समय तक नही निखरता जब तक ढाढियो द्वारा प्रेषित मारवणी का सन्देश नही प्राप्त हो जाता, यही से उसका व्यक्तित्व नवीन मोड लेकर निखरता है । सन्देश प्राप्त होने से पूर्व तक वह एक आदर्श पति के रूप मे अपनी पत्नी मालवणी के साथ आनन्द पूर्वक रहता है । मारू का प्रेम सन्देश उसके हृदय मे अपूर्व उत्साह का सचार करता है ।

ढोला धीर पुरुप है उसमे उतावलापन नही है । मालवणी के अपार प्रेम के वशीभूत हो वह चार माह रुक जाता है परन्तु वह मारवणी को नही भुला पाता । मारवणी से दूर रहकर विताये जीवन को वह अपने जीवन का सर्वाधिक निरर्थक अश मानता है इसी से वह कहता है

जे दिन मारू विण गया, दई न ज्ञान गिणंत ।

ढोला के प्रेम मे गम्भीरता, एकनिष्ठता गहराई, सच्चाई एव उत्सर्ग की भावना है । मारू के पीना साप से दशित होने पर वह उसी के साथ मरने को उद्यत हो जाता है ।

प्रेम के उद्वेग मे उसे पूगल का कठिन मार्ग भी सरल लगने लगता है । प्रेम का यह प्रेरक रूप केवल ढोला मारू की ही विशेषता नही, वलिक जहाँ कही भी प्रेम का चित्रण किया गया है, प्रेमी मे अदम्य उत्साह को चित्रित किया गया है । 'लैला मजनू' मे भी मजनू लैला के दरवाजे तक वडी सरलता से पहुँच जाता है, परन्तु जब उसे लैला नही मिलती तो वही रास्ता दुर्गम लगने लगता है । हिन्दी के सूफी कवियो के नायक जब भी प्रेम पथ पर निकलते हैं बाधाओ की चिन्ता नही करते ।

ढोला भी मालवणी को सुपुप्तावस्था मे छोडकर पूगल के लिये प्रस्थान करता है । मालवणी ढोला को लौटा लाने के लिये शुक को भेजती है । लेकिन ढोला मालवणी के त्रिया चरित्र की गहनता का सहज ही अनुमान कर लेता है और अपने मार्ग

1 साहित्य दपण विश्वनाथ 3-30 ।
2 साहित्य दर्पण विश्वनाथ 3-31 ।
3 साहित्य दर्पण विश्वनाथ 3-34 ।

पर बढता है। मार्ग मे भ्रामक सूचनाओ द्वारा चिंतित अवश्य होता है किन्तु उनका निराकरण कर दिया गया है।

पूगल से लौटते समय वह ऊमर सूमरा के विश्वासघाती षडयन्त्र को न समझ कर उसी के साथ मद्यपान करने बैठ जाता है। परन्तु मारवणी द्वारा रहस्योद्घाटन पर वह उस षडयत्र से बच निकलता है।

उसके प्रेम मे अनन्यता और लक्ष्य प्राप्ति की अपूर्व लगन है। वह क्रिया निष्ठ नायक है। पवित्र प्रणय का पुजारी है। विषम परिस्थितियो से जूझते हुये अपना लक्ष्य पूरा करना उसके चरित्र की विशेषता है। प्रेम की अग्नि परीक्षा मे वह खरा उतरता है। उसके चरित्र मे कर्तव्य निष्ठा का भी सुन्दर सामजस्य है। मारू से वह पहले अपरिचित था परन्तु मारू के प्राप्त सन्देशो से वह अपना कर्तव्य निश्चित कर लेता है।

मारू को बात बताकर ढोला मालवणी के हृदय को दुखी करना नही चाहता है अत वह देशाटन का बहाना बनाता है और अन्त मे अपना रहस्य भी खोल देता है। मालवणी आगत विरह की कल्पना मात्र से मूर्छित हो जाती है तो वह उसे होश मे लाने के प्रयास करता है और अन्त मे उसे सुपुप्तावस्था मे ही छोडकर पूगल के लिए प्रस्थान करता है। यह सब कार्य उसकी कर्तव्य निष्ठा के द्योतक हैं।

ढोला गृहस्थी को सुचारू रूप से चलाने मे भी सफल हुआ है। दोनो पत्नियो मे हुये वाद विवाद को वह बडे ही सहज ढग से सुलझा देता है। ढोला की व्यवहार कुशलता से ही मारवणी और मालवणी का आपसी द्वेष और मनोमालिन्य दूर होता है।

ढोला कला पारखी भी है। ढाढियो द्वारा विरह सन्देश सुनकर वह उन्हे सम्मान सहित बुलाता है और दान आदि देता है। मारवणी से सयोग के समय प्रहेलिका आयोजन ढोला का साहित्य प्रेम प्रदर्शित करता है। वह दानवीर भी है

रूपई रूडइ ते राजान, कुमर न कोई साल्ह समान
परचंड लापलाप विद्रवे लापे कोडे लेषा हुवइ—212

ढोला मे भी सामन्तवादी समाज की विलासी प्रवृत्ति दिखाई देती है। उसकी बहुपत्नी वाद मे आस्था है। मारू का रूप ढल जाने की बात सुनकर उसका मन निराश हो जाता है और रूप की प्रशसा सुनकर वह पुन मुग्ध हो जाता है। उसकी इस चचल मन स्थिति से उसकी अतृप्त विलास भावना प्रकट होती है। याचको को दान देना, मद्यपान कराना, सगीत सुनना, दास दासिया रखना, ऊट घोडे रखना एक और ढोला की सामन्ती प्रथाओं की ओर झुकाव प्रदर्शित करती हैं तो दूसरी ओर ढोला को उच्चकुलीन सामत सिद्ध करती हैं।

सक्षेप से कहा जा सकता है कि ढोला एक योग्य, सरल, निष्कपट, चतुर, व्यवहार कुशल, कर्तव्यशील, कलाप्रिय प्रेमी तथा पति है। इन गुणो के अतिरिक्त

सौन्दर्य, साहस, धैर्य, दानशीलता, गुणग्राह्यता आदि अनेक गुण उसके व्यक्तित्व की विशेषतायें हैं।

मारवणी

मारवणी इस काव्य की नायिका है। मारू राजा पिंगल और रानी उमा देवी की कन्या है। उसका विवाह पुष्कर मे डेढ वर्ष की अल्पायु मे, जबकि वह अबोध थी, ढोला के साथ हो जाता है।

मारवणी स्वकीया, मुग्धा, नवोढा, ज्ञात-यौवना है और पद्मिनी नायिका है। ढोला से उसका विवाह हुआ है, इसलिये वह स्वकीया है। नवयौवन सचार एव लज्जाशील होने के कारण वह मुग्धा है, यौवन का ज्ञान होने के कारण ज्ञात यौवना है और अपने रूप-सौन्दर्य एव शारीरिक सुगन्धि के कारण वह पद्मिनी है। मारू यौवन, रूप, गुण, शील, प्रेम, कुल वैभव तथा अन्य 32 लक्षणो से युक्त नायिका है।

मारवणी के जन्म से माता पिता बहुत प्रसन्न है। यही नही नगर मे बधावे व मंगलाचार भी होते हैं

माता पिता मनि आणद घणऊं जनम हुआ मारुवणी तणउ
कीया वधावा नगर मझारि, पुत्र तणी परि मगलचार—134

मारवणी अप्सरा के समान सुन्दर है, वह हसगामिनी, कोयल जैसी मधुर वाणी, खजन नेत्र, अनार के दाने जैसे श्वेत दांत और झीणीलक वाली स्त्री है। वीसू चारण गुणो की भण्डार इस नारी का वर्णन करते नही अघाता। पर वह इसका पार भी नही पाता। अन्तत वह थका सा कहता है

तेता मारू माही गुण जेता तारा अभ
उच्चलचिता साजणा कहि क्यऊ दाखऊं सभ—505

सौदागार से अपने विवाहित पति ढोला के विषय मे सुनने के उपरान्त ही उसे प्रियतम का विरह सताने लगता है

सउदागर सदेसडा, सामलिया स्त्रवणहि
मारुवणीते मन दहइ मूक्यउ जलनयणेहि—217

पपीहे की 'पीउ-पीऊ' रटन से उसे प्रियतम का स्मरण होता है[1] कुरझो[2] एव बिजली से किये गये आत्म-निवेदन[3] आदि मे मारू के विरही मन की अनूठी उद्भावनायें व्यक्त हुई हैं। उसका प्रियतम उससे दूर और बेखबर है। वह कुरझो से पख मागती है जिससे अपने प्रियतम से जाकर मिल सके

1 दो स 220
2 दो. सं 228
3 दो. स 223, 224

कुंझड़ी देखने पपड़ी, थाको वनों वहेस
सयर उलघि प्रीय मीलु, प्रीय मीलि पाछिदेस–228

ढाढियो से सदेश प्रेषण मे तो मारू ने अपनी समस्त वेदना को साकार कर दिया है। यदि प्रियतम मिले तो उनसे कहना कि शरीर मे प्राण नही है केवल उसकी लौ जल रही है।[1] उसका शरीर चाहे दूर हो आत्मा तो उसी के पास है। आंखो की नीद हराम हो रही है।[2] यदि तुम नही आये तो मारू स्वय घोड़े पर जीन कस कर आ जायेगी[3] मारू का यौवन रूपी हाथी मदमस्त है तुम्ही अकुश लेकर उसे वश मे करो।[4] ऐसे समय पर भी प्रियतम न आये तो वाद मे आकर क्या उसके अस्थि पजर पर कौए उड़ायेंगे।[5]

प्रियतम का स देश आ भी गया तो नयन उसे पढने नही देंगे।[6] प्रियतम की याद करती हुई और उसका मार्ग देखती हुई मारवणी लंबी गरदन वाली हो गई है।[7]

मारू एकनिष्ठ प्रेमिका और पत्नी है। उसकी सारी कामनायें ढोला मे ही निहित है। मारू प्रत्युत्पन्नमति है। प्रथम मिलन पर ढोला सशय से उससे पूछता है

काया झबूकें कनक जु सुंदर केहे सुप
तेह सुरगा कीम हुई जे वहुदाधा दुप–568

मारू भी हसकर उसका तत्काल उत्तर देती है

पहुर हुवउ ज पधारियाँ, मो चाहती चित्त
डेडरिया खिण-भइ हुवइ, घण वूठइ सरजित्त–570

ऊमर सूमरा के षडयंत्र से छुटकारा पाने का सकेत भी मारवणी ही ढोला को करती है। वह मालवणी से भी प्रयमत कटु वाद-विवाद नही करती। ढोला द्वारा समझाये जाने पर शाति से रहती है। राजकुमारी होने के कारण घुड़सवारी मे निपुण है, चर्चरी नृत्य मे पारगत है। ढोला से प्रथम मिलन के समय ही वह कोई गाया, पहेली, गीत, अथवा कथा कहने का प्रस्ताव करती है जो कि उसकी कला प्रियता का द्योतक है। मारू को अपनी जन्म भूमि से भी प्यार है। मालवणी को दिये गये प्रत्युत्तर मे उसका जन्म भूमि के प्रति प्रेम झलकता है।

1 दो सं 276
2 दो सं 136
3 दो स 296
4 दो स 297
5. दो सं 294
6 दो स 300
7 दो स 280

संक्षेप मे मारू नारीरत्न है। वह अप्सरा के समान रूपमती, कुलवती तथा उज्ज्वल चरित्र वाली है। उसमे क्षमा, लज्जा, सच्ची लगननिष्ठा साहस आदि गुणो के होने से उसका चरित्र और भी निखर कर सामने आया है।

मालवणी

मालवणी मालवा देश की राजकुमारी है। वह काव्य मे मुग्धा एव उप-नायिका के रूप मे चित्रित की गई है। यह ढोला की द्वितीय पत्नी है। ढोला अपनी प्रथम पत्नी मारवणी से अपरिचित रहता हुआ इससे अत्यन्त घनिष्ठ एव प्रगाढ प्रेम रखता है। मारवणी के समान कवि ने मालवणी का नख शिख वर्णन नही किया है परन्तु सौदागर के कहे गये कथन से ढोला की उससे अनुरक्ति एव घनिष्ठता का पता लगाया जा सकता है

इणि प्रस्तावे साल्ह कुमार, मालवणी सु प्रीति अपार
वे पहरे उन्हाला तणे पोढयउ छे मदिर आपणे ।। 254 ।।

इस अनुराग मे मालवणी का रूप सौन्दर्य ही प्रमुख रहा होगा। मालवणी की प्रीतिवश होकर ही ढोला चार माह तक रुक जाता है।

मालवणी ढोला को उदास नही देख सकती और ढोला को उदास देखकर खवास से कारण जान लेने के बाद भी ढोला से बारम्बार कारण पूछती है और ढोला की हठधर्मी देखकर सुप्तावस्था मे छोडकर जाने को भी कह देती है

चालु चालु मत करो हीआ वहीम देसी
जो साचाहि चालसो तो सुता पलाणेस ।। 398 ।।

मालवणी के इस निश्चय मे त्याग की भावना है। आगत विरह की आशका से मालवणी पन्द्रह दिन तक सोती नही।[1] मालवणी के उज्ज्वल चरित्र की झाकी हमे उसकी विरह दग्धावस्था मे मिलती है। ढोला के पूगल को प्रस्थान कर देने पर उसका विरह जागृत हो उठता है। उसका शरीर शिथिल हो जाता है, विरह जन्य कृशता से हाथो की चूडियां खिसक पड़ती हैं।[2] ढोला के बिना उसे तालाब की लहरे काले नाग के समान दिखाई देती है

ढोला हुतो बाहिरी, झीलण गई तलाई
सो जल काला नाग जु हेला दे दे खाय ।। 443 ।।

मारवणी के समान मालवणी को भी अपनी मातृभूमि मालवा से विशेष अनुराग है। वह मारू प्रदेश की निन्दा करती हुई मालवा की अच्छाईयो का ही वर्णन करती है।[3]

1 दोहा सख्या 425
2 दोहा सख्या 429
3 दोहा सख्या 712 से 719

मालवणी मे चतुराई और व्यवहार कुशलता कूट-कूट कर भरी है। ढोला को मारू सम्बन्धी कोई भी सूचना न मिले इसलिये पूगल से आने वाले प्रत्येक पथिक को अपने अधीन करने का वचन मांगती है

जे पुगलथी आवइ कोई, ते पथी नित मो वस होई
ढोलइ तेहजि कियो पसाव, मालवणी इम माड्या दाव ॥ 261 ॥

ढोला को उदास देखते ही वह शकित हो उठती है और ढोला के मन की बात जानकर ही रहती है। ढोला को रोकने के लिये वह अपनी व्यवहार कुशलता का परिचय देती है। कभी ऊँट से लगडा होने की अनुनय विनय करती है तो कभी गधे के डाभ लगवाती है। ढोला के सुप्तावस्था मे छोडकर जाने का वचन लेने पर भी ढोला के चले जाने पर शुक द्वारा अपनी मृत्यु का सदेश भेजकर[1] उसे चतुराई से लौटाना चाहती है।

मालवणी मे सपत्नी द्वेष भी है जो कि नारी स्वभाव का विशिष्ट अग है। पूगल से आने वाले प्रत्येक पथिक को मरवा देना और ढोला को चार मास पर्यन्त रोके रखना आदि मे ईर्ष्या प्रवृत्ति ही परिलक्षित होती है। मालवणी अपने प्रेम का विभाजन नही चाहती। इससे उसके स्वार्थ की भावना भी स्पष्ट होती है। देश निन्दा के समय ढोला मारवणी का ही पक्ष लेता है। इस प्रकार मालवणी का चरित्र दयनीयता की सीमा का स्पर्श करता है। मालवणी के चरित्र मे स्त्री सुलभ दुर्बलताओ का यथार्थ चित्रण हुआ है इसी कारण पाठक की सर्वाधिक सहानुभूति मालवणी को प्राप्त होती है।

पति द्वारा प्रवचित और प्रताडित होने पर भी मालवणी का प्रेम हिमालय की भांति अचल तथा सागर की भांति गभीर रहता है। उसे अपने पति मे पूर्ण श्रद्धा है। वह चतुर, व्यवहार कुशल, सपत्नी से शातिपूर्ण द्वेष रखने वाली, कर्तव्य-निष्ठ, पतिपरायण एव दुख और सुख मे धैर्य और सतोष से कार्य करने वाली नारी रत्न है। विरह और दुख से दग्ध होने के कारण मालवणी का चारित्रिक पक्ष मारवणी की अपेक्षा अधिक उज्ज्वल और निर्मल हो सका है।

ऊमर सूमरा

ढोला मारू मे ऊमर सूमरा खल-नायक के रूप मे चित्रित किया गया है। खल-नायक का कार्य कथानक मे सघर्ष उत्पन्न करना है। वह ढोला के प्रतिद्वन्द्वी के रूप मे आता है। वह दुष्ट प्रवृत्ति का प्रतीक है। वह मारवणी पर आसक्त है और मारवणी को हस्तगत करना ही उसका लक्ष्य है। अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिये वह छल और कपट का सहारा लेता है।

1 दोहा सख्या 448
ढोला मारवणी चौपइ ह ग्र श्रा जावलिया से प्राप्त प्रति

ऊमर सूमरा सैनिक शक्ति एव ऐश्वर्य से सम्पन्न है। ढोला मारू के भाग निकलने पर वह उनका पीछा अपनी चतुरंगिनी सेना के साथ करता है। वह षडयन्त्र करने मे कुशल है। ढोला को मारवणी से विमुख करने के लिये चारण द्वारा भ्रामक सूचनाएँ दिलवाता है कि मारू के अग शिथिल हो गये है एवं केश श्वेत हो गये हैं

ढोला तु उमाहिया जीणि घण सुदरि सेस
तीणि मारू रा तन पीस्या पडर हुआ केस ॥ 473 ॥

परन्तु वीसू चारण के प्रयत्न से ऊमर सूमरा का कुचक्र विफल हो जाता है। दूसरी वार वह ढोला को मद्यपान के लिये आमत्रित कर षडयन्त्र रचता है, किन्तु डूमणी द्वारा षडयन्त्र की सूचना मिलने पर ढोला मारू बच निकलते हैं। अपने षडयन्त्र को असफल होता देख ऊमर सूमरा के क्रोध की सीमा नही रहती और वह उनका पीछा करता है किन्तु मारवणी की सतर्कता से उसका चक्रव्यूह छिन्न-भिन्न हो जाता है। पूरी कथा मे ऊमर सूमरा एक स्थल पर आता है। उसकी उपस्थिति द्वारा कथानक मे विशिष्ट कौतूहल का सृजन होता है। वह हमारे समक्ष रूपासक्त, शक्ति ऐश्वर्य सम्पन्न, षडयन्त्रकारी, कपटी, उग्र, एव हिंसात्मक प्रवृत्ति वाला, झूंठा एवं विश्वासघाती खल-नायक के रूप मे आता है।

गौण पात्र

ढोला मारू की कथा के मुख्य पात्रो को छोडकर अनेक गौण पात्र भी आये हैं। गौण पात्रो का महत्व चरित्र गठन की दृष्टि से इतना नही है जितना कथानक मे गतिशीलता लाने, नाटकीयता का सृजन करने, कौतूहल बनाये रखने और घटनाओ के नियोजन मे है।

उपर्युक्त पात्रो के अतिरिक्त राजा पिंगल व रानी उमा देवडी दो ऐसे पात्र कथा मे आये हैं जो नायिका मारवणी के माता पिता है। ढोला के पिता राजा नल व माता चपावती है। ढोला का विवाह मारू के साथ होने से इनके सम्बन्ध हो जाते है। घोडो का सौदागर, ढोला के समाचार कह कर कथा मे नवीन मोड लाता है। खवास राजा पिंगल का सेवक है जो सौदागर को ढोला मारू के विवाह की सूचना देता है। ढाढी मारू का सन्देश वाहक बन कर ढोला को पूगल लाने का महत्वपूर्ण कार्य करते हैं। रेबारी ढोला के लिये तीव्रगामी ऊँट तैयार करता है। व्यापारी प्रेम मार्ग मे वाधा बन कर आता है पर ढोला उसके लिये समय खराब नही करता। ऊमर सूमरा का चारण मारवणी के बूढी होने की भ्रामक सूचना देता है जिससे ढोला का मन चंचल व अस्थिर हो जाता है। वीसू चारण ढोला के चंचल मन को मारू के रूप सौन्दर्य का वर्णन कर शान्त करता है। इसके अतिरिक्त मारवणी की सखियाँ, दीवधारिणी, डूमणी आदि नारी पात्र भी कथा में बीच-बीच मे प्रकट होकर कथानक को नवीन मोड दे जाते हैं।

मानवेतर पात्र

पशु-पक्षी पात्र

ढोला मारू चौपई मे ऊंट, शुक, गधा, कुरझा, पपीहा आदि मानवेतर प्राणी भी कथानक मे नवीनता लाने या गति के अवरोध को दूर करने मे सहायक हुये हैं। ऊंट कष्ट सहकर भी ढोला के कार्य मे सहायक होता है, ढोला के निराश होने पर वह उसे परामर्श भी देता है। शुक सन्देश वाहक के रूप मे कथा मे आया है, जैसा कि परम्परा से होता आया है। गधा मारवणी के षडयत्र मे वेमौत मारा जाता है। उसे मालवणी दाग लगवाती है। पपीहा अपनी पीउ-पीउ की रट से मारवणी के विरह मे तीव्रता ला देता है। कुरझा मारवणी के विरह दुख मे सहयोगिनी वनती है।

प्रकृति पात्र

प्रकृति पात्रो का समावेश विरह के उद्दीपन रूप को प्रस्तुत करने के लिये किया गया है। इसमे 'जाल' वृक्ष का उल्लेख हुआ है।

अलौकिक पात्र

अलौकिक पात्रो के आविर्भाव से कथानक मे नया मोड लाया जाता है। मारू को पीना साप के द्वारा डस लिये जाने पर योगी-योगिनी का आविर्भाव होता है। योगिनी के आग्रह से योगी मत्राभिषिक्त जल से मारू को सचेत करता है। इस घटना से कथा अचानक नया मोड लेती है। ऐसी घटनाओ के समायोजन का उद्देश्य प्रेम की एक निष्ठता दिखाना और उसमे अलौकिक शक्तियो के योगदान को प्रकट करना है।

माधवानल कामकंदला के पात्र

प्रस्तुत प्रवन्ध मे मुख्य पात्र चार हैं माधवानल, कामकदला, कामसेन तथा विक्रमादित्य। राजा गोपीचन्द, पुरोहित शकरदास, गोप विलासनी वेश्या, महाजन आदि गौण पात्र हैं।

माधवानल

माधवानल कथा का नायक है। नायक का जन्म अति-प्राकृत ढग से हुआ है। भगवान शकर वारह वर्ष की समाधिस्थ अवस्था मे उमारमण के लिये चचल होने पर स्खलित हो गये। शकर के वीर्य को विष्णु ने कमलिनी की नाल मे रख दिया। पुरोहित शकरदास को गगातट पर यह मिलता है अत. उसे वह पुत्र रूप मे पालता है और उसका नाम माधवानल रखता है।

माधवानल वुद्धिमान एव तेजस्वी है। माधव कदला के विरह मे दुखित होता हुआ उज्जेन पहुँचता है और विक्रमादित्य को पर-दुखभजन जानकर शिव मन्दिर मे

गाथा लिखता है और अपनी बुद्धिमानी से ही अपना दुःख विक्रमादित्य तक पहुँचाता है और दुःख से छुटकारा पाने में सफल होता है।

माधव रूपवान है। उसका रूप अनजान में उसी के लिये घातक है। नगर की सारी स्त्रियाँ उसके रूप पर मोहित हैं और अपने पतियों की ओर भी ध्यान नहीं देतीं।[1]

उसका रूप सौन्दर्य ही उस पर स्त्रियों को दुश्चरित्रा बनाने का आरोप लगवाता है। राजा की रानियाँ भी माधव के रूप को देखकर अपने आपको सम्भाल नहीं सकीं। स्त्रियों की दशा देखकर राजा ने उसे देश निकाले की आज्ञा दे दी। माधव बत्तीस गुणों से युक्त कलाओं में निपुण इन्द्र कुमार के समान सुन्दर है।[2]

माधव कला पारखी भी है। कामसेन के यहाँ होने वाले तन्त्रीनाद एवं मृदंग की धुन को सुनकर वह बता देता है कि परवावज बजाने वाले के अंगूठा नहीं होने से स्वर भंग हो रहा है। राजा उसे कला पारखी जानकर बहुत सम्मान करता है। कंदला के नृत्य करते समय भ्रमर का कुच पर दंशन और कन्दला का उसे पवन स्रोत से उड़ाना, इस कला को केवल माधव ही जान पाया और वह नर्तकी की कला से प्रसन्न होकर उस पर वस्त्राभूषण आदि न्यौछावर कर देता है

राज पसाउ पहिलु लीयु, ते माधव वेस्यानइ दीयउ
वेस्या बोलइ, पुरुष प्रधान चऊदह विद्यातणु विधान ।। 219 ।।

माधव साहित्यानुरागी है। अपने वियोग दुःख से छुटकारा पाने की अभिलाषा हेतु शिव मन्दिर में मार्मिक गाथायें लिखता है। जिन्हें पढ़कर विक्रमादित्य दुखी हो जाता है और उसे संकट से मुक्त कराता है। कामावती में जब माधव कन्दला के घर पर रहता है तब कन्दला अवशेष सुदीर्घ रात्रि को देखकर गाहा, गीत और कहानियाँ छेड़ने के लिये कहती है।[3] शेष रात्रि में माधव और कंदला के मध्य प्रश्नोत्तर का आदान-प्रदान होता है। यह सब माधव के साहित्यानुरागी होने का द्योतक है।[4]

माधव में प्रेम जन्य निष्ठा है। प्रेम का सबल पाकर वह विघ्न बाधाओं से जूझता रहता है। पुष्पावती नगरी से निकाल दिये जाने पर वह कंदला के वियोग से दुःखी हुआ कामावती पहुँचता है। कामावती से भी उसे देश निकाला दिये जाने पर वह उज्जैन पहुँच कर विक्रमादित्य की सहायता से कंदला को प्राप्त

1. दोहा संख्या 131 माधवानल कामकंदला प्रबन्ध, गायकवाड़ ओरियन्टल सीरिज, बड़ौदा—पृ 392
2. दोहा संख्या 2 वही पृ. 381
3. दोहा संख्या 260 वही पृ. 404
4. दोहा संख्या 265 से 339, वही पृ. 405 से 413

करने मे सफल होता है। विक्रमादित्य उनके प्रेम की परीक्षा करके यही कहता है—

कामकदला कामिणी, माधिव विप्र सुजाण
साचू नेह स्यू जाणिइ, जे इम छडइ प्राण ? ॥ 590 ॥

कदला के मरण की वात सुनकर माधवे के प्राण निकल जाते है।[1] यह माधव के सच्चे प्रेम का प्रतीक है। माधव के प्रेम मे पर्याप्त गभीरता, एकनिष्ठता, गहराई, सच्चाई और उत्सर्ग की भावना है। विक्रमादित्य उसे गणिका प्रेम को छोडकर सुन्दर से सुन्दर स्त्री से विवाह करने के लिये प्रेरित करता है।

"रे मूरिख ! केणि कारणि, लुवधउ वेस्या जीव ?
मनवाछित वनिता दीउ रहि,तू इहा सदैव" ॥ 502 ॥

तव माधव राजा से कहता है

माधव कहइ, सुणउ राजान, नारी सगली नही समान
त्रिण्णि भवन मइ जोया सही, कामकदला उपमा नही ॥ 518 ॥

माधव के इस कथन से उसके प्रेम की एक निष्ठता स्पष्ट होती है। वह पथिक के हाथ कदला को पत्र भेजता है उसमे अपनी सारी व्यथा ही उडेल देता है। दूर रहने से यह मत जानो कि प्रीति ही खत्म हो गई। नयनो का विछोह हो जाने पर भी मन तो तुम्हारे ही पास है।[2] मनुष्य का सच्चा नेह मछली जैसा है जो पानी से अलग करते ही प्राण त्याग देती है।[3] दिन मे तो तुम मन से भुलाई नही जाती हो और रात्रि मे स्वप्न मे आकर रुलाती हो।[4] वीच मे घने जगल और पर्वत हैं और प्रियतम दूर है यदि विधाता पख दे दे तो प्रतिदिन प्रिय से मिल आऊ।[5] मेरे हृदय मे विरह की आग जल रही है परन्तु धुआ प्रकट नही होता और विरह मे मैं उसी तरह पीला हो रहा हू जैसे वेल से अलग किये हुये पत्ते दिन-प्रतिदिन पीले पड़ते रहते हैं।[6] प्रेमी हृदय की कैसी अनूठी याचना है।

माधवानल के प्रेम मे अनन्यता है और लक्ष्य प्राप्ति के लिये अपूर्व लगन। वह क्रिया-निष्ठ नायक है। मार्ग के अनेक सकटो और आपत्तियो से जूझता हुआ अतत. वह सघर्षों के पश्चात् अपने अभीष्ट को प्राप्त कर लेता है। वह प्रेम की अग्नि परीक्षा मे कचन सा खरा उतरता है।

इस प्रकार इस कथा काव्य का नायक 'माधवानल इन्द्रकुमार' के समान सुन्दर व्यक्तित्व वाले आदर्श प्रेमी के रूप मे कथा मे आया है। वह उच्चकुलीन एव उत्कण्ठ

1 दोहा सख्या 585 वही पृ 435
2 दोहा सख्या 394 वही पृ 418
3 दोहा सख्या 401 वही पृ 418
4. दोहा सख्या 406 वही पृ 419
5. दोहा सख्या 415 वही पृ. 420
6. दोहा सख्या 419 वही पृ. 420

गुणो से युक्त एक आदर्श पति, सच्चा गुण-ग्राहक, कलाप्रिय, विद्वान और धीर-ललित नायक है ।

कामकंदला

कामकदला इस आख्यान काव्य की नायिका है। वह नायक का फल है जिसकी प्राप्ति के लिये नायक समस्त प्रयत्न करता है और अपने प्रयासो मे सफल होकर उस फल को पाने का अधिकारी होता है। कथा मे कदला को माध्यम वनाकर ही घटनाएँ चलती हैं। सभी घटनायें कामकदला के इर्द-गिर्द चलती हुई स्पष्टत प्रतीत होती हैं। कामकदला का पूर्व नाम जयती है। जयन्ती इन्द्र के दरवार की नर्तकी अप्सरा है

एक तिहा गाहि अभिराम, अपछर तणउ जयती नाम
चपकवर्ण सुकोमल गात्र, प्रेम सपूरित नाचइ पात्र ॥ 14 ॥

जयती को अपने रूप और कला पर वडा अभिमान हो गया था इसी कारण उसे इन्द्र के शाप का भागी वनना पडा। जयती शिला-रूप मे पुष्पावती नगरी मे अवतरित होती है। उसकी मुक्ति तभी सम्भव होती है जव माधव खेल ही खेल मे उस पाषाण प्रतिमा से विवाह रचा लेता है। शाप मुक्त होने पर जयती का वास्तविक रूप हमारे सामने आता है। माधव से उसका विवाह हुआ है अत वह स्वकीया नायिका है। वह चपकवर्णी सुकोमल शरीर की स्वामिनी है। उसके नेत्र प्रेम से प्लावित है। वह इन्द्र की सव अप्सराओ मे सुन्दर है और कुशल नर्तकी है।[1]

कंदला के आचरण मे हिन्दू नारी की सती भावना का चरम उत्कर्ष है। शाप मुक्त होने के पश्चात् जव वह स्वर्गलोक पहुँचती है तो उसे माधव का ध्यान वार-वार आता है। माधव की वह विवाहिता पत्नी है। अत एक रात वह माधव के पास आती है और अपनी व्यथा प्रकट करती है। इसी तरह हर रात वह माधव से मिलने आती है। इन्द्र को जव यह ज्ञात हो जाता है तो कदला पुन शाप के भय से माधव के पास नही जाती और माधव ही इन्द्र लोक मे आने लगता है। कामकदला उसे भ्रमर रूप मे कायापरिवर्तन करके अपनी कचुकी मे छिपा कर इन्द्र के दरवार मे ले जाती है। कचुकी स्थित भ्रमर-रूप माधव को देख-इन्द्र क्रोधित हो उठता है और जयती को वेश्या के रूप मे जन्म लेने का शाप दे देता है। इसी शाप के कारण जयती कदला वेश्या के रूप मे कामावती नगरी मे जन्म लेती है।[2]

कदला रूपवान, तेजस्वी तथा चौसठ कलाओ मे निपुण नारी है।[3] रूप

1. दोहा सख्या-14 माधवानल कामकदला प्रवन्ध, गायकवाड आरियन्टल सीरिज पृ० 382
2. दोहा सख्या 115 वही पृ० 391
3 (क) दोहा सख्या 118 वही पृ 391
(ख) दोहा सख्या 166 वही पृ० 396

इस प्रकार कामकंदला के हृदय की विशालता, पवित्रता और सवेदनशीलता का मर्मस्पर्शी चित्रण हुआ है। जिसमे कर्तव्यनिष्ठा की भावना का समावेश है। वह माधव की एक-निष्ठा पुजारिन है। उसका चरित्र आदर्श भारतीय नारी के उज्जवल चरित्र का द्योतक है। प्रवल प्रेम के आवेग मे ही वह इन्द्र से दो वार शापित होती है।

कामसेन

कामसेन कामावती नगरी का शासक है। कामकदला कामसेन के यहाँ नर्तकी है।कामसेन कला प्रेमी है। राज दरवार मे नर्तकियो को रखना और उनका सम्मान करना वह खुब जानता है। इन्द्र महोत्सव पर कामसेन नाटक करने का आदेश देते है। राजा अपने प्रधान पुरोहितो एव मत्रियो के साथ राज सभा मे नाटक देखने के लिये वैठा है।[1] माधव द्वारा ताल भग होने का कारण वताने पर राजा उसे कला-पारखी जानकर उसे सभा मे ही वुलता है और अपना मुकुट छोडकर अन्य सव आभूषण माधव को दे देता है

मुगट टालि वीजउ सिणगार, दीधउ माधवनइ तिणिवार
चतुराइ—विद्या परिमाणि, देसि-विदेसि हुउ वहुमाण ।। 187 ।।

कामसेन अभिमानी भी है। वेश्या से माधव की प्रशसा सुनकर राजा क्रोधित हो जाता है। माधव राजा के दिये हुये वस्त्राभूषण कदला को देता है तो इसे वह अपना अपमान समझ कर उसे 'मूर्ख और घमडी वताता है। वह कुपित होकर तलवार उठा उसका वध करना चाहता है लेकिन लोग ब्राह्मण हत्या का वोध कराकर उसे रोकते है

अवध्या ब्राह्मणा गाव', स्त्रियो वालास्तपस्विन ।
तेषा चान्न न मुजीत ये चान्ये शरण गता ।। 223 ।।

क्रोध के कारण राजा इतना विवश हो जाता है कि वह माधव को देश छोडने को कहता है।[2]

कामसेन दूसरो का आदर करना भी जानता है। विक्रमादित्य जव कामसेन से कामकदला को माधव के लिये मागते है तो कामसेन राजा विक्रमादित्य को अपने घर वुलाते हैं, नगर मे उत्सव मनाया जाता है और कामकंदला को वुलाकर कामसेन उसे माधव को दे देते हैं

नगरी माहि महोच्छव कीयउ, राजा विक्रम धरि तेडीयउ
कामकदला तेडी करी, माधव नइ दीधी सुन्दरी ।। 616 ।।

1. दोहा सख्या 176, 177 वही पृ० 397
2 चढी रीस वोलीउ नरेस, माधव । छडउ अम्हारू देस ।। 224 ।। पृ 401

विक्रमादित्य

राजा विक्रमादित्य हमारे सामने दुःख भजक और प्रेमी-प्रेमिका के मिलन मे सहायक के रूप मे कथा काव्य मे आते हैं। ये उज्जेन के शासक हैं।

माधव जब अपनी प्रेमिका गणिका कामकदला को प्राप्त करने मे असफल रहता है और उसके वियोग मे दुखी होकर उज्जेन मे महाकाल के मन्दिर मे अपनी प्रेम-पीडा को व्यक्त करने वाला दोहा लिखता है तव राजा विक्रमादित्य को उस विरही का पता लगता है और वह दोनो प्रेमी-प्रेमिका को मिलाने के लिये तत्पर हो जाते हैं।

विक्रमादित्य दूरदर्शी भी है। अत पहले उनके सच्चे प्रेम की परीक्षा लेने के लिये उनको एक दूसरे की मृत्यु के झूठे समाचार सुनाता है, जिसे सुनकर दोनो प्रेमियो का प्राणांत हो जाता है। राजा को अपने इस कृत्य पर बडी ग्लानी होती है और वह स्वय आत्म-हत्या के लिये तत्पर हो जाता है। किन्तु उसी समय उसका चिर सहचर वेताल आकर उसे ऐसा करने से रोकता है और कारण पूछता है। कारण जानकर वह पाताल से अमृत लाकर राजा को देता है

> पातालइ पहुतउ वेताल आण्यउ अमृत रस असराल
> लेई माधवनइ मुखि, दीयउ, तिसइ विप्र माधव जीधीयउ ॥ 598 ॥

राजा इसी तरह कदला को भी जीवित करता है। माधव और कदला की परीक्षा लेने के बाद ही राजा विक्रमादित्य कामसेन से मिलकर कामकदला को माधव को दिलवाते हैं। इस प्रकार राजा विक्रमादित्य का चरित्र पर दुख कातर, क्षत्रियोचित गुणो वाले वीर राजा के रूप मे चित्रित किया गया है।

गोण पात्रो मे राजा गोपीचन्द, पुरोहित शकरदास, गोग विलासिनि वेश्या, महाजन पथी आदि है

राजा गोपीचन्द पुष्पावती नगरी के शासक के रूप मे हमारे सामने आते है। राजा का पुरोहित शकरदास भी इसी प्रकार का पात्र है। जो माधव का पिता है। दैवयोग से पुत्र प्राप्त होने पर वह पुत्रोत्सव मनाता है। महाजन लोग माधव पर आरोप लगाते हैं कि वह स्त्रियो को आचरणहीन बनाता है। इससे कथा मे एक नया मोड आता है। राजा महाजनो के कहने से माधव की परीक्षा लेता है और रानियो की दशा देख कर वह क्रोधित होता है।[1] कवि अति-प्रत्येक चीज को बुरी बताता है

> अति रूपइ सीता अपहरी, अति दानइ बलि बध्यउ हरि
> अति गर्वइ रावण गजिउ अति सर्वत्र सदा वरजीउ ॥ 152 ॥

1 दोहा संख्या 150-151 वही पृ. 394

विरही माधव का सन्देश कवि कदला के पास पहुँचाना चाहता है। इसने इस कार्य के लिए एक पथिक को सन्देशवाहक का रूप दिया है। माधव को पंथी रूप में एक पुरुष मिलता है —

एक पुरुष तिणि अवसरि, दठिउ पथी रूप
माधव पूछइ "कवण तू ? कहइ ताहरउ स्वरूप" ॥ 386 ॥

और यही पथी कामावती की यात्रा करता है और माधव का सन्देश काम-कदला तक पहुँचाता है। वहाँ से लौटते समय यही पथिक कदला का प्रेषित विरह सन्देश माधव को देता है। विरही माधव को ढूँढने का कार्य गौण चित्रामनी वेश्या करती है।[1] राजा विक्रमादित्य उसे एक लाख दीनार पुरस्कार स्वरूप देकर सम्मा-नित करते हैं।[2]

अदिव्य पात्र

अलौकिक पात्रो मे अदिव्य पात्र के रूप मे वेताल कथा को सुखांत बनाने का कार्य करता है। वेताल राजा विक्रमादित्य का सहायक है। वह 'विक्रम चरित्र की कथाओ' मे अपने मित्र राजा की सहायता करने के लिए प्रसिद्ध चरित्र रहा है। अन्य काव्यो मे वेताल शव मे प्रविष्ट होकर अपना कौशल दिखाता है। 'सदयवत्स वीर प्रवन्ध' मे वेताल शव मे प्रविष्ट होकर सदयवत्स को जुआ खेलने के लिए आम-न्त्रित करता है।[3] 'मलय सुन्दरी कथा' मे भी वर्णन है कि वह शव मे प्रविष्ट होकर महावल के साहस की परीक्षा लेता है। मृत चोर के शव मे प्रविष्ट होकर वेताल रानी वीरमती की नाक खा जाता है।[1]

माधवानल कामकदला चौपई मे वेताल का नवीन रूप हमारे सामने आया है। वह विक्रमादित्य को आत्म-हत्या करने से रोकता है तथा कारण जानकर वह पाताल से अमृत लाकर नायक-नायिका को पुनर्जीवित करके कथा को सुखान्त बनाने मे सहयोग देता है। उसी के बाद कथा फल प्राप्ति की ओर अग्रसर होती है।

इस प्रकार 'माधवानल कामकदला चौपई' के सभी पात्रो, चाहे वे प्रमुख हो अथवा गौण, सभी का चरित्र उज्जवल है। वे किसी न किसी रूप मे कथा को अग्रसर करने मे सहायक हुये हैं।

तेजसार रास के पात्र

तेजसार

तेजसार कथा का नायक है। माता का नाम पद्मावती एव पिता का नाम वीरसेन है। तेजसार का जन्म स्वप्न विशेषज्ञो द्वारा पहले ही वता दिया जाता है।

1. दोहा संख्या 499 वही पृ 427
2 दोहा सख्या 501 वही पृ 427
3 सदयवत्स वीर प्रवन्ध पृ संख्या 96
4 मलय सुन्दरी कथा ह लि प्र. श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

माता द्वारा स्वप्न मे घृत से परिपूर्ण प्रज्वलित दीपक देखने से तेजसार का जन्म हुआ था। अतः उसका नाम दीपक के तेज के समान तेजस्वी होने के कारण तेजसार रखा।

तेजसार कष्ट सहिष्णु एक साहसी नायक है। वह स्वय कष्ट झेलना पसन्द करता है, पर और किसी को कष्ट देना उचित नही समझता। सात वर्ष की अवोध आयु में ही माता का देहान्त हो जाने पर सौतेली माता एव भाई विक्रमसिंह के कुचक्र और राजा के कोप का भाजन होकर एक रात तेजसार घर से निकल पड़ता है। वह लक्ष्यहीन हो साहस और निडरता से आगे वढता जाता है।

वह एक रूपवान कुमार है। एणामुखी नाम की सुन्दरी उसके रूप को देखकर मोहित हो जाती है।[1] तेजसार इतना रूपवान है कि उसे देखकर एणामुखी के अग काम से परिपूर्ण हो जाते हैं। वह सोचती है कि यदि यह मेरा स्वामी हो जाये तो वहुत ही अच्छा हो।[2]

तेजसार चतुर एव वुद्धिमान भी है। मार्ग मे राक्षस के मिलने पर वह वचने की युक्ति सोच लेता है और वच निकलता है।[3] अपनी चतुराई से ही वह रासभी रूप पडयाणी अर्थात् सीकोत्तरी से स्वय भी वच जाता है एव अन्य विद्यार्थियो को भी वचा लेता है। वह रक्षस द्वारा प्रदत्त विद्या से ही उसका हनन करता है

तेजसार चीतारे सोइ, राक्षस दीधी विद्या दोइ
मत्र भणी ने वाधी मूठि, प्राण रासभी हणी इक मूठि ।। 72 ।।

तेजसार क्षत्रिय कुमार है। विजयश्री को योगी से छुडा कर उसकी प्राण रक्षा करने मे उसकी शक्ति शौर्य का परिचय भी हमे मिल जाता है।[4] तेजसार का दयालु एव उदार रूप हमारे सामने उस समय आता है जव वह वन मे रोती हुई नारी के शब्द के पीछे जाता है और उसके रोने का कारण पूछता है एव नगर मे हो रहे युद्ध के वारे मे जानना चाहता है। कारण जानकर वह कुमारी को आत्म-हत्या से वचाने का उपाय सोचता है। तेजसार विद्यावल से सारी सेना को स्तम्भित कर कन्या को वचा लेता है

कुमरे विद्या मत्र प्रमाणि, थम्बउकटक रहयउ तिणठामि
तेजसार कुमारी वाल रिपु सेना भाजि ततकाल ।। 194 ।।

1. दोहा संख्या / 284-85 तेजसार रास चोपई ग्रं 26546 रा प्र वि प्र जोधपुर
2. दोहा संख्या 125 वही
3. दोहा सख्या 142 वही
4. दोहा संख्या 190 वही

विजयश्री के अचानक गायब हो जाने पर तेजसार का विरही रूप हमारे सामने आता है। विजयश्री को न पाकर वह सोचता है

नविलायै चितवै कुमार, किसुं ए की धुं करतार
देवनारि रतन मुझ दीउ अण चीतव्यु उदाली लीउं ॥ 129 ॥

यही नही जिस तरह दशरथ राम सीता के वियोग मे दुःखी थे उसी तेजसार भी विजयश्री के वियोग मे दुखी हैं।[1] वह अपने प्राणो को भी दुत्कारता है कि तुम्हारा हस उड क्यो नही गया।[2] आखिर मे यही सोचकर धैर्य धारण करता है कि ईश्वर ने जिसको-जिसके लिये वनाया है उसे वही मिलता।[3] उसमे तेजसार का आत्म सन्तोष झलकता है।

तेजसार का वहुपत्नीत्व मे विश्वास है। उसमे रूप लिप्सा है एणामुखी सुन्दरी को देखकर वह कहता है

पेखवी कुमर विमासै हीयै किय एकली वसै वनह एह
के ए नागलोक नी नारि कै काई रुडी राजकुमारि ॥ 124 ॥

विजयश्री को ढूंढता हुआ वह जाता है और वहाँ उसे विद्याधरी सहित चार राजकुमारियाँ मिलती हैं। उन पाँचो से वह विवाह कर लेता है।[4] इसी प्रकार वह एणामुखी, पुष्पावती एव सूरसेन की कन्या से भी विवाह कर लेता है। एणामुखी उसकी आठवीं रानी होती है परन्तु प्रिय के लिये सभी समान हैं

आवी साते अतेउरी, सासू प्रणमी आणद धरी
नारि आठमी एणामुखी, प्रीय नै मन सवली सारखी ॥ 339 ॥

तेजसार एक कुशल प्रशासक भी है। वह अवतीपुर, चपापुरी, तेजलपुर एव वनारस का शासक है। चार राज्यो का शासक होना उसके कुशल प्रशासक होने का प्रमाण है। चपापुरी के शासक वज्रकेसरी के कोई पुत्र नही था। अत पुत्र के अभाव मे वह तेजसार को राज्य दे देता है

वयरि केसरि राजा भणै नही पुत्र सतान अम्ह तणै
हाथ मेलवा लक्ष्मीयणी एह राज दीधउ तुझ भणी ॥ 306 ॥

तेजसार को अपने पिता वीरसेन का वनारस का राज्य भी मिल जाता है। वीरसेन अपने पुत्र को वुलवाकर अच्छा दिन देखकर वहुत उत्सव मनाता है और तेजसार को वहाँ का शासक वना देता है।[6] इस पकार तेजसार अपने पुण्य के प्रमाण

1 दोहा सख्या 130 वही
2. दोहा संख्या 131 वही
3. दोहा संख्या 132 वही
4. दोहा संख्या 152 वही
5. दोहा सख्या 358 वही

से हाथी, घोड़े, रथ, पैदल सेना तथा अपार धन सहित चौथा राज्य प्राप्त कर लेता है

एतलै पाम्यो ज्यारे राज, हयगय रथ पायक दल साज
अरथ गरथ अगणित आण, जो वो पुण्यतणो परमाण ।। 359।।

तेजसार अपने वानप्रस्थ आश्रम मे तीन पुत्रो को तीन जगह का राज्य सौंप देता है -

जेहनी माता पुष्पावती, तेहनी नगरी चपावती
एणामुखी माता जस तणी ते कीधु अवती धणी ।। 369 ।।

विजयश्री नु नदन जेह, तेजलपुर नृप थाप्यो तेह
तीन पुत्र थापीया नरेस अणगल राव रिद्धिवर देश ।। 370 ।।

कुशल प्रशासक होने पर भी उसे राज्य से मोह नही है। चौथे आश्रम मे आते ही वह मुनि सुव्रत स्वामी से अपना पूर्वभव जानकर और ससार को अस्थिर जानते हुये श्रीमती के पुत्र को राज्य सौंप कर वैराग्य ले लेता है और शुद्धमन से ध्यान धरते हुये उत्तम श्रावक कुल मे जन्म लेकर निर्मल ध्यान के प्रमाण से केवल ज्ञान को प्राप्त होता है।

इस प्रकार तेजसार एक शात नायक के रूप मे कथा फलक पर दिखाई देता है।

समरसेन

समरसेन कथा मे खलनायक के रूप मे हमारे सामने आया है। वह अवतीपुर के शासक जयप्रभ का भानजा है। राजा की मृत्यु हो जाने पर वह अवतीपुर का शासक बनता है।

समरसेन लोभी व्यक्ति है। वह राज्य को हड़पना चाहता है। उसे भय रहता है कि मामा की होने वाली सतान यदि लडका होगा, तो उसका राज्य छिन जायेगा। अत वह भविष्य-वेत्ताओ से उदर स्थित बालक के बारे मे जानकर सतोष प्राप्त करता है। वहाँ वे ज्योतिषि यह भी बताते हैं कि कन्या का होने वाला पति ही तेरा दुश्मन होगा और वही राज्य का भोग करेगा।

अपने राज्य को बनाये रखने के लिये वह अपनी गर्भवती मामी को यात्रा के बहाने बाहर भेजकर चाडालो से उसकी हत्या करवा देता है।[1]

परन्तु दुर्भाग्य समरसेन का साथ नही छोडता। रानी की हत्या कर दी जाती है पर गर्भस्थ बालिका फिर भी जीवित रह जाती है और माता व्यतरी हो जाती है जो तेजसार से अपनी पुत्री का विवाह कर देती है।[2]

1 दोहा सख्या 273
2. दोहा सख्या 306

समरसेन शक्ति सम्पन्न होने के साथ-साथ कायर व डरपोक भी है। समरसेन को जब ज्ञात होता है कि राजा जय की पुत्री जीवित है और तेजसार के अन्तःपुर में है[1], तो वज्राघात के समान उसे आघात लगता है। वह अपने मंत्री से मिलकर विचार करता है और गुप्त रूप से तेजसार की गतिविधि एव सैन्य शक्ति आदि का पता लगाने के लिये गुप्तचर भेजता है।[2] जब उसे ज्ञात होता है कि तेजसार अपने अन्तपुर मे अकेला ही है तो वह अपनी चतुरंगणी सेना सहित शत्रु से बदला लेने चलता है।[3]

समरसेन क्षमाप्रार्थी के रूप मे भी हमारे सामने आता है। वह तेजसार से पराजित होकर बदी बना लिया जाता है। व्यतरी रूप भाभी जब अपने वास्तविक रूप में प्रकट होती है तो वह उससे क्षमा मांगता है। तेजसार समरसेन को अवतीपुर से निकाल देता है।

इस प्रकार समरसेन एक खल-नायक के रूप मे हमारे सामने आता है। वह प्रमुख नायक का प्रतिद्वन्द्वी है। हर सम्भव प्रयत्न के उपरान्त भी असफलता ही उसके हाथ लगती है। वह स्वार्थी एव पापी है। वह अपनी धृष्टता के कारण ही बन्दी बनाया जाता है और पाश्चाताप की अग्नि मे जलता हुआ राज्य पद से वचित कर दिया जाता है।

सूरसेन

सूरसेन गौड देश का शासक है। वह चपावती की राजकुमारी पद्मावती को प्राप्त करना चाहता है परन्तु पद्मावती का पिता वज्रकेसरी इसके लिये राजी नही होता है अत सूरसेन वज्रकेसरी का दुश्मन हो जाता है।

सूरसेन शक्ति सम्पन्न शासक है। वह असख्य दल साथ लेकर चंपावती को घेर लेता है। नगर के बाहर घमासान युद्ध के उपरान्त सूरसेन नगर मे प्रवेश करता है और गढ को घेर लेता है। लगातार सात दिन के घेरे से और सूरसेन की सैन्य शक्ति से वज्रकेसरी भी घबरा जाता है।[4]

सूरसेन की सेना मे गुप्तचर भी हैं। पद्मावती को रात्रि मे गुप्त मार्ग से निकाल दिया जाता है, परन्तु सूरसेन उस बाला को घेर लेता है।[5]

परन्तु तेजसार के अकथनीय प्रयत्नो द्वारा वह कुमारी (पद्मावती) बचा ली जाती है। तेजसार की अलौकिक शक्ति से सूरसेन प्रभावित हुये बिना नही रहता। सूरसेन तेजसार को जुहार करता है और अपनी पुत्री के साथ विवाह के लिये तेजसार

1 दोहा सख्या 317
2 दोहा संख्या 322
3. दोहा संख्या 325
4 दोहा संख्या 182 से 185
5 ते तलै दल आव्यों भूपाल सैन सहित वीटी ते बाल—193

से निवेदन करता है

> सूरसेन बोलै भूपति, सामली तेजसार वीनती
> मुझ पुत्री छे सुरसुंदरी परणो तुम्हे आणदधरी ॥ 200 ॥

गौड देश का शासक सूरसेन युद्ध करने के बजाय अपनी पुत्री सुरसुन्दरी का तेजसार से विवाह कर देता है। इसके अतिरिक्त वह तेजसार का उपकार मानता है जिसने उसे तथा सेना को बचा लिया।[1]

प्रमुख नारी पात्र

श्रीमती

श्रीमती तेजसार की पटरानी है। वह सर्वप्रथम हाथ मे एक विशेष प्रकार के लोहे से निर्मित तलवार लिये हुये द्वार पर बैठी हुई दिखाई देती है। वह कथा का फल है जिसे नायक प्राप्त करता है। सभी पात्र प्रमुख पात्र के इर्द-गिर्द घूमते हैं।

श्रीमती आगत यौवना, अतिसुन्दर अप्सरा के समान है।[2] नव-यौवना होने के कारण पुरुष को देखने मात्र से उसका शरीर काम सतप्त हो जाता है।[3]

वह विद्याधर जाति की कन्या है। उसके पिता विजयसिह भूपाल सुरपुर के शासक हैं तथा माता जयमाला है। वह अपने माता-पिता की कनिष्ट सतान है।

विद्याधर जाति की कुमारी होने के कारण आकाश मे उडने की विद्या से वह भिज्ञ है। स्त्री सुलभ लज्जा को त्याग कर वह तेजसार से कहती है

> जउ पटराणी थापउ मुज्झ, तउ च्यारे परणावु तुज्झ
> कुमर बोल वध तस कीयउ, विद्याधरी नु रज्यउ हीयु ॥ 151 ॥

और इस प्रकार वह स्वय पटरानी बन कर अन्य चार कन्याओ का विवाह भी तेजसार से करा देती है। इससे ज्ञात होता है कि वह सपत्नी द्वेष की भावना से शून्य है। पटरानी बनने के बाद वह सुख भोगती रहती है। एक दिन अचानक उसका भाई विद्याधर आता है और वह पर-पुरुष को अपनी बहिन के साथ देखकर क्रोधित हो उठता है।[4] भाई के पूछे जाने पर वह उस पुरुष का, स्त्री सुलभ लज्जा से विद्याधर के बहनोई के रूप मे परिचय देती है।[5] बड़े भाई के सामने अपने पति का इस रूप मे परिचय प्रदर्शन एक भारतीय कन्या के गौरव के रूप मे प्रतिष्ठापित

1 दोहा संख्या 201
2 ,, ,, 136
3 ,, ,, 137
4 दोहा संख्या 157
5. ,, ,, 158

किया जा सकता है । यह वर्णन हमे, ग्राम वधुओं को सीता द्वारा राम के दिये गये परिचय का स्मरण दिला देता है ।

चारो नारियाँ श्रीमती से विनती करती हैं कि तुम प्रिय की खोज करो । वे उसे सच्ची स्वामिनी मानती हैं ।[1]

श्रीमती विद्यावल से एक आवास का निर्माण करती है तथा उसमे सभी आवश्यक वस्तुयें रखकर वह निश्चित अवधि तक आने के लिये कह कर प्रिय की खोज के लिये चल देती है । श्रीमती एक पतिव्रता नारी के रूप मे हमारे सामने आती है । यदि उनका पति जीवित होगा तो वह इस स्थान पर पुन आयेगी और यदि स्वामी परलोक पहुँच गया होगा तो स्वय भी आत्मन्दाह कर लेगी ।[2] उसकी कैसी सच्ची लगन है अपने प्रिय मे । आकाश मे उडने की विद्या के प्रभाव से आकाश मार्ग द्वारा वह अपने प्रिय को ढूढने निकलती है और पुरुप वेश वनाकर चपापुर निवासियो को वहाँ के राजा के विषय मे पूछती है तथा अपना कार्य पूर्ण हुआ जान कर मन मे प्रसन्न होती हुई अन्त.पुर मे जाती है और राजा से कहती है

> जाण्यु नवि नारी ए किसी, एणतेडी आवी उल्हसी
> तिसै श्रीमति हसी नै कहयउ, भलु थयु प्रिय राजा थयो ।। 232 ।।

प्रिय से मिलकर सव प्रकार से कुशल मगल जान कर वह अन्य चारो रानियो को लाने के लिये आकाश मार्ग से उडकर आती है और उन्हे वधाई देती हुई कहती है कि चलो तुम्हें तुम्हारे प्रिय से मिला दूँ । प्रिय चपापुरी मे राज्य करता है मैं तुम्हे वुलाने ही आई हूँ । यहाँ हमे उसके चरित्र की उच्चता एव महानता दिखाई देती है ।

कवि ने श्रीमती को विमान विद्या की जानकार के रूप मे भी प्रस्तुत किया है । श्रीमती एक सुन्दर विमान की रचना करती है जो इन्द्र के विमान के समान सुन्दर है । उसमे पाँचो रानियाँ वैठकर अपने प्रिय पति तेजसार के पास पहुँचती हैं ।[3] सातो रानियो के साथ खरी प्रीति है परन्तु तेजसार ने पटरानी विद्याधरी अर्थात् श्रीमती को ही वनाया है ।[4] पटरानी श्रीमती है अत उसका पुत्र ही उत्तराधिकारी होगा । अत राजा तेजसार श्रीमती के कुमार को अपना राज्य सौंपता है

> पटराणी श्रीमतीय कुमार
> ते थाप्यो निजपाट अपार ।। 400 ।।

1. दोहा सख्या 223
2. ,, ,, 226
3. ,, ,, 243
4. ,, ,, 244

इस प्रकार श्रीमती (विद्याधरी) तेजसार की पटरानी के रूप में कथाफलक पर अवतरित हुई है। अलौकिक विद्या से सम्पन्न होने पर भी उसमे लेश मात्र का भी गर्व भाव नही है। वह नारी के साधारण गुणो से ऊपर है। सपत्नी द्वेष इर्ष्या आदि अवगुणों से उसका दूर का नाता भी नही है। दूसरो की भलाई करना ही उसका कर्तव्य है। वह *कर्तव्यशीला*, *पतिपरायणा भारतीय नारी* के रूप मे चित्रित की गई है।

गौण पात्र

गौण पुरुष पात्रो मे तेजसार के पिता वीरसेन जो वाराणसी के शासक हैं। अपनी दूसरी रानी के पुत्र विक्रमसिंह के कहने से तेजसार से द्वेष करने लगते हैं। बाद में वीरसेन को अपनी भूल का ज्ञान होता है तब वह तेजसार को बुलवाता है और तेजसार अपने मन मे आनन्दित हुआ पिता से मिलने जाता है।[1]

त्र्यंबावती नगरी मे त्र्यंबकसेन शासक है वहाँ गंगदत्त ओझा है, उसकी पंडिताइन सिकोत्तरी है। वह तेजसार के मार्ग मे बाधा उत्पन्न करती है। योगिनियो द्वारा बलि के आयोजन में वह सभी विद्यार्थियो की बलि करना चाहती है परन्तु तेजसार की बुद्धिमत्ता से सब बच निकलते हैं। तेजसार गंगदत्त ओझा के घर रहकर विद्या सीखता है, गुरु की सेवा करता है और अपना पेट भरता है।[2]

दूसरी बाधा काल वर्ण क्रूर राक्षस है। वह तेजसार का भक्षण करना चाहता है परन्तु तेजसार वहाँ से बच निकलता है और राक्षस को जीवन दान देकर प्रतिदान मे दो विद्यायें प्राप्त करता है।[3]

चौसठ योगनियाँ बालको का भक्ष्य लेने के लिये 'पिंडयाणी' के पास आती हैं, परन्तु तेजसार अपनी तीक्ष्ण बुद्धि से राक्षस प्रदत्त विद्या द्वारा उसका वध करता है।[4]

जोगी कन्या को बाध कर अपनी सिद्धि हेतु बलि देना चाहता है।[5] तेजसार द्वारा नारी हत्या के पाप से सचेत कर दिये जाने पर भी जब वह किसी तरह इस दुष्कृत्य से विरत नही होना चाहता तो तेजसार मन्त्र पढकर उस पर मुष्ठि प्रहार करता है योगी मूर्च्छित हो जाता है।[6] प्राण बचाने के बदले मे योगी तेजसार को दो विद्या देता है।[7]

1. दोहा संख्या 347
2. „ „ 22
3. „ „ 51, 52
4. „ „ 73
5. „ „ 85
6. „ „ 90
7. „ „ 94

सुरपुर नगर के शासक विजयसिंह भूपाल है। उनकी रानी जयमाला है। उनकी छोटी पुत्री श्रीमती है। विद्याधर जाति की यह कुमारी है। इसका भाई विद्याधर एक खलनायक और गौण पात्र के रूप मे प्रस्तुत किया गया है। विद्याधर दस विद्याधरी सुन्दरियो का पति है, फिर भी मानवी भोग की इच्छा रखने वाला है।[1] आकाश मे उडने की विद्या का ज्ञाता होने के कारण वह आकाश मे उड़ता है। तेजसार को अपना वहनोई जानकर उससे द्वेष करता है। वह अपनी वहिन को ही पापिनी वताता है और उसे मारने की सोचता है।[2] विद्याधर तेजसार से तत्र-मंत्र युद्ध भी करता है। रूप परिवर्तन की विद्या से वह कभी हाथी और कभी सर्प वन कर तेजसार से युद्ध करता है।[3] अन्त मे वह शक्ति देवी का स्मरण करके तेजसार से अपना पिंड छुडवाता है। परन्तु विजयश्री उसका सिर काटकर सवकी रक्षा करती है।[4] इस प्रकार पापी का अन्त कराकर कथाकार एक सुन्दर आदर्श प्रस्तुत करता है।

चपापुरी का राजा वज्रकेसरी है उसकी रानी चंपावती तथा पुत्री पद्मावती है। वज्रकेसरी अपनी कन्या का विवाह किसी से नही करना चाहता। कारण ज्योतिषियो की भविष्यवाणी के अनुसार उससे विवाह करने वाला ही राज्याधिकारी होने वाला है।[5] इसी कारण सभी लोग वज्रकेसरी के दुश्मन हो जाते हैं। सूरसेन तथा उसकी सेना को स्तम्भित कर तेजसार जव पद्मावती की रक्षा करता है तो वज्रकेसरी अपनी कन्या का विवाह तेजसार से कर देता है। सभी दुश्मन शात हो जाते हैं।[6]

धात्री पद्मावती की दासी के रूप मे आती है। वज्रकेसरी जव पद्मावती को गुप्त मार्ग से वाहर निकालते हैं तो यह धात्री ही उसकी सरक्षिका होती है। तेजसार को सारा विवरण धात्री ही वताती है।[7]

दक्षिण मे चपानगरी मे कनक केतु शासक है जिसकी पटरानी चपकमाला है। पुत्री विजयश्री है जो पूर्वभव के कारण योगी द्वारा अपहृत की जाती है और तेजसार उसे छुडाता है।[8]

दक्षिण मे अवतीपुरी मे राजा जय राज करता है और उसकी रानी तिलकाउरी है। जिनके कोई सतान नही है। राजा सतान के कारण चिंतित रहते

1. दोहा सख्या 145
2 ,, ,, 160
3. ,, ,, 162, 63
4 ,, ,, 223
5. ,, ,, 180
6. ,, ,, 204
7. ,, ,, 179
8. ,, ,, 91

हैं और देवी देवताओ की भी पूजा करते हैं। एक योगी द्वारा प्रदत्त फल से रानी गर्भवती होती है, परन्तु रानी के छठे मास मे आने पर राजा की सर्प दश के कारण मृत्यु हो जाती है। राजा की मृत्यु के वाद समरसेन जो राजा का भानजा है, को राज्य दिया जाता है परन्तु समरसेन दुष्ट है। उसे आशका है कि रानी के पुत्र होने पर राज्य चला जायेगा।[1]

अत वह रानी तिलकाउरी को यात्रा के वहाने वाहर भेजकर चार खवासो को उसे मारने के लिये भेजता है। एक खवास मारने को मना करता है परन्तु तीनो खवास राजा के भय से उसे मार देते है।[2]

परन्तु जव समरसेन रानी की पुत्री को जीवित होना सुनता है तो वह उन खवासो को वुलाता है जिन्होने रानी की हत्या की थी। तव वे यही कहते हैं कि रानी को तो हमने मारा है परन्तु रानी को जो नवा मास था उसका उपाय हमारे पास नही था।[3]

तेजसार मुनि सुव्रत स्वामी से अपना पूर्वभव पूछता है।[4] पूर्वभव सम्वन्धी कथा मे ही सोमदत्त वाह्मण का उल्लेख भी हुआ है जिसके चार पुत्र हैं चौथा पुत्र गुणहीन है। कपिलपुर के वाह्मण की पुत्री विमला से उस गुणहीन वाह्मण पुत्र का विवाह होता है।[5]

विमला की पड़ौसिन श्राविका है उसकी सगति से विमला भी तेल से दीपक प्रज्वलित कर शुद्ध मन से जिन प्रतिमा का ध्यान चार प्रहर तक करती है।[6] घर के लोग व उसका पति उसे कुलकलकिता कह कर घर से वाहर निकाल देते हैं।[7] विमला उसी श्राविका के पास जाती है और सयम भार ग्रहण कर चरित्र लेती है। इस तरह वारह वर्ष तक सयम का पालन वारह अग को सुनना अन्त समय जानकर शुद्ध ध्यान घरते हुये वह चौथे देवलोक इन्द्र मे जाती है और पूर्वभवो के परिणामस्वरूप इस जन्म मे तेजसार के रूप मे अवतरित होती है।[8]

1. दोहा सख्या 260
2 ,, ,, 273
3. ,, ,, 320
4. ,, ,, 372
5. ,, ,, 377
6. ,, ,, 391
7. ,, ,, 392
8. ,, ,, 396

तेजसार की रानियां

विजयश्री :

विजयश्री की माता चपकमाल एव पिता कनककेतु हैं। विजयश्री के सात भाई हैं और वहिन अकेली है।[1]

विजयश्री आगत यौवना है। उसके रूप सौन्दर्य को देखकर तेजसार सोचता है कि या तो यह अप्सरा है या कोई देवकुमारी है।[2] विजयश्री को अपने पूर्व भव का ज्ञान है। इसी कारण वह योगी द्वारा अपहृत किये जाने पर तेजसार को ही सहायतार्थ पुकारती है। तेजसार को पति रूप मे पाने की वात सुनने मात्र से ही वह अपने मन मे निश्चय भी कर लेती है। विजयश्री मे भारतीय नारी की गरिमा है। वह पतिव्रता, पतिपरायण नारी है। पति को ही जीवन देने वाला आधार मानती है। यदि तू अपनी नारी की रक्षा नही करेगा तो यह जोगी अवश्य ही इसे मार डालेगा।[3] कैसी व्यथा, कैसी पीड़ा है, विजयश्री के इस कथन मे। विद्याधर जव उससे विवाह करना चाहता है तो वह अन्य सव पुरुषो को भाई के समान एव तेजसार को ही पति रूप मे वताती है।[4] योगी से छुडाकर तेजसार उसके वारे मे पूछता है तो वडे ही सहज भाव से अपने वारे मे वतला देती है, परन्तु तेजसार के वारे मे पूछना भी नहीं भूलती।

> यह विरतान्त कहयउ माहरउ, तू हिव नाम प्रगट कर ताहरउ ॥110॥

विजयश्री जलक्रीडा के लिए अधीर है। तेजसार उसे निर्मल एव शीतल जल पिलाता है जिससे उसकी आत्मा एव शरीर सुतुष्ट होता है। वह तेजसार से कहती है

> नारी कहे सरोवर जिहाँ जलक्रीडा जइ कीजै तिहाँ।
> सरोवर क्रीडा करी अघोल, तिहाँ पेखै कैलिहर ओलि ॥119॥

तेजसार से विछुड जाने पर वह विरह दग्ध हो उठती है। वह रो रही है और निश्वासें भर रही है और तीन कुमारी उसके पास वैठी हैं।[5] अपने प्रिय को देखकर उसका हृदय (आवार) धैर्य धारण करता है।[6]

विद्याधर तेजसार को ले जाकर दूर कही डाल आता है। विजयश्री को अपने पति का वदला लेना है, वह अवसर देखकर

1. दोहा सख्या 98-99
2. दोहा सख्या 80
3. दोहा सख्या 83
4. दोहा सख्या 115, 118
5. दोहा सख्या 141
6. दोहा संख्या 112

विद्याधर का सिर तलवार से काट देती है ।[1] विजयश्री राजकुमारी होने के कारण क्षत्राणी भी है । विजयश्री के पुत्र को तेजलपुर का राज्य मिलता है ।[2]

पद्मावती

पद्मावती चम्पापुर के राजा वज्रकेसरी की पुत्री है । पद्मावती की माता चम्पावती है ।[3] पद्मावती के जन्म के समय जन्मपत्री बनाने वाले ज्योतिषी बताते हैं कि पद्मावती का होने वाला पति चार राज्यों का अधिकारी होगा ।[4]

जैसे-जैसे पद्मावती वय को प्राप्त होती गई यह बात सर्व देशों में फैल गई और बडे-बडे राजा नगरपति की कन्या को मांगने के लिए आने लगे । परन्तु पिता भविष्यवाणी के भय से किसी के साथ कन्या का विवाह करने को राजी न हुआ । इसी कारण सभी लोग उसके दुश्मन हो गये । पद्मावती को प्राप्त करने के लिये घोर सग्राम होता है ।

पद्मावती दु खी है कि उसके कारण इतना अनिष्ट हो रहा है । वह भयभीत होकर एक स्थान पर छिप जाती है और आत्म-हत्या करने का विचार करती है ।[5] इसी बीच तेजसार आकर उसकी रक्षा करने का वचन देता है ।[6] तेजसार पद्मावती को देखता है, जो कि अत्यन्त सुन्दर एव रूपवान है ।[7] पद्मावती के पिता तेजसार से ही पद्मावती का विवाह कर देता है

चंपाराय वयर केसरी पुप्फावती तास कुंवरी ।
ते पिण परणी अतेउरी घणं महोच्छव आदर करी ।। 205 ।।

पद्मावती का पुत्र ही चम्पापुर का राज्याधिकारी बनाया जाता है ।[8]

एणामुखी

एणामुखी के पिता जय नृप अवतीपुरी के शासक हैं । माता का नाम तिलकाउरी है । एणामुखी का जन्म योगी द्वारा दिये गये फल से होता है ।[9] एणामुखी के जन्म से पूर्व ही पिता का देहात सर्प के खा जाने से हो गया था । अत अवतीपुर पर जयनृप का भानजा समरसेन शासक बना । समरसेन अविचल राज्य के कारण

1 दोहा सख्या 221
2 दोहा सख्या 369
3. दोहा संख्या 179
4. दोहा संख्या 180
5 दाहा संख्या 190
6 दोहा स ख्या 191
7. दोहा स ख्या 192
8 दोहा संख्या 369
9. दोहा स ख्या 255

रानी तिलकाउरी की हत्या करवा देता है ।[1] परन्तु रानी के गर्भ को नवाँ मास था । अत पुत्री साडी से ढकी पडी रहती है और इस तरह उसकी जान की रक्षा होती है । तिलकाउरी मरकर व्यतरी हो गई वह कन्या को उठा ले जाती है ।[2]

माता को पुत्री से स्नेह होना स्वाभाविक ही है । कन्या मृगो के साथ रात-दिन रहती थी, इसीलिए उसको एणामुखी नाम दिया जाता है ।

एणामुखी आगत यौवना एव अति सुन्दर है । जैसे-जैसे एणामुखी का यौवन काल बढता है माता को उसके विवाह की चिन्ता लगती है, परन्तु एणामुखी किसी से भी विवाह करने को तैयार नही है ।[3]

तेजसार को अटवी मे भ्रमण करते देख एणामुखी उसी पर आसक्त हो जाती है और घर आकर रोती है । माता के बहुत पूछने पर वह अपने मन की बात बताती है

> आज गई थी अटवी मझार, इक मैं पेख्यउ राजकुमार ।
> ते मुझने परणावो मात, नही तर करिमु आतमघात ॥ 284 ॥

एणामुखी मे एक ओर जहाँ नारी सुलभ लज्जा एव संकोच है तो दूसरी ओर दृढ निश्चय एव संकल्प भी । विवाह करेगी तो तेजसार से ही अन्यथा आत्म-हत्या कर लेगी । माता पुत्री की इच्छा जानकर उसे पूर्ण करने के लिए तेजसार का पता लगा कर उसका विवाह कर देती है ।

> इण पर कीधा घणा मडाण
> पाच दीह उच्छव परिमाण
> एणामुखी राज कुवरी
> परणी तेजसार सुन्दरी ॥ 306 ॥

विवाह से पूर्व तेजसार उसे मृगो के साथ भ्रमण करते देखकर उसकी ओर आकर्षित होकर एणामुखी से उसके बारे मे पूछता है । परन्तु एणामुखी लज्जित हुई सकोचवश चली जाती है । इससे स्पष्ट है कि वह लज्जावती तो है ही साथ ही उसे अपनी मान मर्यादा का भी ध्यान है । एकान्त मे पर पुरुष से बात करना शायद वह नही चाहती हो और इसीलिए घर आकर ही माता से सब कुछ बता देती है ।

एणामुखी के लिए उसकी माता तेजलपुर नामक नये नगर का निर्माण करती है । तेजसार एणामुखी के पुत्र को ही तेजलपुर का शासक बनाता है ।

सुरसुन्दरी

सुरसुन्दरी गौड देश के शासक सूरसेन की पुत्री है । सूरसेन स्वय अपने विवाह के लिए चम्पापुर आता है । वहाँ तेजसार से सग्राम मे पराजित हो जाने पर तथा

1. दोहा संख्या 273
2. दोहा संख्या 276
3. दोहा संख्या 280

तेजसार को अपना जीवन-दाता जानकर उससे विनती करता है कि वह उसकी पुत्री सुरसुन्दरी से विवाह कर ले।

> सूरसेन बोले भूपती साभली तेजसार बीनती
> मुझ पुत्री छै सुरसुन्दरी, परणो तुमे आनन्द धरी ॥ 200 ॥

सुरसुन्दरी भी तेजसार की रानी होती है।[1]

अन्य पात्र

अन्य पात्रो मे पशु-पक्षियो के रूप मे हमे राजहस, सारस, चकवा एवं हिरण का नामोल्लेख मात्र मिलता है। तेजसार पानी की तलाश मे जाता है उसे बहुत से पक्षियो का कोलाहल सुनाई देता है, जिससे वह सरोवर होने का अनुमान लगाता है।[2] इसके अतिरिक्त वहाँ राजहस, सारस, चकवा तथा अनेक नये-नये पक्षी दिखाई देते हैं।[3]

अटवी मे भ्रमण करते हुए हिरणो के एक झुण्ड को देखता है वे हरिण कूद रहे हैं और उत्साहित हो रहे हैं।[4]

अलौकिक दिव्य पात्र

दिव्य पात्रो मे सुव्रत स्वामी हमारे सामने, ज्योतिषी एवं स्वप्नवेत्ता के रूप मे सामने आते हैं। तेजसार के जन्म से पूर्व ही सुपन पाठक दीपक के समान तेजस्वी पुत्र होने की बात कहते हैं।[5] इसी तरह तिलकाउरी के गर्भ के बारे मे भी स्वप्न फल बताने वाले कहते हैं कि

> पुत्र नही छै उदर सुन्दरी, जणिस्ये पुत्रीते सुन्दरी
> ते कुमरी परणे स्ये जेह ताहरू वयरी नही य सदेह ॥ 264 ॥

पद्मावती के जन्म के समय ज्योतिषी बताते है कि जो इस राजकुमारी से विवाह करेगा वह चार राज्यो का अधिकारी होगा।[6]

कुछ इसी तरह की भविष्यवाणी विजयश्री के लिए की जाती है

> ते वलता ते जपै केवली, साभली राजा कारणवली
> बार जोयण अटवी कतार, लहिस्यै योगी मत्र आधार ॥ 103 ॥

> ते मारेस्यै विद्या ने कामि, तेजसार आवेस्यै तिण ठामि
> झूझ करी ते छोडावस्यै, ते भरतार एहनो थाइस्यै ॥ 104 ॥

1. दोहा स० 203
2. दोहा स० I15
3. दोहा सं० 117
4. दोहा स० 122
5. दोहा स० 9
6. दोहा सं० 180

सुव्रतस्वामी वीरसेन को प्रतिवोध कराके चरित्र देते हैं और तेजसार श्रावक वनता है।[1] तेजसार को पूर्वभव का ज्ञान सुव्रत स्वामी ही कराते हैं।[2] श्री मुनि सुव्रत स्वामी से ही तेजसार संयम लेकर शुद्ध ध्यान धारण करते हुए उत्तम श्रावक कुल मे जन्म लेकर केवल ज्ञान को प्राप्त होते हैं।[3]

अदिव्य पात्रो मे सिकोत्तरी व पडिताइन अनिष्ट कार्यों की सम्पन्नता के लिए ही कथा मे आयी हैं। यह योगिनियो की तृप्ति के लिये वालको की वलि का आयोजन करती है।[4] दूसरा अदिव्य पात्र है राक्षस जो तेजसार का ही भक्षण करना चाहता है पर अपनी मदमति के कारण वह सफल नहीं होता। वह अपनी निर्वलता और तेजदिष्ट तेजसार को वता देता है और तेजसार उसका लाभ उठाकर उसके चगुल से वच निकलता है।[5]

विद्याधर भी तेजसार के मार्ग मे वाधक वनकर ही आया है। परन्तु विजयश्री उसे रास्ते से हटा देती है।[6] विद्याधर एक कामी जीव है और मत्र विद्या का ज्ञाता। वह अपनी विद्या का प्रयोग तेजसार पर करता है।

व्यतरी के रूप मे तेजसार की माता तथा सास श्रीदत्ता हमारे सामने आती हैं।[7] गरुडी नारी तेजसार की माता ही है जो अपने पुत्र से मिलने के लिये आकाश से उत्तरी है।[8] ये दोनो व्यतरियाँ ही कथा नायक व नायिका की सहायिका रूप मे अवतरित हुई हैं। अपनी अलौकिक शक्ति से वे एक नये नगर का निर्माण करती हैं, जो सव प्रकार से सम्पन्न है।[9]

तेजसार की सास तेजलपुर नगरी का निर्माण करती है जहाँ पुण्य के प्रताप से सव कार्य सम्पन्न होते हैं।[10] सास व माता दोनो ही व्यतरी हैं। अत अपने पुत्र के सामने दिन मे एक वार सुन्दर रूप धारण कर प्रकट होती हैं।[11]

इस प्रकार तेजसार के सभी पात्र किसी न किसी प्रकार से तेजसार से सम्वन्ध रखते हैं तथा कथा के विकास मे गति देने मे सहायक रूप मे आये हैं।

1. दोहा सं० 365-66
2 दोहा स० 372
3. दोहा सं० 405
4. दोहा सं० 60
5. दोहा सं० 45
6. दोहा संख्या 221
7. दोहा सख्या 302
8. दोहा संख्या 292
9. दोहा संख्या 303
10. दोहा सख्या 336
11. दोहा संख्या 337

भीमसेन राजहंस सम्बन्ध चौपई के पात्र

कथा के प्रमुख पात्र · भीमसेन, मदनमजरी, राजहस रूपमती, सगर राय, हैं।

गौण पात्र रिणकेसरी, हितसागर, सुमतिमत्री, सन्यासी कीर, हस, हसी धात्री, शबराज, वनपालक, श्रीपाल, वनदेवी, अमगसेन, तपस्वी, तपस्विनी, तापस आदि हैं ।

कथा मे पशु-पक्षी आदि अमानवीय पात्र भी आये हैं यथा हाथी, घोडा, शेर वन्दर, हिरण, गीदड, नेवला, सियाल, शुक, सामली, श्यामा पक्षी, सर्प, चीवरी, तीतर, नीलकठ एव चील आदि हैं ।

प्रमुख पात्र

भीमसेन

कथा के प्रारम्भ मे ही श्रीपुर के शासक रूप मे भीमसेन सामने आता है । उसकी पटरानी प्रीतम मजरी है । उसे अपनी रानी से सच्ची प्रीति करने वाला वताया गया है ।[1]

भीमसेन कुशल प्रशासक है । उसके देश मे सभी लोग सुखी हैं । विरला ही कोई दुखी होगा । प्रजापालक राजा को जव एक परदेशी वताता है कि लोगो के विश्राम के लिये कोई वाडी नही है[2] तो प्रजा का हितैषि राजा चिंतित हो जाता है[3] और तत्काल एक वाडी वनवाने की योजना वनाता है । शुभ दिन देखकर सरस भूमि पर वाडी वनवाता है जिसमे वाहर से मगवाकर अनेक प्रकार के वृक्ष लगवाये जाते हैं । उसी वाडी मे एक आवास भी वनवाया जाता है और उस वाडी का नाम 'नन्दन वन' रखा जाता है । राजा अपने रनिवास सहित उसमे ही रहता है ।[4] कुशल प्रशासक के लिये प्रजा के हितो का ध्यान आवश्यक है । भीमसेन भी उन गुणो से युक्त है ।

भीमसेन हितसागर का अच्छा मित्र भी है । उसकी प्रीति सच्ची और गहरी है । वनपालक जव राजा भीमसेन को वन देखने का आग्रह करता है तव वह अपने साथ हितसागर को ले जाना नही भूलता ।[5] सभी वृक्षो की विशेषतायें हितसागर ही राजा को वताता है ।[6] रूपमजरी के प्रेषित पत्र को पढकर भीमसेन हितसागर से ही कोई उपाय पूछते हैं

1 दोहा सख्या 15, 16 भीमसेन राजहस सम्वन्ध चोपई ग्रंथ 1217 ला द ग्र अहमदावाद
2. दोहा सख्या 19
3. दोहा सख्या 20
4. दोहा सख्या 33
5 दोहा सख्या 38
6. दोहा सख्या 43-48

कागल वाची कहइ राय समल हितसागर
करउ बुद्धि कोई उपाय निर्मल मतिनागर ।। 114 ।।

भीमसेन के साथ हितसागर छाया की तरह चलता है ।[1] मार्ग मे सन्यासी को विपत्ति से छुटकारा भी हितसागर की सहायता से ही दिलाया जाता है ।[2] विशालापुरी मे भी हितसागर राजा के साथ वन मे रहता है ।[3]

धात्री के मुँह से रूपमजरी की प्रतिज्ञा को सुनकर भीमसेन शुभ यात्रा जानकर प्रसन्न होता है । उसके शोक सताप सब मिट जाते हैं और उसका मनोरथ पूर्ण होता है । कनकलता से विवाह के समय भी वह व्यतरी से हितसागर को विद्या-बल से लाने की बात कहता है । रनिवास को भी वह हितसागर के बाद ही याद करता है ।[4]

भीमसेन प्रकृति प्रेमी है । 'नन्दन वन' बनने के बाद वह रनिवास सहित वहाँ ही आकर रहने लगता है । हितसागर से सभी वृक्षो की विशेषता पूछता है और एक फूल युक्त पेड के नीचे बैठ भी जाता है ।[5] विभिन्न प्रकार के वृक्ष मगवाने के लिये वह जगह-जगह दूत भेजता है, तथा बडे-बडे भूपतियो को पत्र भी लिखता है[6] जिससे उसका प्रकृति प्रेम ज्ञात होता है । 'नन्दन वन' के बीच मे एक विशाल सरोवर भी बनवाता है जिसका नीर सुरभित एव शीतल है जिसके जल से वृक्ष सबल हो गये हैं ।[7]

भीमसेन दानवीर के रूप मे भी सामने आता है । वह योग्य पात्र को ही दान देता है ।[8]

भीमसेन यौवनमय पुरुष है । रूपवान होने के साथ-साथ वह भोगी है और युवती का रसिक भी । भीमसेन अत्यन्त रूपवान, कोमल, शक्तिसम्पन्न एव चतुरग सेना वाला पुरुषो मे रत्न इन्द्र का अवतार है ।[9]

भीमसेन रूप लोभी भी है । कीर से प्राप्त रूपमजरी के सन्देश मात्र से वह उसकी ओर आकर्षित हो जाता है और उसे प्राप्त करने का उपाय पूछता है[10] और

1 दोहा स ख्या 119
2 दोहा स ख्या 123
3 दोहा स ख्या 149
4. दोहा स ख्या 331
5 दोहा स ख्या 59
6 दोहा स ख्या 22
7 दोहा स ख्या 30,31
8 दोहा स ख्या 58
9. दोहा स ख्या 75
10 दोहा स ख्या 114

शुभ वार व शुभ मुहुर्त देखकर वह रूपमंजरी को पाने की इच्छा से जाता है ।[1] उसके सामने एक ही लक्ष्य है, रूपमजरी को प्राप्त करने का । अवधूत उसे वहाँ आने का कारण पूछता है तो भीमसेन कहता है

कुमरी नइ परणिवा काजि पहु चिसि परदेसइ
करी युद्ध कोई उपाय आणिसु इण देसइ

कुमारी रूपमजरी से विवाह के लिये इस देश मे आया है, युद्ध करके अथवा अन्य किसी उपाय से उसे प्राप्त करना ही उसका उद्देश्य है । सन्यासी से वह राजकुमारी का रूप भी पूछता है और रूप श्रवण से वह आनन्दित हो जाता है और उस छवि को एक घडी भी नही भूल पाता ।[2]

भीमसेन ईश्वर मे श्रद्धा रखने वाला है । विशालपुरी पहुचने पर रात्रि हो जाने के कारण त्रिपुरा देवी के मठ पर विश्राम करते हुए देवी के मनोहर स्थान को देखकर राजा प्रणाम करता है और प्रार्थना करता है कि सेवक के सभी कार्य कृपा करके पूर्ण करो ।[3]

भीमसेन साहसी और रक्षक भी है । मदनमजरी द्वारा गले मे फांसी लगाये जाने पर जब धात्री उसकी प्राण रक्षा के लिये पुकारती है तो भीमसेन आकर उसके आत्म-हत्या का कारण पूछता है और सब वृतांत जानकर वह प्रसन्न होता है और अच्छा-मूहुर्त जानकर त्रिपुरा देवी की साक्षी मे ही उस राजकुमारी से विवाह कर लेता है ।[4] विवाह के बाद एक महिने रहकर श्रीपुर लौटते समय मार्ग मे राजासगर से भी भीमसेन का युद्ध होता है और भीमसेन राजासगर की सेना का नाश कर विजित होता है ।[5]

भीमसेन सच्चे प्रेमी के रूप मे हमारे सामने आते हैं । राजासगर से युद्ध के समय रानी रूपमजरी भीमसेन से विछुड जाती है । राजा स्वय एव अच्छे भट्ट योद्धाओ के साथ रानी को वन मे ढूंढते फिर रहे हैं,[6] भीमसेन प्रतिज्ञा भी करते हैं

भीम महीपति इन भणइ न मिलइ जो नारि
तउ हू पावक तनु दहू न रहू ससार ।। 207 ।।

यदि रूपमजरी नही मिली तो भीमसेन स्वय भी आत्मदाह कर लेंगे वे विना रूपमजरी के इस ससार मे नही रहेगे । विरह से उद्दीप्त राजा वन पर्वत और कदरा मे घूम-घूम कर वहाँ के रहने वालो से रानी के वारे मे पूछ रहे है । राजा

1 दोहा संख्या 120
2 दोहा संख्या 138
3 दोहा संख्या 142
4 दोहा संख्या 189
5 दोहा संख्या 200
6. दोहा संख्या 203

को दुखी देखकर अमंगसेन जो पर्वत पर निवास करते थे राजा को मोह संतप्त देखकर शकुन शास्त्र के आधार पर बताते हैं कि आज से सातवें दिन रानी मिल जायेगी।[1]

रूपमजरी के विषफल आहार के बाद भीमसेन रूपमजरी को प्राप्त करने में सफल होता है। तपस्वी रानी का विष उतार देते हैं और भीमसेन रानी को प्राप्त कर उसी प्रकार प्रसन्न होता है

जेम त्रिपातुर वन जंगलइ पाणी विण प्राणी टलवलइ
जल पूरित सर पाम्यो जेम तरुणी पेपी राजा तेम ॥ 233 ॥

दस दिन वन में ही राजा व रानी उस तपस्वी का आतिथ्य स्वीकार करते हैं।[2]

भीमसेन दिव्य विद्याओं का भी ज्ञाता है। तपस्वी से विदा लेते समय तपस्वी भीमसेन को विष दूर करने की एव रूप परिवर्तन की विद्या देता है।[3] इस प्रकार कठिनाइयों से जूझता हुआ भीमसेन अपने लक्ष्य प्राप्ति मे सफल होता है और रूपमजरी सहित श्रीपुर लौटकर रूपमंजरी को पटरानी बनाता है एव राज्य का सुख से पालन करता है। उसके राज्य मे प्रजा भी प्रसन्न है जो उसके कुशल प्रशासक होना प्रमाणित करता है।

राजा भीमसेन साविज भाषा का ज्ञाता है। रूपमजरी के प्रेषित सन्देश वह तोते की वाणी को समझ कर प्राप्त करता है[4] और रूपमजरी के गर्भ से राजहस के अवतार की बात हस एव हसी के वार्तालाप से जानता है।[5]

राजा भीमसेन कर्मठ नायक है। वह अपनी रानी की असम्भव से असम्भव सभी प्रकार की दोहद पूर्ण करना चाहता है। रानी की गर्भ के समय की इच्छायें हैं— हाथी पर बैठकर नदी के पास भ्रमण करने की।[6] अमृतफल आहार के लिये तो वह भीमसेन से ही कह देती है

स्वामीजी मुझ गर्भ प्रमाण एक डोहलउ थयउ असमान
अमृत फल नउ करुँ आहार तउ मुझ थायउ हर्ष अपार

भीमसेन रूपमजरी की बहिन कनकलता से विवाह करता है। पत्नी के कहने से ही भीमसेन विवाह के लिये तैयार होता है। इसमे भीमसेन के पत्नी प्रेम की

1 दोहा सख्या 206
2 दोहा सख्या 236
3. दोहा सख्या 237
4 दोहा सख्या 245
5. दोहा संख्या 252
6 दोहा संख्या 262,63

महानता झलकती है ।[1]

भीमसेन उत्साही एव दानी भी है । पुत्र के जन्म पर राजा भीमसेन एव उनके परिवार को अपार आनन्द होता है । पुत्र जन्म की खुशी मे वाजे वज रहे हैं याचक लोग राजा की जयकार कर रहे हैं एवं राजा वड़े-वडे दान-पुण्य कर रहा है और नगर मे नित्य-प्रति नये-नये उत्सव किये जा रहे हैं ।[2] राजा को अपने पुत्र से असीम प्यार है । एक वार पुत्र खो-जाने पर राजा अपनी सेना सहित उसे ढूंढने निकते हैं और पुत्र के मिलने पर उनकी जो दशा होती है उसका वर्णन देखिये

> अंगज वइसारइ उच्छगि, वार-वार आलंगइ अग
> अश्रुपात हरषइ आचरइ वीतक वात कुमर सर्व कही ।। 432 ।।

राजहस का मिल जाना वडे ही पुण्यो का फल मानते हुये राजा को ऐसा लगता है कि पुत्र क्या मिला मानो कल्पवृक्ष का फल ही मिल गया है ।[3]

राजा भीमसेन को राज्य का लोभ नही है । भीमसेन को पुत्र के साथ-साथ अपार धन सम्पत्ति भी प्राप्त होती है और पुत्र को साथ लेकर अपने निवास श्रीपुर आकर अपने पुत्र राजहंस को युवराज वना देते है ।

राजहस को युवराज वनाकर भीमसेन को सुव्रत स्वामी से धर्म के उपदेश सुनते हुये वैराग्य उत्पन्न होता है वे ससार को अस्थिर जानकर सयम भार ग्रहण करते हैं ।

इस प्रकार एक योगी राजा सव सुखो को भोगता हुआ धर्म से प्रभावित हो सव राज्य छोड़कर वैराग्य को ग्रहण करता है । यही भीमसेन के चरित्र की महान‌ता है ।

राजहंस

राजहस अपने पूर्व जन्म मे हंस था । वह अपने अगले जन्म के विषय मे हसी जन्म मे हसी को वता देता है कि आज से इक्कीस दिन वाद रविवार के दिन शरीर छोडकर मदनमंजरी के गर्भ से अवतार लेगा।[4] (अवतार शब्द रूढ है । ईश्वर हेतु) समय पूर्ण होने पर मदनमजरी के गर्भ से हसराज का जन्म होता है

> अनुक्रमि पूर्ण थयउ आधान, महीपति पटरानी वहुमान
> सुपइ सम्पूर्ण थया नवमास, आव्यउ सुत पूगी मन आस ।। 369 ।।

1 दोहा सख्या 328 भीमसेन राजहंस चोपई ग्र 1217 ला द सं, अहमदावाद
2 „ „ 371
3 „ „ 433
4. „ „ 252, 53

पुत्र जन्म पर पिता भीमसेन नगर मे नये-नये उत्सव कराते हैं वड़े-वडे दान दे रहे हैं कुमार को अति सुन्दर जानकर उसे राजहंस नाम दिया जाता है।[1] राजहंस शुक्ल पक्ष के चन्द्रमा की तरह दिन प्रतिदिन वढ रहा है[2] आठ वर्ष की आयु मे ही कुमार मे अनेक गुणो का समावेश था।[3] वह अपनी आयु से भी वडा प्रतीत होता है

कला वहत्तरि भणउ कुमार विनय वत विद्या भंडार
वार वरस योवनं वलवत दीसइ सोल वरस दापति ॥390॥

राजहस पूर्ण यौवन को प्राप्त है वह महल मे मनवाछित भोग विलास भोगता हुआ रहता है कि एक दिन वहुत से अच्छे घोडो के साथ एक सौदागर श्रीपुर मे आता है।[4] कुमार राजा से पूछता है कि यदि राजा कहे तो अश्व पर चढने का अभ्यास कर लें। कुमार मे अमृत फल के कारण अपार वल है दूसरी ओर वह पूर्ण यौवन पर है अत. वह अश्व के साथ क्रीडा करता है।[5] राजकुमार क्षत्रिय कुमार है अत. अश्व पर वैठना उसके लिये आवश्यक है जिसका अभ्यास वह अभी से कर रहा है।

राजहंस साहसी एव वुद्धिमान कुमार है। वह एक वार वायु के वेग से दोडने वाले अश्व पर सवार हो घने जगल मे चला गया। अश्व रुकने का नाम नही ले रहा था। अश्व जव एक वट वृक्ष के नीचे से गुजर रहा था तो कुमार ने एक सवल वट वृक्ष की साख को पकड लिया और अश्व को छोड दिया।[6] इस तरह उसने अपनी वुद्धि से अपनी रक्षा की। उसी वन मे एक शेर रहता था, जो सभी जीवो को खा जाता था। तुरग की गध से वह वहाँ आता है जहाँ राजहस था। कुमार ने उस शेर को वाण प्रहार से मार दिया।[7] नदी मे वहती हुई नारी को निकाल कर वह अपने अतुल शौर्य का परिचय देता है।[8]

राजहंस साविज भाषा का ज्ञाता है। रात्रि मे फेतकारी की वाणी सुनकर वह उठता है और पिता से उसकी परीक्षा करने की कहता है।[9] कवि ने साविज भाषा का जानकर होने का कारण भी वताया है

1 दोहा सख्या 371
2 ,, ,, 372
3 ,, , 389
4. ,, ,, 389
5 , ,, 401,402
6. ,, ,, 407
7. ,, ,, 415
8 ,, ,, 449
9. ,, ,, 439

अमृत फल आहार प्रमाण साविज भाषा लहइ सुजाण
वोलइ सिवा सहित सिणगार, नदीयइ वही जायइ छइ नारि ॥441 ॥

पिता का उसके प्रति अपार प्रेम है। पिता भीमसेन उसकी वीरता और साहस से सन्तुष्ट होकर उसको युवराज वना देते हैं।[1]

राजहस एक आज्ञाकारी पुत्र के रूप में हमारे सामने आता है। यौवन वय प्राप्त होने पर विवाह प्रस्ताव आते हैं। राजा शंख की पुत्री रूपमती के विवाह का प्रस्ताव भी राजा भीमसेन के पास आता है। राजा कन्या को योग्य जानकर पुत्र राजहस को स्वयवर मे जाने का प्रवन्ध करने के लिये कहता है।[2]

स्वयवर मे वहुत से लोगो को देखकर राजहस के मन मे चिन्ता होती है

को जाणई कन्या केहनइ वरसइ महँत हुसइ तेहनइ
एक सन्देश अछइ मुझ घणउ रिष वोल लोपइ आपइणौ ॥ 473 ॥

राजहस शकुनो पर भी विश्वास करता है, सध्या समय सियाल का वोलना[3] वायी दिशा मे उल्लू का वोलना,[4] रात्रि के चौथे प्रहर मे महावृक्ष पर बैठ कर चीवरी को वोलना,[5] वायी ओर से तीतर वोलता हुआ दायी ओर चला जाये[6] आकाश मे समली अपनी चोच मे भक्ष्य लिये उडती हुई दायी ओर बोलती हुई जाये,[7] हिरणो के झुण्ड मे नायक हिरण का दिखना[8] हरे वृक्ष पर बैठी स्यामा दायीं ओर शब्द करती हुई जाये[9] हरे वृक्ष पर पक्षी परिक्रमा देता हो[10] जल से पूर्ण सरोवर के तट पर नीलकठ को देखना[11] ये सभी शकुन शुभ है। मार्ग मे चलते समय यह शकुन हो तो व्यक्ति के वाछित मनोरथ पूर्ण होते हैं।

ये सव शकुन जानकर ही राजहंस अपनी चतुरगिनी सेना सहित अवंतीपुर आता है।[12]

1. दोहा सख्या 463
2. ,, ,, 470
3 ,, ,, 475
4 ,, ,, 476
5. ,, ,, 477
6. ,, ,, 478
7. ,, ,, 479
8. ,, ,, 480
9 ,, ,, 481
10 ,, ,, 483
11. ,, ,, 484
12. ,, ,, 486

रूपमती को प्राप्त करने के लिये वह अपनी पूर्व पत्नी हसी से सहायता लेता है और उसी की सहायता से रूपमती को प्राप्त करने मे सफल होता है।[1] विवाह के वाद राजहस एक माह तक अवतीपुर मे तरह-तरह के सुख भोगता हुआ रहता है।[2]

राजहस भोगी होते हुये भी धर्म मे रुचि रखता है। राज्य लोभ उसे छू भी नही गया है। साधु सगति से राजहस के भाव धार्मिक हो गये और वह मुनि से धर्म का प्रकार पूछता है।[3] गुरु का नाम श्रीराम जानकर उन्हें श्रीपुर नगर मे आकर उपकार करने का आग्रह करता है।[4] राजहस के श्रीपुर पहुंचने पर मुनिश्री आते हैं। राजा भीमसेन राजहस को राज्य सौंप कर स्वय सयम भार ग्रहण कर लेते हैं और राजहंस भी श्रावक वन जाते हैं।[5] गुरु की सेवा करते हुये राजहस धर्म का सार जानने की इच्छा प्रकट करते हैं।[6] मुनिश्री विभिन्न कथाओ एव उदाहरणो द्वारा राजहस को धर्म का सार[7] शुद्ध भावो का महत्व[8] वताते हैं जिसे जानकर राजहस अपने वडे पुत्र जयभद्र को राज सौंप कर अपना अन्त समय जानकर संथारा करते हैं और निर्मल ध्यान से ईष्ट की आराधना करते हुये केवली होते हैं।[9]

राजहस पर पुष्पवृष्टि होती है और आकाश मे पच वाद्य वजते हैं

सुरनर मिल्या महोच्छव करइ धन्य धन्य मुष इम उच्चरइ
सोवन कुसम पुप्फ वरसति अवर पचे सवद वाजति ॥ 614 ॥

इस प्रकार राजहस ससार के सभी भोगो को भोगता हुआ ससार से विरक्त हो केवली वन जाता है।[10]

राजा सगर

राजा सगर खल नायक के रूप मे हमारे सामने आता है। सगर सिंघलद्वीप का शासक है। राजा सगर का वैवाहिक सम्बन्ध विशालापुरी मे हो जाता है।[11] एक ओर भीमसेन रूपमजरी को प्राप्त करना चाहता है दूसरी ओर राजा सगर। अत

1 दोहा सख्या 527
2 ,, ,, 539
3. ,, ,, 552
4 ,, ,, 559
5. ,, ,, 570
6. ,, ,, 573
7 ,, ,, 574
8 ,, ,, 586 से 99
9. ,, ,, 613
10. ,, ,, 615
11. ,, ,, 90

दोनो एक दूसरे के दुश्मन एव प्रतिद्वन्द्वी हैं। राजा सगर शक्तिशाली शासक है। शुक के इस कथन से यह स्पष्ट है

कहइ तु सबलउ सेन करी आडबरि आवूँ
सगर राइ सूं करी झूझ कुमरी इह ल्यावूँ ।। 115 ।।

राजा सगर सबल योद्धाओ और बारात के साथ राजकुमारी से विवाह के लिये आता है।[1] परन्तु वह अपने उद्देश्य मे सफल नही होता। रिणकेसरी अपने छोटे भाई की लडकी से राजा सगर का विवाह कर देते हैं

'तव सग बंधव तणी पुत्री सगर परणाव्यो सही'

राजा सगर क्रोधी स्वभाव का है। सगर नरेश अपने साथ धोखा हुआ जानकर बडा क्रोधित होता है और सोचता है कि भीमसेन ने गुप्तरीति से कैसे विवाह कर लिया है, जब भीमसेन अपने देश जायेगा तब सग्राम करके उस मानिनी को लेकर रहूँगा।[2]

राजा सगर मे ईर्ष्या एव बदले की भावना है। अतः जब भीमसेन मदनमजरी के साथ जा रहे थे तब रात्रि के समय सगर राजा की सेना ने चारो ओर से भीमसेन को घेर लिया। दोनो सेनाओ मे भयकर युद्ध होता है और अन्त मे राजा सगर भीमसेन से पराजित होते हैं।[3] इस प्रकार सगर भीमसेन के मार्ग मे बाधा रूप मे थोडे समय के लिये आते हैं और उनका अन्त अच्छा नही होता।

प्रमुख नारी पात्र

मदनमंजरी

मदनमजरी विशालपुर के राजा रिणकेसरी की राजकुमारी है। उसकी माता का नाम कमलावती है। मदनमजरी जैसे ही यौवन वय को प्राप्त होती है, उसके माता-पिता को उसके विवाह की चिन्ता होती है। मदनमजरी सुन्दरी है, आगत यौवना है एव सुन्दर देह यष्टि है, पर चिन्ता यही है कि उसे कैसा राजकुमार मिलेगा।[4]

रूपमजरी असाधारण सौन्दर्य मयी नारी है। रूपमजरी के सौन्दर्य का वर्णन सन्यासी भीमसेन के पूछने पर करता है। रूपमजरी की गति सुकोमल है, सहज है जैसे मानसरोवर के मराल की गति। सिंह जैसी कमर और मयक जैसा उसका मुख है। उसका रग कुन्दन के समान है और चक्षु चपल। जाघें कदली स्तम्भ जैसी हैं तो उरोज बिल्व के समान और उधर पके बिम्बाफल के समान। वह साधारण स्त्री नही

1. दोहा संख्या 150
2. ,, ,, 194
3. ,, ,, 200
4. ,, ,, 63,74

है उसकी वाणी कोमल और अमृत के समान है, लगता है विधाता ने स्वयं अपने हाथ से उसे बनाया है ।[1]

मदनमजरी आगत यौवना है । कीर के मुख से अपने होने वाले पति के बारे मे जानकर पूर्वभव स्नेह के कारण उस वर को प्रणाम् करती है ।[2] वह किसी प्रकार शुक को प्राप्त करने मे सफल हो जाती है ।[3] शुक से क्रीडा करती हुई अपने होने वाल पति का रूप पूछती है ।[4] वह शुक को अपनी व्यथा बताती है और कार्य पूरा करने को कहती है ।[5]

मदनमजरी मे अपने पति के प्रति निष्ठा है । वह शूक से भीमसेन के बारे मे सुनकर उसे ही प्राप्त करना चाहती है और वह प्रतिज्ञा भी करती है

> कुमरी कहइ सुणउ कहू साच अविचल एक करी छइ वाच
> इण भवि भीमसेन वर वरु बीजउ बीजइ भवि आदरु ॥ 93 ॥

देवी-देवताओ मे उसे आस्था है । भीमसेन को पति रूप मे प्राप्त करने के लिए वह त्रिपुरा देवी की पूजा करती है । त्रिपुरा देवी कन्या को वाछित वर प्रदान करने वाली है । अत: मदनमजरी भी देवी से कहती है

> कर जोड़ी देवी नइ कहइ भीम मेल वउ जीवित रहइ
> एह नइ पूजइ माहरी आस, तउ तुभ आगई घालू गल पास ॥ 104 ॥

कामना सिद्ध न होने पर वह गले मे फाँसी लगाने की बात भी कहती है ।

मदनमजरी क्षत्राणी है । उसमे भारतीय नारी की गरिमा है । वह अपने वचन की पक्की है । धात्री के वचन सुनकर वह मूर्छित हो जाती है ।[6] वह राजा सगर से विवाह करना नही चाहती । अत मध्यरात्रि मे वह घर छोड़कर निकल जाती है[7] और त्रिपुरा देवी को उपालम्भ देती हुई देवी के सामने ही एक वृक्ष पर वेणी वध लगाकर फाँसी लगा लेती है ।[8] परन्तु किसी तरह बचा ली जाती है । भीमसेन के अतिरिक्त उसके लिए अन्य सभी पुरुष यहाँ तक कि राजा सगर भी सहोदर के समान है ।[9] भीमसेन और सगरराय के युद्ध के समय वह सगर राजा के

1. दोहा सख्या 132 से 135
2. ,, ,, 84
3. ,, ,, 86
4. ,, ,, 89
5 ,, ,, 101
6. ,, ,, 153
7. ,, ,, 166
8. ,, ,, 169
9. ,, ,, 155

हाथ पडना नही चाहती, अत अकेली ही वन मे निकल जाती है और विषफल का भक्षण कर आत्म-हत्या करने का प्रयास करती है।[1]

मदनमजरी मे स्त्री सुलभ लज्जा है, परन्तु वह स्पष्ट वक्ता भी है। पिता के द्वारा पति के बारे मे विचार पूछे जाने पर वह कुछ बताती नही है अपितु पिता की बात सुनकर वह लजाती हुई उठकर चली जाती है।[2] परन्तु इसका अर्थ यह कदापि नही है कि वह पिता की बात से सहमत है। इसका स्पष्टीकरण शुक को कहे गये कथन से होता है

बाप तणइ भय बोली नही, साचउ वचन करिसि हू सही ॥ 101 ॥

वह धात्री से भी स्पष्ट रूप से अपनी इच्छा व्यक्त कर देती है और धात्री उसकी बात माता तक पहुँचा देती है।[3] रानी जब राजा को पुत्री का उद्देश्य बताती है तो राजा स्वय उसे समझाने जाते हैं और राजा सगर से विवाह करने की सलाह देते हैं तब वह पिता से भी स्पष्ट कह देती है

सुणो पिताजी बोलू साच, वृथा न जायइ माहरी वाच ॥ 165 ॥

पिता को पुत्री के प्रण के आगे झुकना पडता है। वप पुत्री द्वारा किये गये गुप्त विवाह को स्वीकार कर हर्षित होता है।

मदनमजरी राजा भीमसेन की पटरानी है।[4] गर्भकाल मे मदनमजरी को दोहद होता है, हाथी पर बैठने का[5] तथा अमृतफल आहार का[6] जिन्हे भीमसेन पूर्ण करते हैं। पूरा समय होने पर मदनमजरी पुत्र को जन्म देती है।[7] पुत्र का नाम राजहस रखा जाता है।[8]

ईर्ष्या, द्वेष आदि अवगुण मदनमजरी को छू भी नही गये। मदनमजरी स्वय ही अपने पति भीमसेन को कनकलता कुमारी से विवाह करने का आग्रह करती है।[9]

सक्षेप मे मदनमंजरी नारीरत्न है। वह अनुपम सौन्दर्यमयी, उज्जवल चरित्र वाली, आदर्श नारीत्व की प्रतिमा, सच्ची लगन, निष्ठा, साहस, कर्तव्य परायणता; लज्जाशीलता, आदि चारित्रिक गुणो के कारण भारतीय नारी का प्रतिनिधित्व करती है। वह इस काव्य की नायिका है। यह नायक का फल है जिसकी प्राप्ति हेतु

1. दोहा संख्या 227
2. ,, ,, 98
3. ,, ,, 158
4. ,, ,, 245
5. ,, ,, 262
6. ,, ,, 343
7. ,, ,, 369
8. ,, ,, 371
9 ,, ,, 331

भीमसेन समस्त प्रयत्न करता है। अपने प्रयासों में सफल होकर वह इस फल का अधिकारी बनता है।

रूपमती

रूपमती काव्य की सह-नायिका है। वह परिमल की सुगंध वाली पद्मिनी नारी है। वह अवन्ती के शासक राजा शंख की पुत्री है।[1]

रूपमती अनुपम सौंदर्य वाली है। इसके नेत्र सारंग जैसे तथा भाल अष्टमी के चाद्रमा के समान है। उसके दांत अनार के दाने जैसे हैं। वह राजकुमारी रम्भा जैसी सुन्दर है। वह पीत वस्त्रों में इंद्राणी जैसी शोभयमान हो रही है। गले में श्वेत हार चमक रहे हैं, कुच बिल्व के समान हैं। कमर शेर के समान क्षीण और उसकी काति कुन्दन जैसी है, रत्न जडित राखडी है, वेणी सर्प के समान लम्बी है, कर सुन्दर हैं, अंगुलियां कोमल हैं, जिनमे मणि जवाहरात जडी अंगूठियां तथा कुण्डल कपोलों पर झलक रहे हैं, नुपुरों की रुनझुनऔर भी शोभा बढा रही है, उसकी जांघें कदली थंभ के समान है, नाक में मोती है, उत्तम वस्त्र पहने बाहों में भुजबन्ध और कमर में मेखला है, नेत्रों से कटाक्ष करती हुई वह अप्सरा के समान दिखाई दे रही है।[2]

रूपमती पद्मनी नायिका है। उसके शरीर से सौरभमय गंध आती है और राजा उस पद्मनी नारी को मधुकर की तरह देख रहे हैं।[3] लगता है विधाता ने इसे किसी विशेष व्यक्ति के लिए ही बनाया है जिसे यह वरण करेगी उसका जन्म सफल हो जायेगा।[4]

रूपमती नव यौवना है। उसके यौवन से माता-पिता को उसके विवाह की चिन्ता होती है, अत विवाह के लिए पिता उसकी जन्मपत्री बडे-बडे राजाओं के पास भेजते हैं।[5] भीमसेन के पुत्र युवराज राजहस को बुलाने के लिए भी दूत भेजे जाते हैं।[6]

रूपमती को ईश्वर में आस्था है। उसे अपने होने वाले पति के बारे में चिन्ता है। जब व्यक्ति विपत्ति में होता है तो वह ईश्वर का सहारा ही सदा से लेता रहा है। रुपमती भी देवी की पूजा करती है और अपने होने वाले पति के कुछ चिह्न बताने के लिए देवी से निवेदन करती है।[7] आकाशवाणी को सुनकर रूपमती हर्षित होती है।[8] स्वयवर में सभी राजा बैठे हुए हैं और सभी सोचते हैं

1 दोहा संख्या 466
2. ,, ,, 501 से 50
3. ,, ,, 510
4 ,, ,, 511
5. ,, ,, 468
6. ,, ,, 469
7. ,, ,, 495
8. ,, ,, 496

महीपति सिंघला चितवइ एह किसइ आलोच
कन्या को वर नइ वरइ, सहू कर इम सोच ॥ 523 ॥

परन्तु रूपमती के मन में तो आकाशवाणी की बात है वह उसी को वरण करना चाहती है और उसी समय आकाश से राजहंस पर पुष्प वृष्टि होती है।[1] राजकुमारी देवी द्वारा की गई भविष्यवाणी को सत्य होती देख प्रसन्न होती है और देवी के किये हुए उपकार को अहसान मानकर अपने योग्य वर का वरण करती है।

रूपमती मननोरली कुसुम माल करिलेइ
कुमर तणइ कण्ठइठवी नरपति सहू निरखेइ ॥ 527 ॥

कुसुम माल लेकर वह राजहंस के गले में डाल देती है। सभी लोग रूपमती एवं राजहंस की जोड़ी की प्रशंसा करते हैं। शंखराज भी इसे कुलदेवी के वचनों के अनुरूप मानकर अन्य क्रोधित नरेशों को समझाते हैं।[2]

रूपमती रति के समान सुन्दर है और राजहंस काम के समान।[3]

गौण पात्र

रिणकेसरी

रिणकेसरी विशालपुरी का शासक है, उसकी पटरानी कमलावती है।[4] पुत्री के यौवन वय में आने पर पिता को पुत्री के विवाह की चिन्ता लगती है जो कि स्वाभाविक भी है। उन्हे चिन्ता है पता नही वर कैसा मिलेगा।[5]

राजा रिणकेसरी अपने कर्तव्य के प्रति सजग है। पुत्री का विवाह कर उसे अपना कर्तव्य पूरा करना है, यह चिन्ता उसके मन से नही जाती, योग्य वर मिले तो राजा की चिन्ता का शमन हो। इस चिंता से मुक्त होने के लिए राजा दसो दिशाओं मे दूत भेजता है।[6]

राजा को अपनी पुत्री से अत्यधिक स्नेह भी है, वह अपनी पुत्री को दूर देश मे नही देना चाहता है। रानी को कहे गये कथन से यह बात और भी स्पष्ट हो जाती है।

चिंचइ विलाइ तव दूरी तणी सवल एक अटवी साधणी,
सुता एह मुझ वल्लभ सहि, नव निश्चय तिहां आपेसि नहीं ॥ 83 ॥

1. दोहा संख्या 524
2. ,, ,, 528
3. ,, ,, 540
4. ,, ,, 63
5. ,, ,, 65
6. ,, ,, 66

दूसरी बार वह योगी से शुक खरीद कर अपने पुत्री प्रेम का परिचय देता है।[1]

रिणकेसरी चतुर एवं बुद्धिमान भी है। विकट परिस्थितियों में भी वह सगर राजा का अपने छोटे भाई की पुत्री से विवाह कर[2] अपनी बुद्धिमता का परिचय देता है। पुत्री के गुप्त विवाह पर वह क्रुद्ध नहीं होता अपितु प्रसन्न होता है कि उसकी पुत्री जीवित बच गई है।[3]

पुत्री के प्रति राजा सतर्क भी है। जब उसे यह ज्ञात होता है कि रूपमजरी भीमसेन को चाहती है तो वह धात्री को सब प्रकार से समझा कर प्रहरी रूप मे बैठा देता है।[4] बारात आगमन पर धात्री को न देखकर राजा को भावी आशका का बोध हो जाता है कि कहीं कन्या ने आत्म-हत्या तो नहीं कर ली, यदि कन्या मर गई होगी तो अपयश मिलेगा।[5]

इस प्रकार रिणकेसरी का चरित्र एक योग्य पिता, शासक एव बुद्धि कुशल व्यक्तित्व को लेकर कथा फलक पर उभरा है।

हितसागर

हितसागर राजा भीमसेन के मत्री सुमति का पाचवा पुत्र है और वह राजा भीमसेन का मित्र भी है।[6] बचपन की प्रीति के कारण वह राजा के पास ही रहता है। हितसागर विद्यावत, विनोदी, विनम्र एव बुद्धिमान है।[7]

हितसागर राजा भीमसेन का सुयोग्य मित्र है। रूपमजरी का शुक द्वारा प्रेषित सन्देश जानकर राजा हितसागर से ही उपाय पूछता है और हित सागर ही कीर के साथ विदेश जाकर कुमारी को प्राप्त करने की सलाह देता है।[8] इस प्रकार हितसागर एक योग्य सलाहकार भी है।

हितसागर एक वनस्पति शास्त्रज्ञ के रूप मे भी हमारे सामने आता है। 'नंदन वन' भ्रमण के समय राजा वृक्षों के विषय मे पूछता है तब हितसागर ही नन्दन वन के सभी वृक्षों की विशेषतायें राजा को बताता है।[9] इस प्रकार हितसागर

1. दोहा संख्या 87
2. ,, ,, 192
3. ,, ,, 192
4. ,, ,, 165, 66
5. ,, ,, 191
6. ,, ,, 34
7. बालपणा लगि प्रीति बंधाणी, रमई राय नइ पासइ
   विद्यावत विनीत विनोदी पंडि परि बुद्धि प्रकासइ ॥ 35 ॥
8. दोहा संख्या 115
9. ,, ,, 47 से 57

एक सच्चे एवं हितैषी मित्र के रूप मे आया है। वह भीमसेन के साथ छाया की तरह रहता है।

सन्यासी

सन्यासी वेष मे अवधूत ब्रह्मा का पुत्र एव विद्या का भडार दिखाई देता है।[1] सन्यासी प्रकृति से भी घुमक्कड होते हैं अत यह भी उत्तर दिशा से जगन्नाथ की यात्रा के लिये (पूरब) आया है।[2]

पटरानी कमलावती को भीमसेन के वारे मे यह अवधूत ही वताता है।[3] सन्यासी शुक का पालक है।[4] कर्मयोग से श्रीपाल की मृत्यु होने से अवधूत के वध की आज्ञा मिलती है[5] परन्तु राजा भीमसेन शुक के कहने से उस अवधूत के प्राण बचा लेते हैं।

सन्यासी होते हुये भी उसमे रूप सौन्दर्य के प्रति आसक्ति है। राजा भीमसेन को रूपमजरी के रूप सौन्दर्य से अवधूत ही अवगत कराता है। सन्यासी रूपमजरी के सौन्दर्य से स्वय विध चुका था।[6]

धात्री

धात्री राजकुमारी मदनमजरी की रक्षक है। धात्री एक सच्चे मित्र और रक्षक के रूप मे हमारे सामने आई है। धात्री ही कुमारी को उत्सव का कारण वताती है।

राजकुमारी की सजग प्रहरी धात्री ही है। धात्री ही राजकुमारी का पता लगाकर राजा को सव विगत कहती है।[7] राजकुमारी के द्वारा फासी लगा लिये जाने पर धात्री ही शोर मचाकर उसके प्राणो की रक्षा करती है[8] और भीमसेन को कुमारी की आत्महत्या करने का कारण वताती है।[9]

1 दोहा संख्या 67
2 ,, ,, 68
3. ,, ,, 75
4. ,, ,, 125
5. ,, ,, 127
6. भणइ सन्यासी सुणउ भूप वारए बात
रमणी रत्न समान रूप वसुधा विख्यात ॥ 129 ॥
ते मइ दीठी आप द्रिष्टि करि भोजन कीधउ
सुखइ वस्त्रावउ तास रूप मुझ मनि रति वीधउ ॥ 130 ॥
7 दोहा संख्या 191
8 ,, ,, 172
9. ,, ,, 175 से 184

अन्य गौण पात्र

वन पालक 'नदन वन' के वृक्षो को रोपने वाला है।[1] श्रीपाल कर्मयोग से मर जाता है और नाम सन्यासी के कठोर वचनो का होता है।[2] तपस्वी एव तपस्विनी रूपमजरी की रक्षा करते हैं। तपस्वी उसका विप दूर करता है। अमंगसेन अटवी मे रहता है। वह शकुन शास्त्र का ज्ञाता है और भीमसेन को रानी के मिलने की सूचना देता है।[3] तापस, धारा नगरी का स्वामी है।[4] वह अपनी पुत्री कनकलता का विवाह भीमसेन से कर देता है।[5] व्यतरी कनकलता की माता है जो विद्या वल से नये आवास का निर्माण करती है।[6] सौदागर घोड़ो का सौदागर है। वह अपने साथ सबल नये घोडे लेकर वेचने के लिये श्रीपुर आता है।[7]

पशु पात्र

पशु पात्रो मे हाथी,[8] घोड़ा,[9] शेर,[10] बन्दर,[11] हिरण,[12] लोमड़ी, गीदड[13] नेवला[14] एव सियाल[15] आदि हैं।

पक्षी पात्रो मे प्रमुख पात्र तोता, हस व हंसी है

तोता

शुक पक्षी अपनी समझदारी के लिये वडा लोकप्रिय रहा है। शुक प्रेम पथ के मार्ग दर्शक और सहायक के रूप मे प्रसिद्ध है। रूपमजरी का प्रेम सदेश भीमसेन तक पहुँचाने का कार्य शुक ही करता है।[16] भीमसेन का वह मार्ग दर्शक भी है।[17]

1 दोहा सख्या 37
2. ,, ,, 126
3 ,, ,, 206
4 ,, , 305
5 ,, ,, 333
6. वही
7 दोहा सख्या 398
8 ,, ,, 262
9 ,, ,, 398, 412
10. ,, ,, 414
11. ,, ,, 410
12. ,, ,, 480
13. ,, ,, 439
14. ,, ,, 482
15. ,, ,, 475
16. ,, ,, 111
17. ,, ,, 120

राजकुमारी का सहायक है।[1] शुक ही रानी कमलावती के सामने मदनमजरी के लिये योग्य वर के रूप मे भीमसेन का गुणगान करता है।[2]

हंस व हंसी

हंस व हंसी देवता का रूप हैं। हस पूर्व जन्म का ज्ञाता होने के कारण अपने अगले जन्म के बारे मे हंसी को बताकर रूपमजरी के गर्भ से राजहस के रूप मे जन्म लेता है।[3]

हसी हस की पत्नी है। वह हस को बहुत प्यार करती है। हस के मानव रूप मे जन्म लेने के बाद वह वर्ष मे एक बार मध्यरात्रि मे हस से मिलने आती है।[4] मानव की वाणी बोलने वाला हस निश्चय ही देवता है।[5] हस के परलोक पहुँचने से सभी लोग शोक-ग्रस्त हैं। उसकी नारी हसी है जिसे हस के साथ अत्यधिक नेह है।[6] वन देवी हसी से अमृत फल लेने जाती है तो हसी कहती है

हस हतउ जे मुझ भरतार, ते मदन मजरी उरी अवतार
ए फल सायइ अधिक सनेह ए डोहला नउ एहिज मेंय ॥ 356 ॥

हंसी रूपमजरी को अमृतफल लाकर देती है,[7] और अमृत फल की दोहद का कारण भी बताती है।[8] अपने पूर्व पति हस के हसराज के रूप मे जन्म लेने पर वह हस से मिलने आती है और अत्यधिक नेह के कारण एक अमृत फल भी लाकर देती है[9] और राजा के कहने से हसी वह अमृतफल कुमार को खिलाती है

अवनीपति ते अमृतफल हसी हथि दियति
कहइ राय ए कुमर नइ षवरावउ मनषति ॥ 384 ॥

वह कुमार से मिलने आती है तो सास, ससुर एव प्रिय के चरणो मे प्रणाम् करना नही भूलती[10] तीन वर्ष के बाद हस से मिलने आने का कारण हसी निष्कपट भाव से बता देती है कि उसे एक और हंस मिल गया है वह उसे आने नही देता[11] फिर भी यदि कुछ काम हो तो सकेत से वह आ जायेगी।[12]

1. दोहा सख्या 108
2. ,, ,, 72
3 ,, ,, 369
4 ,, ,, 367
5. ,, ,, 259
6 ,, ,, 352
7 ,, ,, 360
8 ,, ,, 363
9 ,, ,, 387
10 ,, ,, 388
11. ,, ,, 393
12. ,, ,, 396

रूपमती को प्राप्त करने के लिये राजहस हंसी को सकेत द्वारा बुलाता है[1] और हसी उसे कहती है

> परणावू रे तउ जाणू साची सही
> मन माहे रे चिता मति आणउ किसी ।। 493 ।।

हंसी हंस का विवाह रूपमती से कराने मे सफल होती है ।[2] वह राजहंस से अपना वचन पूर्ण करने को कहती है ।[3] हसी वार वार हस के पास आने मे अपनी विवशता वतोती है और अपने आन्तरिक प्रेम को चोल वर्ण के समान गहरा वताती है ।[4] राजहंस मानव है और हसी देवता अत शारीरिक भोग करने को वह पाप मानती है ।[5] वह हंस से कहती है कि रूपमती को हसी ही समझना[6] और इस प्रकार हस से आज्ञा माग हसी चली जाती है ।

अलौकिक पात्र

अदिव्य पात्रो मे व्यतरी इस कथा काव्य मे आई है । व्यंतरी शक्ति सम्पन्न है । वह सव कार्य पूर्ण कर सकती है तथा कही से भी वाछित वस्तु ला सकती है ।[7] भीमसेन व्यतरी को कह कर हितसागर और अत पुर को मगवाता है ।[8]

व्यंतरी अपने विद्या वल से जल से पूर्ण सरोवर, नये नये वृक्ष एवं एक लाख आवासो का निर्माण करती है ।[9]

इस प्रकार व्यंतरी अदिव्य पात्र होते हुए भी भीमसेन की सहायिका ही होती है । अपनी पुत्री को भीमसेन से व्याहने के लिए वह भीमसेन के आने की सूचना भी देती है ।[10]

प्रकृति पात्र

प्रकृति पात्रो मे वृक्ष आदि आते है । परदेसी के कहने से राजा भीमसेन एक वाडी का निर्माण करवाते है[11] जिसमे विविध प्रकार के वृक्ष जैसे अगर, अशोक,

1 दोहा संख्या 492
2. ,, ,, 527
3. ,, ,, 532
4. ,, ,, 534
5. ,, ,, 535
6. ,, ,, 536
7. ,, ,, 330
8. ,, ,, 332
9. ,, ,, 333
10. ,, ,, 323
11. ,, ,, 20

अनार, अर्जुन, करणी, केलि, कपूर, कदम्ब, जातीफल जामू, जम्ब, श्रीफल, सुपारी, नींबू, नारंगी, पीपल, खजूर, बादाम, दाख लगवाते हैं ।[1]

जिनपालित जिनरक्षित रास के पात्र

प्रमुख पात्र जिनपाल और देवी हैं । गौण पात्र शत्रुनरिंद, माकदी सेठ, भद्रा सेठाणी, जिनरक्षित, सूलीवाला वणिक व सेलग यक्ष आदि हैं ।

जिनपाल

जिनपाल सेठ माकदी का पुत्र है । उसकी माता भद्रा है ।[2] यौवन को प्राप्त होने पर माता-पिता बड़े उत्साह के साथ जिनपाल का विवाह करते हैं ।[3]

जिनपाल आज्ञाकारी पुत्र है । माता-पिता की आज्ञा लेकर वह परदेश मे व्यापार के लिए जाता है और विघ्न रहित व्यवसाय करते हुए अपार धन लेकर लौटता है ।[4] एक दिन वह फिर व्यापार करने जाने का प्रस्ताव पिता के सामने रखता है, परन्तु पिता आगत विघ्न के बारे मे बताकर कहता है कि अपार लक्ष्मी है तुम घर बैठकर ही सुख करो ।[5]

"विनाश काले विपरीत बुद्धि" की उक्ति जिनपाल के साथ भी घटित होती है

> तात धणी परिवारता नवि मानइ तेहना बोल
> विणसणि कालि सदा सापुरिसा विणसेइ बुद्धि निटोल ॥ 10 ॥

और इस प्रकार वह पिता के कथन का उल्लघन कर समुद्र की ओर व्यापार के लिए चला जाता है । सागर पार करते समय उसने सुख पूर्वक कई दिनो तक यात्रा की पर तूफान मे घिर जाने पर उसे अपने पिता का कथन याद आता है और बचाव का उपाय सोचता है । सतप्त प्राणी का आश्रय ईश्वर ही है, अत जिनपाल भी रक्षा हेतु ईश्वर को स्मरण करता है, परन्तु उसका जलपोत खण्ड-खण्ड हो जाता है ।[6]

जिनपाल साहसी है । जहाज नष्ट हो जाने पर भी वह साहस नही छोडता । वह पोत के पाट को पकड लेता है और तीन दिन के कठिन परिश्रम के बाद उसे किनारा दिखाई देता है ।[7] किनारे पर विश्राम के लिए बैठे जिनपाल को एक सुन्दर तरुणी आती हुई दिखाई देती है जो कामातुर है ।[8]

1 दोहा सख्या 24 से 27, भीमसेन राजहस सम्बन्ध चौपई ग्रंथ 1217 ला द. ग्रं अहमदाबाद
2 ,, ,, 5, जिनपालित जिनरक्षित रास ग्रं 1621 म. भ जै. ज्ञानभण्डार, बीकानेर
3. ,, ,, 6
4 ,, ,, 8
5. ,, ,, 10
6 ,, ,, 14 व 19
7. ,, ,, 21
8. ,, ,, 24

उसे भयकर शब्द करते एव हाथ मे तलवार लिये आते देखकर जिनपाल भयभीत हो जाता है और वह अपने जीवन की भीख उससे मांगता है बदले में वह उसका कहना मानने को तैयार है।[1]

वह भोगी के रूप मे हमारे सामने आया है। देवी के महल मे आकर वह उस देवी के साथ भोग भोगता हुआ रहता है।[2]

जिनपाल दयावान भी है। देवी के चले जाने पर एक दिन साहस कर जिनपाल देवी के द्वारा वर्जित दक्षिण वन की ओर चला जाता है[3] और सूली पर बैठे एक व्यक्ति को देखकर उसके दुख का कारण जानना चाहता है[4] और कारण जानकर मरने के डर से भयभीत हुआ उससे बचने का उपाय पूछता है।[5] सूली पर आसीन वणिक द्वारा बताये गये उपाय से वह सेलग यक्ष से मिलकर सकट से छुड़ाने एवं चम्पापुरी पहुँचाने की प्रार्थना करता है।[6] वह बुद्धिमान एव चतुर भी है। जिनपाल सेलग यक्ष के कहने के अनुरूप चलता है और सेलग की पूँछ पर चढकर सागर पार करता हुआ चम्पापुरी पहुँच जाता है।[7]

जिनपाल घर पहुंच कर माता-पिता को सब वृतान्त सुनाता है और वर्द्धमान स्वामी के उपदेशो से प्रभावित हो मोह-माया छोड़कर बडे पुत्र को राज्य सौंपकर सयम भार ले लेता है।[8] और विदेह क्षेत्र मे केवल ज्ञान प्राप्त करता है।[9]

रयणा देवी

रयणा देवी अलौकिक पात्र के रूप मे इस काव्य मे चित्रित की गई है। रयणा देवी तरुणी है जो काम आदि भावनाओ से ग्रसित है।[10] उसमे रूप परिवर्तन की क्षमता है। विकराल रूप धारण कर वह जिनपाल व जिनरक्षक के पास तलवार लेकर जाती है और आदेशात्मक स्वर मे उन्हे प्रतिज्ञा पालन के लिए कहती है, अन्यथा तलवार से मौत के घाट उतारने को तैयार है।[11]

रयणा देवी दुष्ट चरित्र के रूप मे कथा फलक पर आई है। पोत के नष्ट हो जाने पर बचे हुये वणिको को वह घर लाकर वांछित सुखो को भोगती है और

1 दोहा सख्या 26
2 ,, ,, 31
3 ,, ,, 45
4 ,, , 47
5 ,, ,, 51
6 ,' ,, 58
7. ,, ,, 73
8 ,, ,, 75
9. ,, ,, 79
10. ,, ,, 22-23
11. ,, ,, 25

एक दिन उनका भक्षण भी कर लेती है ।[1] देवी कैसी हैं उसके विषय मे कवि की उक्ति निम्नलिखित है

हाव भाव करि मन हरइ प्रीय सु सरषइ प्रीति ।
मन मइली चित्त मोहनी चंचल कूडी चीत ॥ 30 ॥

वह हाव-भावो द्वारा मन का हरण करने वाली तथा प्रिय से प्रीति दिखाने वाली मन की मैली और चित्त की मोहनी चचल नारी है ।

रयणा देवी चण्डी का रूप है । सेलग यक्ष की सहायता से वणिक पुत्र उसके चगुल से निकल भागते हैं । देवी भवन मे पुरुपो को न देख क्रोध मे भर तलवार ले उनके पीछे दौडती है ।[2] जिनरक्षित के प्रति उसका सच्चा स्नेह है[3] और उसके बिना जीना भी उसे असम्भव लगता है ऐसा वताती है ।[4] जिनरक्षित को प्राप्त कर वह उसे दक्षिण वन न जाने की प्रतिज्ञा की याद दिलाती है और उसे मार डालती है ।[5] इस प्रकार रयणा देवी खल नायिका के रूप मे चित्रित की गई है ।

गौण पात्र

गौण पात्रो मे चम्पापुरी का शासक शत्रुनरिंद है । वह शूरवीर और प्रजा की सेवा करने वाला है ।[6] उसी के राज्य मे माकदी नाम का सेठ रहता है जो धनवान है, उसकी स्त्री भद्रा है जो सदाचारिणी है ।[7] उनके जिनरक्षित और जिनपाल दो पुत्र हैं ।[8] जिनरक्षित, देवी द्वारा समाप्त कर दिया जाता है ।[9]

सूली वाला व्यक्ति भी एक व्यापारी है जिसे देवी ही पकड़ लाती है ।[10] सेलग यक्ष, अलौकिक पात्र है, वह सहायक के रूप मे कथा मे आया है

जिनपाल सेलग पूठेइ रहयउ जी, सायर लघ असेस
चम्पापुरी यक्षइ पहुँचा दीयउजी निजघरि कीयउ प्रवेस ॥ 69 ॥

इस प्रकार जिनपालित जिनरक्षित रास सक्षिप्त कथा के पात्र भी सक्षिप्त ही हैं जिन्हे कवि ने वडे ही सूक्ष्म एव मनोवैज्ञानिक ढग से कथा फलक पर उतारा है ।

1. दोहा सख्या 45–46
2. ,, ,, 59
3. ,, ,, 64
4. ,, ,, 66
5 ,, ,, 68
6 ,, ,, 4
7. ,, ,, 5
8 ,, ,, 6
9 ,, ,, 68
10. ,, ,, 44

अगड़दत्त रास के पात्र

प्रमुख मानव पात्रों में अगड़दत्त, सोमदत्त, भुजंगम चोर, मदनमंजरी व वीरमती हैं। भीमसेन, सोहग सुन्दरी, सूरसेन, अमगसेन, चम्पापुरी का महाजन, सागरदत्त आदि पात्र सहायक या गौण पात्र हैं। अदिव्य पात्र विद्याधर है।

प्रमुख पात्र

अगड़दत्त कुमार

अगडदत्त कथा का नायक है। नायक राजकुमार न होकर सामन्त कुमार है। वह सूरसेन का पुत्र है तथा अति ही रूपवान होने के कारण कवि ने उसकी तुलना इन्द्रकुमार से की है।[1] आठ वर्ष की अल्पायु में पिता का देहान्त हो जाने पर अबोध अगड़दत्त को विद्या अध्ययन के लिए परदेश जाना पड़ता है।[2]

अगड़दत्त विलक्षण बुद्धि-वाला एव कला प्रेमी है। अध्ययन के समय आलस्य विहीन होकर अर्थ ग्रहण करता है और इस प्रकार कुछ ही दिनों में वह बहत्तर प्रकार की कलाओं में दक्ष हो जाता है।[3] शस्त्र विद्या में भी वह निपुण है। वह चालीस प्रकार की शस्त्र विद्या तथा छत्तीस प्रकार की संगीत कला में दक्ष है।[4]

अगडदत्त मे शौर्य की भावना प्रबल है। भुजगम चोर को पकड़ने की प्रतिज्ञा[5] तथा मदमस्त हाथी को वीणा के मधुर राग से वश मे करना[6] तथा गोकुल गाँव मे गोकुलपति का, मार्ग के भय एव संकट बताकर रोकने पर भी उसका आगे बढना,[7] तथा मार्ग के चारो सकटो से बच निकलना,[8] उसके अद्भुत पराक्रम एवं तीक्ष्ण बुद्धि का द्योतक है। कठिनाइयो का धैर्य एव साहस से सामना करना ही उसका उद्देश्य रहा है।

अगडदत्त एक आज्ञाकारी पुत्र एव शिष्य भी है। आज्ञाकारी पुत्र का रूप हमे उस समय दिखाई देता है जब वह अपनी माता का रोना नही देख सकता तथा उसके कहने से ही वह विद्या अध्ययन के लिये चपापुरी जाता है।[9] गुरु से शिक्षा प्राप्त करते समय मदनमजरी के प्रेम निवेदन करने पर भी वह गुरु की लज्जा वश अपना प्रेम प्रकट नहीं कर पाता।[10] साथ ही गोकुल ग्राम से वसंतपुर लौटते समय भी वह अपने गुरु से मिलना नही भूलता।[11]

1 दोहा संख्या 9, अगडदत्त रास चौपई ग्रं० 605 भण्डारकर आरियंटल इंस्टीट्यूट, पूना
2 ,, ,, 27
3 ,, ,, 33
4. ,, ,, 36
5. ,, ,, 61
6. ,, ,, 127
7 ,, ,, 160
8 ,, ,, 222
9. ,, ,, 27
10. ,, ,, 44
11. ,, ,, 225

प्रारम्भ मे अगडदत्त रूप लोभी एव भोगी दिखाई देता है। परन्तु मदनमजरी की बातो से वह नारी प्रेम को कुटिल और अविश्वासी घोषित करता है।[1] अगडदत्त को स्त्री पर विश्वास नही है और यही अविश्वास वीरमती के प्रहार से उसकी रक्षा करता है।[2]

अगडदत्त कर्तव्य-निष्ठ नायक है। जिस कार्य को करने का वह बीडा उठाता है उसे पूर्ण भी करता है। क्षत्रिय कुमार होने के कारण वह वचन का पक्का भी है। मदनमजरी को दिया हुआ वचन उसे याद रहता है। धात्री को कहे गये सन्देश से यह पूर्णत: स्पष्ट हो जाता है।[3]

अगडदत्त एक निष्ठ पति भी है। मदनमजरी की सर्पदशन से मृत्यु हो जाने पर वह उसी के साथ जल मरने को तैयार हो जाता है

सूका काष्ट वहुला सग्रही माहि वइठउ प्रमदा ग्रही
अगनि लगाडइ चिहू दसि जिसि, ते विद्याधर आविउतिसि ॥ 255 ॥

अगडदत्त महानदानी और विशाल हृदय वाला है। मदनमजरी के जीवित हो जाने पर कुमार विद्याधर को नवसर हार देता है।[4] अपने प्रेम की सत्यता को प्रदर्शित करने के लिये वह मदनमजरी को विवाह से पूर्व सवा करोड़ का हार देता है।[5]

वह कुशल योद्धा भी है। अपने पिता के दुश्मन का स्मरण कर वह अमगसेन को युद्ध के लिये ललकारता है और तलवार से उसका मस्तक काट कर अपने पिता का वदला लेता है।[6]

सासारिक सुखो को भोगता हुआ अगडदत्त कुमार धर्म उपदेश ग्रहण करता है तथा राज्य रिद्धि का त्याग करके सयम भार ग्रहण कर मोक्ष को प्राप्त होता है।

इस प्रकार अगडदत्त कुमार उच्चकुल मे उत्पन्न धीरललित नायक के गुणो से सम्पन्न एक कर्तव्य-निष्ठ नायक एव कुशल योद्धा है।

सोमदत्त

सोमदत्त अगडदत्त के पिता सूरसेन का मित्र है।[7] वह सच्चे मित्र एव सहायक के रूप मे कथा मे चित्रित हुआ है। अगडदत्त के चपापुरी पहुँचने पर मित्र

1. दोहा सख्या 280
2. ,, ,, 101 से 103
3. वलतउ कुमर कहि मुखि हसी मयण मजरी मुझ मनि वसी
   मुझ भिता छइ एहनी घरी, वाचा अविचल छइ माहरी ॥ 137 ॥
4. दोहा सख्या 261
5. ,, ,, 138
6. अमगसेन नी सघली रिद्धि, राइ अगडदत्त नइ दिद्ध
   वालि वयर पिता नउ सही, निज मंदिर आविउ गहगही ॥ 238 ॥
7. दोहा सख्या 25

की मृत्यु जानकर वह बहुत ही दुखी होता है। अगडदत्त को वह अपना ही पुत्र मानता है।

वह सीधे एवं सरल व्यक्तित्व वाला है। अगडदत्त के रहने एवं भोजन की व्यवस्था भी करता है।[1] अगडदत्त को वह ही राजा के पास ले जाता है। इस प्रकार सोमदत्त नायक के सहायक के रूप मे कथा मे आया है।

भुजगंम चोर

भुजगम चोर कथा मे खलनायक के रूप मे आया है। वह वेश बदलकर नगर मे घूमता है तथा बडे बडे सेठो के यहाँ चोरी करता है। चोरी के समय वह अपने वस्त्र बदल लेता है।[2]

मंत्र विद्या का वह ज्ञाता है। चोरी करते समय वह मत्र के प्रभाव से ही ताले खोल देता है, जाग्रत लोग भी निद्रावश हो जाते है तथा मत्र के प्रभाव से ही उसे कोई देख नही सकता।[3] वह विद्या बल से ही आकाश मे भी उड सकता है।[4]

भुजगम चोर चतुर एव चालाक भी है। चुराये हुये धन को वह मजदूरो की सहायता से उठवा कर ले जाता है[5] और अपने निश्चित स्थान पर पहुँचाने के बाद उनकी धोखे से हत्या कर देता है[6] परन्तु अगडदत्त के हाथो ही वह मारा जाता है[7] और इस प्रकार भुजगंम चोर का अन्त हो जाता है।

नारी पात्र

मदनमंजरी

मदनमजरी काव्य की नायिका है। वह अत्यधिक रूपवान एव आगत यौवना है।[8] उसका जीवन ही विषय-वासनाओ से लिप्त है। अगडदत्त से किया गया प्रणय निवेदन इसका प्रमाण है[9] अगडदत्त जब सुरसुन्दरी से विवाह कर लेता है तब वह धात्री को भेजकर अपने वचन की याद दिलाती है।[10]

1 दोहा सख्या 53
2. ,, ,, 74
3 मंत्र भणी ठव का बीजही ताला त्रुटिया लिख घडी
मारग मंत्र जगणं तू जाय जागता नर निद्रा थाइ ।। 76 ।।
फरइ निशक नगर मा सही मंत्र शक्ति को देखइ नही ।। 77 ।।
4. दोहा संख्या 108
5 ,, ,, 79
6 ,, ,, 83
7 ,, ,, 90
8. रूप अधिक अति सुन्दर देह, भर यौवन वय आवी तेह ।। 37 ।।
9. दोहा संख्या 47
10 ,, ,, 136

मदनमंजरी स्त्री के मिथ्या चरित्र का प्रतिनिधित्व करती है। वह कामुक प्रवृत्ति वाली स्त्री है। काम के वशीभूत हो वह अगडदत्त को मारने को कह देती है और स्वय सोचती है कि यदि ये पुरुष सुन्दर होंगे तो वह प्रिय के समान इन्हे आदर देगी।[1] चोर का यह कहना कि कामातुर नारी अपने पुत्र, भाई एवं प्रिय का सहार करने मे भी नही चुकती, मदनमंजरी की कामुकता को प्रमाणित करता है।[2] इस दुष्टा का अन्त भी अगडदत्त के हाथो ही होता है।[3] कवि ने मदनमंजरी के चरित्र को उज्जवल बनाये रखने के लिये प्रारम्भ मे ही उसकी बुद्धि बदलने मे कर्मयोग का सहारा लेकर उसके चरित्र की महानता को कायम रखने का प्रयास किया है।[4]

वीरमती

वीरमती भुजगम चोर की पुत्री है। वह असत् प्रवृत्तियो की द्योतक है। वह दुष्ट नारी के रूप मे हमारे सामने आती है। गुफा मे अगड़दत्त को वह धोखे से मारना चाहती है[5] और दुष्कर्मों के कारण उसे अगडदत्त द्वारा बधी बनाये जा कर राजदरबार मे उपस्थित होना पडता है।[6] इस प्रकार वीरमती का अन्त भी उसकी प्रवृत्तियो के अनुरूप ही होता है।

गौण पात्र

भीमसेन बसतपुर का शासक है। उसकी पटरानी सोहागसुन्दरी है[7] सूरसेन राजा भीमसेन का सामत तथा अगडदत्त का पिता है। सूरसेन सुभट योद्धा है अकेला ही एक सहस्र व्यक्तियो को हरा देता है।[8] परदेसी के रूप मे अमगसेन सूरसेन को हराकर उसका पद एव धन आदि प्राप्त कर लेता है।[9] परन्तु अगडदत्त अपने पिता का बदला लेकर उसका शीश काट देता है।[10]

चपापुरी का महाजन अगडदत्त के रहने तथा भोजन एव वस्त्र की व्यवस्था करता है।[11] सागर सेठ भी चपापुरी का ही रहने वाला व्यापारी है।[12]

1 दोहा संख्या 272, 273
2 एक कहि कामातर नारि सुत बंधव प्रीय करइ संहार ॥ 274 ॥
3 दोहा संख्या 280
4 स भली वात मयण मंजरी कर्म योगि नारी मति फरी ॥ 271 ॥
5. दोहा संख्या 103
6 ,, ,, 105
7. ,, ,, 6
8. ,, ,, 8
9. ,, ,, 16
10 ,, ,, 237
11 ,, ,, 32
12. ,, ,, 36, 38

इस प्रकार सभी गौण पात्र अगड़दत्त के सहायक रूप में आये हैं।

अदिव्य पात्र

विद्याधर

विद्याधर अदिव्य पात्र है। मदनमंजरी को सर्पदंशन से मृत्यु हो जाने पर विद्याधर ही उसे अलौकिक विद्या द्वारा जीवन दान देता है।[1] वह अगड़दत्त का शुभचिंतक भी है। अगडदत्त को मदनमंजरी के मिथ्या प्रेम के प्रति भी सजग कराता है।[2]

इस प्रकार "अगडदत्तरास चौपई" के सभी पात्र नायक अगडदत्त के सहायक रूप मे आये हैं। सभी पात्रों का जीवन चरित्र बहुत ही संक्षिप्त रूप में कथा में आया है परन्तु चरित्र की संक्षिप्तता से पात्रों के चरित्र की महानता कम नहीं हो पाई है।

1. दोहा संख्या 258
2 कहि विद्याधर सुणउ कुमार, ताहरइ एह सिउ प्रेम अपार
 पण नारी हुइ नीठर जाति, विद्याधर कहि बीतक वात ॥ 259 ॥

पंचम अध्याय

कवि के आख्यान काव्यों का साहित्यिक मूल्यांकन

काव्य प्रणयन की शैली मे कवि कुशललाभ ने अपनी काव्य कला की कुशलता का परिचय दिया है। कुशललाभ की सभी कथाओ मे मुख्य और प्रासंगिक कथाओ का गुम्फन बडी ही कुशलता से किया गया है। जैसे अमृत लाने के लिये ही वेताल का उल्लेख है तथा मारवाणी को प्राण दान करने के लिये ही योगी योगिन का अविर्भाव हुआ है।

सभी कथायें नायक-नायिका के इर्द-गिर्द घूमती हुई चरम लक्ष्य को प्राप्त करती है। सयोग वियोग के चित्रण कथा को विशेष रूप से प्रभाविष्णु बनाते है और लक्ष्य प्राप्ति के बाद कथा पुन. सक्रिय हो जाती है।

कवि के सम्पूर्ण कथा काव्य मे मार्मिक परिस्थितियो के विवरण एव चित्रण काव्य मे रसात्मकता लाने मे योग देते हैं। रसात्मकता ही काव्य का प्राण है। इसी से काव्य अमर बनता है। ऐसा अनपेक्षित वर्णन काव्य मे कही भी नही मिलता जिससे कि कथा मे शुष्कता की सृष्टि हुई हो। जीवन का मोहक एव वास्तविक चित्र खीचने मे कथाकार ने अपनी सूझबूझ का परिचय दिया है। यही कारण है कि कथा काव्य हमारी रागात्मक वृत्ति को जाग्रत कर हमारे समक्ष एक चित्र सा प्रस्तुत करती हैं।

कुशललाभ के कथा-साहित्य के काव्य-सौष्ठव को हम दो भागो-भाव पक्ष और कला पक्ष मे विभक्त कर सकते हैं। कवि के कथा साहित्य मे भावो की प्रधानता हैं।

भाव-पक्ष

मनुष्य के हृदय मे भावो का उठना स्वाभाविक ही है। यह भाव मानव मन मे सहयोगी या विरोधी प्रवृत्ति से उत्पन्न होते हैं ऐसे समय मे उन भावो को यदि

कोई व्यक्ति कवितात्मक शैली मे वाणी प्रदान कर देता है तो वह काव्य बन जाते हैं। "प्रबल भावो का स्वत अनायास उच्छलन ही काव्य है।"[1] काव्य के अध्ययन के समय हमारा ध्यान उन्ही प्रबल भावो की ओर रहता है।

कुशललाभ ने अपने कथा काव्यो मे प्रेम का जिस उल्लास एव उमंग के साथ वर्णन किया है उतना अन्य किसी मनोवृत्ति का नही। प्रेम का वर्णन सभी कवि अपने-अपने ढग से करते हैं। प्रेम वह अनुकूल वृत्ति है जो शील सौन्दर्य और सामीप्य के कारण उत्पन्न होता हैं। प्रेम सकल चराचर प्रकृति को अपने मे समेट लेता है, यह उसकी विशेषता है। इस प्रकार प्रम किसी भी अच्छे एवं सुन्दर काव्य का एक अग हो सकता है। शैली ने साधारण रूप से काव्य कल्पना की अभिव्यक्ति को माना है।[2] तो हैजलिट ने कहा है कि 'काव्य, कल्पना और भाववेशो की भाषा है।'[3] काव्य मे कल्पना की मन्जुलता और रमणीयता होती है। यह वस्त मानव की मनोरम क्रीड़ा स्थली है। आचार्य मम्मट काव्य उसे मानते हैं जिसमे भाव पक्ष और कला पक्ष का सुन्दर सामजस्य हो। जिस काव्य मे सुन्दर भाव न होंगे, जो काव्य जन-जीवन को मानवता के उच्च स्तर तक ले जाने मे समर्थ न होगा, जो मनुष्य के सुप्त रागात्मक भावो को जागृत करके उसमे संवेदना व सहानुभूति के सामान्य भाव उपस्थित करने मे असमर्थ होगा वह काव्य गुण युक्त नही होगा। मम्मट के अनुसार सुन्दर भाव, भाषा और अभिव्यक्ति सौन्दर्य के साथ ही होनी चाहिये उसमे भाषा विषयक दोष नही होने चाहिये।

काव्य का दूसरा लक्षण 'रसात्मकं वाक्य काव्य' है। रसात्मकता से तात्पर्य है जिस वाक्य मे सुन्दर भाव, श्रेष्ठ विचार और रागात्मकता होगी, जो हमारे मनोविकारो को तरंगित करके आनन्द की स्थिति मे, सुन्दर अभिव्यक्ति के साथ लाने मे समर्थ होंगे। सुन्दर अभिव्यक्ति भी रसात्मकता के लिये आवश्यक है।

सस्कृत काव्य शास्त्र के अनुसार काव्य का तीसरा लक्षण आनन्द वर्धनाचार्य का है जो लिखते हैं कि "रमणीयार्थ-प्रतिपादक वाक्य काव्य" रमणीयार्थ का प्रतिपादन करने वाला वाक्य ही काव्य है।

दूसरे शब्दो मे हम यह कह सकते हैं कि भाव तथा उसकी अभिव्यक्ति ही काव्य है। भाव ही काव्य की आत्मा है और कला ही उसका शरीर है।

भाव-पक्ष के तीन तत्व हैं बुद्धितत्व, कल्पना तत्व और रागात्मक तत्व। बुद्धि तत्व में उच्च विचार तथा सत्य का उद्घाटन होता है। प्रत्येक भाव के पीछे

1. Poetry is the Spontaneous overflow of powerful feelings- Wards-Barth
2. Poetry in a general sense may be defined as the expression of the imagination
3. 'Poetry is the langusge of the imagination and the passions"

कोई न कोई विचार प्रधान रूप से होता है, इसकी महानता उसके सत्य पर निर्भर करती है। सत्यं शिव बुद्धि तत्व के द्वारा ही काव्य मे लाये जाते हैं।

कल्पना तत्व काव्य की रचना शक्ति का परिणाम होता है। काव्य मे कल्पना का बड़ा महत्त्वपूर्ण स्थान है, परन्तु कल्पना का आधार सत्य होना चाहिये।

काव्य का रसात्मक या रागात्मक तत्व वह है जो हमारे मन को उद्वेलित कर देता है। काव्यकार जीवन की उन साधारण से साधारण घटनाओ को छूता है जिनका श्रवण करने मात्र से हृदय मे रस का सचार होता है।

भाव की चरम परिणति ही रस है। शृगार रस को रसराज की सज्ञा दी गई है। शृगार का स्थायी भाव रति है। यही स्थायी भाव नायक-नायिका के अगो की मधुर चेष्टाओ के द्वारा एक दूसरे के हृदय मे परिपक्व होकर शृगार रस कहलाता है।[1]

शास्त्रकारो के प्रेम मे दुख और सुख के आधार पर शृगार के दो भेद किये हैं सयोग तथा वियोग।[2]

कुशललाभ ने सयोग एव वियोग दोनो का चित्रण किया है, किन्तु प्रमुखता विप्रलभ शृगार को ही दी गई है। सयोग वर्णन वियोग की अपेक्षा कम हुआ है। भारतीय काव्यकारो ने सामान्यत. काव्य के अन्त मे सयोग (नायक नायिका का) कराकर काव्य को सुखान्त बनाया है।

विप्रलंभ शृंगार

सयोग की अपेक्षा वियोग मानव हृदय को अधिक प्रभावित करता है। सयोग मे प्रेम पात्र एक ही रहता है किन्तु वियोग मे तो वह त्रिभुवन के कण-कण मे व्याप्त हो जाता है। विरह जीवन की वह परिस्थिति विशेष है जिसमे प्रेमी जीवन का विश्लेपण हो जाता है। जीवन के इन दो मोर्गा मे मानव मन विरह की कल्याणमयी घाटी का ही पथिक बनता है, क्योकि दुख के भाव जितना अधिक मर्मस्थल को स्पर्श करते हैं उतना सुखमय भाव नहीं। आदि कवि वाल्मीकि भी क्रौंचवध से शोकातुर हो उठे थे और उनके मानस से एक अन्त प्रेरणा द्वारा यह वाग्धारा प्रस्फुरित हो उठी थी

"मा निषाद प्रतिष्ठात्वमगमम शाश्वती सम।
यत्क्रौंच मिथुनादेकमअवधी काम मोहितम ॥

इस प्रकार वधिक द्वारा जनित दयनीय दशा से कवि का हृदय करुण भावो से उद्वेलित हो उठा, और उसी के वशीभूत हो कवि ने शब्द चित्रो को अपनी

1 रस सिद्धान्त स्वरूप विश्लेषण - डा० आनन्द प्रकाश दीक्षित पृष्ठ 313
2 धनंजय ने शृगार के तीन भेद किये हैं—सयोग, आयोग, विप्रयोग-रूपक 1.50

तूलिका द्वारा उपस्थित कर दिया। भवभूति ने भी नवरसो मे करुण रस को ही प्रधानता दी है—"एको रस करुणं एवं स।"

विरह प्रेम का तप्त स्वर्ण है या विरह प्रेम की कसौटी है जिस पर प्रेम रूपी स्वर्ण की परीक्षा होती है। वेदना की अग्नि मे प्रेम की मलिनता गल जाती है और जो कुछ शेष रहता है वह स्वच्छ एव निर्मल प्रेम होता है। प्रेम जहाँ वियोग मे विस्तृत क्षेत्र पाता है वहाँ सयोग मे सकीर्ण। विरह मीठी-मीठी कसक के साथ हृदय मे रस की अनुभूति कराता है। वाणी के साहचर्य से वाह्य जगत् मे जो वेदना फूट पडती है वही तो सरस काव्य है। तभी तो कवि पन्त कह उठे हैं

वियोगी होगा पहला कवि, आह से उपजा होगा गान
उमड कर आँखो से चुपचाप, वही होगी कविता अनजान।

महादेवी वर्मा की कविताओ का भी प्रधान स्वर वेदना और दुख ही है। प्रत्येक भावुक कवि के हृदय मे एक विरहिणी नारी है जो अपने दुखो का गान सुनाया करती है। यही विरहिणी कालिदास के हृदय मे शकुन्तला, भवभूति के हृदय मे सीता, जायसी की आत्मा मे नागमती, सूर के प्राणो मे राधा और मीरा की सासो मे अरूप होकर रोई हैं। कबीर ने तो यहाँ तक कह दिया है कि जिस मन मे विरह का सचार नही उसे मसान समझना चाहिये।[1] भोज के अनुसार—'जहाँ रति नामक भाव प्रकर्ष को प्राप्त करे लेकिन अभीष्ट को न पा सके वहाँ विप्रलम्भ शृंगार कहा जाता है।'[2] विप्रलम्भ शृंगार के चार भेद माने गये हैं पूर्वराग, मान, प्रवास तथा करुण।[3]

पूर्वराग वियोग की वह प्रथमावस्था है जहाँ नायक या नायिका अपने प्रेमी के गुण अथवा सौन्दर्य का श्रवण करते हैं तथा मिलन की अभिलाषा मन मे निरन्तर बनी रहती है परन्तु वे एक दूसरे से मिल नही पाते हैं। मान की अवस्था मे नायक नायिका मे प्रेम होते हुए भी किसी कारणवश अथवा बिना कारण ही एक दूसरे से रूठे रहते हैं। प्रवास मे नायक नायिका कार्यवश शापग्रस्त होकर, भ्रमवश अथवा देशाटन के कारण एक दूसरे से वियुक्त हो जाते हैं। करुण विप्रलम्भ की अन्तिम दशा है। इसमे नायक अथवा नायिका, की मृत्यु और मिलन की भविष्यवाणी भी होती है।

विप्रलम्भ शृंगार की दस दशायें मानी गई हैं अभिलाषा, चिन्ता, स्मृति, गुण कथन, उद्वेग, प्रलाप, उन्माद, सज्वर, जड़ता और मरण।[4]

1 जोहियट विरह न संचरे, सो घट जान मसान। —कबीर
2 सरस्वती कंठा भरण 5–45
3 सच पूर्वराग मान प्रवास करुणात्मक चतुर्धा स्यात्, साहित्य दर्पण–विश्वनाथ 3—187
4 साहित्य दर्पण विश्वनाथ 3—190

कुशललाभ के सभी काव्यो के पात्र विप्रलम्भ की स्थिति से गुजरते हैं। उनकी कथाओ मे विप्रलम्भ शृंगार निम्नलिखित रूपो मे मिलता है

1 मारवणी का वियोग
2 मालवणी का वियोग
3 ढोला का वियोग
4. माधव का वियोग
5. कदला का वियोग
6 तेजसार का वियोग
7 भीमसेन का वियोग
8 मदनमजरी का वियोग

मारवणी का वियोग

मारवणी का यौवनागम तथा सौदागर से ढोला के बारे मे सुनना ही विरह की पृष्ठभूमि उपस्थित करता है। मारवणी ढोला के विषय मे सुनकर विरह व्यथित हो जाती है और निश्वासें भरने लगती है।[1]

प्रेमी को देखे बिना वियोग कैसे ? प्रश्न यह उठ सकता है। अत. कवि ने पहले ही इसका समाधान कर दिया है कि मारवणी सौदागर से ढोला के बारे मे सुनती है और विरह तब ही उसे व्यथित करता है। मारवणी की विरह दशा छुपाये नही छुपती है। उसकी दशा देखकर दीपक धारणी उससे कारण पूछती है। माता मारवणी की विरह स्थिति को छुपकर देखती है। मारवणी कुरझा के शब्दो पर बार-बार प्रिय को स्मरण करती है और विलाप करती है। उसके नैत्रो से आसू झरते है।[2]

मारवणी नीद मे सोई हुई है और स्वप्न मे आकर ढोला ने उसे जगा दिया।[3]

मारवणी को अपने विरह मे पक्षी भी दुःखी दिखाई देता है। वह अपनी सखी से कहती है कि रात को सरोवर मे किसी पक्षी ने कलरव किया। वह सरोवर मे और मैं अपने घर मे। हम दोनो की ही आख नहीं लगी

> राति सखी इणि ताल मई काइज कुरली पख
> उवै सरि हूँ घरि आपणइ, बिहूँ न मेली आख ॥ 244 ॥

1 सुणी मारवणी आवइ घरे व्यापउ विरह भयण बल घेर
सूती सेज करे वेपास, मोडइ अंग, मूंकइ नीसास
ढोला मारू चौपई-ह प्र 236

2 कुंझडियां मिलि दूहा कहइ माता सामलि छानी रहइ
वार वार प्रीतम सम्भरइ करि विलाप नैं आंसू झरइ—
ढोला मारू चौपई—243

3. दोहा संख्या 484 ढोला मारू की चौपई

कुररी पक्षियों का स्वर उसे अपने प्रियतम की स्मृति दिलाता है और उसके नेत्रों में आंसू का सागर भर आता है।[1] उस स्वर से उसके अंगों पर आरी चलने लगी[2] और प्रियतम की स्मृति 'सार' की तरह सालने लगी।[3] यहाँ मारवणी की करुण दशा का बड़ा ही मार्मिक चित्रण हुआ है।

मारवणी अपने प्रियतम से मिलने को व्याकुल है। वह कुरझों से उनकी पाखे मांगती है ताकि उन्हे लगाकर समुद्र पार कर वह प्रियतम के पास पहुंच सकें

कुर्झां धउ नइ पखडी थाकउ विनउ वहेसि
सायर लघी प्री मिलउं, प्री मिलिपाछी देसि ॥ 222 ॥

कुरझें पख देने मे तो असमर्थ हैं परन्तु वे उसकी सहायता करने को तैयार है अत प्रिय का सदेश पख पर लिखने की बात कहती हैं क्योंकि वे पक्षी है यदि मनुष्य होती तो मुख से कह देती।[4]

अपने प्रिय के वियोग मे विरहिणी नायिका की वेदना मार्मिक है। यह वेदना पक्षियो तक के हृदय को पिघला देती है। सहानुभूति और सवेदना का इतना व्यापक विस्तार केवल विरह अवस्था मे ही पाया जाता है। जायसी की नागमती के विरह से दु खित हुआ एक पक्षी उसका सदेश ले जाने के लिए तैयार हो जाता है। रामचन्द्र शुक्ल ने नागमती के विरह वर्णन की मार्मिकता का उद्घाटन करते हुये कहा है 'यह पुण्य दशा है जिसमे यह सव अपने सगे लगने लगते हैं और यह जान पड़ने लगता है कि इन्हे दु ख सुनाने से भी जी हल्का होगा . ...हृदय की इस व्यापक दशा का कवियो ने केवल प्रेम दशा मे ही वर्णन किया है।[5]

सदेश प्रेषण की परम्परा अत्यधिक प्राचीन काल से चली आ रही है। जव प्रिय वियुक्त होकर हजारो मील दूरी पर जा वसता है तो विरहिणी भी किसी गतिशील वस्तु को देखकर उसके द्वारा अपने प्रियतम के पास सदेश भेजना चाहती है। कवियो ने मेघ, अग्नि, हस, उद्धव, कोकिल एव भ्रमर आदि को तो दूत वनाया ही है किन्तु ढोला मारवणी चौपई का क्रोंच-दूत अपने ढंग का अनूठा ही है। सदेश प्रेषण कृत्रिमता से दूर है तथा यहाँ विरहिणी की प्रिय को सदेश भिजवाने की लालसा की वास्तविक अभिव्यक्ति हुई है।

---

1. कुझडियाँ कलरव कियउ धरि पाछिले वणेहि
   सूती साजण सम्रभवा, द्रह भरिया नयनेहो—247
2. दोहा स ख्या 245
3. दोहा संख्या 246
4. माणस हवाँ त मुख चवाँ म्हे छाँ कुंझडियाँह
   प्रिउ सन्देसउ पाठ विसु लिखि दे पखडियाँह ॥ ढोला मारू चौपई 224
5. जायसी ग्रंथावली, ना. प्र सभा काशी, पृष्ठ संख्या 39

मारू अपना सदेश 'ढाढियो' (जाति विशेष) को बुलाकर स्वयं कहती है। मारू का यह संदेश भारतीय नारी के आत्मदान और आत्मसमर्पण का उत्कृष्ट एवं अनूठा उदाहरण है। जिसमे उसके हृदय की समस्त आशायें सिमट कर समा गई हैं। वह सदेश मे कहती है कि उसके शरीर मे प्राण नही है, केवल एक लौ है जो प्रिय की ओर जल रही है।[1]

प्रियतम न तो आते ही हैं न मिलते ही हैं और न ले ही जाते है फिर आकर क्या उसके अस्थि पजर पर कौए उडायेंगे।[2] मारवणी के विरह मे लौकिक भाव ही प्रबल है। इसमे कोई सन्देह नही कि नारी का जीवन पति के सानिध्य मे ही सार्थक है। वह अपने यौवन का उपभोग करने के लिये पति को आमत्रित करती है। मारू का यौवन रूपी हस्ती मदमस्त हो गया है उसे केवल ढोला ही अकुश द्वारा वश मे कर सकता है।[3]

मारवणी के विरह को उद्दीप्त करने वाले तत्व ऋतु मास और त्यौहार विशेष रूप से उल्लेखनीय है। ऋतुओ की विभिन्न अवस्थाओ का समावेश उद्दीपन की दृष्टि से ही किया गया है। प्राकृतिक दृश्यो का आकर्षक एव सुन्दर वास्तविक चित्रण विरहानुभूति को सजीव बनाने मे सहायक सिद्ध हुआ है।

मालवणी का विरह

"मालवणी का विरह एक पतिव्रता नारी की पवित्र वेदना और जीवन के परिपुष्ट प्रेम की दुःख भरी कहानी है। मारवणी और मालवणी के विरह मे उतना ही अन्तर है जितना एक पत्नी और प्रेमिका के विरह मे होता है। यो तो मारवणी भी ढोला की परिणीता ही थी परन्तु मिलन से पूर्व उसका व्यक्तित्व एक प्रेमिका का ही व्यक्तित्व है।"[4] इसके विपरीत मालवणी का विरह एक पत्नी के प्रगाढ प्रेम से उत्पन्न वेदना का अथाह प्रवाह है जो अपने मे सयमित एव गम्भीर है।

मालवणी के वियोग की प्रथम स्थिति उस समय देखने को मिलती है जब वह ढोला को उदास देखकर उसकी उदासी का कारण जानना चाहती है।[5]

1 ढाढी जे प्रीतम मिलइ यूँ कहि दाख वियाह
पंजर नहि छइ प्राणियउ था दिस झल रहियाह ॥ 271 ॥

2 ढोला मिलिसि म वीसरिसि, नवि आविसि ना लेसि
मारू तणइ करंकडइ वाइस ऊडावेंसि ॥ 286 ॥

3 ढाढी जे राज्यंद मिलइ, यू दाख विया जाइ
जोवण हस्ती मद चढ्यउ अंकुस लइ धरि आइ ॥ 285 ॥
ढोला मारू चौपई

4 ढोला मारू रा दूहा—सं० डा० शंभु सिह मनोहर

5 वलि मालवणी वीनवइ हुँ, प्री दासी तुम्ह
का चिंता चित अतरे सा प्री दाखउ मुम्ह ॥ 341 ॥

मालवणी जान जाती है कि ढोला मारवणी से मिलने को उत्सुक है और पूगल जाना चाहता है। मालवणी प्रेम मे वशीभूत ढोला को किसी प्रकार बहाने बना कर चार मास रोके रखने मे सफल हो जाती है।[1]

मारवणी से मिलने की इच्छा जानकर ही मालवणी आगत वियोग की कल्पना मात्र से काप उठती है। उसका शरीर संतप्त हो उठता है, अगों में विरह व्याप्त हो जाता है और वह खडी-खडी ही धडाम से गिर पडती है मानो उसे सर्प दशन हो गया हो।[2] होश आने पर वह ढोला को ग्रीष्म ऋतु की भीषण गर्मी[3] तथा पावस मे दाम्पत्य सुख की दुहाई देकर रोकती है। 'बिजलियों की क्रीडा, पानी का बरसना तथा पपीहे का बोलना ऐसे मे भी कोई घर छोडकर जाता है ऐसी ऋतु मे प्रवास करना अच्छा नही है।[4] पावस ऋतु मे तो केवल भिखारी, नौकर तथा चोर ही घर के बाहर निकलते हैं।"[5]

मालवणी के बार-बार रोकने पर ढोला दशहरे तक रुक जाता है।[6] शीत ऋतु आ जाती है और ढोला फिर अपनी कामना प्रकट करता है। परन्तु मालवणी के लिए तो कोई भी ऋतु प्रवास के लिए उचित नही है

> सीयालइ तो सी पडइ उन्हालइ लू वाइ
> वरसालइ मुइँ चीकणी चालण रुत्ति न काई ॥361 ॥

जिस ऋतु मे पाला पडता है उस ऋतु मे प्रौढा ही पति से वियुक्त नहीं रहती तो युवती कैसे रह सकती है।[7]

ढोला जब किसी तरह नही मानता तो मालवणी की दशा दयनीय हो जाती है

> ढोलउ हल्लाणउ करइ धण हल्लिवा न देह
> झब-झब झूँबइ पागडइ डब-डब नयण भरेह ॥ 374 ॥

1 मालवणी सुं प्रेम अपार ढोलउ रहियउ मास वेचारि
सुंदरि नेह विलूधउ सही, तोई मारवणी वीसारइ नहीं ॥ 362 ॥

2. मालवणी तन तप्पउ विरह पसरियउ अगि
कभी थी खडहड पडी जाणे डसी भुयगि ॥ 343 ॥

3 थल तत्ता लू सांमुही दाझोला पहियाह
म्हांकउ कहियउ जउ करउ धरि बइठा रहियाह ॥345 ॥

4 बाबहिया पिउ पिउ करइ कोयल सुरंगइ साद
प्रिय तिण रुति आलिग रहयां ताह सुं किसउ सवाद ॥ 356 ॥

5 दोहा संख्या 346

6. दोहा संख्या 367

7 जिणि दीहे पालउ पडइ टापर तुरी सहाइ
तिणि रिति बूढी ही झुरइ तरुणी केम रहाइ ॥ 370 ॥

और अन्त मे वह निराश होकर अपनी भावनाओं को कुचल कर यही कहती है

> हल्लउँ-हल्लउँ मत कर हियडइ सालम देह
> जे साचे ई हल्लस्यउ, सूतां पल्लाणेह ॥ 375 ॥

'सूतां पल्लाणेह' की कारुणिक विदाई ने मालवणी की अक्षय प्रेम की भावनाओ और असह्य वेदना को साकार कर दिया है। मालवणी ने ढोला को जाने के लिए तो कह दिया परन्तु उसके हृदय मे झझावत उठा हुआ है। वह ऊँट से लंगड़ा हो जाने के लिए विनती करती है।[1]

मालवणी पन्द्रह दिन लगातार जागती रहती है आखिर उसे नीद आ ही जाती है और ढोला प्रस्थान कर जाता है।[2]

ऊट का शब्द सुनकर मालवणी जाग जाती है उसका कोमल हृदय टूक-टूक हो जाता है। आगत विरह उसकी शारीरिक और मानसिक वेदना को झकझोर देता है। वह विलाप कर उठती है

> धावउ धावउ हे सखी दो दांवणि को लाज
> साहिव म्हांकउ चालियउ जइ कउ राखइ आज ॥ 399 ॥

ढोला के जाते ही विरह के नगाडे बजने लगे उसका शरीर शिथिल हो गया तथा विरह से क्षीण हाने के कारण हाथो से उसकी चूडियां खिसक पडी।[3]

वियोग वेदना मे वह अपने प्रेम के पवित्र आंसू ही बहा सकती है।[4] रोने से हृदय हल्का हो जाता है, परन्तु पहाड तो है ही नही जिस पर चढकर वह धाड (दहाड) मार कर रो सके।[5] प्रिय के चले जाने पर उसकी वस्तुएँ हृदय मे सालती हैं। ढोला चला गया है मालवणी देखती है कि खूंटी पर जीन नही है और न ही

1. दोहा संख्या 382
2. प्री पासे इण परि मागती पनरह दीह रही जागती
   झाझी नींद्रे व्यापी नारि तउ करहउ आणे झेम्यउ बारि ॥ 397 ॥
3. ढोला चआल्यउ हे सखी वाज्या विरह निसाणँ
   हाथे चूडी खिस पड़ी ढीला हुआ सन्धाण ॥ 490 ॥
4. (क) वीछुडता ही सज्जणां राता किया रतान
   वारां विहुँ चिहुँ नाखिया आसुँ मोती प्रन्न ॥ 403 ॥
   (ख) साई दे दे सज्जना, रातइइणि परि रुँन
   करि ऊपरि आंर ढलइ पाँणि प्रवाला चून ॥ 417 ॥
   (ग) ऊभी रही चडेहि जोई दिसि जातां तणी
   अभी हाथ मलेहि विलखी हूई वल्लहा ॥ 404 ॥
5. बाबा बलूँ देसडउ जिहां डूगर नहिं कोई
   तिण चढि मुकउँ धाहडी हीयउ उरलउ होइ ॥ 407 ॥

जूते हैं, ऊँट भी अपने स्थान पर नही है। ये सभी स्थान मालवणी को ढोला की याद दिलाते हैं।[1] वियोग मे वह सारस के शब्द को ऊँट का शब्द समझ कर दौड़कर ऊँचे स्थान पर चढ जाती है, परन्तु वहाँ न ढोला होता है और न ऊँट ही।[2] मालवणी ढोला के चले जाने पर अकेली तालाब पर जाती है, परन्तु वियोग मे पानी की लहरें उसे काले साँप की तरह दिखाई देती हैं।[3]

विरहिणी के मन मे आशा है कि एक दिन प्रिय अवश्य ही उससे आकर मिलेंगे और उसकी सभी आशाएँ फलीभूत हो जायेंगी।[4]

इस प्रकार आशा की किरण को अपने हृदय मे छिपाये वह विरहिणी अपने प्रिय के लिए जीवित है।

ढोला का वियोग

मारवणी द्वारा प्रेषित विरह सन्देश ही ढोला के विरह को जागृत करता है। उसका विरह कर्तव्य प्रेरित है। कर्तव्य के आगे भी वह मारवणी को भुला नही पाता।

> मालवणी सूँ प्रेम अपार, ढोलउ रहियउ मास वे चारि
> सुंदरि नेह विलूधउ सही, तोइ मारवणी वीसारइ नही ॥362॥

वह मालवणी के प्रति अपने कर्तव्यो की वलि नही देना चाहता है। अत सयोगावस्था मे भी बार-बार जाने की बात कहता है और अन्त मे चला भी जाता है।

ढोला के विरह मे वह तीव्रता नही है, जो नायिका के विरह मे होती है। पर यह दोष नही है। स्वाभाविक ही है कि पुरुष मे विरह की तीव्रता नारी की अपेक्षा कम ही होती है, परन्तु इसका यह अर्थ नही कि ढोला मे विरह ताप कम है। वह मारवणी से इतने दिन अज्ञानवश न मिलने की क्षमा भी माँगता है।[5]

ढोला सोचता है कि यदि उसके पंख होते तो वह शीघ्र ही चला जाता।[6] विरह व्याकुल ढोला की सयोगावस्था के लिए आकुलता, आतुरता बहुत ही बलवती

1, खूँटइ जीण न मोजडी कढ़िया नहीं के कांठ
साजनिया सालइ नही सालद आही ठांण ॥ 416 ॥

2 भूली सारस सद्दउइ जाणइ करहउ थाय
थाई थाई थल चढ़ी पग्गे दाधी माय ॥ 409 ॥

3 ढोला हूँ तुझ बाहिरी, झीलण गइय तलाइ
कजल काला नाग जिउं, लहिरि ले ले खाय ॥ 415 ॥

4 ढोला जाँइ वलि आविज्यइ आसा सहि फलीयाँह
सावण केरी बीज ज्यउं झावूकइ मिलियाँह ॥ 402 ॥

5 एह गुनह पमियो माहरेउ मय वियोग कीयो ताहरउ
निरति पपइ कुण जाणइ लोइ, अण जाण्याँ नरदोस न होइ ॥ 623 ॥

6 दोहा संख्या 320

होकर प्रकट हुई है और जब ढोला का कोई भी उपाय मालवणी के समक्ष नहीं चलता तो वह अन्त मे अपने विरही हृदय की बात कह ही देता है

सुणी सुन्दरि सच्चउ चवाँ माजँइ मनची भ्रांति
मो मारू मिलिवा तणी खरी लिलग्गी खाँति ॥ 341 ॥

मारवणी से मिलनार्थ जाते समय मालवणी शुक द्वारा भ्रांत सूचना भेजती है पर ढोला मारवणी को प्राप्त करने के लिए व्यग्र है । अत. उस पर मालवणी की मृत्यु की सूचना का भी कोई असर नही होता और शुक तक उसकी साधना सफल होने की कामना करता है ।[1]

पूगल मार्ग मे ऊमर का चारण ढोला को मारवणी के लिए भ्रात सूचना देता है

जिण धण कारण ऊमहयउ तिण धण सदा वेस
तिण मारू रा तन खिस्या पडर हुवाज केस ॥ 443 ॥

जिसे सुनकर ढोला का मन खिन्न हो जाता है और वह मारवणी की वृद्धावस्था के बारे मे सुनकर नरवर लौटने की बात सोचता है ।[2]

इससे ढोला की विरह तीव्रता और निष्ठा नष्ट हो जाती है । उसके मन मे अस्थिरता, रूपासक्ति और कामेच्छा की गध आने लगती है । ढोला की इस शका का समाधान मारवणी का चारण वीसू यह कहकर करता है

दउढ वरसरी मारूवी त्रिहूँ वरसांरिउ कंत
जणरउ जोवण वहि गयउ तूं किउ जोवन वत ॥ 450 ॥

मालवणी ढोला से उसकी उदासी का कारण पूछती है तो वह देशाटन का वहाना वनाता है । मालवणी को सुप्तावस्था मे छोडकर पूगल प्रस्थान करता है । मारवणी से मिलने को आतुर है । ऊँट की धीमी चाल देखकर ढोला ऊँट से कहता है दिन व्यतीत हो गया है सध्या के वादल छा गये है । झरने नीलायमान हो गये हैं, अरे काली ऊँटनी से उत्पन्न हुए ऊँट तू किस वूते पर वोला था कि मैंपहुंचा दूंगा ।[3]

ढोला मारवणी से मिलने को व्यग्र है । वह ऊँट को छडी से सडासड मारता है

सड सड वाहिम कवडी, रांगा देह म चूरि
विहु दीपां विचि मारूई मो थी केती दूरि ॥ 474

1. ये सिध्यावउ सिध करउ पूजउ थांकी आस
मत वीमारउ मन थकी उवा छइ थांकी आस ॥ 424 ॥
2. ढोलइ मन चिंता हुई चारण वचन सुणेह
हिव आव्यात पाछउ वलउ, करजा केम करेहइ ॥ 444 ॥
3 दीह गयउ डर डंवरे नीले नीझरणेहि
काली जाया करहला वोल्यउ किसे गुणेहि ॥ 473 ॥

मार्ग की विघ्न-बाधाओ को सहता हुआ ढोला किसी प्रकार पूगल पहुँच जाता है और पन्द्रह दिन ससुराल मे रहने के बाद वह नरवर के लिए रवाना होता है। रास्ते मे विश्राम के समय मारवणी को पीना सांप पी जाता है। ढोला मारवणी के गुणो को स्मरण कर विलाप करता है

वाही थी गुण वेलडी वाही थी रसवेलि
पीणइ पीवी मारवी चाल्या सूती मेलि ॥ 575 ॥

साथ के लोग ढोला को समझाते हैं कि पिंगल राजा की पुत्री चम्पावती जो मारवणी से तीन वर्ष बडी है और मारवणी के समान ही सुन्दर है उससे विवाह कर लो।[1]

ढोला जब उनकी यह बातें विवाह के बारे मे सुनता है तो विरह व्यथित हो उत्तर देता है

इण भवि मारवणी मुझ नारि, सइ हथि दीधी सिरजन हार
साइ जो परमेसर संग्रही मुझ मरणउइण साथ इसही ॥ 579 ॥

विधाता ने जिस मारवणी को मुझे दिया था वही इस जन्म मे मेरी स्त्री है। अब ईश्वर नें उसे उठा लिया तो उसी के साथ मेरा मरना भी उचित है। पन्द्रह वर्ष के वियोग के बाद वह बडे कष्टो से मारवणी को प्राप्त करता है और विधाता फिर बिछोह करा देता है।[2] ढोला लोगो से कहता है कि जीकर इस दु ख को कौन सहेगा अत अग्नि मे मारवणी के साथ मैं भी जल जाऊँगा।[3]

योगी ढोला के मरने की बात सुनकर कहता है कि तू व्यर्थ मे क्यो मरता है। प्रिय के मरने पर स्त्री तो उसके साथ जल जाती है परन्तु स्त्री के पीछे पुरुष कभी नही मरता।[4]

योगी की बात सुनकर ढोला को क्रोध आना स्वाभाविक ही है और वह योगी से कहता है कि तुम पराई बात मे क्यो पडते हो।[5] परन्तु योगी जब मारू को जिला देता है तो वही ढोला योगिन को नवसार हार तथा योगी को वस्त्र आदि देता है।[6]

1 दोहा संख्या 577–578
2 पनरह बरस विछोहउ हूओ घणइ कष्टि मेलावउ थयउ
वल विछोही जउ करतार तउ इण भवि मुझ एह ज नारि ॥ 580 ॥
3 बउलाओ प्रति ढोलउ कहइ ए दुष जीवेनइ कुण सहइ
एहु र वरत्यउ जोउइ हाथि पइसिसि पावक मारू साथि ॥ 581 ॥
4 जोगी ढोला प्रति ईम कहइ कांई रे काइर फोकट मरइ
प्री पूँठइ अस्त्री परजलइ पणि नारि पूठि पुरुष नवि वलइ ॥ 590 ॥
5. आ ते मांडी अउली रीति वात न वइसइ ढोला प्रीति
ढोलउ कहइ वायस सुणि वात कीजइ नही पराइ तांति ॥ 591 ॥
6 ढोलउ आणदियउ अपार जोगिणि दीधउ नवसर हार
जोगी नइं सोवन सांकला पहिराया अति उतावला ॥ 596 ॥

इस प्रकार हम देखते है कि ढोला विरह कर्तव्य प्रेरित, सहज तथा गूढ अभिव्यक्ति युक्त है।

माधव का वियोग

माधव का विरह प्रवास जन्य है। माधव धीरोदात्त है। उसे कामावतार कहा गया है।

माधव शिलारूपी जयती अप्सरा से विवाह करता है और अप्सरा नित्य प्रति रात्रि को माधव से मिलनार्थ स्वर्ग से आती है। माधव का विरही रूप उस समय हमारे सामने आता है जब वह स्वर्ग से जयती के श्राप दिये जाने के बाद पुष्पावती आता है। वह बार-बार अप्सरा का पथ निहारता है उसका विरह उसे अत्यधिक दुःख देता है वह सोचता है, हे! दैव यह सब कैसे हो गया?[1]

माधव बार-बार उसके गुणो को व उसके साथ व्यतीत किये गये सुख के क्षणो को स्मरण करके दुःखी होता है

अपछर किहा। किहा सुख सेज हरिख किहा? किहा सुख हेज?
माधव झूरइ समारि समारि, जाणइ सुहिणा हूयु विचार ॥ 121 ॥

जयती के वियोग मे माधव का मन उचाट हो गया। उसे नीद नही आती तथा अन्न-जल का भी उसने त्याग कर दिया है।[2] वह कदला के वियोग मे चिंतातुर है। माधव की दुर्वल देह देखकर माता-पिता उससे दुःख का कारण पूछते हैं, परन्तु माधव उन्हें कुछ नही बताता।[3] पिता माधव को अपने साथ राज द्वार ले जाता है जिससे उसकी चिंता कुछ कम हो।[4]

राजा माधव को देश निकाले की आज्ञा देता है।[5] पुष्पावती से निष्कासन के बाद विरही माधव कामावती नगरी पहुचता है और कामसेन से प्राप्त सभी वस्त्राभूषण कामकदला को उसकी कला से प्रसन्न होकर दे देता है।[6] राजा इसे अपना अपमान जानकर उसे कामावती छोडने की आज्ञा देता है

चढी रीस बोलीउ नरेस 'माधव' छडउ अम्हारू देस ॥ 224 ॥

कामावती मे निष्कासन के बाद माधव उज्जैन नगरी मे पहुँचता है। उसे कामावती का रहने वाला एक व्यक्ति मिलता है। वह अपना विरह संदेश भेजता है।

1 माधव मन माँहि सोचइ घणउ पंथ निहालइ अपछर तणउ
तेहनइ विरहि घणउ दुख थयउ दिखउ दैव किसिउ अे हुउ ॥ 120 ॥

2 घणा दीह लगि जोई वाट अपछर नावइ मनि कचाट
छडी विद अन्न नइ नीर दी सइ माधव दुखी सरीर ॥ 122 ॥

3. माता पिता घणउ दुख धरइ पूछिउ पुत्र बात नवि करइ
कोइ न जाणइ कारण तेह, दीसइ माधव दुर्बल देह ॥ 125 ॥

4 दोहा संख्या 128

5. ,, ,, 153

6 ,, ,, 219

वह लिखता है यह मत सोचना कि दूर रहने से प्रीति भी चली जाती है नेत्रो का विछोह हो जाने पर भी प्राण तो तुम्हारे ही पास हैं ।[1]

माधव रात दिन भुलाने पर भी कदला को भूल नही पाता उसके मन मे हमेशा कदला रहती है । जब वह नीद मे सो जाता है तो स्वप्न मे वही आ जाती है ।[2]

माधव के विरह की स्मरण अवस्था भी देखने योग्य है । माधव पत्र मे यह लिखना भी नही भूलता कि थोडे लिखे को बहुत मानना और सदैव स्मरण करते रहना ।[3] माधव चला भी आता परन्तु मार्ग मे बीहड वन एव पहाड है । यदि विधाता उसे पख दे देता तो वह नित्य प्रति ही प्रिय से मिल कर आ जाता

आडा डूगर बीझवन खरे पियारा मित्त
देहु विधाता पख जउ मिलि मिलि आवइ नित्त ।। 416 ।।

माधव का विरह उस समय चरम स्थिति पर पहुँच जाता है, जब वह महाकाल के मन्दिर मे सोया हुआ है और मध्य रात्रि मे बादल गर्जना करते है । जिसे सुनकर माधव का प्रेम जागृत होता है और विरह सालने लगता है ।[4] अपने पूर्व प्रेम के स्मरण से वह विरह व्यथित हो जाता है तथा समस्त शरीर मदन-दावानल से जलने लगता है ।[5] महाकाल के मन्दिर मे वह विरह गाथाये लिखता है ।[6] माधव की उन्माद, स्वप्न एव प्रलाप दशायें दृष्टव्य हैं । रात्रि मे सोते समय वेश्या के पैरो को कदला के पैर समझ कर वह नीद मे ही बोलता है

माधव बोलइ नीद मझारी "सामली कामकदला नारी
हीया-धिकी पग पाछा करउ, पीन पयोधर साहमा धरउ" ।। 498 ।।

प्रेम की प्रगाढता की स्थिति इससे अधिक और क्या हो सकती है । जिसमे प्रलाप अचेतनता उन्माद आदि सभी दशाओ का सम्मिलन देखने को मिलता है ।

1 दूरतर के वास मत जाणउ तुम्ह प्रीति गई
जीव तुम्हारइ पास नयन विछोह पर गये ।। 394 ।।

2 वासरि चित्त न विसरइ निसि भर अवर न कोइ
जउ निद्रा भरि भोलव्या तउ सुपनंतरि सोइ ।। 406 ।।

3 बहुत कहा हित हित लिखु संभरिज्यो सदीव
थोडइ लिखियइ जाणजो तुम्ह पासइ छइ जीव ।। 414 ।।

4 दोहा संख्या 474

5 दोहा सख्या 475

6 (क) "सो को वि नित्थे सुयणो जस्स कहिज्जति हियय दुक्खाइ
आवति जाति कंठे पुणरवि हियए विलग्गंत्ति" ।। 476 ।।

(ख) "नवरस विलास समय कंठ गहिऊण मुक्क नीसासो
सारयणी सो दीहो सो दुक्ख सल्लए हीए" ।। 483 ।।

माधव का विरह मरण की स्थिति मे चरम अवस्था पर पहुँच जाता है। राजा विक्रमादित्य माधव को कदला की मृत्यु का समाचार सुनाते हैं और विरही माधव के प्राण निकल जाते हैं

ताहरउ मरण सुणी ततकाल कामकदला कीधउ काल
अेह वात माधव समली अइयउ हस गयउ नीकली ॥ 585 ॥

कंदला का वियोग

कदला का वियोग प्रवास जन्य है। माधव कामावती से कामसेन द्वारा निष्कासित हो विरह की एक विकल निश्वास खीच, प्रियतमा कामकदला को विरहाभिभूत तथा व्यथा-सन्तप्त छोडकर जाने की वात कहता है जिसे सुनते ही वेश्या कदेला मूर्च्छित होकर भूमि पर गिर पडती है।[1]

वह माधव से विनती करती है कि उसे निराधार छोडकर क्यो जा रहा है।[2] माधव ही उसका आधार है वह मछली की तरह विना जल के कैसे रहेगी।[3] और फिर कभी वह मन को समझा कर प्रिय को जाने की आज्ञा भी दे देती है

थे सिद्धावउ सिधि करउ पूगउ थाकी आस
मत वीसारउ मन थकी हूँ छूँ थाकी दासि ॥ 337 ॥

कहने को तो वह जाने के लिये कह देती है परन्तु हृदय तो वियोग सहन करने के लिये तैयार नही होता। उसके नैत्रो से आसू वह निकलते हैं परन्तु प्रवास काल मे आसू वहाना अशुभ माना जाता है[4] इसी से वह अश्रुमार्जन भी नही कर पाती।

प्रिय मिलन की अभिलाषा उसे जीवित रखे हुये है। प्रियतम के बिछुडते ही नैत्रो ने शोक मनाना प्रारम्भ कर दिया, जिसके फलस्वरूप ओढनी तथा पहनने की कचुकी निचोडने योग्य हो गई।[5] कामकदला मिलन का सुख लाभ करने हेतु वडी ही गूढ कल्पना करती है। वह सोचती है कि शरीर को जलाकर राख की स्याही वना लूगी, शरीर जलने पर धूआ स्वर्ग मे जायेगा तथा प्रिय रूपी वादल वनकर वरसेगा और मुझे स्पर्श करेगा और इस प्रकार मेरी विरह अग्नि बुझ जायेगी।[6]

1 वात सुणी वेश्या धड हुइइ, मूर्छा आवी धरणी पडइ
छटइ पाणी बीजइ वाइ खिणइ सचेती सुंदरी थाइ ॥ 323 ॥
2. दोहा संख्या 325
3. दोहा संख्या 326
4 जउ गच्छसि तउ गच्छ प्रीउ ! फंठा ग्रहणम जोइ
रोवण छेह विलग्गिइ, अवसि अमगल होइ ॥ 345 ॥
5 वीछडता प्रिय माणसा नयणे कीधउ सोग
ऊढणि पहिरण कंचुउ हुउ नीचोयण जोग ॥ 350 ॥
6. दोहा सख्या 353

विरह सतप्त कामकदला से दिन रात्रि काटे नही कटती, निमिष दिन के बराबर तथा रात्रि छ मास के बराबर दीर्घ लगती है।[1]

वह वियोग मे प्रलाप भी करती है। वह अपने हृदय को कोसती हुई कहती है कि तू कितने दु ख और सहेगा, फट क्यो नही जाता है ? प्रिय के बिछुड जाने पर जीकर क्या करना है।[2] पर हृदय तो फटने से रहा अत फिर उसे झुझला कर फटकारती हुई कहती है कि लगता है, हे हृदय ! तू वज्र का बना है अथवा पाषाण का, जो प्रिय वियोग मे भी तू खड-खड नही होता

रे हिया वज्जर घडीयउ कि पाषाण कुरड ?
वालभ नर विछोहीयउ हुउन खडउ खड ।। 357 ।।

माधव के प्रवासी होने पर कामकदला ने रगीन दक्षिणी चीर ओढना तथा सोलह शृगार करना छोड दिया है।[3] इसके अतिरिक्त उसने तिलक, काजल एव पान इन तीनो चीजो का भी त्याग कर दिया है। वह प्रतिज्ञा करती है कि जब तक उसका प्रिय उसे नही मिलेगा वह स्वादिष्ट भोजन भी नही करेगी।[4] वियोगिनी की मानसिक दशा का कैसा अनूठा वर्णन कवि ने किया है।

माधव को अपना सदेश भेजते समय तो कदला का विरह सागर ही उमड़ पडता है। परन्तु जैसे ही वह पत्र लिखने बैठती है हृदय भर आता है और नेत्रो से लगातार अश्रु धारा वह निकलती है

लिखिवा वइसु जाण, कागल मसि लेइ करी
हीयडउ भराइ ताम नयणि नीझरणा वहइ ।। 434 ।।

कामकदला कही अपने यौवन रूपी कली की ओर भ्रमर को आकर्षित करती है।[5] प्रिय के बिना वह उसी प्रकार कुम्हला गई है जैसे बिना पानी के बेल।[6] स्वप्न मे तो कदला नित्य ही माधव से मिलती है परन्तु जब प्रत्यक्ष मे मिलेगी तो प्रियतम को मोती हार की भाति कठ मे ग्रहण कर लेगी

सुपनतरि नित हूँ मिली जदि परितिक्ख मिलेसी
तदि प्रिय मोतीहार जिउ कठा ग्रहण करेसि ।। 446 ।।

1. निमिष इक मुझ दिन हुआ, रयणि हुई छा मास ।। 354 ।।
2 दोहा सख्या 355
3. दोहा सख्या 365
4. वजइ तिलक कज्जल तंबोल, मजण नाहण धोल अंधोल
   जिमइ नही सरस आहार जा न मिलइ माधव भरतार ।। 366 ।।
   मा का प्र गायकवाड ओरियन्टल सीरिज, बडोदा
5. दोहा सख्या 438
6. दोहा सख्या 440

प्रिय के बिना सेज भी कदला को सूली के समान दुख प्रदान करने वाली लगती है।[1] कदला कहती है जिस प्रकार सीता और राम, रुक्मिणी और कृष्ण, नल एवं दमयंती, वायु एवं अग्नि का साथ है, उसी प्रकार मेरा मन भी तुम्हारे साथ है।[2]

नायिका के रोम रोम में व्याप्त प्रेम के क्षण में निराशा से मुरझाती और दूसरे क्षण में आशा की किरण से प्रदीप्त होती दशा का मार्मिक चित्रण देखने योग्य है

> हीयडा-भीतरि पइसिकरि उग्गा सल्लिर रुख
> नित सल्लइ नित पल्लवइ नित नित नवला दुख ॥ 346 ॥

अपने बहुत दूर बसे प्रियतम का आलिंगन करने के लिये नायिका मन की व्यापक गति के समान ही अपने हाथों की शक्ति चाहती है

> जिम मन पसरइ चिहु दिसि, तिम जउ कर पसरंति
> दूरि वसतां सज्जनां, कंठा ग्रहण करंति ॥ 403 ॥

कवि कुशललाभ ने परम्परा निर्वाह के रूप में कामकंदला के विरह प्रसंग में ऊहात्मक शैली को अपनाया है। कदला माधव के विरह में इतनी अधिक क्षीण हो गई है कि अंगुली की मुद्रिका बाहु में आने लगती है। यह अतिशयोक्ति पूर्ण भाव अस्वाभाविक होते हुये भी नायिका की व्याधि अवस्था को प्रस्तुत करता है। वह कहती है कि विरह ने मेरे साथ जो अन्याय किया है वह कहा भी नहीं जा सकता है। अंगुली की मुद्रिका बाहु में आने लगी है।[3] प्रिय के वियोग में रोते रोते उसके नेत्र ज्योति हीन हो गये हैं तथा आंसूओं से भीगे वस्त्रों को निचोडते निचोडते उसके हाथों में छाले पड गये हैं।[4]

इस तरह कवि को वियोगिनी की मानसिक अवस्थाओं का संवेदनात्मक वर्णन प्रस्तुत करने में बडी सफलता मिली है।

तेजसार का वियोग

तेजसार का विरही रूप उस समय हमारे सामने आता है जब जंगल में अचानक विजयश्री राजकुमारी उसे मिलती है और वह उसकी रक्षा करता है।

1. मुखि नीसासा मेहेलीइ नयणे नीर प्रवाह
   सूली सरिखी सेज-डी तुझ विण जाणीइ नाह ॥ 451 ॥
2. जइ सरइ सीय रामो, रुक्मिणी कन्हो, नलो य दमयंती
   पवणं जणे वि अंजण तह अम्ह मणं तुम्ह सरइ ॥ 457 ॥
3. विरहु जे मुझनइ करिउं ते मइं कहण न जाइ
   अंगुल केरी मुद्रडी ते बाहडी समाइ ॥ 407 ॥
4. कंता मइ तूं बाहरी, नयण गमायां रोइ
   हत्थालो छाला पड्या चीर नीचोई नीचोइ ॥ 437 ॥

परन्तु विजयश्री जैसे अचानक मिलती है, वैसे ही खो भी जाती है। तेजसार सोचता है कि ईश्वर ने मेरे साथ यह क्या किया है। नारी रत्न मुझे देकर बिना बताये ही वापस ले लिया है।[1] जिस प्रकार सीता के वियोग मे राम विरह व्यथित हुये थे उसी प्रकार तेजसार भी विजयश्री के वियोग से दुखी हुआ है।[2] उस उच्च कुल वाली गुणो की भडार सुन्दरी के वियोग मे हे प्राण तुम हस के समान उड़ क्यो नही गये।[3]

वियोग मे व्यथित होकर भी वह अपने मन को सात्वना देता है कि जो जिसके लिये है वही उसे मिलता है

विविध प्रकारि करै विलाप, आपण मन समझावे आप
जिण वेला सरज्यु जेहवुं ते नर तिहाँ पामे तेहवु ॥ 132 ॥

फिर भी वह चारो ओर अटवी मे अपनी प्रियतमा को ढूढता फिरता है। वह उसके मन से भुलाये नही भूली जाती है।[4] मार्ग मे रेती पर मनुष्य के पावो के ताजे चिह्न देख उसका मन हर्षित होता है।[5] तेजसार को ताजा चिह्नो मे प्रिय मिलन की आशा की झलक दिखाई देती है। द्वार पर बैठी नारी के पूछने पर कि वह इस वन मे क्यो घूम रहा है, वह यही कहता है

कुमर कहै रमणी माहरी इण वन माहि गयउ अपहरी
भमतौ आव्यो जोवा भणी तस वियोग मुझ चिता घणी ॥ 138 ॥

मिलन के बाद फिर वियोग हो जाता है[6] और पुष्पावती राजकुमारी से विवाह हो जाने पर भी तेजसार को अपनी पाँचो नारियो की चिन्ता रहती है।[7] राजा तेजसार को उनकी चिन्ता रात दिन रहती है। वह सोचता है कि पाँचो वन मे अकेली हैं उन्हे अवश्य ही विद्याधर मार डालेगा।[8] परन्तु जब विद्याधरी तेजसार से मिलती है तो उसे सब दुख विस्मृत हो जाते हैं

1 नवि लाभै चितवै कुमार किसु ए कीधु करतार
देव नारि रतन मुझ दीउं अण चितव्यु पदालो लीउ ॥ 129 ॥
2 दसरथ नन्दन जिम कीयउ सीता कारण सोग
तेजसार तिम दुख धरै विजयसिरि वियोग ॥ 130 ॥
3. सुकुलीणी सु दरि सगुण वनिता निर्मल वस
विण पाँखे रे प्राणीया हजी न ऊडयो हस ॥ 131 ॥
4. दोहा सख्या 133
5 जोयण एक गयउ जैतलै, पथ तटि वेलू देखई तिसै
ताजा पग तिहाँ माणस तणा, देखी हरख थया मन घणा ॥ 134 ॥
6 दोहा संख्या 171
7 राजरिद्धि नव निद्ध भण्डार सहिमन वांछित सुख अपार
पाँचे नारी निजतणी तिहाँ नी मन चिता घणी ॥ 210 ॥
8. दोहा संख्या 211

पुष्पावती प्रति कहै राय, साईं देइ मिलो सुभाइ
ए पटरानी विद्यावरी इण आव्यँ गया दुख वीसरी ।। 234 ।।

विद्याधरी को देखकर राजा वडा ही हर्पित होता है और इस प्रकार प्रसन्न होता है जैसे चद्रमा को देखकर चकोर

अति आणदइ मिल्यो नरिंद जाणे चकोर देखि जिम चद
तेडाई तिहा सुर सुन्दरी च्योरे वैठा आणद धरी ।। 235 ।।

भीमसेन का वियोग

भीमसेन मदनमजरी से विवाह के वाद लौट रहा होता है कि मार्ग मे उसे समरसेन से युद्ध करना पडता है। युद्ध मे विजय प्राप्त कर वह रथ के पास आता है और रानी को न देख भीमसेन का हृदय विरह से व्याकुल हो जाता है और राजा देव को इसके लिये दोपी ठहराता है।[1] भीमसेन सोचता है कि रानी या तो समरसेन के हाथ पड गई है अथवा उसने आत्म हत्या कर ली है

विरहण सही समर हाथिइ चडी, अथवा उपघात
वन माहइ वनिता नही थई विरुई वात ।। 204 ।।

भीमसेन शकुन के ज्ञाता अमगसेन से भी रानी के वारे मे पूछता है।[2] भीमसेन प्रतिज्ञा करता है कि यदि रानी नही मिली तो वह अग्नि मे जलकर मर जायेगा।

भीम महीपति इम भणइ न मिलइ जो नारि
तउ हू पावकं तनु दहू न रहू ससार ।। 207 ।।

प्रेमी प्रियतमा के विना ससार मे रहना ही निरर्थक समझता है। अपनी प्रिय रानी के वियोग मे भीमसेन घने वनो मे घूमता फिरता है तथा पर्वतो एव गुफाओ से मदनमजरी के वारे मे पूछता है।[3] विरह अवस्था मे उसे ये सभी अपने सहायक प्रतीत होते है। मदनमजरी के मिल जाने पर भीमसेन को उसी प्रकार अपार हर्ष होता है जिस प्रकार जगल मे प्यासे व्यक्ति को जल से परिपूर्ण तालाव देखकर होता है।[4]

तेजसार तथा भीमसेन के विरह मे वैसी तीव्रता नही है जैसी माधव और ढोला के विरह मे दिखाई देती है। ढोला मारवणी चौपई तथा माधवानल मे जहाँ प्रेम कथा है वहाँ तेजसार रास तथा भीमसेन चौपई मे प्रेम के कुछ उद्धरणो के साथ कथा मे धर्म की व्यापकता है। अत. लगता है कवि ने जानवूझ कर ही इन कथाओ

1 दोहा सख्या 202
2 शकुन प्रमाण इहू कही मनिम धरि सन्देह
आज यकी दिन मात मइ मिलसइ स्त्री तेह ।। 206 ।।
3 भामा काजि अटवी भमइ वन घन विस्तार
गिरि किंदर सोधइ घणा पूछइ परिवार ।। 211 ।।
4. दोहा सख्या 232, 233

यदि ईर्ष्या आदि हो तो वह विप्रलम्भ शृंगार ही माना जायेगा।" इनके अनुसार सयोग इस मानसिक ज्ञान किंवा चित्तवृत्ति का पर्याय है कि "मैं मिला हुआ हूँ" और वियोग यह ज्ञान है कि "मैं बिछड़ा हुआ हूँ" अतएव स्त्री पुरुष के सयोग के समय प्रेम रहे तो वह सयोग अथवा समोग शृंगार कहलायेगा।"[1]

सयोग शृंगार के अन्तर्गत रूपवर्णन अर्थात् नख-शिख एव आभूषण वर्णन, हावभाव चित्रण अष्टयाम, उपवन उद्यान, जलाशय आदि के क्रीडा-विलास परिहास विनोद इसके अन्तर्गत आते हैं। इसका स्थायी भाव रति है। इसमे समस्त सात्विक भावो का समावेश रहता है। धर्मार्थ काम, मोक्ष तथा आलम्बन आदि के द्वारा यह शृंगार निरन्तर बढता रहता है।[2]

संयोग शृंगार के भेद

आचार्य मम्मट ने सयोग के अनेक भेदो की क्लिष्टता से बचते हुए उसे एक ही माना है।[3]

आचार्य रुद्रट ने सयोग शृंगार के दो रूप माने हैं प्रच्छन्न तथा प्रकाश।[4] अग्नि पुराण मे भी यही दो भेद बताये गये हैं "प्रच्छन्नय प्रकाशश्च तावपि द्विविधो पुन।"[5]

कुशललाभ के साहित्य मे सयोग पक्ष का चित्रण निम्नलिखित रूपो मे मिलता है

1 मालवणी ढोला सयोग
2 मारवणी ढोला सयोग
3 मारवणी, मालवणी ढोला सयोग
4, कामकदला माधव सयोग
5 तेजसार तथा उसकी आठ रानियो का सयोग
6. मदनमजरी भीमसेन सयोग
7 रूपमती राजहस सयोग

सयोग से वियोग को अधिक विस्तार और तीव्रता मिलती है। वियोग की अपेक्षा सयोग वर्णन अल्प होता है फिर भी इसका महत्व किसी भी तरह कम नही कहा जा सकता है।

1 हिन्दी साहित्य कोष भाग 1 पृष्ठ 861
2. अग्निपुराण-षष्ठ अध्याय श्लोक 7-8
3 काव्य प्रकाश—"तत्र शृंगारस्य द्वौ भेदौ समोगो विप्रलम्भश्च। तत्राद्य परस्परावलोकन आलिंगन, अधरपान, परिचुम्बनाद्यानेद भेदत्वाद परिच्छेद्य इत्येक एक गण्यते।"
4. काव्यालकार, अध्याय 12, श्लोक 6
5. अग्नि पुराण षष्ठ अध्याय श्लोक 4

मालवणी ढोला संयोग

ढोला अपनी प्रथम विवाहिता पत्नी से अनभिज्ञ मालवणी से विवाह कर आनन्द उपभोग करते हुए जीवन व्यतीत करता है। मालवणी अप्सरा के समान सुन्दर है और ढोला की उससे अपार प्रीति है।[1] मालवणी ही नही ढोला भी अनुपम राजकुमार है

रूपइ रूडउ ते राजान कुमर न कोई साल्ह समान ॥ 212 ॥

ढोला व मालवणी मे अपार प्रीति है[2] सेज पर ढोला व मालवणी दोनो साथ बैठे प्रेम की बातें करते हैं।[3]

मालवणी का सयोग ढोला की मारवणी मे मिलनातुरता को लक्ष्य कर मानो विरह का रूप धारण कर लेता है। मालवणी और ढोला के सयोग मे वियोग की आशका ही उनके सम्पूर्ण सयोग को आवृत्त किये हुए है और मालवणी तर्काश्रित होकर ढोला को मारवणी से मिलनार्थ प्रस्थान करने मे बाधक होकर सयोग का उपभोग करती है। अत मालवणी और ढोला के सयोग मे शृगार की उन्मुक्तता नही मिलती है।

मालवणी ढोला से मिलने के लिए शृगार करके आती है, परन्तु ढोला को उदास देखकर खवास को ढोला की उदासी का कारण पूछती है ?[4] खवास से मारवणी की बात जान लेने पर भी मालवणी ढोला के पास आती है और हसते हुए पूछती है कि हे प्रिय, आज चितित क्यो दिखाई दे रहे हो ?[5] दोनो के सवादो मे सयोग के अनेक चित्रण मिलते हैं परन्तु उनमे सयोग की उन्मुक्त गहराई नही है।

मारवणी ढोला संयोग

ढोला के पूगल के मार्ग पर आने पर मारवणी को रात्रि मे ढोला स्वप्न मे दिखाई देता है[6] जो आगत सयोग का सूचक है। मारू की मिलन अभिलाषा इन दोहो मे फूटी पडती है—

1 तेहनइ धरि मालवणी नारि अपछर तणी जाणि अणुहारि
ढोलरइ तिणस्युंवहु प्रीति चतुराई लगी लागि चीत ॥ 211 ॥
2 इणि प्रस्तावे साल्ह कुमार मालवणी सुं प्रीति अपार
वे पहरे उन्हाला तणे पौढ्यउ छे मन्दिर आपणे ॥ 254 ॥
3. सुपसेजइ मालवणि सवाति बैठो करि प्रीति सुख वात ॥ 255 ॥
4 दीठउ प्रीतम चित्ति उदासि मालवणी पूछियौ पवासि ॥ 324
5 कही पवासे सगली वात मालवणी आवी प्रिय पासि
हामा किसी पूछइ विरतत काँइ सचीता दीसउ कंत ॥ 329 ॥
6 जिणि दिन ढोलउ वाटइ वहइ तिणि दिन मारू सखिउ लहइ
मिलियो प्रीतम नीद्र मझारि माता आगलि कहइ विचार ॥ 483 ॥

मे विरह और सयोग के प्रसगो को बचाकर कथा लिखी है। यह कवि की चातुरी एव कला कुशलता का ही परिचायक है।

मदनमंजरी का विरह

मदनमंजरी का वियोग पूर्व राग विप्रलभ है। सन्यासी एव कीर से भीमसेन के बारे मे बताई गई बातो को सत्य मान कर वह भीमसेन को वर मान लेती है।[1] वह इसकी प्रतिज्ञा भी करती है

> भीमसेन राजा वर वरू अथवा अगिनि दाहा अणुसरू
> पखी वचने लागी प्रीति चद्र चकोरी रातो चीत ॥ 85 ॥

अपना विवाह राजा सगर से होना सुनकर मदनमजरी दुखी होती है और अहनिशि रोती रहती है। वह शुक से मित्रवत सहायता करने को कहती है।[2]

मदनमजरी वर दाता देवी के मन्दिर मे जाकर हाथ जोड यही प्रार्थना करती है

> कर जोडी देवी नइ कहइ, भीमसेन मेलवउ जीवित रहइ
> एन न पूजइ माहरी आस, तउ तुझ आगइ घालू गल पास ॥ 104 ॥

आत्म हत्या की धमकी देना उसके विरह की तीव्रता को प्रदर्शित करता है।

राजा सगर की बारात आई जानकर, धात्री से अपने विवाह के बारे मे सुनकर वह विरहिणी मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर गिर जाती है।[3]

धात्री पहरेदार के रूप मे उसके कक्ष के बाहर बैठी है। उसे निद्रा आ जाती है परन्तु विरहिणी की आँखो मे नीद कहाँ? अत वह विरह दग्ध चुपचाप महल से निकल कर देवी के मन्दिर मे जाती है और देवी को उपालम्भ देती हुई कहती है कि तुम्हे मेरी भक्ति पसन्द नही आई और तुमने प्रिय से मेरा मिलन नही कराया अत मैं तुम्हारे सामने ही फॉसी लगाऊगी और यह कहकर उसी क्षण वृक्ष पर चढ कर वेणी बध लगाकर फांसी लगा लेती है।[4] परन्तु भीमसेन उचित समय पर पहुँच कर उसे बचा लेता है। मार्ग मे राजा सगर और भीमसेन मे युद्ध होता है। मदनमजरी भयभीत होती है कि सगर राजा उसका अपहरण करेगा। अत वह रथ

1 दोहा संख्या 84
2. (क) कुमरी दिन प्रति रोदन करइ आवी सुक आगलि ऊचरइ ॥ 100 ॥
(ख) सम्भलि परम मित्र सुकराज
क्रिया करी नइ सारउ काज ॥ 101 ॥
3 तेह वचन कुमरी सभाली मूर्छा आवी धरणी ढली ॥ 153 ॥
4 प्री मेलावा न पूरी आस हिए हूँ घालू छुँ गलि फासि
कही एम तरू साखइचढी वेणी बंध छोडइ चडवडी ॥ 169 ॥

से उतर कर वन मार्ग से चल देती है ।[1] यह उसके पतिव्रता होने एव एकनिष्ठ प्रेमिका होने का परिचायक है ।

मदनमजरी अनहोने विछोह से बहुत दुःखी है ।[2] इसके लिये वह अपने प्राणो को धिक्कारती हुई कहती है कि जब मैं पति विहीना हुई उस समय हृदय फट क्यो नही गया ?

> है है मुझ ही आह, पति हीणा पोचउ थयो
> वालम वीछडताह फटि पापी फाटउ नही ।। 215 ।।

विछोह का कारण वह अपने पूर्वजन्म मे किये गये पापो का फल मानती है और कहती है —

> पइलइ भवि मइ पाप घणी परइ कीधा घणा
> तिण कारणी सताप अणचीतउ आवी पडउ ।। 218 ।।

तृष्णा से व्याकुल तथा विरह से दुःखी विरहिणी मन मे मरने का विचार करती है[3] और विष-फल खा लेती है ।[4] विष खा लेने से वह सुन्दरी अचेत हो जाती है और अमगसेन के यह कहने पर कि 'कुमारी तेरा कंत कुशल है अपने मन की सब चिता छोड दे'[5] उस विरहिणी को चेत हो आता है ।[6]

इस प्रकार कवि विरहिणी की मानसिक दशा का सजीव चित्रण करने मे सफल हुआ है ।

संयोग शृंगार

सयोग मे आश्रय आलम्बन का मिलन रहता है, अतएव वह सुखात्मक है । "जहाँ पर अनुकूल विलासी एक दूसरे के दर्शन स्पर्श इत्यादि का सेवन करते है वह आनन्द से युक्त सम्भोग शृगार कहलाता है ।"[7] कुछ विद्वान सयोग शृगार और सभोग शृगार को अलग अलग मानते हैं वस्तुत ये दोनो शब्द समानार्थी हैं । पडितराज जगन्नाथ ने इस तथ्य को स्पष्ट करते हुये लिखा है "सयोग का अर्थ स्त्री पुरुष का एक स्थान पर रहना नही है क्योकि एक पलग पर सोते रहने पर भी

1. दोहा संख्या 200
2. मदनमजरी मनि दुख रहइ आणइ मनि अदोह
   अण चितउ आवी पडउ वालम तणउ विछोह ।। 214 ।।
3, जाम एक वउलउ जिसइ त्रिषा वियापी तन्न
   दुख मांहइ दुख देव वसि मरण विमासइ मन्न ।। 220 ।।
4 तापसणी वहती जब गई रांणी तरवर अन्तर रही
   विषफल भष्यण वेगइ करई ते पेषी तपसो पो करइ ।। 226 ।।
5 कुमरि कुसल ताहरउ कत, मननी सगली मूकउ चींत ।। 230 ।।
6 हूं तेडण आव्यो तुम्ह भणी वल्यो चेत जब वाणी सुणी ।। 231 ।।
7 हिन्दी साहित्य कोष भाग 1 पृष्ठ 861

धर नीगुल दीवउ सजल छाजइ पुणगी न माइ
मारू सूती नीद भरि साल्हि जगाई आइ ॥ 484 ॥
सारति सह्रिह भूपउ मांस पश्चाखियाँ
अडियो अत्रारेह, जाणै ढोलउ आवियो ॥ 485 ॥
सुरहि सुगधी वाट जाणे किर मोती जड्या
सूती माझिम रात्रि जाणं ढोलो आवियो ॥ 486 ॥

मारू कहती है कि जैसे स्वप्न मे पाया वैसे प्रत्यक्ष मे पाऊँ तो प्रिय को मोतियो के हार की भांति कठ मे धारण करूँ ।[1]

अगो का फडकना होने वाली सयोगावस्था का सूचक है

डावउ नेत्र फस्तयउ तिसइ सहियर आगइ कहिनइ हसइ
मनि सतोष चीतिउन्हसड, आज सखी प्रिय मेलउ हुस्यइ ॥491 ॥

मारवणी सखियो के साथ कुएँ पर जाती हैं, वहाँ उनका सशय भी दूर हो जाता है । मारू को ढोला कुएँ पर ही मिलता है और मारू लज्जा सकोच से घूंघट निकाल कर सखियो के साथ चली जाती है ।[2] राजा पिगल को जब सेवक ढोला के आगमन की सूचना देता है तो राजा और प्रजा सभी हर्षित होते हैं तथा शुभ सूचना देने वाले को पुरस्कार के रूप मे घोडा देते हैं तथा बहुत ही उत्साह और उमग के साथ राजा पिगल ढोला की अगवानी करने के लिए जाते हैं ।[3]

मारवणी जिनकी वाट जोह रही थी, वही प्रियतम अब आ गये हैं उस प्रियतम को नेत्रो से देखकर तो मन आनन्दित हो गया ।[4]

ढोला जब चिर प्रतीक्षा के बाद आया तो सखियो ने मारवणी के तन का शृगार किया उसके शरीर से अगर चन्दन की खुशबू महक रही थी और हाथ मे बीडा शोभा पा रहा था

तनि सिगाइ मारुई सिगारयउ सहू साथ
अगइ चदन मह महइ वीडउ सोहइ हाथि ॥ 519 ॥

सखियो ने उवटन स्नान आदि अनेक प्रकार से प्रिय से मिलनार्थ मारवणी के तनरूपी मडप को सजाया है

1. जिम सुपनतर पमियउ तिम परतख पामेसि
सज्जन मोती हार ज्यूँ कठा ग्रहण करेमि ॥ 488 ॥
2. कूवा कठइ सहु परिवार सगलौ मनि आणद अपार
मारुवणी तिहाँ घूघट करी, सहियर झूल माहि संचरी ॥ 510 ॥
3 राजा प्रजा सहू हरपिया हयवर एक वधाई दिया
साम्हो चढयाउ घणइ मडाणि ढोला मिलण तणइ परियाण ॥ 512 ॥
4. ते साजण पवधारिया जे जोवंती वाट
ते साजण नयणे देखिया मनि हुओ उच्छाह ॥ 518 ॥

सखिये ऊगट माँजिणउ खिजमति करइ अनन्त
मारू तन मडप रच्यउ मिलण सुहावा कत ॥ 517 ॥

सखियाँ मारवणी को प्रिय के पास छोडकर चली गई । प्रथम मिलन मे ही दोनो एक दूसरे पर मुग्ध हो गये । मारवणी हंसी तो ढोला चौक गया कि यह बिजली चमकी या दांत ।[1]

ढोला मारवणी का सयोग अपने ढग का अनूठा है । ढोला मारवणी प्रात काल के समय पलग पर बैठे हैं । मारवणी की सुन्दर देह देखकर ढोला को मारू द्वारा प्रेषित दूहा याद आ जाता है कि मारवणी तुम्हारे वियोग मे कनेर की छडी जैसी पतली हो गई है ।[2] अत वह विनोद ही विनोद मे मारवणी से पूछ बैठता है कि हे सुन्दरी वे सुरगे कैसे रह सकते है जिन्हे अपार दुख प्राप्त हुआ हो, तुम्हारी काया कनक के समान चमक रही है वह किस सुख के कारण ?[3] मारवणी समझ जाती है कि प्रिय के मन मे शका है[4] अत वह हँसती हुई उत्तर देती है

पहुर हुव उज पधारिया मो चाहती चित्त
डेडरिया खिणमइ हुवइ घँण वूठइ सरजित ॥ 341 ॥

आपको पधारे हुये और आपको चित्त मे चाहते हुए मुझे एक पहर हो गया है मेढक तो वर्षा के बरसते ही एक क्षण मे सजीवित हो जाते हैं । कमल जिस प्रकार सूर्य को अस्त होते देखकर दयनीय दशा को प्राप्त होता है वही कमल सूर्य के उदय होते ही क्षण भर मे विकसित हो जाता है ।[5] मारवणी का चतुराई से पूर्ण वचन सुनकर ढोला के मन मे आनन्द होता है ।

शील की सीमा मे बँधे सयोग चित्रण काव्य मे स्वाभाविकता का सचार करते हैं । कवि को जहाँ सभोग स्थितियो के चित्रण की आवश्यकता पडी है वहाँ उसने प्रतीकात्मकता का सहारा लिया है जैसे

1 सखी बउलावी घरि गई, प्रिय मिलियो एकति
हसताँ ढोलउ चमकियो वीजुलि पिवइ जु दत ॥ 520 ॥
2 कणयर कर्व जिसी पातली प्रिय वियोग घीणी पातली
दीसइ छइ अति सुन्दर देह, ढोलानइ मनि पड्यउ सदेह ॥ 536 ॥
3 काया झबकइ कनक जिम सुन्दर केहे सुक्ख
तेह सुरगा जिम हुवइँ जिण वेहा वह दुक्ख ॥ 539 ॥
4 मनि सकाणी मारुवी थुणसउ राउइ कत
हसताँ पीसूँ वीनवइ साँभजि प्री, विरतत ॥ 540 ॥
5 पहिली होय दयामणयउ रवि आथमणउ ,जाइ
रवि ऊगउ विहसइ कँमल खिण इक विमणउ थाइ ॥ 542 ॥

मन मिलिया तन गडीया मनि मझै मीलीन्याह
सज्जन पाणी पीर जीम धीरे धीरे थयाह ॥ 578 ॥

ढोला मारू एकठा, करे कतुहल केलि
जाणे चदन रूखडें चढीत नागर वेल ॥ 580 ॥

इस तरह अश्लीलता का अभाव इन सयोग वर्णनो मे है। निष्कर्षत ढोला मारवणी का सयोग वर्णन सयत तथा मर्यादित है। सम्पादक त्रय ने ढोला के हृदय में मारवणी के प्रति पूर्वराग की तुलना रत्नसेन से करते हुए लिखा हैं "ढोला के मालवणी के प्रति पूर्वराग को हम रत्नसेन की तरह केवल रूपलोभ नही कह सकते। उसमे कर्तव्य बुद्धि द्वारा प्रेरित प्रिय मिलनोत्साह सम्मिलित है। अतएव हम उसे ढोला के मन की वह उदात्त भावना कहेगे जिसमे मर्यादा-पालन, धर्म-रक्षा और समाज के विशिष्ट सस्कार-जन्य वैवाहिक प्रतिज्ञा का पालन मिश्रित है।"[1]

ढोला का मारवणी के प्रति प्रेम कर्तव्य सम्मत है, इसमे सदेह नही, परन्तु वह रूप मोह से रहित था यह नही माना जा सकता है। यदि रूप का लोभ ढोला को नही होता तो वह चारण की बात कि मारू की किशोरावस्था वीत गई है, सुनकर विचलित नही होता। कर्तव्य प्रेरित प्रेम मे वय यौवन का विचार महत्त्वपूर्ण नही है ?

मारवणी और मालवणी ढोला संयोग

पूगल से लौट कर आने के वाद नरवर मे मारवणी, मालवणी और ढोला का सयोग कवि ने चित्रित किया है। इस सयोग मे पारिवारिक हास परिहास के द्वारा ही सयोग की स्थिति स्पष्ट की गई है। मारवणी और मालवणी दोनो ढोला के पास वैठी अपने-अपने पीहर का वखान कर रही है।[2] मालवणी मारू देश की वुराई करके प्रिय को अपनी ओर आकर्षित करती है। मालवणी के शब्दो मे पानी के लिए प्रियतम आधी रात को छोडकर चले जाते है[3] और कु कुम वर्ण सुन्दर हाथ जहाँ पानी नही निकाल पाते[4] ऐसे प्रदेश मे व्याहने से तो मालवणी आजीवन कुमारी रहना ही पसन्द करती है। वह कहती है, "पानी ढोते-ढोते मरने से तो कुआँरा रहना अच्छा है।[5] जिस भूमि पर पीने साँप हैं[6] और भेड एव वकरी का ही दूध

1 ढोला मारू रा दूहा —सम्पादकत्रय प्रस्तावना पृष्ठ 73
2 मारवणी मालवणी विन्हइ वेवइ वइठी ढोला कन्हइ
मन मोहइ अधिकेरो भाण पीहतरणा करइ वपाण ॥ 676 ॥
3 दोहा संख्या 684
4 कूं कूं वरणा हथ्यडा नही सु धाडा जेंण ॥ 683 ॥
5 दोहा सख्या 681
6 जिण भुइ पन्नग पीयणा कयर कंटाला रूंख
आके फोग छांहडी छाँ भांजइ भूख ॥ 658 ॥

मिलता है[1] वहाँ विवाह करने से लाभ ही क्या ? प्रत्युत्तर में मारवणी मालव देश की निन्दा नही करती अपितु ढोला ही उसका उत्तर देता है

मारू देश उपन्नियाँ सरज्यउँ पध्य रियाह
कडवा कदे न बोल ही मीठा बोलणियाह ।। 691 ।।

यही नही वहाँ की नारियो के दात उज्जवल गौर वर्ण तथा नेत्र खंजन पक्षी जैसे होते हैं ।[2] ढोला मारवणी का पक्ष लेकर उसका मन हर्षित करता हुआ कहता है

सुणि सुदरि केता कहाँ, मारू देस बखाण
मारवणी मिलियाँ पछइ जाण्यउ जनम प्रवाँण ।। 693 ।।

अन्तत दोनो का झगडा मिट जाता है ।[3] ढोला का मारवणी के प्रति यह प्रेम मनोवैज्ञानिक आकर्षण और प्रेम की अनन्यता का प्रतीक बन कर आया है ।

कामकंदला माधव संयोग

कदला के रूप वर्णन मे कवि ने परम्परागत उपमानो का ही सहारा लिया है जैसे चपक वर्ण, अधर प्रवाल के समान लाल और चाल हंस के समान, नाक दीपशिखा के समान तथा नेत्र भयभीत मृगी के नेत्रो के समान चचल हैं ।[4]

इस नख-शिख चित्रण मे रूप के वस्तु परक पक्ष का उद्घाटन हुआ है, भाव परक रूप का नही । सादृश्य और साधर्म उपमानो के द्वारा वस्तु का चित्र तो उपस्थित किया है, किन्तु नायिका की उमडती हुई भावना की अभिव्यक्ति इसमे नही हुई है ।

माधव और कदला का सयोग विवाह के बाद ही होता है । कंदला माधव

1. दोहा संख्या 659
2. ,, ,, 690
3 झगडउ नागउ गोरियाँ ढोलइ पूरी सझ्ख
मारू रूलिया इत हुई पाँमी प्रीय परख्ख ।। 694 ।।
4 चंपक वर्ण सुकोमल अंग मस्तकि वेणी जाणि भुयग
अधररंग परवाली वेलि, गयवर हंस हरावइ गेलि ।। 194 ।।
नाक जिसी दीवानी सिखि वाहि रतन जडित बहिर खाँ ।। 195 ।।
मुख जाणि पूनिमनु चन्द अधर वचन अमृत मयं बिंद ।। 196 ।।
पीन पयोधर कठिन उत्तंग लोचन जाणि त्रस्त कुरग
भालि तिलक सिरि वेणी दण्ड भमह वक मनमथ को दण्ड ।। 197 ।।
कोमल सरल तरल अंगुली दत जिस्या दाडिमनी कुली ।। 198 ।।
केसरिसिंह जिस्यु कटिलक रतन जडित कठि मेखल लक
जघ जुयल करि कदली थभ अभिनव रूपिइ रमणी रभ ।। 199 ।।

को अपने आवास मे ले जाती है, जहाँ माधव कदला को चुम्बन एव आलिगन करता है।[1]

कामकदला आगत यौवना है। कवि ने नायिका के यौवनागम का चित्र इस प्रकार प्रस्तुत किया है

जोवन आवी रग समानि, मोठा वणिग पुत्र राजान
भोग काजि तसु पासइ भमइ कामकदला मनि नवि गमइ ॥167॥

नायिका के उरोज पीन कठिन एव उत्तग है।[2] जघाये कदली थभ तथा कटि सिंह के समान है।[3]

कदला और माधव की प्रेम चेष्टाओ के जो चित्र अकित किये गये हैं उनमे मानसिक एव शारीरिक सुख का प्रगाढ रग है। मन और शरीर दोनो तन्मय होकर उत्सव मनाते हैं। अपने प्रियतम के मिलने पर उनका वार्तालाप बहुत ही रम्य एव सहज है

चढि चढि नाहनि स ग चढि भुजा देहि पसार
अहि चम्पा किम तुट्टहि ' तुम भमरा के भार ॥ 247 ॥

भ्रमर के भार से चम्पा का टूटना कितना सूक्ष्म एव मनोवैज्ञानिक चित्रण है। माधव के मिलने पर कदला के निर्विकार मन मे रति स्फुरण के भाव जागृत होते है। कदला प्रेम के वशीभूत होकर अग मोडती है, वस्त्रो के वध उसे भुजग के समान लग रहे हैं, बार-बार जमाई लेती है तथा उसके नेत्रो मे क्षणिक विरह के कारण जल भरा हुआ है। वह अपने नेत्र रूपी बाणो से नायक को वेध रही है तथा अपनी कोमल बाँहे माधव के गले मे डाल रही है जिससे काम जागृत हो जाये।

प्रेम प्रकासइ मोडइ अंग कसणा भजइ जाण भुयग
आलस अगि जमाई करइ, विरह विथा जल लोचन भरइ ॥250॥
नयण बाण सा वेधइ बाल घालइ कठि बहि सुकुमाल
करि सिउ खचइ कुसुमा माल प्रेम जागइ ततकाल ॥ 251 ॥

प्रेम लुब्धा नायिका के मनोभावो का कितना मनोवैज्ञानिक एव सरस चित्रण इन पक्तियो मे हुआ है। जहाँ अगज चेष्टायें भी दृष्टिगत होती हैं।

सुरति क्रिया का वर्णन कुशललाभ ने अलकारिक शैली मे साकेतिक ढग से किया है, जिसमे अश्लीलता नही है। जिस प्रकार कमल मे भ्रमर तथा गगा सागर

1 सुख सेजि माधव सचरइ चुम्बन दिइ आलिगन करइ
प्रेम देखाडइ कत मन हरइ, कामकदला ईम अचरइ ॥ 248 ॥
2 पीन पयोधर कठिन उत्तग लोचन जाणि त्रस्त कुरग ॥ 197 ॥
3 दोहा सख्या ॥ 199 ॥

मे वेलि एक रूप हो जाते है उसी प्रकार माधव और कदला केलि करते हुए एक हो गये है ।[1]

कुशललाभ ने माधवानल कामकदला मे भोग विलास का वर्णन नही के बराबर किया है । सकेत मे यह कह कर कि माधव कामकदला के विषय रस में डूबा हुआ प्रसन्न है । उनके सुख को या तो ईश्वर ही जानता है या वे दोनो ही जान सकते हैं

कामकंदला विषय रस माधव विलसइ जेह
ते सुख जाणइ ईसवरइ किण वलि जाणइ तेह ॥253 ॥

रति वर्णन के उपरान्त शेष रात्रि के लिए नायक नायिका के मध्य हास्य विनोद, प्रहेलिका आयोजन आदि करवाना भी सयोग शृंगार का एक प्रमुख अग रहा है । इन वर्णनो मे नायिका ही अधिक मुखर होती है । नायिका ही नायक को हास्य विनोद के लिए छेडती है ।[2] हास्य विनोद राजस्थानी कथा काव्यो की अपनी मौलिकता है । इन प्रश्न-उत्तरो मे हमे नायिकाओ का बुद्धि चातुर्य वाग-वैदग्ध्य देखने को मिलता है ।

कवि ने कदला का समर्थन यह दोहा कह कर करवाया है

गीत विनोद विलास रस पडित दीह लीहंति
कइ निद्रा कइ कलह करि, मूरख दीह गमति ॥ 263 ॥

विद्वान मनुष्यो के दिन गीत, विनोद रस मे ही व्यतीत होते हैं और मूर्ख लोग निद्रा अथवा कलह मे अपने दिन व्यतीत करते हैं ।

कदला के आग्रह पर माधव कदला से कई पहेलियाँ पूछता है जैसे—प्रियतम के वियोग मे कृश शरीर वाली नायिका ने रात भर विरह व्यथा से व्याप्त होकर वीणा बजाई, फिर चन्द्रमा को देखकर किस कारण उसने वीणा को रख दिया ।

सुन्दरि । मन्दिर अप्पणइ रयणी नाद सुलीण
वीण अलापी देखि ससि, किण गुणि मूकी वीण ? ॥ 283 ॥

इस गूढ पहेली का उत्तर देती हुई कामकंदला कहती है

विरह वियापी रयणि भरि प्रीतम विण तनु खीण
सस हरथि मृग मोहिउ तिणि हसि मूकी वीण ॥ 284 ॥

अर्थात् प्रियतम के वियोग मे कृश काय नायिका ने रात भर विरह व्यथा

1. जिम मधुकर नई कमलणि गगासागर वेलि
तिणि परिमाधव रमें काम कुतूहल केलि ॥ 252 ॥

2 कामकंदला हम कहइ अजी अछइ बहु राति
गाहा गूढा भीयरस कहइ को कवलि वाति ॥ 260 ॥

से व्याप्त हो वीणा वजाई और उस नाद को सुनकर चन्द्रमा और उसके रथ के मृग मोहित हो गये इससे हस कर विरहिणी ने वीणा रख दी ताकि रात्रि व्यतीत हो जाये ।

माधव दूसरा प्रश्न पूछता है

तरुणी ! पुणो विगहिउ परियच्छ आभि तरेण प्रीयदिठ्ठे
कारण कवण आयोणा दीप को घूणइ सीसम् ? ॥ 245 ॥

अर्थात् तरुणी द्वारा हाथ मे लिये हुए दीपक को आँचल की ओट मे भी प्रिय ने सिर धुनते हुए देखा इसका क्या कारण है ? कामकदला इसका बड़ा ही स्वाभाविक एवं मनोवैज्ञानिक उत्तर देती है

वालमं ! दीप पवन्न भइ अचल सरण पइठ्ठ
कर हीणउ घूणइ कमल, जाण पयोहर दिठ्ठ ॥ 246 ॥

अर्थात् हे प्रिय दीपक पवन के भय से तो आंचल की शरण मे गया । किन्तु वहाँ पयोधरो को देखा और अपने को कर विहीन देख कर सिर धुनने लगा ।

तेजसार तथा उसकी आठ रानियो का संयोग

तेजसार अपनी पाँचो रानियो के साथ वन में अकेला ही रहता है ।[1] तेजसार बैठा हुआ अपनी पाँचो रानियो से बात करता हुआ दिखाई देता है उसके हवा भाव एवं आलिगन को कवि ने वहुत ही सक्षिप्त मे साकेतिक कथन से वर्णित किया है ।[2] रानी विद्याधरी अन्य रानियो से कहती है प्रियतम मुझसे स्नेह से मिला और तुम सबका वृतात पूछा, सुख के साथ बैठकर वाते करते करते प्रभात हो गयी ।[3] तेजसार ऐश्वर्यवान राजा है उसके सात मन्दिर (महल) स्वर्ण और धन-धान्य से परिपूर्ण हैं । उनमे उसने सातो रानियो को रखा, सभी के साथ तेजसार की सच्ची प्रीति है परन्तु पटरानी विद्याधरी को ही वनाया है ।[4] उस समय पटरानी का महत्व अधिक होता था और विद्याधरी ने तो उससे विवाह ही पटरानी वनने की शर्त पर किया था ।[5]

तेजसार अपनी सातो रानियो के साथ नित्य नवीन देवलोक के समान सुख

1 अटवी माहे एकलो वनिता षणं विनियोग
पुण्य प्रमाणेपामीयो कामिनी पचे भोग ॥ 155 ॥
2 हवा भाव आलिगन दीय, ते दखी अति कोप्यो हीए ॥ 57 ॥
3 अति सनेह मिलीयो मुझ कंत पूछे धरि सयलो विरतत
सुखि वैठो प्रीतम संघाति वात करतॉं थयो प्रभाति ॥ 243 ॥
4 मन्दिर सात कनक धन भरी, राखी सोतें अतेउरी
सगली साथि प्रीति मनधरो पणि पटराणी विद्याधरी ॥ 241 ॥
5 दोहा संख्या ॥ 51 ॥

भोग करता हुआ राज्य का पालन करता है ।[1] आठवी रानी एणामुखी से विवाह करने के बाद तेजसार अपनी पूर्व परिणीता सातो रानियो को भी वही बुला लेता है । परन्तु प्रिय के लिये सभी समान हैं ।[2] पिता से मिलने जाते समय भी वह अपनी रानियो को साथ ही लेकर जाता है

सार्थं सगली अतेउरी सपरिवारि लषमी परिवारी ॥ 348 ॥

"तेजसार रास" प्रेम कथा काव्य नही है । अतः कवि ने सयोग वर्णन नही के बराबर किया है ।

मदनमंजरी और भीमसेन सयोग

भीमसेन एव मदनमजरी के सयोग का कवि ने सकेत मात्र किया है

एक दिवसि राजा आवासि पटराणी पणि पउढी पासि
सूता मध्य रात्रि नइ समइ मवन पाछली पखी भमइ ॥ 246 ॥

मदन मजरी का रूप सौन्दर्य भी अनुपम है । भीमसेन सन्यासी से उसके रूप के बारे मे पूछते हैं तब सन्यासी बताता है

सन्यासी बोलइ सुणि राय, सत्य वचन सुण्यो सद्भावइ
सुदरि सह जगतइ सुकमाल, मान सरोवर-हस मराल ॥ 132 ॥
लघु केसरि जेहवीकाडीलक मलिनरिहत मुख जाणि मयक
उपई कुदण जिम तसुअग चपल तुरगम चण्ण अति चग ॥ 133 ॥
रमा गर्म जिसी जुग जघ उदित विल्व सम उरज उतग
अधर पर्वव विवाफल अणुहारि कीर पूतली चित्र आकार ॥ 134 ॥
अवला उन छई रूप असम्मँ कोमल वाणी अमृत कुम्भ
सिरजउ जउ थायउ सायोग, सफल जनम सुखर सम भोग ॥ 133 ॥

उस रूपसी बाला को प्राप्त करने वाला देवताओं के समान भोग भोगेगा । कवि ने भीमसेन तथा मदन मजरी का सायोग वर्णन बहुत ही मर्यादित ढग से सक्षेप मे किया है । भीमसेन राजा रात दिन नारी प्रेम मे डूबा रहता है जिस प्रकार कमल मे भ्रमर रमण करता है उसी प्रकार राजा भीमसेन भोग भोगता हुआ सुख से दिन व्यतीत कर रहा है ।[3]

1 हिव प्रीउ बारे नए नर्वदेव लोक समसुख भोगवे
पाले राज सुखे आपणे तिण प्रस्तावे हू वो ते सुणो ॥ 247 ॥

2 आवी साते अंतेउरी सासू प्रणमी आणंद धरी
नारी आठमी एणामुखी प्रीय नें मन सहूए सारखी ॥ 339 ॥

3. कमल जिम मधुकर रमइ श्री भीमसेन नरेन्द्र भोगी सदा रीहू सु-इ गमइ ॥ 193 ॥

रूपमती और राजहंस संयोग

विवाह के बाद राजहस ससुराल मे ही कुछ दिन रहता है नित्य नई तरह से राजहस का आदर सत्कार किया जाता है। राजहस की प्रीति भी नई है। यौवन भी नया है अत राजहस नित्य नये तरह के भोग भोगता है।[1] महल मन्दिर सुख सेज सभी उपलब्ध है वहाँ कस्तूरी एव चन्दन महकता रहता है। राजहस एव रूपमती मानो काम एव रति की जोडी है, जो रात दिन गाथा गीत विनोद रस आदि के द्वारा प्रेम प्रीति को पालते हुये एक साथ रहते हैं।[2] इस प्रकार राजहस ग्यारह सौ वर्ष तक भोग भोगता है[3] उसके दो पुत्र होते हैं।[4]

अन्य रस

इन कथा काव्यो ये शृंगार रस की प्रधानता के साथ अन्य रसो का भी चित्रण मिलता है।

वीर रस

शृंगार रस के बाद सबसे अधिक चित्रण वीर रस का ही हुआ हैं। क्योकि नायक को विवाह के पूर्व या विवाह के बाद लौटते समय युद्ध करना पड़ता है। इन कथा काव्यो मे नायक की वीरता दिखलाने मे कथाकार का यही उद्देश्य रहता है कि इससे नायक की तेजस्विता, शौर्य तथा नायिका के रक्षण की सामर्थ्य दिखलाकर नायिक का प्रेम नायक के प्रति और प्रगाढ कर सके।

वीर रस का चित्रण नायक को वीरता, आतक, निर्भीकता, साहस तथा आत्म बलिदान के रूप मे हुआ है। इन युद्ध वर्णनो मे केवल बाहरी सैन्य-वैभव या युद्ध की भीषणता का ऊपरी वर्णन नही है, अपितु युद्ध स्थल मे नायक की मनोदशा तथा द्वन्द्व का भी सुन्दर चित्रण मिलता है।

"ढोला मारवणी चोपई" तथा 'माधवानल कामकदला चउपई' कुशललाभ की शृंगार रस प्रधान रचनायें होने के कारण इनमे वीर रस की विस्तृत अभिव्यक्ति

1. रहइ कुमर पूरी मन पति निति नवली भगति करति
   नयी प्रीति वलि जोवन नवइ चौवो भोगी कुमर सौख्य भोगवइ ।। 538 ।।
2. महल मन्दिर कुसम सुष सेज मृगमद चन्दन महमहइ
   देव दूष्य वर वस्त्र दीपइ सापिज वाधि सुवास रस
   जाणि काम रति जोडि जीपइ गाथा गीत विनोद गुण
   अह निसी गुण अभ्यास प्रेम प्रीति प्रमदा तणइ
   कुमार रहइ इक मास ।। 540 ।।
3. दोहा संख्या 610
4. ,, ,, 611

नही मिलती । कुछ ही स्थलो पर वीर रस की सूक्ष्म भी छटा देखने को मिलती है ।

ऊमर अतावलि करइ पल्लाणियाँ पवग
खुरसाणी सूधा खयंग चढिया दल चतुरग ॥ 635 ॥
ऊमर अति ऊतावलि करे पयग सूधा पाघरइ
आपण चढियो ढोला केडि, वहताँ पडिया ऊजड वेडि ॥ 636 ॥

इसके अतिरिक्त सेना वर्णन [1] योद्धा की मनोदशा का चित्रण[2] भी ढोला मारवणी चौपाई मे हुआ है ।

इसी प्रकार 'माधवानल काम कदला चउपई' मे भी राजा विक्रमादित्य अपनी सेना सहित कामावती जाता है । सेना को नगर के बाहर ही रोक देता है ।[3] माधव भी अपनी सेना सहित पुष्पावती नगरी आता है ।[4]

'तेजसार रास' तथा 'भीमसेन राजहस चउपइ' मे वीर रस का चित्रण कई स्थानो पर देखने को मिलता है । तेजसार तथा राक्षस का युद्ध[5] तेजसार तथा पडयाणी का युद्ध[6] योगी तथा तेजसार का युद्ध[7] तेजसार का विद्याधर से युद्ध

ते कर ग्रही धायो करवाल तेजसार उठ्यो तत्काल
माहो माहि थयो सग्राम च्यार पहुर लगे तिम ठामि ॥ 161 ॥

सूरसेन तथा तेजसार का युद्ध[8] समरसेन तथा तेजसार का युद्ध वीर रस के स्पष्ट प्रमाण है । तेजसार समरसेन से युद्ध मे विजय प्राप्त करता है

1 दोहा संख्या 14, 17, 64, 123
2 (क) बीजइ दिनि चाचिग दे राइ, बइठउ मन माहि करइ उपाय
मत आवइ रिणधकर्ण हूँ जान, करिसी झूझ पिंगल राजान ॥ 78 ॥
(ख) नर घोडो पिंगल नर नाथ संबल एह रिणधवलह साथ
माहो माह झूझ मांडिस्यइ कुलिकलंक माहरइ लाविस्यइ ॥80 ॥
(ग) चाचिगदे मनि पडियो सोच सोढी साथि करइ आलोच
जउ जाणेस्यइ पिंगलराय, नीठइ कटक छाँडि किम जाय ॥ 81 ॥
3 (क) निबिड देखि माधव नउ नेह, मान्यउ दुख जोइज्जइ अेह
चतुरग कटक अेकठउ करी चालिउ विक्रम आणंद धरी ॥ 537 ॥
(ख) माघव सहित कटक सजती आव्यउ नगरी कामवती
द्रल कतर्यउ नगर गोयइ, राजा बिहु परीक्षा करइ ॥ 538 ॥
4. दोहा संख्या 633
5 ,, ,, 48, 49 तेजसार रास ह. प्र
6. ,, ,, 69 से 73 वही
7. झाली कघ भणी वाहइ करवाल
कुमर पेखे अति उछक थयउ प्राणे बांधी प्रहयउ ॥ 86 ॥
8 कुमर वींट्या मन्त्र प्रमाणि थम्भ्यंउ कटक रहयउ तिण ठामि
तेजसार ऊपारी वाल रिपु सेना भांजी ततकाल ॥ 194 ॥

तेजसार जीतो संग्राम समरसेन वाध्यो तिण ठाम
राणी कीयो मूलगो रूप समरसेन विलखो थयो भूप ॥ 328 ॥

तेजसार के सभी युद्ध विद्या बल से हुये हैं । अत इनमे नायक का शौर्य तत्व अधिक स्पष्ट नही हो पाया है ।

'भीमसेन राजहस चौपई' मे युद्ध का वर्णन इन सब कथा काव्यों से थोडा विस्तार लिये हुये है । मदन मजरी से विवाह के बाद भीमसेन अपने नगर को लौट रहे होते हैं कि मार्ग मे राजा सगर अपनी सेना सहित आ डटता है और भीमसेन को उससे युद्ध करना पड़ता है । युद्ध का वर्णन इस प्रकार है[2]

तिणठामि सगर नरेन्द्र सेना मध्य रात्रि तणइ समइ
चिहू दिस दल चतुरंग आव्या थयउ सार गमा गमइ ॥ 97 ॥
बहु कोलाहल धाडि मिला वहुपूर पंपाला सेना विदइ सहू
सहू सेन झूझइ नर अमूंझइ सबलं दल भय सम्मली
तिणवार आप चडउ तुरगम भीमसेन महाबली
एकली रथि तिहाँ रही रामाँ बीहती मुई कतरी
आधार तरुनइ मध्य पइठी फौज विहू दिसीपरहरी ॥ 198 ॥
चित्त भया कुल राणी चीतवइ रिपे सगर रिपु मुझ झालइ हिवइरे
ते रिपे साहइ बोल जायइ निरति पापइ नासती
तरु तणइ अंतरि अति भयातुर वाट नलहइ विलपती
एहवइ भीम नरेन्द्र भारथि भिडी पर दल भजीया
निजसेन जीतो सगर नाठउ राय मन महि रजीया ॥ 200 ॥

राजहस जंगल मे शेर को मार कर भी अपना शौर्य प्रदर्शित करता है ।

कुमर ते शध देषीकर हणउ बाण प्रहार रे
अश्वनइ कुमर बे ऊतरया शधनउ कीधउ सघार रे ॥ 415 ॥
कुमर पराक्रम पेषीयउ वानर वदइम वाणी रे
बुद्धि मोटी बालक पणइ धन धन जनम प्रमाण रे ॥ 416 ॥

राजहस को ढूँढता हुआ उसका पिता सेना सहित आता है उस सेना मे हाथियो और घोडो का वर्णन देखिये ।

हयवर हेषा रव सम्मेली, कपिनइ कुमर कहइ मनरली
ऊचा तरवर ऊपरि चडउ सेन कहनउदीसइ वडउ ॥ 429 ॥

1 'भीमसेन राजहंस सम्बन्ध चोपाई प्र. 1217 ला. द. प्रं. अहमदावाद

राजहंस भीमसेन के कहने से अपने साथ एक सहस्त्र सवार लेकर जाता है ।[1] विवाह के बाद लौटते समय राजहंस को ससुराल से एक सौ आठ मदमस्त हाथी ग्यारह सौ घोड़े आदि मिलते हैं ।[2]

करुण रस

करुण रस का स्थायी भाव शोक है । करुण रस का उदय कथा मे उस समय होता है जब पीना सर्प मारु को पी जाता है उस समय धात्री तथा ढोला के शब्दो मे करुण विलाप की अभिव्यक्ति देखने योग्य है

मुख जोवइ दीवा धरी, पाछउ करइ पलाह
मारु दीठी सास विण, मोटी मेल्हइ थाह ।। 572 ।।
सोहउसहु मेला किया, तिण वेला तिण वार
नर नारी सहु विलविलइ, हय हय सरजणहार ।। 573 ।।

वउलाओ प्रति ढोलउ केहइ, ए दुप जीवे नई कुण सहइ
एहुर वरत्यउ जोडउ हाथि, पइसिसि पावक मारु साथि ।। 581 ।।

'माधवानल काम कदला' मे भी करुण रस के अनेक दृश्य उपलब्ध हैं । माधव महाकाल के मन्दिर मे गाथायें लिखता है जो कारुणिक हैं ।[3] माधव का मरण सुनकर कंदला के प्राण पखेरु उड जाते हैं[4] ऐसे ही कदला का मरण सुन माधव प्राण त्याग देता है ।[5] माधव जब कदला को छोड़कर जाने लगता है तो कंदला पानी से बाहर निकाली गई मछली की तरह तड़प जाती है ।[6]

तेजसार भी रानियो से विछुड कर शोक सतप्त घूमता रहता है । देवता को कहे गये उपालम्भ मे तेजसार के हृदय की करुणा झलकती है

नवि लाभे चिंतवे कुमार किसु ए कीधुकरतार
देव नारि रतन मुझ दीउ अण चीतव्यु उदाली लीउ ।। 129 ।।

1 एक सहस्त्र ताजी असवार साथइ सबला गर्य अपार ।। 470 ।।
2 मत्तमइगल एकसउआठ तरल तुरंगम सहसइ ग्यार
वर वहिल्ल मउ रथ सुधपाण सोवन मई भाजन कलश ।। 541 ।।
3 (क) सो को वि नत्थि सुयणो, जस्स कहिज्जति हियय दुक्खाइ
आवति जति कठे पुणरवि हियए विलयाति ।। 476 ।।
(ख) नवरस विलास समय कठ गहि कण मुक्क नीसासो
सा रयणी सो दीहो सो दुक्ख सल्लए हीय ।। 483 ।।
4 कामकंदला । कीधउ काल, देखो बीलउ थयउ भूपाल
है है दैव । किसुमइ कीयउ ? हासइ फीति विकासउ हुयउ ।। 581 ।।
5 वाहरेउ मरण सुणी ततकाल कामकदला कीधउ काल
अह बात माधव सम्भली, हृदयउ हूंस गयउ नीकली ।। 585 ।।
6 दोहा संख्या 326

सुकलीणी सुन्दर सुगुण वनिता निर्मल वंस
विण पामे रे प्राणीया हूओ न छ्यो हंस ॥ 130 ॥

मदनमंजरी का प्रिय भीमसेन के न मिलने पर कामी जगाना[1] तथा विष फल खाना[2] आदि स्थलों पर करुण रस की अभिव्यक्ति हुई है। राजा भीमसेन भी रानी के न मिलने पर अग्नि में जल मरने को तत्पर हो जाते हैं।[3]

रौद्र रस

रौद्र रस का स्थायी भाव क्रोध है। ढोला मारवणी चौपई में यह दो स्थल पर देखने को मिलता है

सासू वहू प्रतइ कथरइ काई चढाई एवडी करे
जो मारवणी अगली रही, तो तुं परे बडाई लही ॥ 258 ॥
पिंगलराय तणी पद्‌मिनी, अगली रही मुझ बहू मुझ तणी
तउ तूं न्याय करइ अहंकार इम कहि माता गई ति वारि ॥ 259 ॥
ढीह गयउ डर ढवरे, नीले नीफर णेहि
काली जाया करहला, बोलयउ किसे गुणेहि ॥ 473 ॥
सउ सउ वाहि म कवडी, रांगां देह म चूरि
विहुं दीपां विचि मारुई, मो थी केती दूरि ॥ 474 ॥

प्रथम वार ढोला की माता का क्रोध मालवणी के प्रति दिखाई देता है। मालवणी को दर्पण देते समय थोडा समय लग जाता है। अत: सास का क्रोध स्वाभाविक ही है। दूसरी बार ढोला मारु से मिलनार्थ जाते समय देर हो जाने के कारण क्रोध में ऊँट को छडी से पीटता है तथा उसकी माता को भी कोसता है। रौद्र रस का तीसरा उदाहरण हमें तब देखने को मिलता है जब मालवणी निरपराध गधे को दगवाती है तो सास चंपावती के क्रोध की सीमा नहीं रहती और वह अपनी बहू मालवणी को कहती है

रे ढांढा करि छोहडी करइ करहांरी काणि
ऊकरडे डोका चुणे सो आप डंभायो आणि ॥ 393 ॥

'माधवानल काम कदला चउपई' में राजा गोविन्दचन्द कुपित होकर माधव को देश निकाले की आज्ञा देता है।[4] दूसरी बार माधव क्रोध का पात्र जब बनता है

1. दोहा संख्या 169
2. ,, ,, 327
3. भीमसहि पत्ति इम भणइ न मिलइ जो नारि
तउ हूं पावक तनु दहू न रहूं संसार ॥ 208 ॥
4 तिण्हि पानतउ बीडउ करी राजा घणुं कोप मनि धरी
माधवनइ दीधउ आदेश, तू छडिजे अम्हारउ देस ॥ 153 ॥

जब वह कंदला नर्तकी की कला से मुग्ध हो राजा द्वारा प्रदत्त आभूषण आदि नर्तकी को देता है और नर्तकी उस कला पारखी की प्रशंसा करती है। प्रशंसा को सुनकर तथा अपने से पहले दान दिये जाने पर राजा क्रोधित हो जाता है।[1] क्रोधित राजा वध के लिये खड्ग उठा लेता है परन्तु यह जान कर कि ब्राह्मण का वध शास्त्र के विरुद्ध है; वह उसे मारता नहीं।[2] क्रोध में राजा कामसेन माधव को अपना देश छोड़ने का का आदेश दे देता है

> चढी रीस वोलीउ नरेस 'माधव । छडउ अह्मारु देस'
> करि जुहार वोलइ तिणि ठाणि 'स्वामि । दीउ आदेश प्रमाण' ॥ 224 ॥

'तेजसार रास' में भी रौद्र रस की झलक उस समय मिलती है जब तेजसार पिता से मिलने जाता है।[3] विद्याधर अपनी बहिन को जब पर-पुरुष के साथ आलिंगन बद्ध देखता है तो उसे अपनी बहिन पर क्रोध आता है।[4]

'भीमसेन राजहंस सम्बन्ध चौपई' में रौद्र रस की झलक उस समय मिलती है जब राजा सगर का विवाह मदनमंजरी से न करके अन्य कन्या से कर दिया जाता है।[5]

भयानक रस

इस रस का स्थायी भाव भय होता। 'तेजसार रास' में पड्याणी द्वारा अंधेरे पक्ष की चौदस रविवार को बालकों की बलि के लिये तैयारी[6], तेजसार को मार्ग में

1 माधव तणी प्रशंसा सुणी, थई रीस राजा मनि घणी
मुझ पहिलउ इणि दीधउ दान, आणिउ मुरिखमनि अभिमान ॥ 221 ॥
2. कुपित खड्ग करि कठिइ साही, अंणि मुझ पहिलउ किउ पसाउ
राजसभा वोलइ सहू कोई ब्रह्म पुत्र नवि मारइ कोइ ॥222॥
3. मनेई माडयउ इम दाउ. तेजसार सुं रूठु राउ
कुमर पधारयउ करण जुहार रायश पूछउ थयु तिणवारि, ॥ 17 ॥
जाणिउ रोस पिता मन घणउ ते जीतउ तसू हे साजणउ ॥ 18 ॥
4 घर समीपि आव्यो उल्हास पेखे वाहिनी पुरुष नैं पासि
हाव भाव आलिगन दीए ते देखी अति कोप्यो हीए ॥ 157 ॥
रीसइ भरयौ वहिन प्रति भणै, ए कुण नर पासैं सुझ तणे ॥ 158 ॥
5. सगर नरेसर अति कोप्यउ हीयइ, अद्भुत कन्याते परणीयई
ए राय परदेसी अचिंतित गुप्तविधि परणी गयउ
आपी जु कन्या मुझ अनेरा तिणि मनि धोखउ थयउ
जदि भीमराय सूदेस जासइ रन्निकट कर हावि सूं
संग्राम सवलउ करी प्राणइ मानिनी मूका विसूं ॥ 194 ॥
6. एहवइ आव्यउ पक्ष अन्धार काली चवदिशि आदीतवार
पूजा वलि वालक परकार पडयाणी मांडयउ आचार ॥ 60 ॥

कालकूर विकराल राक्षस का मिलना,[1] विशेष दण्ड से भूत प्रेतो का नाश करना[2] आदि भयानक रस के उद्धरण हैं।

'भीमसेन चौपाई' मे हाथी का राजा रानी को लेकर भागना,[3] भय से रानी की वाणी का नही निकलना,[4] रात्रि मे दीपक का दिखाई देना,[5] वृक्ष पर नागो का लिपटा रहना[6] आदि भी भयानक रस के अन्तर्गत आते हैं।

अद्भुत रस

इसका स्थायी भाव विस्मय होता है। इसका आलम्बन कोई अलौकिक वस्तु होती है। सिद्धो देवी-देवताओ से वरदान रूप प्राप्त सिद्धिया, मन्त्र-तंत्र की विलक्षण करामतें, अलौकिक शक्तियो के अद्भुत चमत्कार, वैताल का सहयोग, जादुई विद्याओ से रूप परिवर्तन, अदृश्य होना, आकाश मार्ग से उडना आदि का सयोजन इन कथाओ मे हुआ है।

'ढोला मारवणी चौपई' मे योगी मारु को अभिमन्त्रित जल पिलाकर जीवित करता है।[7] 'तेजसार रास' के नायक तेजसार को तन्त्र-मन्त्र की कई विद्यायें आती हैं। मत्र पढकर मुष्टि प्रहार करना[8] तथा मत्र से सेना को स्तम्भित कर देना[9] मन्त्र जाप करने से रूप परिवर्तन तथा अदृश्य होना[10] आदि सिद्धियाँ तेजसार को योगी एव राक्षस द्वारा प्रदत्त होती हैं।

आकाश मार्ग से उड़ना भी एक अलौकिक बात है। आकाश मे अप्सरायें राक्षस देवी देवता अथवा अन्य कोई सिद्ध व्यक्ति ही उड सकता है। 'माधवानल

1 दोहा संख्या 30
2. ,, ,, 47
3. ,, ,, 270
4. वनिता प्रति राजा वदइ पणि वोली न सकइ बाल ॥ 276 ॥
5 ,, ,, 290, 291
6 ,, ,, 293
7. पयउ गुण गइ मन्त्र वली अनेरा कीया तन्त्र
मारवणी तिहाँ साजी थई जोगिणि मनि हरखी गहगही ॥ 595 ॥
8. मंत्र भणी नइ बाधइ मूंठि प्राण करी मूंके सिजस पूठि ॥ 51 ॥
9. वीजीवली कटकाथभणी भाव सकति न सकइ कोहणी ॥ 52 ॥
10. (क) मूंकी वस्त्र लोटइ बडमाहि विद्या बलिते रासभी थाहि ॥ 56 ॥
(ख) एहमंत्र तु जपी नइ जोइ ताहरु रूप न देखई कोइ
बीजइ मन्त्र जपै अणुसरै चीतवइ तिस्यु' रूप करइ ॥ 94 ॥
(ग) विद्याधर बल फेरी रूप विद्याधर थयउ हाथी रूप ॥ 162 ॥
(घ) तेजसार पिण मत्रइ करीसबल रूप थयेकेसरी
वली विद्याधर फेरी अंग, कृष्ण वर्ण ते थयु भुयंग ॥ 163 ॥
मोर रूप ते थयो कुमार पूंछ सालि कठयो तेवार ॥ 164 ॥

कामकंदला' मे अप्सरा जयन्ती तो आकाश मार्ग से आती ही है[1] परन्तु माधव भी आकाश मार्ग से ही स्वर्ग मे जाने लगता है

मन लागउ माधव न रहाइ नित छानउ अपछर धरजाइ ॥ 104 ॥

'तेजसार रास' के तो अधिकतर पात्र जो आलौकिक है आकाश मार्ग से उडने वाले हैं ।

तव ते ऊडी मत्र प्रमाण, वहे आकासइ पखिणी जाण ॥ 70 ॥

आकाश मे उडने की विद्या जिसके पास होती है वही आकाश मार्ग से उड सकता है । विद्याधर के पास यह विद्या है और वह नित्य प्रति आकाश मे उडता है ।[2] व्यतरी तेजसार को नीद मे ही आकाश मार्ग से उठा लाती है ।[3] एणामुखी की माता पुत्री को दहेज मे ऐसा पलग देती है जो आकाश मे निशक उडता है

एक दीयो सुन्दर पलक, उडे ते आकाशि निशक ॥ 308 ॥

'माधवानल कामकदला चउपई' मे माधव एव कदला की मृत्यु हो जाने पर राजा विक्रमादित्य का सहायक वैताल पाताल से अमृत लाकर उन्हे जीवित करता है ।[4] 'भीमसेन राजहस चौपाई' मे राजा भीमसेन मत्र जप से विष उतारता है

विषधर मन्त्रे जपइ राइ जाम अहितनि गया अनेरेइ ठामि

महिपति मदन मजरी रगि चदन तलि वइठा चतुरगि ॥ 295 ॥

विष फल के आहार करने पर पति मदन मंजरी के विष को दूर करता है–

जतीयइ विष वाल्यउ जेतलइ अमगसेन आव्यउ तेतलइ ॥ 230 ॥

'भीमसेन राजहस चौपई' मे अद्भुत रस की झलक उस समय मिलती है जब हस अपने जन्म के वारे मे वताता है कि आज से इक्कीसवें दिन रविवार को शिकारी के वाण प्रहार से मेरा अन्त होगा तथा मदनमजरी के गर्भ से मे इसी घर मे अवतार लूँगा ।[5]

1. टलिउ सराप रहीउ तिणि पामि अपछर हुइ ऊडी आकासि ॥ 71 ॥
   मा का चौ
2 नित वन्धव ऊडे आकासि प्रज्ञपति विद्या तसु पासि ॥ 146 ॥
3 दोहा सख्या 248, 249, 286
३ दोहा सख्या 108
4 दोहा सख्या 598 मा का चौ
5 आज थकी इकवी समइ दिवसि दिवाकर वारि
   पिण एक जिस पारधी हणसइ वाण प्रहारि ॥ 252 ॥
   एह देह छडी करी पुण धरि मुझ अवतार
   मदन मंजरी नइ उदरि अवतारि सू निरधारि ॥ 253 ॥

'अगडदत्त रास चौपई' में भी अद्‌भुत रस कई स्थलों पर आया है। भुजगम चोर का ताली बजाकर ताले तोड़ना, मन्त्र विद्या से जागृत लोगों को निद्रा के वश कर देना, तथा मन्त्र शक्ति से अदृश्य होना[1] तथा भुजगम चोर का आकाश में उड़ना[2] विद्याधर का आकाश मार्ग से आकर सर्प दशन से मृत मदनमंजरी को मन्त्र विद्या से पुन जीवित कर देना आदि उदाहरण अद्‌भुत रस[3] के अन्तर्गत ही आते हैं।

हास्य रस

हास्य रस के अनेक उदाहरण इन कथा काव्यों में मिलते हैं। ढोला मारवणी चौपाई में यह हास्य रस ढोला मारु के सयोग के समय की वातों[4] तथा मालवणी व मारु द्वारा प्रदेश निंदा[5] के समय हुये वार्तालाप में कुछ झलक दिखाई देती है।

'माधवानल कामकदला चउपई' में हास्य की झलक माधव कदला के संयोग के समय ही मिलती है। हास्य रस को जीवन का प्रमुख अग माना है[6] और इसी के आधार पर कवि ने माधव और कदला प्रहेलिका आयोजन समस्या समाधान आदि के द्वारा मनोरंजन कराया है।

वात्सल्य रस

इस कथा-काव्यों में वात्सल्य रस के अनेक प्रसग देखने को मिलते हैं। 'ढोला मारवणी चौपई' में मारवणी के जन्म पर खुशियाँ मनाना[7] वात्सल्य रस का सूचक है। राजा नल पुत्र की कामना से पुष्कर यात्रा करता है और पुत्र जन्म का उत्सव मनाता है।

1 मत्र भणी ठवको विजडी वाला त्रुटिया लिक घडी
मारग मत्र जगण तू जाय जागता दूर निद्रा थाई ।। 76 ।।
फरइ निशंक नगर मा सही मत्र शक्ति को देखइ नहीं ।। 77 ।।
अगडदत्त रास चौपइ ग्रं ।। 605 ।।
भण्डारकर आरियन्ट रिसर्च इस्टीयूट, पूना

2 दोहा सख्या ।। 108 ।।

3 ,, ,, ।। 258 ।।

4 गीता विनोद विलास रस, पडित दीह लीहँति
कइ निदा कइ कलहू करि मूरख दीह गमति ।। 263 ।।

5 माता पिता मनि आणद घणउ जनक हूओ मारवणी तणउ
कीया वधावा नगर मझारि पत्र तणी परि मगलाचार ।। 133 ।।

6 इक परदेसी इम कथरइ जउ पुष्कर तणी जाव पति करइ
कुटुम्ब सहित पहुचउ तिणि थानि तौ सही हुवे पुत्र सतान ।। 148 ।

7 पुत्र जनमि हरष्यउ राजान मनि आणद्यौ नल राजान
घरि घरि उछव मंगल घणा कीया वधावा पुत्रह तणा ।। 150 ।।

'माधवनल कामकंदला चउपई' मे पुरोहित शंकरदास ईश्वर द्वारा प्रदत्त पुत्र का जन्म उत्सव मनाता है

> कीयउ उच्छव कीयउ उच्छव हुयउ आणद
>
> कुटुंब सहुइ सतोपीयउ नगर माहि उच्छाह कीयउ ।। 63 ।।

यही नही पुत्र हर आगत अनर्थ की आशका मात्र से पिता बहुत से दान पुण्य भी करता है ।[1]

'तेजसार रास' मे रानी पदमावती स्वप्न मे घी से परिपूर्ण प्रज्वलित दीपक देखती है । स्वप्न फल के अनुसार रानी को दीप के समान तेजस्वी पुत्र प्राप्त होता है और राजा महोत्सव करता है ।[2] पुत्री प्रेम मे प्रभावित होकर ही एणामुखी की माता तेजसार को पुत्री से विवाह करने के लिये उठा लाती है ।[3] तेजसार की माता मर कर व्यतरी हो जाती है, परन्तु पुत्र के वियोग से वह सदैव ही दुखी रहती है और एक दिन जब उसकी पुत्र से भेंट हो जाती है तो माता के हर्ष का पार नही रहता

> रे जाया नदन माहरा, हूँ भामणा लेउं ताहरा
>
> आज सही मुझ सुरतरु फल्यो, तु मुझ पुत्र घणे दिन मिल्यो ।। 293 ।।

'भीमसेन राजहस सम्बन्ध चौपई' मे भीमसेन के पुत्र जन्म पर खुशियाँ मनाई जाती है

> पुत्र जनमउ परम आणंद संतोष्या परीयण सहू
>
> वेदनाद वाजित्र वाजई याचक जन जय जय करइ
>
> दीयइ दान मोटइ दीवाजइ नगर महोछव नव नवा
>
> सफल मनोरथ सार राजहस नामइ कुमर अति सुन्दर आकार ।। 371 ।।

शांत रस

शांत रस के उदाहरण जैन कथा काव्यो मे विशेष रूप से पाये जाते हैं । मुनियो और केवलियो द्वारा दिये गये धार्मिक उपदेशो तथा नायक नायिकाओ द्वारा ग्रहण करने के प्रसंगो मे शात रस की स्पष्ट झलक देखने को मिलती है ।

1 अरच्या अरथ गरथ भण्डार कीजा मत्र यन्त्र उपचार
  घणा वडेउ पुण्य प्रमाणि पुत्र उगरिउ वडइ विनाणि

2. दोहा सख्या 10

3 मुझ पुत्री पराणावा भणी मैं तुं आण्या चंपा धणी ।। 287 ।।

शांत रस का स्थायी भाव निर्वेद होता है। इसमे संसार की नश्वरता एवं असारता का ज्ञान, ईश्वर चिंतन, तीर्थाटन, धार्मिक ग्रंथो का पठन श्रवण, संसार की भंगुरता तथा जीव की अनित्यता प्रदर्शित कर विरक्ति या निर्वेद की भावना व्यक्त की गई है।

'ढोला मारवणी चौपई' मे मारवणी की सर्प दंश से मृत्यु हो जाने पर ढोला द्वारा योगी को कहे गये वाक्य मे शांत रस की किंचित झलक मिलती है।[1]

'तेजसार रास' व 'भीमसेन राजहंस सम्बन्ध चौपई' मे शांत रस के अनेक उदाहरण देखने को मिलते हैं। 'तेजसार रास' मे तेजसार मुनि सुव्रत स्वामी से धर्म उपदेश सुनकर श्रावक हो जाता है।[2] चौथे आश्रम मे आते ही तेजसार मुनि श्री से अपना पूर्वभव जानकर सात वर्ष संयम पालन[3] करते हुये शत्रुंजय तीर्थ यात्रा[4] कर निर्मल ध्यान को धारण करता है, और जीवन की निस्सारता को समझते हुये शिवपुरी पहुँचता हैं।

'भीमसेन राजहस सम्बन्ध चौपाई' मे राजहंस को श्रीराम मुनि धर्म उपदेश देते हैं।[5] राजा भीमसेन भी मुनि से धर्म उपदेश सुनकर राजहस को राज्य सौंप कर वैराग्य ले लेते हैं।[6] उसी प्रकार राजहस भी श्रावक हो जाता है[7] और मुनि श्री से धर्म की अनेक विकथायें सुनकर दान पुण्य करते हुये अपने पुत्र जयभद्र को राज्य सौंप कर निर्वाण प्राप्त करते हैं।[8]

किन्तु यह निर्वेद जीवन भोग चुकने के बाद ही होता है। जब शरीर शिथिल हो जाता है तभी वृद्धावस्था मे पुत्र को राजपाट सम्हला कर वैराग्य लिया गया है।

'अगडदत्त रास चौपई' मे भी शांत रस की प्रधानता रही है। अगडदत्त को विभिन्न प्रकार से सासारिक सुखो को भोग कर अन्त मे नारी चरित्र के धार्मिक

1. जा ते माडी अकेली रीति बातन वेहसइ ढोला चीति
   ढोल उकहइ आयस, सुणि वात कीजइ नही पराई ताति ॥ 591 ॥
2. दोहा संख्या 366 तेजसार रास ग्रं 26546
3. दोहा संख्या 402 वही
4. दोहा संख्या 403 वही
5. दोहा संख्या 548 से 560
6. आव्यउ मनि वैराग्य अपार सहू अथिर जाण्यउ संसार
   राजहंस नइ थाप्यउ राज कीधा बहू धर्म ना काज
   भीमसेन राजहंस चौपई ॥ 569 ॥
7. राजहंस राइ श्रावक थयउ श्रीजिनधर्म हीयइसदद्दउ ॥ 570 ॥
8. आठ कर्म चूरउ करी निर्मल भाव आप मनिधरी
   सिद्धस प्रभु उत्तम ठामण राजहंस पाम्यउ निर्वाण ॥ 618 ॥

उपदेशो को सुनकर वैराग्य उत्पन्न होता है और वह अपने राज्य को छोडकर सयम ग्रहण कर लेता है।[1] चोर कर्म करने वाले व्यक्तियो को भी नारी चरित्र को कर्म फल से व्याप्त देख वैराग्य उत्पन्न होता है।[2] ससार को क्षणिक जानकर मुनि से धर्म के उपदेश सुनकर अपनी पूर्व प्रवृत्ति का परित्याग कर वह दीक्षा ग्रहण करता है।[3] इस प्रकार दुष्ट प्रवृत्तियो का शमन शात रस मे हुआ है।

कला-पक्ष

किसी भी काव्य के भाव पक्ष एव कला पक्ष को विभाजित कर पाना नितान्त कठिन कार्य है। कुशललाभ के कथा-काव्यो मे भावो का व कला का इतना सुन्दर समन्वय हुआ है कि दोनो एक प्राण हो गये हैं। फिर भी सुविधा की दृष्टि से कला पक्ष के अन्तर्गत भाषा शैली, अलकार योजना, छन्द प्रयोग प्रकृति वर्णन, सवाद सौष्ठव आदि को ले सकते है।

भाषा और शैली

कुशललाभ के कथा-साहिकाव्य की भाषा मध्यकालीन राजस्थानी है, जो तेरहवी शताब्दी से पन्द्रहवी-सोहलवी शताब्दी तक पश्चिमी भारत की प्रमुख भाषा रही थी। इस भाषा का प्रयोग साहित्य रचना के लिये खूब किया जाता था कबीर जैसे कवि ने जिसने सर्व साधारण के लिए लिखा था, इसी भाषा मे लिखा था।

सपादकत्रय ने इसे "माध्यमिक राजस्थानी" कहा है।[4] आचार्य गौरीशंकर हीराचन्द ओझा ने इसे कृत्रिम डिंगल न मानकर तत्कालीन बोलचाल की राजस्थानी भाषा बताया है।[5] श्री शभुसिंह मनोहर ने भी इसे तत्कालीन लोकभाषा की रचना मानते हुये माध्यमिक राजस्थानी ही माना है।[6] डा मोतीलाल मेनारिया ने इसे डिंगल भाषा का पहला काव्य ग्रथ माना है।[7] डा दयाकृष्ण विजयवर्गीय 'विजय' ने इसे विकासशील राजस्थानी का नाम दिया है जो विक्रम की तेरहवी शती से सोलहवी शती तक थी।[8] डा शार्लोत वाँदविल ने इसकी भाषा को 'प्राचीन मारवाड़ी गुजराती कहा है।[9]

कुशललाभ के कथा काव्यो को उपर्युक्त दृष्टियो से देखने पर उसकी भाषा माध्यमिक राजस्थानी जो उस समय की बोलचाल की भाषा थी, कहना ही उचित

1 दोहा सख्या 310,313
2 ,, ,, 285
3 ,, ,, 287
4 ढोला मारू रा दूहा भूमिका पृ. 130
5 वही, प्रवचन पृ 5
6 ढोला मारू रा दूहा व्याख्या और विवेचन पृ 123
7 राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ 103
8 राजस्थानी काव्य में शृंगार भावना पृ 11
9 जनरल आफ दी ओरयन्टल इंस्टीट्यूट वाल्यूम 'XI' नं० 4 पृ० 137

प्रतीत होता है। राजस्थानी पूरे राजस्थान प्रान्तो की भाषा है। तत्कालीन राजस्थान का क्षेत्र बहुत विस्तृत था। राजस्थान के उत्तरी भूभाग को जांगल, पूर्वी को मत्स्य, दक्षिणी पूर्वी को शिवि देश, दक्षिण को मेदपीट कहते थे। इसी प्रकार वागड प्राग्वाट मालव और गुर्जरत्रा, पश्चिम का मद, माडवल्ल, त्रवणी और मध्य भाग का अर्बुद और सपादलक्ष नाम था।[1] राजस्थान की भाषा ही राजस्थानी या मरु भाषा थी।

प्रत्येक काल मे भाषा के प्राय दो रूप देखने मे आते है एक तो उसका साहित्य रूप और दूसरा बोलचाल की भाषा का रूप। प्रारम्भ मे सस्कृत केवल साहित्य की भाषा रह गई थी तथा उसका लोक व्यवहारिक रूप प्राकृत कहलाया। आगे चल कर प्राकृत के भी कई रूप हो गये। साहित्यक प्राकृत की लोक प्रचलित भाषा अपभ्रंश प्रचलित हुई।[2] इसी अपभ्रंश भाषा से राजस्थानी गुजराती, पंजाबी, सिंधी ब्रज, अवधी आदि भाषाओ का उदय हुआ।[3] प्रारम्भ मे प्राचीन राजस्थानी एव गुजराती एक ही भाषा थी। लगभग सोलहवी शताब्दी से राजस्थानी एव गुजराती अलग अलग भाषायें हो गई।[4]

कुशललाभ का समय उनकी कृतियो के आधार पर सोलहवी सदी के उत्तरार्द्ध से 17 वी सदी तक माना जाता है। अत उनकी भाषा को माध्यमिक राजस्थानी का नाम दिया जा सकता है। इनकी भाषा मे "कही पुरानी वर्तनी है तो कही नवीन इसी प्रकार गुजराती, सिंधी, पजाबी आदि भाषाओ के शब्द भी स्थान पर पाये जाते हैं। राजस्थानी मे भी कही मारवाडी रूप है तो कही ढूँढाडी, कही जैसलमेरी है तो कही मालवी। खडी बोली और व्रज के रूप भी एकाध जगह पाये जाते हैं।"[5]

कुशललाभ के कथा-काव्यो मे अरबी व फारसी शब्दो का प्रभाव भी देखने को मिलता है। जैसे साहिब, सलाम, कागल, नजर, खवास, फौज, गारा, कमाण, खुरसांण, सकती, जीन, निसान आदि।

देशज शब्दो की अधिकता के कारण इन कथाओ के तत्कालीन लोक भाषा मे रचित होने की पुष्टि होती है। यह लोक भाषा भी विशिष्ट माधुर्य एव मार्दव के

1. श्रीमद् विजयराजेन्द्र सूरि स्मारक ग्रंथ पृ 718 ढोला मारू रा दूहा व्याख्या एवं विवेचन पृ 121 से उदधृत
2. प्राकृत विमर्श डा सरयू प्रसाद अग्रवाल पृ 5
3 हिन्दी के विकास में अपभ्रंश का योग पृ 8
4 आरिजन एण्ड डवेलपमेंड आफ बंगाली लगुवेज डा एस. के चटर्जी पृ 9
5 ढोला मारू रा दूहा पृ० 139 भूमिका

साय निखार पर है। ये देशज शब्द जैसे रॉंढिया, ओलग, परिधल, खाते, झाझी, रिठ, थोवड, डीभू, सरढी, मागण हार, वाहला, केकाण आदि हैं।

इन कथाओ मे इतर प्रात अर्थात् आसपास के प्रदेशो की भाषाओ के शब्द भी कही-कही मिलते हैं। इनमे पजावी शब्द चाहँदी, चगा, लज्ज, अज्ज, सैं, रत्ता आदि हैं। गुजराती शब्द ऐम, जेम, तेडन, कागल, मोकले, केम, नू ओलख्खिया आदि हैं।

पर्यायवाची शब्द या शब्द के अनेक रूपो की भी प्रचुरता देखने को मिलती है जैसे मांगी-तांगी, राऊ-राउ, राइ, रार्व, राजा, नरपति, राय, प्रियतम-नाह, वल्लहा, कत, घणियाँ, वल्लह, साहिव, प्रिय, सयणा, सज्जन, साजण, सायण, प्रीतम, प्यारा, वालम, परदेसी, प्रीउ, प्राणप्रिय, स्वामी, प्राण आधार भरतार आदि।

जैसा कि पूर्व मे बताया जा चुका है कुशललाभ के साहित्य मे मध्यकालीन पश्चिम साहित्यक राजस्थानी और तत्कालीन लौकिक राजस्थानी का प्रयोग हुआ है। लौकिक राजस्थानी का प्रयोग तद्युगीन सभी जैन सतो और धर्म प्रचारको ने किया है अत कुशललाभ के लिये भी इस कार्य हेतु इसी परम्परा का पालन करना आवश्यक था। इन ग्रथो को भाषा के आधार पर भी इसी रूप मे बाट सकते हैं। पिंगल शिरोमणि मे हमे विशुद्ध डिंगल भाषा के स्वरूप के दर्शन होते हैं तो ढोला मारवणी चौपई मे डिंगल के साथ-साथ अपभ्रंश की परम्परा ने साहित्यिक राजस्थानी भाषा का स्वरूप सामने आता है और अन्यान्य ग्रन्थो मे तद्युगीन बोलचाल की भाषा का।

किसी भाषा के विश्लेषण के लिये उसकी रूप रचना अथवा व्याकरण का और भाषा शास्त्रीय दृष्टि से उसकी ध्वनियो का अध्ययन नितान्त आवश्यक होता है। ध्वनि शास्त्रीय अध्ययन वर्तमान काल की भाषाओ या वोलियो का तो हो सकता है पर अतीत की भाषाओ का इस प्रकार का अध्ययन कठिन है। अतीत की भाषाओ के उच्चारण का निर्धारण नही किया जा सकता फिर भी कुछ ऐसे प्रयास किये गये हैं जिनका आधार वर्तमान मे प्रचलित उच्चारण का स्वरूप ही रहा है। इसी आधार पर कुशललाभ के साहित्य मे प्रयुक्त वर्णमाला (स्वर और व्यजनो) को प्रस्तुत करते हुये ध्वनिगत अध्ययन प्रस्तुत करने का प्रयास किया जा रहा है।

कुशललाभ के साहित्य मे हमे वर्तमान देवनागरी लिपि मे प्रयुक्त 'ॠ' स्वर को छोडकर लगभग सभी स्वरो का प्रयोग मिलता है। पदो को पढते समय कुछेक ध्वनियो को दीर्घ या ह्रस्व करके पढने पर ही छदो का तालमेल वैठ पाता है। ये ध्वनियाँ दीर्घ और ह्रस्व के मध्य की ध्वनियाँ मानी जा सकती है।

व्यजन वर्ग मे 'क' वर्ग से लगाकर 'प' वर्ग तक 'ङ' और 'ञ' चिह्नों को छोडकर सभी चिह्नो का प्रयोग हुआ है। इन चिह्नो को अनुस्वार मे परिवर्तित

करके लिखा गया है। पर राजस्थानी मे इन ध्वनियो का स्थान अवश्य है, जिसे कुशललाभ के साहित्य मे भी भलीभाति अनुभव किया जा सकता है। 'ष' का प्रयोग कही देखने मे नही आता। 'श' और 'स' का प्रयोग सर्वत्र हुआ है। 'स' के प्रयोग का बाहुल्य है। इसी प्रकार 'ह' का प्रयोग भी सहज रूप से प्राप्य है। इस ध्वनि का प्रयोग शब्द मे पाद पूर्ति हेतु या विसर्ग के रूप मे भी बहुत अधिक हुआ है।

राजस्थानी भाषा की मुख्यरूप से पश्चिमी राजस्थानी मे 'ड' 'ल' और 'व' ध्वनियो का प्रयोग इसकी विशेषता है। ड और ल के प्रयोग के कारण भाषा मे माधुर्य और लालित्य का समावेश होता देखा गया है जैसे—वत्तडी[1], हीयडा[2], कुजडियां[3], मृगला,[4], हाथाल,[5] एकला[6] व आगली[7] आदि ध्वनियो का प्रयोग द्रष्टव्य है।

सस्कृत शब्दो के तद्भव रूपो मे रेफ को कवि ने सर्वत्र पूर्ण 'र' ध्वनि मे परिवर्तित कर दिया है। सर्वार्थ से सरवारथ[8], सर्प से सरप[9] वृतात से विरतत[10] रूप देखने योग्य है। इसी प्रकार वर्ण और दुर्ग के तद्भव ब्रन्न और दुर्ग मे रेफ का स्थानान्तरण भी उल्लेखनीय है। इसी प्रकार वृक्ष का ब्रिख्य, मृग का म्रिग, पृथ्वी का प्रिथवी मे रूपान्तरित कर दिया गया है।

भाषा वैज्ञानिक नियमो के आधार पर ध्वनियो का पारस्परिक परिवर्तन अथवा रूपान्तर कुशललाभ की भाषा का वैशिष्ट्य है। 'य' का 'ज' मे, ऋ का र मे, क, ग, त, का 'य' मे, 'क' का 'ग' मे, 'स' का 'छ' मे 'त्स' का 'छ' मे, 'व' का 'म' मे, 'क्ष' का 'ख' मे, 'न' का 'ण' मे तथा 'घ' का 'ह' मे परिवर्तन एक साधारण सी बात है। इस प्रकार के परिवर्तन से उद्भूत शब्दो की एक लघु सूची यहाँ प्रस्तुत की जा रही है

जोणिणी (योगिनी), मरजाद (मर्यादा), जादव (यादव), सायर (सागर), पायाल (पाताल), सयल (सकल), नयरी (नगरी), मुगुट (मुकुट), प्रगट (प्रकट),

1. केहू कीजइ वत्तडी ? केही कीजइ कत्थ ? 356 मा० का० चौ०
2. हीयडा-भीतरि पइसि करि, ऊगा सल्लिर रूख—346 मा० का० चौ०
3. कुझडिया मिलि दूहा कहइ 243 ढोला मारवणी चौपई
4. मृगला सु रमती उच्छाहि—281 तेजसार रास
5. हणवत सो हाथाल खत्री नव खड रौ—पिंगल शिरोमणि
6. सीह साप कुजर एकला—215 अगडदत्त रास
7. रथ आगलि वइसारी नारी—217, वही
8. सरवारथ सिद्धई अछइ—4 तेजसार रास
9. पार्श्वनाथ दशभव स्तवन छंद—26
10. कीर भणइ कहिसू विरतत—61 भीमसेन राजहंस चौपई

वणिग (वणिक), भगति (भक्ति), उपगार (उपकार), तरगस (तरकस), अपछरा (अपसरा), महोछव (महोत्सव), मनछा (मनसा), मीनती (विनति), आणद (आनद), णाटक (नाटक), विणास (विनास), तापसणी (तपस्विनी), कुण्डलणि (कुडलिनी), जणणी (जननी), आराहइ (आराधइ), जलहर (जलधर)।

कवि ने काव्य मे राजस्थानी भाषा की परम्परागत प्रवृत्ति के अनुसार पाद-पूर्ति हेतु शब्द के अन्त मे ह, ज, य, र आदि ध्वनियो का प्रयोग किया है। 'ह' ध्वनि के प्रयोग गयाह,[1] चकवीह, उरह, पुत्रह[2], कुंजडियाह, हिज[3] सकत्तीय[4] आदि इसी प्रकार के प्रयोग है।

आगम की तरह ही लोप की प्रवृत्ति भी भाषा मे पाई जाती है। ऊष्म ध्वनियाँ श, ष, अथवा स का लोप हो गया है। स्थान को ठाम या थाणा[5] मे, स्तवु को तवु[6], स्कध का खधि[7] मे रूपान्तरण कर दिया गया है।

कवि ने छद की गति या लय के स्थिरीकरण के लिये अपनी इच्छानुसार शब्दो की ध्वनियों को ह्रस्व से दीर्घ या दीर्घ से ह्रस्व मे परिवर्तित किया है जैसे वीनती[8] (विनति), अवसरि[9] (अवसर) आदि।

व्याकरण

भाषा की प्रवृत्ति के निर्णय हेतु उसका व्याकरण सम्मत अध्ययन अत्यधिक आवश्यक होता है। सज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया, कारक और अव्यय भाषा निर्धारण के लिये आवश्यक तत्व माने गये हैं। कुशललाभ के कथा-काव्य मे प्रयुक्त भाषा का इसी दृष्टि से सामान्य व्याकरण यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है

कुशललाभ के कथा साहित्य मे सज्ञा के पुलिंग अथवा स्त्रीलिंग शब्दो के अकारान्त, आकारान्त, इकारान्त, ईकारान्त, उकारान्त या ऊकारान्त शब्द समान रूप से प्राप्त होते है। ओकारान्त और औकारान्त पुलिंग शब्द मे ही मिलते हैं स्त्रीलिंग मे नही। पुलिंग से स्त्रीलिंग मे परिवर्तित रूप अन्त मे ईकारान्त करके या

1 मन मिलिया तन गड्डया, दोहग दूरि गयांह—255 मा का चौ
2 कीया वधावा पुत्रह तणा—150 ढो मा चौ
3 दोहा सख्या 17 दुर्गा सात्तसी
4 कूडी वर पाइ कुवर कूड पूत्री सु सकत्तीय—पृ० 83 पिंगल शिरोमणि
5. पुहुपावती नगरिनइ ठामि—27 मा का चौ
6. त्रिपुर गुण के तवु—17 दुर्गासात्तसी
7 फूदी आप चढ्यउ तसु खधि—70 तेजसार रास
8 स्वामी नि मुख सभलि वीनती—181 भी. ह. चौ
9 ते अवसरि ते वेला लही—167 भी हं. चौ

'इनी' प्रत्यय जोडकर भी बनाये गये हैं। संज्ञा शब्दो के दोनों प्रकार के रूपों के कुछ उदाहरण यहाँ दिये जा रहे हैं

पुलिंग	स्त्रीलिंग
अकारान्त	
कचण, कुच, कागल, तेजसार, विद्याधर, बालक, नगर, पान, कासमीर, दीह, मूरिख, किरतार, कवियण, रेवत, राय, पीहर, मराल।	कणयर, काव, मीत, ध्रागल, कोरन, खीर, अपछर, दीनार, कटक
आकारान्त	
थाभा, ढोला, कापडिआ, माणसा, सुहिणा, वालहा, सरवरा, सालूरा, वणिजारा, पर्यीडा, राजा, ढोलणा, गोला, खला, सुग्रीवा, सूआ, प्रोहिता, भीला, भाणेजा, पिता।	गंगा, पूजा, उमा, कामकदला, गणिका, गुफा, श्राविका, वामा, कुरझडियां, सीता, रमा, धरा, सुता, गाथा, चंता।
इकारान्त	
जलधि, नरहरि, भीमारि, भूपति, महिपति, मुनि, दिवसि, पाणि, मरुभूति, श्रेष्ठि, स्वामि।	सीकोतरि, मदोदरि, कुमरि, राजकुमारि, सकति, नागवेलि, सुमति, नारि।
ईकारान्त	
पथी, अहेडी, मोती, अरी, सामतसी, मालवधणी, रेवारी, मत्री, रिणकेसरी, धणी, स्वामी, जोगी, हाथी, अधिकारी, अभिमानी।	सरसती, ब्रह्मपुत्री, धरणी, अस्त्री, नारी, वीनती, गोनविलासिनी, कामिणी, मारविणी, सखी, रमणी, कुमरी, राणी, पटराणी, पिडयाणी, नेसाली, साडी, श्रीमती दीकरी, अवती, लषमी, अतउरी, डाकिणी, नगरी, धात्री, सखी, ठकुराई, वेलडी, पाखिणी, अटवी।

उकारान्त

कवि ने इन उकारान्त शब्दो को इच्छानुसार रूपान्तरित भी कर दिया है।

रिपु, वाउ, प्रभु, सत्र, तरु, तनु

ऊकारान्त

प्रीऊ, छोऊ घू, माऊ

ओकारान्त

वीडो, ममरो, सदेसडो, कंटालो,
तमासो, कंचूओ, नातरो, ढोलो, सूडो,
मामडो, करहो, नरेसरो ।

औकारान्त

कचौ

निष्कर्षत. कुशललाभ के साहित्य मे अकारान्त पुलिंग और ईकारान्त स्त्रीलिंग शब्दो की बहुलता है ।

वचन

राजस्थानी भाषा मे एकवचन और बहुवचन का ही प्रयोग मिलता है। बहुवचन बनाने के लिये प्राय शब्द को आकारान्त करके अन्त मे अनुस्वार लगाकर अथवा अण या यण प्रत्यय लगाकर बनाया गया है। अपछर, घर, मयंक, दिवस, नगर, पान, रेवत, छागल, साजन, पथी, सरप, कुमर, गणिका, तरु, रिपु आदि एकवचन के रूप हैं ।

सरवरां, सलूरां, माणसां, कुम्भडियां, नयणां, खलां, कवियण आदि रूप बहुवचन के हैं ।

समाचार, नेत्र, वचण, दीनार जैसे दोनो वचनो मे अपनी समान स्थिति रखने वाले शब्दो का भी बहुत प्रयोग हुआ है ।

कारक और कारक चिह्न

भाषा विश्लेषण के लिये कारक चिह्नो का भी अत्यधिक महत्व है । कुशललाभ के साहित्य मे प्रयुक्त कारक-चिह्न निम्नलिखित हैं

कर्ता	कर्ता के लिये किसी चिह्न विशेष का प्रयोग नही मिलता है ।
कर्म	नइ,[1] नू , अण, प्रति[2] प्रतइ आदि ।
करण	नइ,[3] ने, नैं,[4] अत्, कना, सुं, सैं, सूं आदि ।
सम्पदान	काज, काजि,[5] काजइ, कारणि, कारीणा, खातिं, कौ, वासि, होति आदि ।

1. दीठा वग, गौड, बंगाल, कुकण नइ काविल, पचाल 25 दो मा. चौ
2. संकर प्रति कहइ त्रिपुरारि 57 मा का चौ
3 रूपवत नइ सुन्दर देह—70 दो मा चौ
4 आपणि हरखि भाट नै वेसि —28 दो मा चौ
5 कवण काजि जास्यइ किणि ठाइ 67 दो मा चौ

अपादान . थी, ते[1] थकी,[2] तई, हुता, हता, हुति, हूती,[3] स सूं[4] आदि ।
सम्बन्ध . तणी, तणउ,[5] तणा,[6] तणइ, तणै, तणौ, तास, नइ, नो, नी, नइ, नू, ना, नैं, केरी, हदी, हदा, हंदी, हदै, ह[7] रो, री, रे, के, को, श्रो, लौ, लागि आदि ।
अधिकरण . महि, मध्य, मझारि, मा, माहइ, माहि, माहे, माहिं, मझार, परइ[8] ए, आ, हि, सो अता आदि ।
सबोधन : रे,[9] अजी,[10] है है,[11] रे रे, श्रो आदि ।

सर्वनाम

कुशललाभ के आख्यान काव्यो मे पुरुषवाचक, सबंधवाचक, निश्चयवाचक, अनिश्चयवाचक, प्रश्नवाचक, आदरबोधक आदि सभी प्रकार के सर्वनामो का प्रयोग मिलता है । इन सर्वनामो के प्राप्त रूप निम्नाकित तालिका मे प्रस्तुत किये जा रहे हैं, जिससे वे स्पष्ट रूप से समझे जा सके :

पुरुषवाचक सर्वनाम

उत्तम पुरुष

	एकवचन	बहुवचन
कर्ता :	हूं, मे, मैं मइ	अम्हे, म्हे, हम
कर्म :	मोहि, मो, अमने, मुझ, अम्ह ।	
सम्प्रदान :	मोनैं, हूं	
सम्बन्ध .	मुज, माहरो, माहरइ, मोरी, अमारो, मम, मो ।	अम्ह, अम्हा
अधिकरण :	ते, तेणि, मो, वरि	अम्ह, ताम, तेह ।

1. पुत्र नाही ते मोटउ दुख—47 मा. का चौ
2. आज थकी इक वीसमइ दिवसि 252 मी रा चौ
3. स्वर्ग लोग हुती ऊतरी—29 मा का चौ
4. मदनमजरी नइ ऊदरि अवतारि सू निद्वरि 253 मी. रा चौ.
5. अपछर तणउ जयंतीनाम—14 मा का. चौ
6. पिंगलराय तणा परधान 15 ढो. मा चौ
7. अंगहीण सिल पाहण ह तणी—23 मा का. चौ
8. नदी परइ तव संध्या थई—454 मी रा चौ
9. एणी परि रे भला सुकन जाणी—485 वही
10. अजी अछइ वहुराति—270 मा का चौ
11. है है दैव ! किसु मइ कीयउ ? 581 वही

मध्य पुरुष

कर्ता :	तू, तम, थे	तुम
कर्म :	तुजं, तोहि, तोइ, तोनू, तु	तुमे
सम्बन्ध :	तुम्ह, तणी, ताहरो, ताहरा, थारउ, तुव, तुम्हरो, तुम्हारइ, तुमारी ।	थे, थाको, थाकी ।

अन्य पुरुष

कर्ता :	तइ, तिण, ते, तिण्ह तेण, तेम	
कर्म :	तासु, ताम, तसे	ताम, ते ।
करण	तसु, तिहसु	
सम्बन्ध :	तेह, तसु, तास तेहनो, तेहनउ, ताम, वे	ते, तेह
अधिकरण :	ते, तेणी	ताम, तेह

सम्बन्ध वाचक सर्वनाम

कर्ता :	सो, सोइ, तिण, जे, जिणी, जिन, जेणि, जो	जिका
कर्म :	सो, जिन	
सम्बन्ध	जासु, जाके, जे, जेह	
अधिकरण :	तिणि	

निश्चयवाचक सर्वनाम

कर्ता :	इणइ, इणी	ए, एह
कर्म :	आ	-
सम्प्रदान :	अणी	
सम्बन्ध :	एह	-

अनिश्चयवाचक सर्वनाम

कर्ता :	कोइ, कोई	का

प्रश्नवाचक सर्वनाम

कर्ता	कुण, कुवण	-
कर्म :	कुण	
सम्बन्ध	कणी, कुण, कवण	

आदरबोधक सर्वनाम आप, आपणो, आपा, आपणी, आपणउ, आपइ आदि ।

विशेषण

परिणामवाचक

सघला, घणी, परिघल, थोडइ, अति, ऐतलो, बहु ।

संख्यावाचक

1–गणनावाचक–एक, दोई, त्रिणि, चत्र, दस, विसहस
2–क्रमवाचक–पहिलो, बीजू, त्रीजू, चउथइ
3 समुदायवाचक–आधा, त्रिहु, चहु, विहु, सर्व

गुणवाचक

दयामणो, मोटो, घणो, दुरंगो, जेठो, अपूरव, प्रवीन, अतुली, अपार, अमूल, कालो, साचो, रातो आदि ।

क्रिया-रूप

कुशललाभ के साहित्य मे मध्यकालीन साहित्य मे प्रयुक्त भाषाओ की भाति ही सयोगात्मकता अधिक है । खेलता है, सर्वनाश करता है, पढता है, भरती है आदि शब्दो के लिये खेलै, सहारइ, भणइ मरइ जैसे रूप इसी प्रवृत्ति के द्योतक है । काव्य मे क्रिया रूपो की अधिकता देखने मे नही आती । छद पूर्ति हेतु एक ही रूप को अनेक रूपता दे दी गई है । ये सभी तद्युगीन भाषा मे स्थिरीकरण के अभाव का सूचक कहा जा सकता है । लिग, वचन तथा काल की दृष्टि से क्रिया रूपो की स्थिति निम्नाकित तालिका मे स्पष्ट की जा रही है

वर्तमान काल

पुरुष	एकवचन	बहुवचन
उत्तम पुरुष	दाखू, प्रणमु दीसइ, छि, कहू	
मध्यम पुरुष	करो, कहै, दीसो, समारउ सुणी ।	मूक्या
अन्य पुरुष	भणइ, करइ, देखै, देखई, सचरइ वहइ, वहे, उच्चरे, भाषइ, फिरइ, दीसइ, चितवइ, अछइ, भमइ, वसै हवै, रहे, सहारइ, सोचइ, सीभइ	बोलेछै, सीझई, फिरई

उक्त क्रियाओ मे अइ, ए, ऐ, अउ, ओ प्रत्यय जोडकर रूप बनाये गये हैं । इस प्रकार बनने वाले कतिपय अन्य प्रयोग द्रष्टव्य हैं बोलै छै, देखै, वसै, हवै, करै, पहे, रहे। ए, ऐ प्रत्ययो के प्रयोग से बने रूप है तो, बइठउ, समारउ, कहिज्यो, अगासे आदि अउ, ओ प्रत्ययो के योग से बने रूप । अत, अति, आदि प्रत्ययो के योग से बने

एकवचन या बहुवचन रूप बनते हैं। देखत, निहारत, बोलत, मिलति आदि इसी प्रकार के रूप हैं। ई, ऊ या आ जोडकर जाणी, दीसइ, सुणी, कइ प्रणयू, करउ रूप बने मिलते है।

भूतकाल

भूतकालिक क्रियाओं की सरचना के लिए धातु मे आ, इ, ई, अउ, इउ, इया; इयां ,या, ओ, औ आदि प्रत्यय जोड़ दिया गया है। स्त्रीलिंग शब्दों के साथ इ या ई प्रत्यय लगाये गये हैं। परण्या, उतरया, आव्या, कह्या, गया, पहिराव्या, ओधिया, दीठा, नाठा, आवी, दीधी, दीव्यउ, माडयउ, जिमाडियउ, उडीयो, सग्रह्यो, आव्यु, गयु, पहुतो हुज्यो, सामल्यो, चढि, मुड, वइठी, आवी। इन क्रियाओं की वर्गीकृत तालिका नीचे प्रस्तुत की जा रही है

	एकवचन	बहुवचन
उत्तम पुरुष	कीधो, कीधउ, दीधो, लुवधउ, पाम्यो	पाम्या
मध्यम पुरुष	धयो	आव्या
अन्य पुरुष	धीघू, दीधउ, उग्यउ, हटाल्यो, सुण्यउ, धावी, माडयउ, नीकली, मिली, जोई, मोही, पहुतो, वइसार्यो, उतरिउ, नीरख्यो, करं, नीसर्यउ, परणावियो, सचर्यो	गया, उतर्या, करा, मूक्या, पहूता आव्या, पहिराव्या, परण्या, कह्या

धातुओं मे स्यत् प्रत्यय का योग करके क्रिया के भविष्यत् रूपों की सृष्टि की गई है। भविष्यत् कालीन क्रियाओं के प्राप्त रूप निम्न प्रकार हैं

भविष्यत् काल

	एकवचन	बहुवचन
उत्तम पुरुष	आविस, करोसि, माडिसु, आपेमि, आविसूं, वास्यउ, चालिसि, मीलूंगी	वीसस्या, आविस्या, मारसा, करेसा, परणाविस्या
मध्यम पुरुष	मेलसि, होशें, थासें	छाडिस्यो, आणिसि
अन्य पुरुष	होस्यई, जासी, लाधिसि	करस्यो, आणिसि

भविष्यत् कालीन क्रियाओं मे ला, ली, या गा, गी, से अन्त होने वाले प्रयोग प्राय नहीं मिलते है। उत्तम पुरुष में बहुवचन बनाने के लिये क्रिया के साथ सयुक्त प्रत्ययों पर अनुस्वार का प्रयोग किया गया है। जैसे परणाविस्या, करिसा, मारिसा, वीसस्या, आविस्या, छाडिस्या आदि।

सकर्मक क्रिया

लोयु, सारइ, विनवइ, वाचो, पूछियो, हणिउ, जाणिउ, सोधिया, जपइ, उतारी।

पूर्वकालिक क्रिया

करि, तरि, जोडि, देखि, समवि, विच्यारि, कूदी, आवी, जायी, पेसै चढै।

क्रिया का पूर्वकालिक पूर्णत्व रूप प्रदर्शित करने के लिये 'करके' के अर्थ मे इ, ई, नइ, ऐ आदि प्रत्ययो का प्रयोग किया गया है। यथा देखी नइ, विभासि नइ, करि नइ, आदि।

प्रेरणार्थक क्रिया

पहुचाइ, पोहचाय, सीचइ, चल

संयुक्त क्रिया

सयुक्त क्रियाएँ आकारान्तक, इकारान्तक या उकारान्तक या ओकारान्तक मिलती हैं।

पोढि, ग्रही, वइच्छउ, गाजतउ सूतो, कुप्यउ, हरख्यउ, वही गयो, रमवा गई, जोता, पाम्या।

अव्यय

अव्ययो मे काल, स्थान, दिशा, रीति, निषेध, विरोध, विभाजन, संकेत, सम्मुच्चयवोध, सम्बन्ध वोध आदि सूचित करने वाले शब्द प्राप्त होते हैं। लिंग, वचन कारक आदि की दृष्टि से अप्रभावित रहते हुए भी स्वय कवि ने उनको वर्तनी की दृष्टि से अनेक रूपो मे प्रस्तुत किया है। प्रतिलिपिकर्ताओ ने भी इन्हे अनेक रूप देने मे सहायता की है। प्रत्येक वर्ग के अन्तर्गत प्राप्य शब्दो की सूची नीचे प्रस्तुत की जा रही है

कालवाचक

आज, कदी, कदे, तव पछइ, अविहड, नित नित, दिन प्रति, तीणे, तत्काल तिसइ, कदाचित, नितु, सदा. वली, निसदीस, नव, हिवेंड

स्थिति और स्थान वाचक

इहा, उहा, तिहा, जिहा किहा तेथा, समीपई, ऊपरि, ऊंचउ, माहो माहि, विच

रीतिवोधक

काइ क्रमिक्रमि, अनुक्रमि, कि म ही, इणिपरि, एहवइ, जिसइ, तिसइ, इसउ, जिसु, इम, इम, विधिवत, बारवार

परिमाणबोधक

आधा, जरा, वहू, धणा, परिधल, सगला, सगली, अणगल, सवि किवलु।

विभाजन वोधक

काइ, के, का, कइ, कि, किना, केइ, अथवा

विरोध बोधक

पिण, पणि,

निषेध बोधक

म, मत, मति, न, नहीं, नवि,

सम्बन्ध बोधक

लगि, साथि, मधान, जुं, वार, जिसौ, समाणी, नमो

समुच्चय बोधक

परि, तोई, अर, विण, नै, नइ, नै, नउ, विना, अनइ, तव

संकेत सूचक

जिम, तो, ज, जे, जे-जे, जेह, त कि

उपसर्ग

कुशललाभ के कथा काव्यों मे प्रयुक्त उपसर्गों की संख्या अपार है। जिनके प्रयोग से शब्द विशेषता, हीनता, उत्कर्ष आदि को प्राप्त हुआ है। ये उपसर्ग हैं अ, आ, अभि, अणु, अवि, अव, उप, वि, प्र, परि, पर, स, सु, सम्, नि, दुर आदि। इन उपसर्गों को हम उपर्युक्त वर्गों मे निम्न रूप मे रख सकते हैं—

उत्कर्ष बोधक— प्र, उत, वि

विशेषता बोधक— प्र, अभि, नि, सद्, वि

हीनताबोधक— कु, अ, दु, दुर

विलोमबोधक—अ, वि

प्रत्यय

कृदन्त प्रत्यय

अइ नमइ, भावइ, पामई, चढई, दीसई, अभ्यसई, विलसई

अउ अवतरस्यउ, आलोचियउ, वइठयउ, धावउ

अत जीवत, निहारत

इत भावित, सुरभित, उदित, गयित, हरषित

अता जीवता, आराधता, भावता, पेखता

अता भावता, पेखता,

अति रुदती, बोलती

या आव्या, पठाव्या, पाम्या

इया आखिया, छातिया, रतिया

आ आ, अवतरिया, उपनीया, पामिआ, कुरलाइया

इउ भणिउ, प्रणमिउ, वेध्यिउ, हणीउ

ओ 'यो'	मरयो, पाम्यो, पायो,नीमाय्रयो, मीरज्यो, कंपाविवो
डी	सकोडी, येवडो, पोयोडीह
वी	नीयजवी, मनावी, राजवी, मानी, मोनवी

तद्धित प्रत्यय

वत	अलवत, विद्यावंत, शीलवत, भगवत
कार	नृत्यकार, सुखकार, अहकार, धीकार
हार	मागिणहार, तारणहार, निरजणहार
आर	भरतार, करतार
रो	नोतरो
डी	देवडी, मोजडी, गोरड़ी
डो	हीयडो, सदेसडो
ली	नवली सगली, सभली, हथेली, दोहिली
ला	सगला, सघला, अवला, एकला
अक	दायक, वीतक, कातक, सेवक

शब्द शक्तियो मे अभिधा लक्षणा और व्यजना का यथोचित प्रयोग हुआ है। भाषा मे ओज माधुर्य एव प्रसाद जैसे गुणो की प्रसगानुकूल अभिव्यक्ति हुई है।

शैली का प्रमुख गुण अर्थ गभीरता है जो शब्द देखने मे साधारण लगे किन्तु उसका अर्थ गभीरता रखता हो, यही शैली की विशेषता है। कम शब्दो मे भाव गाम्भीर्य को प्रकट करने के लिये कवि मुहावरे एव लोकोक्तियो का भी सहारा लेता है।

कुशललाभ ने मुहावरो एव लोकोक्तियो का प्रयोग भाषा को सरस माधुर्य एवं सशक्त बनाने के लिये किया है। वे निम्नलिखित हैं हसी उडाना, नि श्वास भरना, थाह खोजना, वाट जोहना, दिन गिनना, नमक छिडकना, आख न लगना, कलेजा फटना, हृदय फटना हवा होना, घात खेलना, हाथ मलना, पीला पडना, दूध का मेह वरसना, सिद्धि करना, अमगल होना आदि हैं।

लोकोक्ति मे पहेली और कहावत को हम ले सकते हैं। लोकोक्ति मे जीवन का सत्य सक्षेप मे प्रकट होता है।

डॉ सत्येन्द्र पहेली का अर्थ स्पष्ट करते हुये लिखते है कि लोक मानस इन पहेलियो के द्वारा अर्थ गौरव की रक्षा कर मनोरजन प्रदान करता है। बुद्धि परीक्षा का यह एक साधन है। ये बुद्धि कौशल पर निर्भर करती है।[1] कुशललाभ के

1 ब्रज लोक साहित्य का अध्ययन डॉ० सत्येन्द्र पृ० 520

'माधवानल कामकदला चउपई' में प्रहेलिका आयोजन माधव कंदला मिलन के समय हुआ है ।[1]

कुशललाभ के साहित्य मे हमे सरल, गूढ, अलकृत एव क्लिष्ट शैलियाँ मिलती है

सरल[2] शैली जैसे

तेहनउ प्रोहित सकरदास ऋद्धिवंत नइ सील विलास ॥46॥

अलंकृत शैली[3]

अहर रगि रतउ हुउ मुखि कज्जल मसिवन्न
जाणिउ गुजा हल अछइ तेणिन दूकउ मन्न ॥282॥

गूढ शैली[4]

वालम दीप पवन्न भई अचले सरण पइट्ठ
करहीणउ धूणइ कमल जाम पयोहर दिट्ठ ॥246॥

परम्परा की दृष्टि से देखें तो कुशललाभ के कथा साहित्य की शैली जन शैली है । इन कथाओ मे लोक मानस की यथार्थ झाकी तथा उस युग की वाणी मुखरित हुई है । इनमें लोक जीवन की सहज स्वाभाविक भावनायें प्रेमी युगल के माध्यम से प्रकट की गई है ।

अलकार

काव्य की शोभा वढाने वाले तत्व ही अलकार है ।[5] आचार्य श्यामसुन्दर दास लिखते हैं कि जिस प्रकार आभूपण शरीर की शोभा वढाते हैं उसी प्रकार अलंकार भाषा का उत्कर्ष रस वृद्धि करते है ।[6] पाश्चात्य विद्वान क्रोचे अलकार को अभिव्यजना का अभिन्न अग मानते है ।[7] अलकारो का प्रयोग भाव अनुकूल होने से भाषा प्रभविष्णु वनती है । अत अलकार भाव और भाषा के भूपण है ।

कुशललाभ ने अलकारो मे अर्थालकार और शब्दालकार दोनो का सुन्दर प्रयोग किया है । अर्थालकारो मे सादृश्यमूलक अलकारो का अधिक प्रयोग कवि

1. माधवानल कामकदला चउपई दोहा संख्या 265 से 339
2 दोहा सख्या 46 रो मा भो इ प्र डॉ० जावलिया मे प्राप्त प्रति
3 दोहा संख्या 242
4. दोहा सख्या 246
5 काव्य शोभाकरान् धर्मानलकारान् प्रचक्षते काव्यादर्श (दण्डी)
6. साहित्यालोचन पृ० 316
7. थ्योरी ऑफ एसथेटिक्स पृ 113

ने किया है और उनमे भी उपमा अलंकार का जो स्वत प्रयुक्त जान पड़ता है। काव्य कौशल और अलंकारो की छटा दिखाने मे कवि कही नही उलझा है। इसलिये उसमे दूर की कौडी लाने का प्रयास नही मिलता, परन्तु जो भी अलंकार इन कथा-काव्यो मे आये हैं वे सहज और स्वाभाविक रूप से रस के उपकारक वन कर आये है।

नारी रूप वर्णन मे कवि ने परम्परागत उपमाओ को ही अपनाया है। जैसे—

उर जु गयवर पग घणु दाडिम दत सुतेज
कुभी भापस गोरिया पजन जेहा नेत्र ॥457॥

जघ सुपत्तल करि कुअल, झीणी लव पुलव
ढोला एही मारुइ, जाणिक कणयर कंव ॥455॥

'माधवानल कामकदला' मे

चपकवर्ण सकोमल अग, मस्तकि वेणी जाणि भुयंग
अधररग परवाली वेलि गयवर हस हरावव गेलि ॥194॥

पीन पयोधर कठिन उत्त ग लोचन जाणि त्रस्त कुरंग
भालि तिलक सिरिवेणी दड भमह वक मनमथ को दड ॥197॥

केसरिसिह जिस्यु कटिलक रतन जड़ित कटि मेखलवंक
जघ जुयलकरि कदली थभ अभिनव रुपिइ रमणी रभ ॥199॥

'तेजसार रास' मे

नव यौवन तिण माहे नारि अपछर नई दीसै अणुहरि ॥122॥

'भीमसेन राजहंस चौपई' मे मदनमजरी का रूप वर्णन निम्नलिखित प्रकार से किया गया है[1]

सन्यासी बोलइ सुणि राय, सत्य वचन सुण्योसंद्भावइ
सुदंरि सह जगतइ सुकमाल मान सरोवर जेम मराल ॥132॥

लघु केसरि जेह वीकडि लक मलि नरि हत मुख जाणि मयक
उपइ कुदण जिम तसु अंग चपल तुरगम चष्य अति चग ॥133॥

रभा गर्भ जिसी जुग जघ उदित विल्व सम उरज उतग
अधर पक्व विवा अणुहारि कीर पुतली चित्र आकार ॥134॥

अवला नउ छइ रूप असंम कोमल वाणी अमृत कुंभ ॥135॥

1 भीमसेन राजहंस चौपई ह प्र प्र 1217 ला द प्र अहमदावाद

इन कथाओ मे परम्परागत उपमाओं मे भी एक विशेषता दिखाई देती है और वह है इन पर छाया हुआ राजस्थानी रग और रुचि । राजस्थान मे सौन्दर्य के साथ शोभा सदा सयुक्त रही है । यह राजस्थानी सौन्दर्य की अपनी मौलिक विशेषता है । नायिका के नाक की उपमा शुक चोच से तो कई जगह दी हुई मिलती है परन्तु कुशललाभ की नायिका कामकदला की नासिका की यह उपमा तो सर्वथा ही मौलिक है

नाक जिसी दीवानी सिखि वाहि रतन जडित वहिरखी ॥193॥

दीपक की लौ के समान नायिका की नासिका है । इसी प्रकार मारवणी के अलसाये नैत्रो मे लाल डोरे हैं, और वे कबूतर की आखो के समान भोली भी है ।

मारू पारेवाह ज्यू अखी रत्ता मझ ॥459॥

छन्द प्रयोग

काव्य वर्द्धछन्द का सम्बन्ध घनिष्ठ एव अभिन्न रहा है । प्रसिद्ध पाश्चात्य दार्शनिक 'मिल' के शब्दो मे "जब से मनुष्य मनुष्य है, तभी से उसके सभी गभीर और सम्बद्ध भावो की अपने आपको लययुक्त भाषा मे व्यक्त करने की प्रवृत्ति रही है । भाव जितने ही अधिक गभीर हुये हैं, लय उतनी ही विशिष्ठ और निश्चित हो गई है ।"

भारतीय साहित्याचार्यो मे दण्डी ने सर्वप्रथम महाकाव्य मे पढने एव सुनने मे मधुर रमणीक छन्दो की आवश्यकता का उल्लेख किया है । उनका कहना है कि एक सर्ग मे एक ही छन्द का प्रयोग होना चाहिये तथा सर्गान्त मे भिन्न छन्द का प्रयोग अपेक्षित है ।[1]

कविवर पत ने कहा है "कविता तथा छद के बीच बडा घनिष्ठ सम्बन्ध है, कविता हमारे प्राणो का सगीत है, छन्द हृत्कम्पन, कविता का स्वभाव ही छन्द मे लयमान होता है । जिस प्रकार नदी के तट अपने बन्धन से धारा की गति को सुरक्षित रखते हैं जिनके बिना वह अपनी ही बन्धन हीनता मे अपना प्रवाह खो बैठती है, उसी प्रकार छन्द भी अपने नियत्रण से राग को स्पन्दन कम्पन तथा वेग प्रदान कर निर्जीव शब्दो के रोडो मे एक कोमल सजल कलरव भर उन्हें सजीव बना देते हैं । वाणी की अनियमित सासें नियन्त्रित हो जाती, ताल मुक्त हो जाती, उसके स्वर मे प्राणायाम रोओ मे स्फूर्ति आ जाती, राग की असम्वद्ध झकारें एक वृत मे बध जाती, उनमे परिपूर्णता आ जाती है । छन्द बद्ध शब्द चुम्बक के पार्श्ववर्ती लोह चूर्ण की तरह अपने चारो ओर एक आकर्षण क्षेत्र तैयार कर लेते, उनमे एक प्रकार

1. काव्यादर्श 1/18-19

का सामजस्य, एक रूप, एक विन्यास आ जाता, उनमे राग की विद्युत धारा वहने लगती, उनके स्पर्श मे एक प्रभाव तथा शक्ति पैदा हो जाती है।"[1]

कुशललाभ के कथा साहित्य मे छन्द वैविध्य की दृष्टि से निम्नलिखित प्रकार के छन्द प्रयोग देखने को मिलते हैं

1. दूहा

दोहा एक अर्ध सममात्रिक छन्द है। इसके 23 भेद हैं।

सकल सुरासर सामिनी, सुणिमाता सरसत्ति
विनय करीनइ वीनवु मुझ घउ अविरल भत्ति
ढो मा चौ. ॥1॥

2. चउपई

पूगल नयरी मरुधर देस, निरुपम पिंगल नाम नरेस
मारुवाडी नवकोटी धणी, उत्तर सिंधु भूमि तसु तणी
ढो मा चौ ॥13॥

3. गाहा या गाथा

गाहा शब्द गाथा का रूपान्तर है। यह सस्कृत के आर्या छन्द के निकट है। गाथाओ मे 57 मात्रायें होती हैं।

मणहर नवरस मज्झे सुंदरि नारीण सरस सवधा
निरुवम कव्व निवद्धा सुणउ सयणा जणा सगुण
ढो म. चौ ॥5॥

4 कवित्त

पय उदड प्रचड सदा चगो पुर साणी
वीजी निर्मल वस्त्र पक विणु गगानउ पाणी
ढो. मा चौ ॥7॥

5. वस्तु

इनका प्रयोग विस्मयजनक परिस्थितियो मे अपना अद्भुत रस की अभिव्यक्ति के लिये होता है

देवि सरसति देवि सरसति सुमति दातार
कासमीर मुखमडणी ब्रह्म पुत्रि करि वीण सोहइ
मोहण तरुवर मन्जरी मुख मयक त्रिहुभुवन मोहइ
पयपकय प्रणमि करी, आणीमनि आणद
सरस चरित शृगार रस पभिणिसिउ परमाणद
मा का चौ ॥1॥

1. पल्लव की भूमिका पृ० 21

6. श्लोक

आज्ञाभङ्गो नरेन्द्राणां महतां मानमर्दनम् ।
पृथक् शय्या च नारीणाम शस्त्र वध उच्यते ॥
मा का चौ. ॥19॥

7 सोरठा

दोहे का उलटा सोरठा है । इसके भी 23 भेद हो सकते हैं ।

माण्या न मिलइच्यार, पूरव पुरादत्त विण ।
विद्या नइवर नारि, सर्प गेह सरीर सुख ॥
मा का. चौ. ॥ 83 ॥

8 मालिनी

श्री रागोऽथ वसन्तश्च पञ्चमो भैरवस्तथा ।
मेघरागश्च विज्ञेय षष्ठो नट्टनरायण ॥
मा. का. चौ. ॥ 148 ॥

9 शार्दूल विक्रीडित

विद्वत्व च नृपत्वं च, नैवतुल्यं कदाचन
स्वदेशे पूज्येते राजा, विद्वान् सर्वत्र पूज्यते
मा. का चौ ॥ 191 ॥

10. अनुष्टुप

पर्वताग्रे रथे जाते, भूमौ तिष्ठति सारथि ।
चलति वायु वेगेन, पादमेक न गच्छति ॥
मा का चौ ॥ 272 ॥

11 गूढार्थ

यह भी दोहे का एक भेद है । इसमे सकेत से अर्थ समझाया जाता है ।

वन रिपु, तस रिपु, तास रिपु, तस्स हार पिअ्रेण
जइ तिणि मूंकी धाहडी, ता मुक्कि प्री प्रीएण
मा का चौ ॥ 306 ॥

12 छंद पद्धडी

विक्रमादित्य तिहा करइ राज, प्रिथिवी जिणि उरण करि काज
परनारी वधव रणि अभग सरणागत-वच्छल सावलिंग
मा का चौ ॥ 375 ॥

13. शिखरिणी

प्रिया स्मृत्वा सद्य स्फुटित हृदयो मन्मथवशात् ।
अहा हा हा हा हा, हरि हरि मृतः कोऽपि पथिक ॥
मा. का चौ ॥ 573 ॥

14. ढाल वेलिनी

सुमति नाम राय नो मन्त्री, सूर पांच तेहनं० पुन
हितसागर लघु पुत्र तेहनो, महीपति नई ते मित्र
भीमसेन राजहस चौपई ।। 34 ।।

15 ढाल मृगांक लेखानी

कागल वाची कहइ राय सम्भल हितसागर ।।
करउ वुद्धि कोई उपाय निर्मल मतिनागर ।।
स्वामी जी सहू तुम्ह प्रसादि ए कारिज सीझइ ।
सही हुसइ सयोग एह राय सम्भली रीझइ ।।
भीमसेन राजहस चौपई ।। 114 ।।

16. अथरहु नी ढाल

प्रेम प्रीतम मिलउ मन रगि, सकल चित्त आस्या फली ।
कहइ नारि किरतार तुट्ठइ अगइ जग अलजउ हुतउ ।
सोइ सामि मनइ आणि, दिठउ रायइ पेरवी पदमिनी ।
अधिक थयउ आणद, हितसागर पोपट सहित पाम्यउ परिमाणद
भीमसेन राजहस चौपई ।। 187 ।।

17. ढाल गीता छंदानी

धावि मणइ अवधारउ भूपति, भगति करता तूठी भगवती
भगवती तुम्ह चइ भाग्य तूठी कहउ श्रीपुरे छइ किहां ।
किहा विसालापुरी किण परि ए सयोग मिल्यउ इहा ।।
तिणवार पहुतो सगर तोरण परिणवा प्रीतइ करी
तव पिता धावि सुता समीपइ आव्यो मन आणद धरी
भीमसेन राजहंस चौपई ।। 190 ।।

18. राग रामग्री नीढाल

रायनी पीरथि आवीया नहु पेपइ मारि
आकुल व्याकुल इम कहइ कीसूं किरतार
विरह वृथा व्यापउ हियइ रामा ।। 201 ।।
भीमसेन राजहस चौपई

19. दूहा राग सामेरी

मदनमंजरी मनि दुष रडइ आणइ मनि अदोह
अण चीतउ आवी पडउ वालम तणउ विछोह ।।
भीमसेन राजहस चौपई ।। 214 ।।

20. दूहा राग आसाउरी

इण परि अवला नासती रडती रन्नि मझारि
रात्रि गई रवि ऊगम्यउ पामीउ अटवी पाट
भीमसेन राजहस चौपई ।। 219 ।।

21. ढाल जतिनी राग सामेरी

आश्रम माहे एकठा मिल्या सहूमन पति
सहू तापस सेवा करइ वहू सुजस वोलती
भीमसेन राजहस चौपई ॥ 235 ॥

22. दूहा राग सोरठी

अमकुल निर्मल वन विमल उत्तम थया अनेक
तू चंदन तरु अवतरउ सुजस सुवास विशेप
भीमसेन राजहस चौपाई ॥ 375 ॥

23. ढाल डूंगरदानी

यौवन वेस जातइ सुषी, फल वल अगार
कुमर चडी नइ क्रीडा करइ फेरवइ तरल तुरग रे विनय करि
भीमसेन राजहस चौपई ॥ 402 ॥

24 ढाल इकवीसानी

तिण नगरी रे उपवन अति सोहामणउ रे
तिहां आपउ रे ऊतारउ कुमरह तणउ
वीजा वहू रे मोटा जे महिपति मिल्या
ते सिघली रे अनयानकि भेदइ मिल्या
भीमसेन राजहस चौपई ॥ 487 ॥

25. ढाल राग धन्यासी

सारग नयणी सु दरी अष्टमी सिसिसम भाल
तस दसनकरि दाडिम कुली पेपंता अधर प्रवालो जी
राजकुमर रमा जिसी आकणी
भीमसेन राजहस चौपई ॥ 501 ॥

26. ढाल संधिनी

पूछइ धर्म तणउ परिकार श्री सर्व जादव अधिकार
दूरि किया जिण दोप अढार पट काया जीवह सुषकार
भीमसेन राजहंस चौपई ॥ 552 ॥

27. छंद त्रोटक

चढि चोट अद्रुह द्रुह चडइ घटिक धढि एकाणि वाय घडइ
गह मत्त गयद गडइ गडडइ अनडा अपडइ अहडइ अहडइ
दुर्गा सात्तसी ॥ 56 ॥

28, छंद भुजंगी

कसी कोड तेत्रीस सहि प्रज कीधा लोहा प्राणलो डेसवे दुरग धीपा
भणइ एम देवा मुजा तुम्फ स्वामी सुरा त्राहि ऊवहि त्रिलोक्य स्वाम
दुर्गा सात्तसी ॥ 65 ॥

29. छंद नराय

सहष अष सपीय वले षटा अइरापत
जियेण डड पाण जोड दव फद आदिने
प्रजा पतेन पर्वता अपै माल सुदरा 'आवद्ध'
दुर्गा सात्तसी ॥ 77 ॥

30. कलस

आव्रजीया आवद्ध विश्व करि कमले विमला
हड हडति हड हसीय तिण सद्ध पूछइ त्रिलोक
दुर्गा सात्तसी ॥ 82 ॥

31. सावजड

तउ प्रगट्या दैत्य पालटइ गिरपुरा जुडइ लोह कीया युद्ध सहि जाजरा
छुपते दुरग वर्वे विधूणे धरा, कदला केवीयां मेरु दाषे करा
दुर्गा सात्तसी ॥ 145 ॥

32. छंद सारसी

दुर वन्न देह जेम्म जेहा अमगा एहा आरहइ
वाजी विडगे फूल डगेसा मुहाँ केसा मुहइ
कलि विणा कलि वाँह वाँहे भिगे वाहे नीकडे
दुर्गा सात्तसी ॥ 196 ॥

33. छंद हणुफाल

षडीया गयणे षोडि शकरी सुसइ श्रोणि
के असुर कीध आहार के माडीया प्रहार
दुर्गा सात्तसी ॥ 213 ॥

34. छंद रोमक

धीए जलधार प्रहार कधूँ हरि भेदत चक्र भिडाति भद्रा
पलषती रत्त पीयर भरि षप्पर चत्रु मुचग सारग वहाँ कालि
दुर्गा सात्तसी ॥ 224 ॥

35. छंद लीलावती

पकरह शिम कामपुर षात नवउरंग रस लूधर श्रं
[illegible] नाचइ मड निवड त्रिवड धड नारी हाकवी रथइ का हूम

सिंदूर सधण सोहला सोहइ अति आणद सुराउ अरे
वर प्रापति विस कन्या ब्राह्मणी परणह दावण एम परे
दुर्गा सात्तसी ।। 277 ।।

36. नाटा दूहा

वूंद वूंद बल चन्द्र सेना घर पडत समा
ऊठ्या देवी ए षता प्रोठा नरा प्रचड ।।
दुर्गा सात्तसी ।। 294 ।।

37. छद विश्रषरी

दाणव देव वे विद् अगम वरइ आदि ऊगटयो विसम
रामाइण भारथ तन रुपे मातउ युद्ध वाजीयउ सन मुषे
दुर्गा सात्तसी ।। 299 ।।

38. आर्या दूहा

माषइ दाणव भो भुजे शिभ तणउ युद्ध सूत्र
मिलइ जुघ तिहारा मिलइ रिण सग्राम राजपूत
दुर्गा सात्तसी ।। 316 ।।

इस प्रकार कुशललाभ के कथा साहित्य मे छद योजना बडी पुष्ट और परिमार्जित रूप से हुई है। छन्दों की विविधता से कवि का भाषा पर अधिकार एव रचना कौशल का पता चलता है। जैन कवि होने के कारण विविध राग-रागनियो का भी प्रयोग कथाओ मे किया है। इन कथाओ मे ढाल भी मिलते हैं और प्रत्येक ढाल से पूर्व राग-रागनियो का नामोल्लेख भी मिलता है।

प्रकृति चित्रण

साहित्यकार को प्रेरणा देने वाली प्रकृति ही है। प्रकृति के साहचर्य से ही साहित्य 'सत्य शिव सुन्दर' का प्रतीक बनता है। मानव जन्म से ही प्रकृति की ओर आकृष्ट रहा है। प्रकृति अपने सौन्दर्य से मानव मन को मोहित करती है। साहित्य मानव जीवन का प्रतिविम्ब है। अत उसमे उसकी सहचरी प्रकृति का होना भी स्वाभाविक ही है। आदिकाल से ही प्रकृति और काव्य का सम्बन्ध चला आ रहा है। वाल्मिकी रामायण मे मानवीय भावनाओ के उद्दीपन के लिये स्थान-स्थान पर प्रकृति का आश्रय लिया गया है तो कालिदास की रचनाएँ प्रकृति के रम्य चित्रो से भरी पडी है। सस्कृत साहित्य मे तो प्रकृति चित्रण बहुत ही अधिक हुआ है। प्राकृत और अपभ्र श के जैन कवियो ने प्रकृति वर्णन मे सस्कृत कवियो का ही अनुसरण किया है। इस प्रकार वैदिक युग से आधुनिक युग तक साहित्य मे प्रकृति चित्रण का प्रमुख स्थान रहा है।

कवि प्रकृति के साथ तादात्म्य करता है तो कही प्रकृति मानव मन के साथ सामंजस्य स्थापित करती है। प्रकृति उसके दु ख मे दु खी तथा हर्ष मे हर्षित दिखाई देती है।

कुशललाभ के साहित्य मे प्रकृति चित्रण निम्नलिखित रूपो मे मिलता है .

(1) आलम्बन रूप मे
(2) उद्दीपन रूप मे
(3) अलकार रूप मे
(4) मानवीकरण रूप मे
(5) उपदेशात्मक रूप मे
(6) प्रतीक रूप मे

1. आलम्बन रूप में

आलम्बन रूप मे प्रकृति चित्रण की दो प्रणालियाँ प्रचलित हैं, बिम्बात्मक अथवा चित्रात्मक तथा वस्तु परिगणनात्मक ।

वस्तु परिगणनात्मक

प्रकृति के वस्तु परिगणनात्मक चित्रण मे कवि ने पर्याप्त रुचि ली है । प्रकृति चित्रण का यह रूप 'भीमसेन हसराज चौपई' मे मिलता है जहाँ कवि ने पेडो के नाम तथा उनकी विशेषताएँ आदि गिनवाई हैं । इस प्रकार के वर्णन नीरस से प्रतीत होते हैं तथा लालित्य की कमी इन वर्णनो मे हो गई है । यह वर्णन पर्याप्त लम्बा है । कवि ने कई पेड़ो के नाम[1] एव गुण इन दोहो मे बताया है ।[2]

1. सरस सदा फल नइ सहकार, अगर अशोक अरजन अनार
   करणी केलि कपूर कदव, जाती फल जामुन जंब ॥ 24 ॥
   पारजाति पदमपय नाग, सूकंडि सिमी सिव नइ साग
   राइण रोहिडा रोहीस, वेडसवेड वरण नइ वस ॥ 25 ॥
   श्रीफल सोपारी सुरसाल, सगर तिमर तिदुक नइ ताल
   नींवू निंव जानइ नारिंग पीपल पारस पील प्रियंग॥ 26 ॥
   खयर खल हला खीप खजूर वकुल विदाम वीजना पूर
   मडप ढाक तणा माहुंत अवर वृक्ष नी जाति अनन्त ॥ 27 ॥
   नाग वेल नड नींल निकुंज परिपरि पसर पुहप ना पुंज
   रूडा घणा सकल सहिष्प, खाजइ जिण आहारइ भूख ॥ 28 ॥

2 अर्जुन वृक्ष अच्छइ ए लोमी जइ समिपि घन जाणइ
   मोहइ विस्तारी भूलाडा आप हेठि घन आणइ ॥ 49 ॥
   एह पवित्र पारजातक तरु माननी तुलसी माल
   प्रात समइ शाखा पहिरावई तउ फूडइ ततकाल ॥ 50 ॥
   मणीयइ भोज वृक्ष ए भूपति मखइ सहुफल मूत
   पाका फल प्रमुदा जड प्रासइ तउ पामइ संध्या पुत ॥ 51 ॥
   दोहा संख्या 45 से 58
   भीमसेन राजहंस चौपइ प्र॰. 1217 ला. द प्र॰. अहमदाबाद

'तेजसार रास' मे भी प्रकृति चित्रण मिलता है। विजयश्री अपने पति तेजसार के साथ वन मे जा रही है, कवि को वनश्री के वैभव का वर्णन करने का सुन्दर अवसर मिलता है परन्तु वह तो सरोवर पक्षियो के कलरव आदि मे डूब गया है।[1] वन की भयकरता का परिचय मात्र देकर कवि फिर हिरणो के झुण्ड मे खो जाता है।[2] कवि का कोमल हृदय इन वस्तु परिगणनात्मक चित्रणो मे नही रम पाया है।

'ढोला मारवणी चौपई' मे वस्तु परिगणनात्मक चित्रण मे ढोला-मालवणी के संवाद आ सकते हैं। ढोला मालवणी के लिए विभिन्न प्रकार के वस्त्राभूषण देशाटन करके लाना चाहता है।[3] 'ढोला मारवणी चौपई' मे वस्तु परिगणनात्मक चित्रण देशगत स्वाभाविकता एव सजीवता के साथ साकार रूप मे चित्रित हुआ है।

जिणभुइ पन्नग पीयणा कयर कटाला रूँख
आके फोगे छाहडी हूँ छाँ भाँजइ भूख ॥ 685॥

बिम्बात्मक चित्रण

प्रकृति के अनेक सुन्दर एव रम्य चित्र इन कथा-काव्यो मे अंकित है। 'ढोला मारवणी चौपई' मे यह बिम्बात्मक चित्रण कवि ने विविध ऋतु वर्णनो के माध्यम से प्रस्तुत किया है।[4]

1 सीतल छाया वड ने हेठि ते वेसारी जोवे हेठि
वहु पंखी कोलाहल जिहां सही सरोवर दीसे तिहा ॥115॥
यहु तो सरोवर भणी कुमार पेखउ निर्मल नीर अपार
पाखलि सरस सदा फलरूँख भांजइ जेण महाने भूख ॥115॥
राजहस सारस चकवा दीसे परवी बहु नवनवा
× × × × × ×
फल आहार केला तणा, एक केली हर सोहामणा
थाकी सुख वैठी साथ रै, विचय सिरो तिहां निद्रा करे ॥ 120 ॥

2 अटवी चिहुँ दिशि अति विकराल कुमर फिरे ग्रही करवाल
भय सावज नु' टालण भणी जोतु जाये कुमर भुइ घणी ॥ 121 ॥
तिहां पेखे हरिणां नु टोल कूदें रमे ने करे कलोल ॥ 122 ॥
तेजसार रास चौपई ग्र 25646 रा प्रा वि प्र. जोधपुर

3. मालवणी तू मन सखी जाणइ सहू विवेक
हिरणाखी हसिनइ कहइ करउं दिसाउर एक ॥ 332 ॥
ढो मा चौ ह. प्र डा जावलिया से प्राप्त प्रति

4 वाजरियाँ हरियालियाँ विचि विचि वेला फूल
जउ भरि वूठउ भादवउ, मारू देस अमूल ॥ 350 ॥
नदियाँ नाला नीझरण पावस चढिया पूर
करहउ कादिम तिलकस्यइ पयो पूगल दूर ॥351 ॥
जिणि दीदे पालउ पडइ टापर तुरो सहाइ
तिणी रिति वूठी ही मुरइ तरुणी केम रहाइ ॥ 370 ॥
डो. मा. चौ ह प्र. डा. जावलिया से प्राप्त प्रति

पगि पगि पाँणी पंथ सिर, ऊपरि अम्बर छाँह
पावस प्रगटयउ पदमिणी कहउत् पूगल जाहँ ॥348 ॥

'माधवानल कामकंदलाचउपइ' मे प्रकृति का यह चित्रात्मक वर्णन कंदला माधव के मिलन व प्रश्नोत्तर रूप मे देखा जा सकता है ।[1] कदला की विरह अग्नि को माधव रूपी वादल ही बुझा सकता है

जव प्री वादल होइ करि वरसि बुझावइ अग्नि ॥ 353 ॥

'भीमसेन राजहस चोपई' मे रानी मदनमंजरी वन मे सन्यासिनी के साथ पानी लेने जाती है उस समह कवि ने विप वृक्ष का उल्लेख किया है ।[2] वर्पा काल का वर्णन भी कवि ने वडा ही सजीव किया है

एह वइ आव्यो वर्पाकाल अवरि अति गाजइ असराल ॥ 264 ॥
वर्पा ऋतु जल वन विस्तार मदि आव्यउ मय गलतिणवार ॥ 269 ॥

राजा भीमसेन और रानी मदनमजरी सध्या के समय वन मे अकेले हैं उस समय वन विकराल दिखाई दे रहा है तथा भूत एव वेताल कूद रहे हैं

थयउ एह वइ सध्या समइ महा भयकर सावज भमइ
वर्त गहन्न दीसइ विकराल विकट भून कूदड वेताल ॥ 286 ॥

रात्रि के मध्य प्रहर वन मे चारो ओर महान अधकार छाया हुआ है, परन्तु सामने पर्वत की ओर प्रज्वलित दीपक दिखाई दे रहे हैं जो क्षण मे ऊँचे हो जाते हैं और क्षण मे नीचे सरक जाते हैं । ये दीपक नही चदन वृक्षो से लिपटे विपधरो की मणियो का प्रकाश है ।[3] चदन वन का वर्णन कवि ने वड़ा ही सजीव एव साकार रूप मे किया है । प्रकृति चित्रण मे कवि प्राय मानवीय सन्दर्भ देता नही भूला है । पर्वत पर देहरा (मदिर) है जिसके वाहर एक तपस्वी वैठा है ।[4]

1. जिमि मधुकरनर कमलिणी, गगासागर वेलि ॥ 252 ॥
पूनिमचंद मयंक जिम दिसि च्यारि फलीयहि ॥ 256 ॥
जाणि विहसी केतकी भमर वईठुउ आइ ॥ 259 ॥
माधवानल कामकंदला चोपई
2 दोहा संख्या 226
3 राय कहइ रजनी समइ दीठा दीपक जेह
ते चदन तरवर तणइ विलगा विपधर एह ॥ 296 ॥
मोटा मणिधर मस्तकइ जे मणि योति करति
ते दीसइ निसि दीप जीम अलगा अति उपति ॥ 297 ॥
4 अनुक्रमि चढया शैल ऊपरइ पेपइ कौतक गनि नत्रि डरइ
जिम आव्या देहरा नइ वारि तापस एक दीठउ तिण वार ॥ 301 ॥

2. प्रकृति का उद्दीपन रूप

काव्य मे प्रकृति का चित्रण, भावो को उद्दीप्त करने के लिये भी किया जाता है। सयोग के समय यही प्रकृति सुख एव हर्ष को बढाने वाली है तो वियोग के समय कष्ट प्रदान करके व्यथित करने वाली सिद्ध होती है।

इन कथा काव्यो मे प्रकृति वर्णन प्राय उद्दीपन रूप मे ही हुआ है। नायिका की मानसिक दशा के अनुरूप ही प्रकृति का वर्णन किया गया है। वर्षा नायिका के हृदय मे प्रिय मिलन की इच्छा उत्पन्न कर देती है एव उसके उपकरण मेघो की गर्जन, विजलियो की चमक, दादुरो का रव, पपीहे की पुकार आदि विरह भावना को उद्दीप्त कर देते हैं।

'ढोला मारवणी चौपई' मे विरह व्यथिता मारवणी को कुरझो के बोलने से अपने प्रिय का स्मरण हो आता है और उसके नेत्रो मे जल भर जाता है। उसके अगो पर आरी चल जाती है तथा प्रिय की स्मृति सार की तरह सालने लगती है।[1]

'माधवानल कामकदला' मे भी प्रकृति का उद्दीपन रूप से वर्णन हुआ है। वेल से अलग होकर पत्ते जिस प्रकार पीले हो जाते हैं। उसी प्रकार कदला के माधव से अलग होते ही विरह की अग्नि हृदय मे प्रज्वलित हो गई और उसका धुआँ अन्दर ही अन्दर घुट रहा है। इसी कारण नायिका दिन-प्रतिदिन पीली होती जा रही है।

हियडा भीतरि दव वलइ धूआ प्रगट न होइ
वेलि विछोह्या पानडा दिन दिन पीला होइ ॥ 419 ॥

यही नही जिस प्रकार दादुर का सरवर से तथा धरती का मेह से सम्बन्ध है उसी प्रकार कदला अपने नेह का पालन कर रही है।[2]

3. अलंकार रूप

गुण प्रकृति एव भाव साम्य को प्रकृति से गृहीत उपमानो द्वारा प्रस्तुत कर कवियो ने प्रकृति का अलकारिक रूप प्रस्तुत किया है। यह वर्णन कुशललाभ के यहाँ कुछ परम्परागत है तो कुछ नवीनता लिये हुये है। नायिका के नखशिख वर्णन

1, सूती साजण संभरया करवत वूहि अंगि ॥ 345 ॥
सारहली जिउं साल्हियाँ सज्जण मझ सरीर ॥ 246 ॥
सूती साजण समरया उह भरिया नयणे ह ॥ 247 ॥
ढो मा चौ ह ग्रं डा जावलिया से प्राप्त प्रति

2 जिम सालूरा सरवरा जिम धरती अरु मेह
चपावरणी वालहा इम पालिजा नेह
माधवानल कामकदला चौपई ॥ 452 ॥

मे अलंकारिक रूप देखने को मिलता है[1]

जघ सुपत्तल करि कुअल झीणी लंब प्रलंब
ढोला एही मारूई जाणि कणयर कंब ।। 455 ।।
उरजु गयंमर पग धणु दाडिम दंत सुतेज
कुभी भापस गोरियाँ, खजन जेहा नैत्र ।। 457 ।।

मारवणी के अधर कुच एव नैत्र मधु की तरह मीठे हैं मानो वह मधुर द्राक्षा हो

अहर पयोहर, दुह नयण मीठा जेहा मख्ख
ढोला एही मारूई जाणे मीठी दख्ख ।। 466 ।।

मारवणी आम के बोर की तरह कोमल है जो छूते ही कुम्हला जाती है ।[2]

4. मानवीकरण रूप

प्रकृति को सजीव सत्ता के रूप मे चित्रित करना ही मानवीकरण है । प्रकृति के उपकरण मेघ पवन आदि सदेश प्रेषक का कार्य करते हैं । पेड पौधे, पशु-पक्षी नायिका के सुख दुख के साथी होते हैं । प्रकृति के इस मानवी रूप में अलौकिक तत्वों का आश्रय लिया गया है ।

ढोला मारवणी चौपई मे ऊंट,[3] शुक,[4] कुरझो,[5] आदि का वार्तालाप मानवी-

1 (क) दोहा संख्या 194-200 माधवानल कामकदला चौपई
(ख) सत्यासी बोलइ सुणि राय, सत्य वचन सुणयो सदभावइ
सुन्दरि सहु जगतइ सुकमाल, मान सरोवर जेम मराल ।। 132 ।।
लघु केसरि जेहु वीकटिलंक गलि न रिहत मुख जाणि मयंक
उपइ कुंदण जिम तसु अंग चाल सुरग म चण्ण अति चंग ।। 133 ।।
रभा गर्भ जिसी जुग जघ उदित विल्व सम उरज उतंग
अधर पक्व विवा अणुहारि कीर पूतली चित्र आकार ।। 134 ।।
भीमसेन राजहंस चौपई ग 1217 ला द प्रं. अहमदाबाद

2 मारू अंबा मउर जिम कर लग्गइ कुमलाइ ।। 468 ।।
ढोला मारवणी चौपई

3. सकती बांधे वीटुली, ढोलो मेल्हे लज्ज
सरढी पेट न दियउ, मुख न मेलउं अज्ज ।। 480 ।।
ढो मा चौ.

4. सूहा सगुण ज पंखिया म्हांकउ कहयउ करेह
साई देज्यो सज्जणाँ म्हा साम्हों जो एह ।। 423 ।।
ये सिध्यानउ सिध करउ पुजउ थाँकी आस
वीछुड़ता ही माणसाँ मेलउ दियउ उल्हास ।। 424 ।।

5. गुर्झा थउ मइ पंखडी थोकउ विनउ वहेसी
सायर लघी प्री मिलउं प्री मिलि, पाछी देसि ।। 222 ।।
माणस हवाँ त मुख चवाँ म्हे छाँ कूंझडियाँह
प्रिउ संदेसउ पाठ विसु लिखि दे पंखहि याँह ।। 224 ।।
ढोला मारवणी चौपई

करण का उदाहरण है। मानव का सम्पर्क पाकर ये प्राकृतिक पदार्थ भी मानव की भाति वोलते हैं, प्रश्नो का उत्तर देते है तथा मानव के दुख मे दुखी तथा सुख मे सुखी दिखाई देते हैं।

'भीमसेन राजहस चउपई' मे शुक ही मदनमंजरी के बारे मे भीमसेन को बताता है और उसे पत्र देकर कहता है

ए कागल नइ एह सदेस, वाची-नई आवउ उण देस
मयाकरी नइ आपउ मान दउ कुमरी नइ जीवीदान ॥ 110 ॥

भीमसेन का मार्ग प्रदर्शक भी शुक ही होता है।[1]

5. उपदेशात्मक रूप में

इन कथा काव्यो मे नीति कथन शैली मे भी प्रकृति चित्रण मिलता है। मारवणी ढाढियो के हाथ सदेश प्रेषण के समय प्रकृति का ही आश्रय अधिक लेती है। मारवणी की अनुरक्ति कुरझो जैसी है

कूँझाँ लाल बचाहँ ज्यउँ खिण खिण चीतारेह ॥ 273 ॥

वह यह भी कहती है कि तन की दूरी प्रेमियो के लिये कोई दूरी नही होती है।[2]

जल माहि वसइ कमोदणी चदउ वसइ अगासि
जउ ज्यां ही कई मनि वसइ, सउ त्यांही कइ पासि ॥ 321 ॥

'माधवानल कामकदला' मे कदला अपना प्रेम सरोवर दादुर तथा मेघ और धरती के समान बताती है

जिम सालूरा सरवरा जिम धरति उर मेह
नपावरणी बालहा तिम पालिज्जइ नेह ॥ 452 ॥

6. प्रतीक रूप में

हृदय के सूक्ष्म भावो को प्रकृति से प्रतीक ग्रहण करके भी प्रस्तुत किया जाता है। प्रकृति के ये अनेक पदार्थ उदात्त भावनाओ को प्रकट करने के कारण तथा आन्तरिक सादृश्य के कारण प्रतीक बन गये है।[3]

1 हर्षित सुक वइसारि हाथि पह पंथ सिखावइ
दीठी वाटह वहइ कीर जाणइ जल ठाम
अनुक्रमि आव्यउ नगर एक नर मदिर नाम ॥ 120 ॥
भीमसेन राजहस चौपई प्र' 1217 ला द प्र अहमदाबाद

2 माधवानल चौपई मे भी साम्य है।
दूरतर के वास, मत जाणउ तुम्ह प्रीति गइ
जीव तुम्हारइ पास नयन विछोहे पर गये ॥ 394 ॥

3. दोहा सख्या 452 माधवानल कामकंदला चौपई

सूली सरिखी सेजडी तुम्फ विण जाणीइ नाह ॥ 451 ॥

मनुष्य का प्रेम मछली के समान है जो जल मे अलग किये जाने पर प्राण त्याग देती है[1]

माणस योहि माछिला साचा नेह सुजाण
जउ जलथी कीजइ जुआँ निश्चइं छंडइ प्राण ॥ 401 ॥

संवाद सौष्ठव

संवाद काव्य सौंदर्य मे वृद्धि करते हैं। सवाद से कथा काव्य मे वास्तविकता आती है तथा कथा विकास व पात्रो के चरित्र को हमारे सामने प्रस्तुत करने का कार्य सवाद ही प्रमुख रूप से करते हैं। "संवाद किसी विषय वस्तु पर तर्क-वितर्क के साथ किये जाने वाला वह वाग्विनियम है जो प्रसग के बाहर भी अपना स्वतंत्र महत्व दिखला सके।"[2]

सवाद द्वारा पात्रो को सजीवता प्रदान करना लेखक का उद्देश्य होता है। पाठक को पात्रो का कुल-शील आचार व्यवहार सवादो द्वारा ज्ञात होता है'

कुशललाभ के कथा-साहित्य मे सवादो की बहुलता है। ये सवाद कुछ छोटे भी हैं तो कुछ वड़े भी। जिन सवादो से कथा को गति मिली है वे सवाद प्रायः लवे परन्तु रोचक हैं। लेखक ने वर्णन कुशलता से प्रत्येक संवाद के पूर्व एक पूर्व पीठिका प्रस्तुत की है जो उस सवाद का उद्देश्य बन कर आई है। जैसे विरह व्यथिता मारवणी को प्रिय मिलन मे वाधक पर्वत हैं अत. कुरझों से पंख माग कर वह समुद्र व पर्वत लाघना चाहती है। लेखक ने गभीर मनोवृत्तियो का चित्रण संवादो की सहायता से वडे ही सजीव रूप मे किया है। ढोला मालवणी, तथा माधव कामकदला मे संवाद अधिक लवे हैं। मालवणी व कामकंदला अपने वाक् चातुर्य से पति को रोकना चाहती है। इन संवादो मे मालवणी व कंदला की मानसिक स्थिति का स्पष्ट चित्रण हुआ है।

ढोला करहा संवाद मे ढोला की आतुरता व्यग्रता दृष्टव्य है। ढोला को मारवणी से मिलने की जल्दी है, अत ऐसी स्थिति मे ऊँट को मारना, जल्दी चलने को कहना, ऊँट का सांत्वना देना, मारवणी से मिलाने की वात कहना आदि संवादो मे स्वाभाविकता की झलक दिखाई देती है।

मारवणी ढाढी सवाद एव ढाढी ढोला संवादो मे ढोला व मारवणी की विरह व्यथा देखने को मिलती है।

1. सच नेही तउ माछली वीजा अलप सनेह
जब ही जल थी वीछड्इ तब ही सपड्इ देह ॥ 591 ॥
माधवानल कामकंदला चौपई

2 वाङ्मय-विमर्श—आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र—पृ० 60

'माधवानल कामकदला' मे इन्द्र व जयन्ती के सवाद सक्षिप्त होते हुये भी हृदयस्पर्शी एव प्रभावपूर्ण हैं।[1] माधव व राजा गोविन्द चन्द के सवाद राजा को एक अच्छे प्रजा रक्षक के रूप मे प्रस्तुत करते हैं। महाजनो की शिकायत पर भी राजा स्वय माधव की परीक्षा लेने उसे अपने अन्त पुर मे बुलाता है

जि को कला माधव। तुझ पासि तेतू मुझ आगलि परकासि
माधव मन माही करइ अदेस सही हूउ पिसुणा परवेश ।। 137 ।।

माधव कामसेन सवाद कामसेन के आत्म सम्मान को ठेस लगाने तथा क्रोध को प्रदर्शित करते हैं। माधव विक्रमादित्य सवाद तो कथा के प्राण ही हैं।

'भीमसेन राजहस' मे भीमसेन व हितसागर के सवाद मित्रवत हैं। शुक व भीमसेन सवाद अत्यधिक लम्बे होते हुये भी कथा प्रवाह मे बाधक नही बनते। शुक के माध्यम से लेखक कहानी के सूत्र को आगे बढाने मे सफल हुआ है।

सन्यासी व भीमसेन के सवाद मदनमजरी के प्रति आकर्षण पैदा करने मे और सहयोग देते हैं।[2] धात्री तथा मदनमजरी के सवाद सक्षिप्त होते हुये भी कथा प्रवाह मे सहायक सिद्ध हुये हैं। मदनमजरी व प्रीतम मजरी के सवाद माता पुत्री के सवाद है। जिनमे माता पुत्री को नये घर मे जाने पर कर्तव्य तथा यश प्राप्त करने की सीख देती है

जउ कदाचित कंत कोपइ पुत्रि तू इम कोपिजे
रापिजे कुल वूट रीति रुडी नीचनी सगति तजे
प्रेम सू प्रीतम नेह पाले सदा तू सुपणीहजे ।। 196 ।।

हस हसिनी के सवाद आलौकिक हैं। हंस आलौकिक पात्र है अत वह अपने आगत जन्म के बारे मे हसिनी को बताता है कि वह मदन मजरी के गर्भ से पुत्र के रूप मे जन्म लेगा।[3]

भीमसेन तथा मदन मजरी के सवाद भी लबे हैं परन्तु कथा को नवीन मोड देने मे साधक रूप मे ही प्रयुक्त हुये हैं। हसी का राजा रानी के साथ वार्तालाप हसी का अपने पति हस के प्रति प्रेम का द्योतक है।[4]

राजहस एव कपि सवाद लघु हैं। इनमे राजहस की वीरता निर्भयता दर्शित होती है।

---

1 कहइ जयन्तीकरी प्रणामि, मुझ अपराध खमउ तुम्हि सामि
 बली न विलोप्रं तुम्ह आदेश काई छ प्रवउ अपछर वेस ? ।। 24 ।।
2 दोहा सख्या 132 139
3 दोहा सख्या 252, 253
4 स्वामी सांचउ बोलू सही हिव तउ आवण होमइ नही
 अतरंग छइ आपणू प्रीति चोलरंग जिम रातउ चीत ।। 534 ।।

राजहस तथा मुनि सवाद राजहस की धार्मिक प्रवृत्ति का परिचय देते है ।[1]

'तेजसार रास' के पात्र अधिक संख्या मे अलौकिक हैं । 'तेजसार रास' के सवाद अधिक लवे नही है पर सक्षिप्त होते हुये भी प्रभावपूर्ण हैं ।

तेजसार राक्षस सवाद मे तेजसार की विलक्षण बुद्धि से राक्षस से बच निकलना और बदले मे दो अलौकिक विद्याये प्राप्त करना और उसी विद्या के कारण सिकोत्तरी पिंड्याणी का अन्त करना बहुत ही रोचक बन पडा है

> विद्या वलि रासमि खडहली मूर्छा आवी धरणी ढली
> तेजसार तिहा थी ऊतरी जोवै नदी तिहा गोदावरी ॥ 73 ॥

तेजसार योगी सवाद मे तेजसार की वीरता एव निर्भयता दृष्टिगोचर होती है । विजयश्री व तेजसार सवाद कथा को, नया मोड देकर आगे बढ़ाने मे सहायक हुये हैं । विद्याधरी व तेजसार सवाद तेजसार का स्त्री के प्रति प्रेम की स्पष्ट झलक दिखाते हैं ।[2]

तेजसार पद्मावती सवाद मार्मिक होते हुये भी रोचक एव सरस हैं ।[3] इन सवादो मे तेजसार स्पष्टवक्ता, कर्तव्य परायण पति व कुशलशासक के रूप मे हमारे सामने आया है ।

तेजसार व व्यतरी सवाद आलौकिक होते हुये भी कथा को नवीन मोड़ देकर तीव्र गति प्रदान करते हैं । व्यतरी अपनी पुत्री एणामुखी से तेजसार का विवाह करने के लिये उसे उसके महल से उठा लाती है[4] और उसका विवाह कर देती है । इन सवादो मे रानी के पूर्व जन्म की कथा भी सम्बद्ध है ।

तेजसार एव माता सवाद पुत्र के प्रति माता के हृदय के उद्गार हैं जो वात्सल्य से परिपूर्ण हैं ।

> तेजसार पिण थयो गल गलउ, कठि आलगी जननी मिल्यो
> धन्य धन्य दीह धन ए घडी सोल वरसै माता मिली ॥ 300 ॥

सोलह वर्ष बाद जहां माता पुत्र का मिलन होगा वहाँ तो यही स्थिति होगी ।

---

1 पूछई धर्म तणउ परिकार श्री सर्व जादव अधिकार
दूरि किया जिण दोप अढार पट काया जीवह सुपकार ॥ 552 ॥
भीमसेन राजहस चौपई ग्र० 1217 ला० द० ग्रं० अहमदाबाद

2 दोहा सख्या 136-154 तेजसार रास चौपई ग्र० 26546
रा० प्रा० वि० प्र० जोधपुर

3 दोहा संख्या 177-179

4 तेजसार सुख सेवा काज चपा नयरी आवी आज
पढढ्यो दीठउ मदिर माँहि, मइ ऊपाड्यउ वाँहि साहि ॥ 286 ॥

तेजसार व वीरसेन सवाद एक विछुड़े पिता पुत्र के मार्मिक सवाद है।[1]

तेजसार एव मुनि सुव्रत स्वामी के सवाद धार्मिक एव लोकहितकारक है। मुनि श्री से ही तेजसार को अपना पूर्व भव ज्ञात होता है।[2]

'अगडदत्त रास चौपई' के सवाद सक्षिप्त होते हुये भी प्रभावशाली है। अगडदत्त एव उसकी माता के सवाद कथा को गति प्रदान करते है। ये सवाद पुत्र के प्रति माता के उद्‌गार है, जो वात्सल्य से परिपूर्ण है।[3] अगडदत्त व भुजगम चोर सवाद,[4] राजा व अगडदत्त सवाद,[5] अगडदत्त एव गोकुलपति सवाद[6] अगडदत्त की वीरता एव निर्भयता को प्रकट करते है।

अगडदत्त धात्री सवाद अगडदत्त का स्त्री के प्रति सच्चा प्रेम की झलक दिखाते है।[7] अगडदत्त मदनमंजरी सवाद मार्मिक होते हुये भी रोचक हैं।[8] इन सवादो मे अगडदत्त की स्पष्टवादिता, कर्तव्यपरायण पति व शिष्य के रूप मे हमारे सामने आई है।

अगडदत्त एव विद्याधर सवाद आलौकिक होते हुये भी कथा को नवीन मोड़ देकर गति प्रदान करते है। मदन मजरी की मृत्यु सर्प दशन से हो जाने पर विद्याधर तत्र मत्र से उसे जीवित कर कथा को आगे बढाने मे सहायक सिद्ध हुआ है। अगडदत्त साधु सवाद धार्मिक एव लोकहितकारी है। साधु के उपदेशो से ही अगडदत्त वैराग्य धारण करता है।[9]

इस प्रकार कुशललाभ के कथा साहित्य के सवाद लौकिक एव लोकोत्तर दो रूपों मे हमारे सामने आते हैं। मानव सवाद लौकिक कोटि मे आते हैं तथा पशुपक्षी राक्षस व्यतरी सवाद लोकोत्तर लगते है। परन्तु ये कथायें लोक कथायें है अत साहित्यिक तत्वो के साथ-साथ इनमे लोक तत्वो का भी समन्वय है। इस दृष्टि से देखने पर ये सवाद अस्वाभाविक नही लगते। क्योंकि इस प्रकार के प्रयास तो लोक कथाओ की श्री वृद्धि करते है और इन सवादो मे विचारो व भावो का क्रमिक विकास सफल व्यजना एव पात्रो के चरित्र का उद्‌घाटन, स्थानगत् विशेषतायें, व्यक्ति एव प्रश्नोत्तर क्रम राजस्थानी सभ्यता एव सस्कृति का समन्वय इतना सुन्दर एव स्वाभाविक बन पड़ा है कि कुछ भी अस्वाभाविक नही लगता है।

1 हिवडा निरीत थई ताहरी तब राजा चितो मन हरी
जो सुपुत्र तो वयण अवधारि आवी आप पिता आरि ॥ 346 ॥
2 दोहा सख्या 379
3 दोहा सख्या 21 से 26 अगडदत्त रास चौपई प्र. 605 भण्डारकर आरियन्टल रिसर्च इंस्टीट्युट पूना
4 दोहा सख्या 69 से 95
5- ,, ,, 56 से 60
6 ,, ,, 154 से 160
7 वलतउ कुमर कहि मुखि हसी मयण मजरी मुझ मनिवसी
मुझ चिता छइ एह नीपरी वाचा अविचल छइ माहरी ॥ 137 ॥
8 दोहा संख्या 40 से 44
9. ,, ,, 313

पंचम अध्याय

आख्यान काव्यों के मूल स्रोत और परम्परा

लोक-साहित्य में लोक कथाओं का प्रमुख स्थान है। वे अपनी प्रचुरता एवं लोकप्रियता के कारण अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। जहाँ मनोरंजन के आधुनिक साधन उपलब्ध नहीं हैं वहाँ लोक कथायें ही लोगों का मनरंजन करती हैं। एक अर्थ में यह कहा जा सकता है कि लोक जीवन लोक कथाओं के ताने-बाने से बुना हुआ है। लोक-कथाओं को ही कथा साहित्य का मूल स्रोत होने का गौरव प्राप्त है।

लोक-कथाओं की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। सर्व-प्रथम वैदिक संहिताओं में इन लोक कथाओं के बीज उपलब्ध होते हैं। ऋग्वेद में ऋषि शुनः शेप का प्रसिद्ध आख्यान मिलता है।[1] अपाला आत्रेयी के आदर्श नारी चरित्र का चित्रण सर्वप्रथम हमें इसी वेद में मिलता है।[2] च्यवन और सुकन्या मानवी की कथा भी सुन्दर रीति से इसी में वर्णित है।[3]

ब्राह्मण ग्रंथों में भी अनेक कथायें उपलब्ध हैं। शतपथ ब्राह्मण में पुरुरवा और उर्वशी की कथा बहुत प्रसिद्ध है।[4] इसी कथा को लेकर कालिदास ने 'विक्रमोर्वशी' नाटक की रचना की।

वैदिक कहानियाँ देवताओं और मानवियों अप्सराओं और मानवों के प्रेम से सम्बन्धित हैं। उदाहरण के लिये उर्वशी और पुरुरवा की कहानी को लिया जा सकता है।

उपनिषद् काल में कितनी ही छोटी-बड़ी वर्णनात्मक कहानियाँ जैसे याज्ञवल्क्य और गार्गी, सत्यकाम और जाबालि, अहल्या और इन्द्र की मिलती हैं। वेद और

1. ऋग्वेद 1/24/30
2. वही, 8/9/1
3. वही, 10/39/4
4. शतपथ ब्राह्मण 11/5/1

उपनिषद् की कहानियो मे जहाँ एक ओर प्रेम है वही दूसरी ओर एक आदर्श छिपा रहता है। ये कहानियाँ उद्देश्य शून्य नही होती हैं।

संस्कृत साहित्य मे भी कथाओ की कमी नही। बाणभट्ट की 'कादम्बरी' जन्म जन्मान्तर मे चलने वाले प्रेम की चमत्कारपूर्ण गाथा है। सस्कृत साहित्य के अतिरिक्त पंचतंत्र पचविंशती और वृहत् कथा भी कथाओ के अक्षय भण्डार हैं, परन्तु इन कहानियो मे मानव पात्रो की अपेक्षा पशु-पक्षियो की बहुलता है। इन कहानियो मे आश्चर्य तत्वो के द्वारा मनुष्य को शिक्षा देने की प्रवृत्ति लक्षित होती है।[1] इन कहानियो मे पशु-पक्षियो, देवताओ तथा किन्नरो ने मनुष्य के साथ भाग लिया है और इन्ही अलौकिक शक्तियो के कारण ही उद्देश्य की प्राप्ति सम्भव हो सकी है।

बौद्धकालीन साहित्य मे कथाओ का वह रूप नही मिलता जो सस्कृत साहित्य मे है। बौद्ध कथाओ मे धर्म प्रचार की भावना का समावेश होने के कारण प्रेम तत्व गौण पड गया है। अत- बौद्रो ने भी अपने धर्म प्रचार के लिए कहानियो का ही आश्रय लिया। इन कथाओ मे धार्मिक उपदेश जहाँ मिलते हैं काव्य की दृष्टि से यह साहित्य उच्च-कोटि का है। इनमे गद्यमय उपदेशो के बीच-बीच पद्यमय अश भी मिलते हैं। जातको मे बुद्ध की महानता के साथ-साथ जन्मान्तर वाद की पुष्टि की गई है। इनमे मनुष्य और पशु-पक्षियो की कहानियाँ है जिनमे पशु-पक्षियो को मानव से अधिक बुद्धिशाली और योग्य ठहराया गया है।

बौद्धो की साधारण प्रतीकात्मिक कहानियाँ जैनियो के द्वारा सर्वांग रूपको मे निरूपित हुई, जिनमे उपदेशो की बहुलता रही। जैन कथाओ मे धर्म के साथ-साथ प्रेम-कथा का रूप अत्यधिक निखरा है। जैन कथा साहित्य भी दो रूपो मे मिलता है। पहले वर्ग का कथा-साहित्य तीर्थंकरो के जीवन से सम्बन्धित कहानियो का है। दूसरा वर्ग स्वतन्त्र कहानियो का है। यह स्वतन्त्र कहानियाँ लोक प्रचलित कथाओ का जैन सस्करण है।

इस प्रकार समस्त भारतीय कथा साहित्य का मूल स्रोत ऋग्वेद मे निहित है। ऋग्वेद की यह परम्परा उपनिषद, पुराण, नीति मजरी, भागवत, वेदार्थ दीपिका एव वृहद्देवता आदि सस्कृत के धार्मिक ग्रन्थो मे प्रस्फुटित होती हुई कालिदास के द्वारा चरमोत्कर्ष पर पहुँची। बौद्ध कहानियो मे भी जन्मान्तरवाद का प्रभाव रहा। जीवन के प्रति निराशा होने के कारण इन कहानियो मे प्रेम का अभाव रहा। इसके बाद जैन धर्म गाथाओ मे प्रेम का पक्ष अधिक प्रबल रहा किन्तु ऐन्द्रिय सुख की ओर वीतराग होने के कारण इन जैन मुनियो ने प्रेम तत्व को सत्य, अहिसा, अस्तेय और ब्रह्मचर्य के आवरण मे बदल दिया है।

जैनियो के चरित काव्यो और पुराणो मे साहित्यिक सौन्दर्य के साथ-साथ ब्राह्मण और बौद्ध गाथाओ की कथा बन्ध सम्बन्धी विशेषताएँ भी मिलती हैं। कुशल-

1 सिंघी जैन ग्रंथ माला सपादक हीरानन्द शास्त्री VOL XVIII पृ. 11

लाभ भी एक जैन कवि थे। आख्यान काव्य के कथानक के मूल स्रोत की दृष्टि से कवि के आख्यान काव्यों को निम्नलिखित भागों मे विभाजित किया सकता है :

(1) लोक कथात्मक आख्यान
(2) धार्मिक आख्यान

किसी कथा मे धर्म की प्रधानता होने से उसका यह अर्थ नही होता कि उसमे लोक तत्व का अभाव होगा। किसी भी कथा मे कल्पना के साथ ऐतिहासिक तथ्य का होना भी आवश्यक होता है। डा सत्येन्द्र ने लिखा है "जो सम्बन्ध पुरातत्व और लोकवार्ता का है, उससे गहरा सम्बन्ध लोकवार्ता और इतिहास का है।"[1]

इसी तरह धर्म एव लोक कथा का भी घनिष्ठ सम्बन्ध है। धर्म की नींव लोक विश्वास है। धर्म भी लोक कथा के सहारे ही विकास पाता है। अत. इन्हे अलग-अलग करना मुश्किल है।

लोक-कथा स्रोत वाले कथा काव्य

इस प्रकार की कथाओ का मूलाधार लोक मे प्रचलित कथा होती है। केवल देवी-देवताओ के आने से कोई लोक-कहानी व धर्म कहानी नही हो सकती है। डा. सत्येन्द्र के शब्दो मे "इन लोक कथाओ का आधार लोक मानस होता है। इनमे हमारी आदिम मनोवृत्तियाँ, आस्था और विश्वास सचरित होते रहते हैं। इस प्रकार ये हमारे सास्कृतिक इतिहास आदिम की मनोवृत्तियो, उनकी आस्थाओ और विश्वासो, रीति-रीवाजो और सामाजिक सस्थाओ के अध्ययन की दृष्टि से बड़ी महत्वपूर्ण होती हैं।"

इन लोक कथाओ का विस्तार व्यापक होता है। देशकाल के अनुरूप वातावरण एव मानसिक स्थितियो की भिन्नता के कारण एक ही लोक कथा के अनेक रूप हो जाते है। डा श्याम परमार के शब्दो मे "भारतीय लोक कथाओ का तो अपना विशिष्ट महत्व है। इनकी प्रवृत्तियो के सम्बन्ध मे यह बात प्रसिद्ध है कि उनके प्रमुख लक्षणो की पुनरावृत्ति प्राय अन्य कथाओ मे होती रहती है। वास्तव मे यह एक सच्चाई है। पजाब, बगाल, बिहार, राजस्थान, महाराष्ट्र, मेवाड अथवा मालवा आदि स्थानो मे पाई जाने वाली लोक कथाओ मे अनेक कथायें एक-दूसरे से वस्तु पात्र, चित्रण शैली मे सादृश्य रखती है।"[2] डा, सत्येन्द्र ने कहानी के रूप परिवर्तन के बारे मे लिखा है कि "वास्तव मे कहानियाँ उन क्षेत्रो मे परस्पर आदान-प्रदान की वस्तु बन जाती है जिनमे परस्पर घनिष्ठ राजनीतिक, व्यापारिक या अर्थ-सम्पर्क रहते हैं। इन सम्बन्धो के कारण कहानियाँ कभी-कभी बडी-बडी दूर की 'यात्रा कर' जाती हैं। इन यात्राओ मे भाषा भेद कोई अडचन प्रस्तुत नही करता, पर संस्कृति भेद किसी सीमा तक अडचन डालता है। यदि कोई वस्तु किसी क्षेत्र की सस्कृति मे

1, लोक साहित्य का विज्ञान, डा सत्येन्द्र पृ 60
2, लोक साहित्य विज्ञान - डा. सत्येन्द्र पृ 385

समीचीन नही लगता, तो वह या तो छूट जायेगा। या रूप परिवर्तन कर लेगा या उसके स्थानापन्न कोई नया तत्व आ जायेगा।"[1]

लोक कथाओं की लोकप्रियता उनकी जीवन शक्ति; जनमानस को सहज रूप से आकर्षित करने की शक्ति एव व्यापकता को दृष्टि मे रखकर ही जैन कवि कुशल-लाभ ने अपने कथानको का आधार लोक कथाओ को बनाया है।

'ढोला मारवणी चौपई' तथा 'माधवानल-कामकंदला चौपई' का कथा स्रोत लोक कथा ही है।

कुशललाभ रचित 'ढोला मारवणी चौपई' का रचना काल श्री अगरचन्द नाहटा ने स 1607 माना है। परन्तु[2] एफेमरिज से यह ठीक नही बैठता। 'ढोला मारवणी चौपई' की कई प्रतिलिपि मिलती है। कई प्रतियो मे तिथि के साथ वार का भी निर्देश है परन्तु ऐफिमेरीज से इन तिथियो पर वह दिन नही बैठता। ऐसी स्थिति मे सभी प्रतियो को दोषयुक्त या जाली माना जा सकता है। जिन प्रतियो मे 'सवत सोल सतोतरइ—आखातीज दिवस मन खरई' पाठ मिलता है वही भूल होना चाहिये। संवत सोलह सत्रोतरइ पाठ को सवत् सोल सतोतरइ लिपिवद्ध करना लिपिको का प्रमाद ही कहा जा सकता है जिसके कारण यह विवाद बना हुआ है कि रचना 1607 मे हुई या 1617 मे।

तत्कालीन लिपि मे 'त्र' और 'त' मे विशेष भेद नही होने से ही 'त्र' को 'त' पढकर प्रतिलिपियो मे भूल की गई है। हरराज 1617 मे राजकुमार था और 1618 मे राजा बना था। अत इसका रचना काल 1617 मानना ही उचित है।

कुछ लोग 'ढोला मारवणी चौपई' को अभिजात्य साहित्य की कृति मानते हैं। परन्तु श्री अगरचन्द नाहटा इनके इस मत से सहमत नही हैं। उनका कहना है कि — "वास्तव मे ऐसे व्यक्ति अपनी अल्प जानकारी का परिचय देते हैं। ढोला मारू प्रेमगाथा के रूप मे बहुत प्राचीन समय से प्रचलित था। अभिजात्य रूप की प्रेरणा का स्रोत भी यही लोक प्रचलित कथा है। लोक मे यह कुछ अनगढ रूप मे थी। कुशललाभ कवि ने इसे सस्कृत रूप मे प्रस्तुत किया।"[3]

मूल 'ढोला मारु दूहा' तथा 'ढोला मारवणी चौपई' की कथा एक होते हुये भी उनमे अन्तर है। विशेष भेद यह है कि चौपई की कथा आगे की कथा के सकेत सूत्र देती हुई चलती है। प्रारम्भ मे लम्बी प्रस्तावना के पश्चात् राजा पिंगल का उमा देवडी के साथ विवाह का विस्तृत वर्णन है, जो एक स्वतन्त्र कथा प्रतीत होते हुये भी मूल कथा से अलग नही की जा सकती। उसके बाद ढोला मारवणी के जन्म

1 भारतीय लोक साहित्य। डा श्याम परमार पृ 167

2, राजस्थान भारती भाग 1 अंक 4 जनवरी, 1947

3 राजस्थानी साहित्य की गौरवपूर्ण परम्परा, श्री अगरचन्द नाहटा · पृ. 87

विवाह आदि के विस्तृत वर्णन के साथ बनिये की कथा भी कथानक में सहायक हुई है।

ढोला मारू दूहा के अनेक रूप हमें देखने को मिलते हैं। परन्तु कुशललाभ ने उस बिखरी कथा को संगठित किया, अतःइसमें लोक-कथा का एक ही रूप मिलता है।

ढोला मारू की कथा के अन्य अनेक प्रादेशिक रूप भी देखने को मिलते हैं। इनकी प्रेम कथा राजस्थान तक ही सीमित नहीं रही परन्तु उत्तर और मध्य भारत में भी अपना प्रभाव फैलाये बिना नहीं रह सकी। ढोला व मारू सामान्य व्यक्ति न रह कर आदर्श दम्पत्ति के रूप में रूढ़ होकर लिखित व मौखिक दोनों रूपों में प्रचलित थे। ढोला मारू के प्रादेशिक रूप निम्नलिखित हैं .

1. ब्रज प्रदेशीय रूप

यह कथा नल दमयती की कथा का ही एक भाग है। इसमें नरवर के राजा पिरथम एवं उनकी पत्नी मझा की कथा आती है। रानी मझा को गर्भवती अवस्था मे चरित्रहीन बताकर निकाल दिया जाता है। वन मे मझा पुत्र को जन्म देती है। पुत्र नल व मझा का पालन-पोषण एक वणिक द्वारा होता है। नल मोतिनी से गंधर्व विवाह करता है। वणिक पुत्र ईर्ष्यावश नल को समुद्र मे डाल देता है। नल पाताल लोक जाकर भौमासुर को मारता है तथा पातुरी मे मिनता करता है। नल एवं मोतिनी का पुनः संयोग होता है। फूलसिंह पंजाबी राजा पिरथम व मंझा को कैद करता है परन्तु नल मोतिनी उन्हे मुक्त करा देते हैं तब नल राजा बनता है।

राजा भीम की कन्या दमयती नल के रूप पर मोहित होकर हंस द्वारा प्रणय निवेदन करती है। इन्द्र आदि देवताओ द्वारा षड्यन्त्र किया जाता है परन्तु दमयन्ती स्वयवर मे नल को वर कर लेती है। इस विवाह से मोतिनी प्राण छोड देती है। राजा नल से शनि देवता प्रतिशोध लेते हैं। नल पुष्कर के साथ जूए मे हार जाता है। राज्य से परित्यक्त नल व दमयन्ती पिंगल देश जाकर रंगू तेली के यहाँ कोल्हू चलाने का कार्य करते हैं।

रंगू तेली व पिंगल राजा बुध मित्र थे। एक बार पासा खेलते समय रंगू सब कुछ हार गया। नल द्वारा खेले जाने पर रंगू जीतने लगा और उसने मारवाड के परगने जीत लिये। राजा बुध नल से पासा खेलने लगा और दोनो ने अपनी आसन्न गर्भा पत्नियो को दांव पर लगा दिया। राजा नल विजयी हुआ और इस विजय के रूप मे दोनो की होने वाली सतानो का विवाह करना तय हुआ। नल के यहाँ ढोला राजकुमार हुआ तथा बुध के यहाँ मारू राजकुमारी। पूर्व निश्चय के अनुसार बाल्यावस्था मे दोनो का विवाह कर दिया।

नल दमयन्ती अच्छे दिनो की कामना करते नरवर को प्रस्थान करते हैं परन्तु दुर्भाग्य साथ नही छोड़ता है। मीपमपुर के राजा द्वारा दमयन्ती का अपहरण कराया

जाता है। ऐसे समय मे राजा नल अपने मित्र वासुकी को स्मरण करता है। इसके आगे दमयन्ती के दूसरे स्वयंवर की कथा है। स्वयंवर के पश्चात् नल दमयन्ती का पुन. मिलन होता है नल ने पुष्कर को फिर जुआ खेलने के लिये ललकारा। नल इस बार जीत गया और पुन राज्य हस्तगत कर लिया।

नरवर मे ढोला के युवा होने पर गौने का सदेश पिंगल भेजा गया। ढोला गौना कराने हेतु पिंगल जाता है, परन्तु मार्ग मे रेवा जादूगरनी ने उसे बन्दी बना लिया, किन्तु ढोला करिहा ऊँट की सहायता से इस जादूगरनी की कैद से छूट कर पिंगल पहुँचता है। पिंगल मे ढोला को सिंह द्वार से आने के लिये कहा जाता है जिसमे एक राक्षस होता है, किन्तु मारू गुप्त रूप से ढोला को इसकी सूचना दे देती है। ढोला तो शीघ्रता से निकल जाता है परन्तु दीवार गिरने से करहा की टाँग टूट जाती है। ढोला परीक्षा मे सफल होता है और मारू का गौना कराकर ले आता है।

इसके आगे ढोला के किशनुलाल नामक भतीजे के विवाह का वर्णन आता है। दोनो को चदन और चुनिया जादूगरनियाँ चुरा लेती हैं। नल फिर दुर्गा, मोतिनी एव वासुकी को स्मरण करता है जो उन दोनो को जादूगरनियो के चगुल से छुडाते है।

सम्पूर्ण कथा मे नल दमयन्ती ही पूर्ण रूप से छाये रहते हैं जिससे ढोला मारू की कथा इससे गौण बन कर रह गई है। राजा पिंगल का नाम यहाँ बुध है। इसमे ढोला व मारू के विवाह का निश्चय पासे पर होता है तथा ढोला गौने हेतु पहल करता है। रेवा जादूगरनी द्वारा बदी बनाया जाना, सिंह द्वार से निकलना, राक्षस का होना, मारू द्वारा अग्रिम सूचना देना आदि प्रसग राजस्थानी रूप से भिन्नता रखते हैं। ढोला के भतीजे की शादी होना, जादूगरनियो द्वारा दोनो को चुराया जाना, दुर्गा, मोतिनी और वासुकी की सहायता आदि भी नये प्रसग हैं।

2. हरियाणवी रूप

इस कथा मे पूगल पिंगलगढ है तथा पिंगलराव का नाम बुधसिंह है। ढोला कँवर एव मारवण का विवाह जन्म से पहले चौसर की बाजी पर निश्चित होता है। ढोला के ऊपर शाप के कारण पिंगलगढ का दरवाजा गिरने की कथा राजस्थानी कथा रूप मे नही है। इसमे मारवणी के स्थान पर रेवती रेवा का उल्लेख हुआ है। मारवण की माता तोते को दूत बना कर ढोल कँवर के पास भेजती है परन्तु वह रेवती रेवा के हाथ पड जाता है। मारवणी साडी पर अपनी विरह व्यथा लिखती है तथा बनजारे के द्वारा ढोल कँवर के पास पहुँचती है आदि कथा प्रस ग नये है।

3. पंजाबी रूप

ढोला मारू की कथा का जो रूप हरियाणा मे प्रचलित है वही रूप पजाब क्षेत्र मे भी प्रचलित है।

4. छत्तीसगढ़ी रूप

इस कथा मे ढोला का नाम ढोला लाल, पूगल का नाम पिंगला, नरवर गढ़

का नाम नरहुल तथा पिंगलराव का नाम वेन राजा है। कथा मे रेवा के भय से नल द्वारा ढोला को छिपाये रखना, सयोग से रेवा के उद्यान तक ढोला का पहुँचना, रेवा के तोते का शिकार करना, ढोला का रेवा जादूगरनी के कुचक्र मे फँसना, तोता एव सर्प कथांश, रेवा से छुटकारे के लिये ढोढा बावा नामक जादूगर की सहायता लेना, वेन के पुत्रहीन होने के कारण ढोलालाल का उत्तराधिकारी बनना आदि प्रसंग इस कथा मे नवीन हैं।

5. भोजपुरी रूप

यह कथानक भी नल दमयन्ती की कथा से प्रारम्भ होता है। बाधिनी द्वारा शाप दिया जाना, नल द्वारा पिंगलगढ के व्याह की चर्चा न करने का आदेश, व्यापारी पुरोहित तथा चम्पा के पिता द्वारा सन्देश ले जाना, अनेक राजकुमारों का ढोलन बन कर आना, हीरामन तोते का कथानक, हरेवा-परेवा जादूगर बहिनो की कहानी आदि कितने ही नये प्रसग इस कथानक मे मिलते हैं। यहाँ ढोला ढोलन हो गया है करहा, उड़ने वाला घोड़ा हो गया है। पूगल पिंगलगढ बन गया है। मालवणी का स्थान यहां रेवा ने लिया है और वह गढ उपमा के राजा परमाजीत की कन्या बतलायी गयी है। ऊमर सूमरा का स्थान तारा के पति मारमल ने लिया है। यह कथानक स्थानीय तत्वो से अत्यधिक प्रभावित है।

6. राजस्थानी रूप

यह कथा रूप कुशललाभ की कथा से बहुत कुछ साम्य रखती है फिर भी कुछ नवीन अश इस कथा मे आये हैं। अकाल पडने पर पिंगल राजा रानी ऊमादे के कहने पर पुष्कर की यात्रा करना, अपने भाई गोपालदास को राज्य सौंपना, नरवर गढ के राजा नल का पुत्र प्राप्ति हेतु वाराह जी (ववेरा पुष्कर जहाँ वाराहजी का मन्दिर है) की यात्रा का संकल्प, वाराहजी की पूजा का वर्णन, ढोला व मारवणी की धात्री का आपस मे वार्तालाप, पिंगल की चार पत्नियो का उल्लेख, धात्री ही का राजा नल से ढोला का विवाह मारू से करने को कहना, राजा नल का प्रधान एव रानियो से विचार-विमर्श करना, गोद भराई की रस्म पूरी करना, आदि नये प्रसग हैं।

पिंगल राजा के भाई गोपालदास का सन्देश, घोड़ो के सौदागर का बाग मे ठहरना और मारू की सखियो से मारू के बारे मे पूछना, नाई का पिंगल राजा के घोडो को टहलाने आना और सौदागर की बातें सुनकर राजा से कहना, रानी द्वारा सन्देश भेजा जाना, मालवणी द्वारा पत्र फाड कर व्यक्ति को मरवा देना, ढाढ़ियो का कुम्हारी के घर पहुँचना और कुम्हारी व उसके भानजे की सहायता से ढोला से मिलना, ढोला का मारवणी को प्रेम पत्र लिखना, मालवणी द्वारा मारवणी के व्याह को भ्राति बताना, ढोला द्वारा पुरोहित को भेजना जो मारवणी का पता लगाकर आये कि वह कैसी है, पुरोहित द्वारा मारू का रूप वर्णन, पुष्कर मे तोरण थभ

देखकर ढोला का वहाँ ढोला मारू के बारे में पूछना और सही स्थिति का ज्ञान होना, गीत की आवाज सुनकर ढोला का कूये के पास जाना, बागवान द्वारा ढोला के आगमन की सूचना देना आदि तथ्य नये हैं।

निष्कर्षत ढोला मारू की कथा अपनी लोकप्रियता के कारण उत्तर और मध्य भारत में खूब प्रचलित रही। उपर्युक्त कथा रूपों में जो पर्याप्त अन्तर आ गया है यह अन्तर 'ढोला मारवणी चोपई' के कथा रूप से साम्य नहीं रखता।

"माधवानल कामकंदला चउपई" का कथा स्रोत

माधवानल कामकदला की कथा का मूल स्रोत सिंहासन वत्तीसी की इक्कीसवी कहानी है जिसे अनुरोधवती पुतली ने सुनाया है।[1] इस मूल कथा को संस्कृत अपभ्रंश एव मध्यकाल के अनेक हिन्दी कवियो ने अपनी कल्पना के योग से कथाओ को नवीन रूप दिया है।

माधवानल कामकदला की कहानी प्राचीन काल से ही वहुत प्रसिद्ध रही है। गायकवाड आरियन्टल सीरीज से प्रकाशित 'माधवानल कामकदला प्रवन्ध' की भूमिका मे श्री मजूमदार ने इस कथानक की प्राचीनता के वारे मे लिखा है "यह कहानी पश्चिमी भारत मे वहुत प्रसिद्ध थी। वहुत दिनो के वाद इस कथानक के आधार पर मराठी मे रचनायें प्रारम्भ हुई। हिन्दी मे सवसे पहले आलम ने इसकी रचना हिजरी स वत् 991 मे की थी।"[2]

परन्तु यह मान्यता ठीक नहीं क्योकि इससे पूर्व गणपति ने इस कथा को आधार वनाकर स वत् 1588 वि (1527 ई) मे अपना माधवानल कामकंदला प्रवन्ध लिखा।[3]

आलम ने भी किसी स स्कृत की कथा को सुना था और उसी के आधार पर इसकी रचना की थी। कवि ने इस कथानक की भूमिका मे स्पष्ट लिखा है[4]

1 सिंहासन वत्तीसी देहली मतव अहसनी में वएह त्याग मिश्र भगवानदास के से छपी सन् 1869 पृ० 110 से 112 रा प्रा. वि प्र जयपुर से प्राप्त।

2 This story appears to have been popular mostly in Western India, and only at a very late period it came to be adopted in Marathi The Version of the story in Hindi by a Muslim Poet Alam styled 'Madha-Vanalakatha' was composed in Hizri Samvat 991 (Samvat 1640, A D 1584)

3 वेद भुयगम वाण-शशि, विक्रम वरस विचार
श्रावणनी शुदि सप्तमी स्वाति मंगलवार ॥ 222 ॥
गायकवाड ओरियटल सीरीज वडौदा, पृ० 339

4 भारतीय प्रेमाख्यान काव्य डा० हरिकान्त श्रीवास्तव, पृ० 219

कछु अपनी कछु पर कृति चोरों, जथा सक्ति करि अक्षर जोरों
सकल सिंगार विरह की रीति, माधों कामकदला प्रीति
कथा संस्कृत सुनि कछु थोरी, भाषा बांचि चौपई जोरी

गणपति के पश्चात माधव शर्मा ने स. 1600 वि मे 'माधवानल कामकदला रस विलास' ब्रज भाषा मे लिखा। जिसकी एक खडित प्रति हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग मे सुरक्षित है।[1] श्री अगरचन्द नाहटा जी ने भी माधव सम्बन्धी अन्य कथाओ का उल्लेख अपने एक लेखन मे किया है।[2]

इसी कथा को लेकर स. 1616 मे कुशललाभ ने माधवानल कामकंदला चउपई लिखी।[3] कुशललाभ की यह रचना पूरक कृतित्व के रूप मे की गई जान पडती है।

इसी कथा के आधार पर कवि दामोदर ने 'माधवानल कथा' लिखी। यह रचना संभवत 17 वी शताब्दी से पूर्व की होगी क्योकि इसकी एक प्रति मे लिपि काल विक्रम स 1737 दिया गया हैं।[4] कवि आलम ने भी विक्रम स 1640 मे इस कथा को अवधि मे लिखा।[5]

सबसे पहली रचना हमे सस्कृत मे कवि आनन्द धर की लिखी मिलती है। इसका रचना काल स 1300 ई है।[6] "माधवानल आख्यानम्" के नाम से भी यह कथा मिलती है।[7] यह कथा उस युग मे इतनी लोकप्रिय रही कि थोडे बहुत कथानक के अन्तर के साथ निम्नलिखित काव्य ग्रन्थो मे भी यह उपलब्ध रही।

(1) गणपतिकृत 'माधवानल कामकदला प्रबन्ध' 1584
(2) किसी अज्ञात कवि कृत 'माधवानल प्रबन्ध' 1547 हिन्दी संस्कृत

1. संवत् सोला से वरसि जैसलमेर मझारि
फागुन मास सुहावने करी वात विसथारि
मध्ययुगीन प्रेमाख्यान श्याम मनोहर पाण्डेय पृ० 105
2. हिन्दी अनुशीलन—माधवानल कामकदला कथा सम्बन्धी कुछ अन्य रचनायें श्री अगरचन्द नाहटा वर्ष 11 अंक 4 अक्ट-दिस 1958
3 माधवानल कामकदला चउपई कुशललाभ
गायकवाड आरियन्टल सीरीज वडौदा
4. इति श्री कवि दामोदर कृत माधवानल कथा समपुराण लखु छि। सवत् 1737 ने वरषे जेठ दुतीय वद 6 वार वुद्ध सपूर्ण वडनगर मध्ये लघु छि।
गायकवाड ओरियन्टल सीरीज वडौदा XCIII पृ० 509
5. सन् नौ से इक्यानुवे आहि
करो कथा अब बोलो ताहि
हिन्दी प्रेम गाथा काव्य सग्रह (द्वित सं) पृ० 185 हिन्दुस्तानी एकेडमी प्रयाग
6. गुजरात एण्ड इट्स लिटरेचर, श्री कन्हैयालाल माणिक लाल मुंशी द्वितीय सस्करण पृ० 204
7. माधवानल कामकदला प्रबन्ध ' गायकवाड आरियन्टल सीरीज, वडौदा पृ० 341

(3) कुशललाभ 'माधवानल कामकदला चउपई' 1616 राजस्थानी
(4) बालक कवि कृत 'माधवानल कामकंदला भाषा बंध' 1583–84
(5) नेपालराज मल्ल कृत 'माधवानल नाटक' 1704 गद्य पद्य मिश्रित हिन्दी
(6) हरनारायण–'माधवानल कामकदला' 1812 वि. ई. 1756
(7) आनन्दधर–"माधवानल आख्यानम्" संस्कृत अपभ्रंश गद्य पद्य मिश्रित
(8) दामोदर–'माधवानल कथा' अपभ्रंश व पुरानी गुजराती मिश्रित
(9) लाल कवि–'माधवानल कथा'
(10) शांति गुप्त वार्ष्णेय–'माधवानल कामकदला नाटक'
(11) पुरुषोत्तम वत्सकृत–'माधवानल कथा'
(12) बोधा कृत–विरह वारीश (कथा वही नाम अन्तर है।)
(13) रघुराम नागर माधव विलास शतक
(14) जगन्नाथ कृत–माधव चरित्र 1744
(15) कवि केसि–माधवानल कामकंदला नाटक

इन रचनाओ के सम्बन्ध मे यही प्रतीत होता है कि तत्कालीन परिस्थितियो एव काव्यगत प्रवृत्तियो के प्रभाव के साथ ही कृतिकार की अपनी मौलिक भावनाओं का योग एक ही कथा के माध्यम से विभिन्न रूपो मे प्रकट हुआ है। इन काव्यो की अपनी निजी मौलिकता है।

कवि कुशललाभ ने प्रस्तुत कृति की रचना कुँवर हरराज के मनोरंजनार्थ की थी।[1]

माधव व कदला की इस प्रेम कहानी का कथानक प्राय समान ही है। परन्तु कवि कुशललाभ व गणपति ने इस कथानक मे थोडा परिवर्तन करते हुये माधव व कदला के पूर्वजन्म की कथा की सयोजना की है।

कुशललाभ जैन कवि थे अत उनकी कथा मे जन्म जन्मान्तर की कथा का आना स्वाभाविक ही लगता है। अन्य कवियो ने शायद प्रेम को जन्म जन्मान्तर तक अमर बनाने के उद्देश्य से इस कथानक को लिया है, ऐसा प्रतीत होता है। कुशललाभ की नायिका वेश्या के प्रेम की कथा मे वर्णित प्रेम जनसामान्य का प्रेम है। नायक नायिका का प्रेम कलात्मक अभिरुचि से प्रारम्भ होकर रूपासक्ति मे विकसित होता हुआ सच्चा प्रेम बना है। एक दूसरे को प्राप्त करने के प्रयासो मे कथा की गम्भीरता क्रमश बढती जाती है और कष्टो की समाप्ति अन्तत. मधुर मिलन मे होती है।

1. राउल माल सुपाट धर, कुँवर श्री हरिराजि
विरच्यो इह सिणगार रस, तास कुतूहल काजि
माधवानल कामकदला चउपई
गायकवाड आरियन्टल सीरीज बडौदा

कुशललाभ का माधव कामदेव का पर्याय नही है और न कामकदला ही रति के रूप मे चित्रित है। दोनो मे अपार सौन्दर्य अवश्य है। पर कुशललाभ ने शील समन्वित दामदत्य प्रेम का चित्रण करना ही अपना उद्देश्य रखा है।[1]

कुशललाभ ने कथा के परम्परा से चले आ रहे स्रोत मे कुछ नवीन एव मौलिक परिवर्तन किये हैं। वे निम्नलिखित है –

(1) जयन्ती को इन्द्र से शाप दिलाना
(2) पुष्पावती मे शिलारूप मे अवतीर्ण होना
(3) माधव का शिलारूपी नारी से विवाह व जयन्ती का शाप मुक्त होना।
(4) माधव व जयन्ती का प्रेम।
(5) जयन्ती का इन्द्र से पुन शापग्रस्त हो मृत्यु लोक मे नर्तकी कामकदला के रूप मे अवतीर्ण होना।

ये सभी घटनायें माधवानल कामकदला की कथा के मेरुदण्ड है।

दुर्गा सात्तसी–कथा स्रोत

दुर्गा सात्तसी का मूल कथा स्रोत मार्कण्डेय पुराण है। इस कथा को कुछ नवीनता के साथ ग्रहण किया है।

मार्कण्डेय पुराण मे दैत्यराज शुभ निशुभ का दूत सुग्रीव जो सन्देश देवी को कहता है उसका पहले वर्णन नही है परन्तु कुशललाभ ने शुभ के द्वारा वह सब सन्देश निशुभ को कहलवाया है।

इसके अतिरिक्त कुशललाभ की दुर्गा सात्तसी मे ब्रह्माणी विप कन्या के रूप मे शुभ से विवाह करती है जबकि अन्य कथाओ मे ऐसा नही है।

दुर्गा शप्तशती मे देवी द्वारा निशुभ के वध से क्रोधित होकर शुभ देवी से युद्ध करता है और मारा जाता है। परन्तु कुशललाभ ने अपनी कथा मे शुंभ-निशुभ का वध देवी से एक साथ ही करवाया है यहाँ दुर्गा सप्त शती की भाति निशुभ के वध से उद्वेलित हो शुभ प्रहार नही करता।

"तेजसार रास" व "भीमसेन राजहंस चौपई" के कथा स्रोत

इन कथाओ का आधार जैन महापुराण ही कहा जा सकता है। इन कथानको के आधार पर तो कोई कथा मिलती नही है। परन्तु कथा काव्यो मे श्री मुनि सुव्रत स्वामी तथा श्री रामरिषि कथा के प्रमुख पात्रो भीमसेन व राजहस को तथा तेजसार को धर्म उपदेश देकर दीक्षा देते है।

मुनि सुव्रत स्वामी का उल्लेख जैन उत्तरपुराण मे आया है। इसके अतिरिक्त 'जैन धर्म के मौलिक इतिहास' मे भी मुनि सुव्रत स्वामी का जीवन उल्लेख है। श्री

1. इम जो उत्तम नारि नर पालइ निर्मल शील
इह लोके सुख सपजई, पर भवि संपति लील ॥ 650 ॥

मुनि सुव्रत बीसवें तीर्थंकर थे। इनका धर्म परिवार बहुत विस्तृत था। श्रावक श्राविकाओ की सख्या भी अपार थी।[1]

"तेजसार रास" मे उल्लेख आया है कि तेजसार, मुनि सुव्रत स्वामी से अपने पूर्वभव का ज्ञान प्राप्त करके दीक्षा ग्रहण करता है। विमला श्राविका का भी उल्लेख आया है। जो निश्चय ही मुनि सुव्रत स्वामी के श्रावक व श्राविका रहे होगे। उन्ही श्रावक श्राविकाओ को आधार बना कर कवि कुशललाभ ने अपनी कल्पना के सहारे कथा का निर्माण किया है।

"भीमसेन राजहस चौपई" भी इसी प्रकार का कथा काव्य है। ऋषि श्रीराम भीमसेन व राजहस को धर्म उपदेश देकर दीक्षा देते है ऐसा उल्लेख इस कथा मे आया है। परन्तु इस नाम के किसी ऋषि का उल्लेख कही भी जैन साहित्य मे प्राप्त नही हो सका है। महावीर स्वामी के नवें गणधर अचल भ्राता ने अपने शिष्यो को उपदेश दिया। उसमे उन्होने बताया कि जो व्यक्ति राजेन्द्र राजहस की तरह भगवान जिनेश्वर की आराधना करता है वह अनेक प्रकार के सुखो को प्राप्त होता है। इस पर गणधर अचल भ्राता के शिष्य पिंगल ने उनसे राजहस का पूर्ण वृतात सुनाने की प्रार्थना की। अपने शिष्य की प्रार्थना को स्वीकार कर गणधर अचल भ्राता ने विस्तार पूर्वक भीमसेन राजहस का कथानक सुनाया। कथा का स्रोत कुशललाभ ने यही बताया है। किन्तु जैन वाङमय मे अन्य कही इस प्रकार का कथानक देखने मे नही आया है।

"अगड़दत्त रास" का कथा स्रोत व परम्परा

आगडदत्त रास सम्बन्धी कथा जैन साहित्य मे बहुत प्राचीन काल से चली आ रही है।[2] इस पर कई एक चरित्र विषयक आख्यान लिखे जा चुके हैं परन्तु कई कवियो ने इस कथा को दृष्टान्त रूप मे ही ग्रहण किया है। यही कारण है कि यह कथा गद्य और पद्य दोनो रूपो मे सस्कृत, प्राकृत, राजस्थानी और गुजराती भाषाओ मे लिखी गई है।

अगडदत्त कथा का प्राचीन रूप कौन सा रहा होगा यह कह पाना कठिन है। इसका प्राचीनतम रूप हमे पाचवी शती मे सघदासगणि द्वारा लिखित 'वसुदेव हिंडी' कथा ग्रथ मे और उसके उपभाग धम्मित हिंडी मे अवान्तर कथा के रूप मे मिलता है। आठवी शती के जिनदासगणि ने अपने उत्तराध्ययन चूर्णि

1 श्रावक – एक लाख बहत्तर हजार
श्राविका – तीन लाख पचास हजार
जैन धर्म का मौलिक इतिहास पृ 134 (प्रथम भाग) तीर्थंकर खण्ड
लेखक एवं निर्देशक आचार्य श्री हस्तीमल जी महाराज

2. अगडदत्त कथा और तत्सम्बन्धी जैन साहित्य श्री भवरलाल नाहटा, वरदा वर्ष 2 अक 3 पृ. 2

मे इस कथा को दृष्टान्त रूप मे अपनाया है। इसके बाद यही कथा वादिवेताल शांति सूरिकृत 'उत्तराध्ययन की पाईय (प्राकृत) टीका' मे तथा स. 1129 मे नेमिचन्द रचित उत्तराध्ययन टीका मे 328 प्राकृत पद्यो मे दी गई है। श्री विनय भक्ति सुन्दर चरण ग्रथमाला की ओर से सस्कृत के अज्ञात कवि कृत 'अगडदत्त चरित्र' 334 श्लोको मे प्रकाशित हुआ है परन्तु इसमे रचना सवत का अभाव है। अत इसकी प्राचीनता का अनुमान नही लगाया जा सकता है।

इस कथा की वर्तमान परम्परा का आरम्भ 16वी शती मे लिखित गुजराती और राजस्थानी भाषा के अगडदत्त रास को माना जा सकता है। यही परम्परा हमे 18वी शताब्दी तक दिखाई देती है। इस कथा को आधार बनाकर अब तक निम्न काव्य लिखे जा चुके हैं

(1) अगडदत्त रास स 1584 आषाढ वदि 14 शनिवार भीमकृत[1]
(2) अगडदत्त मुनि चौपई स 1601 सुमति[2]
(3) अगडदत्त कुमार रास स 1625 का शु 15 गुरुवार कुशललाभ[3]
(4) अगडदत्त प्रबन्ध स 1666 श्री सुन्दर[4]
(5) अगडदत्त चौपई स 1670 क्षेमकलश[5]
(6) अगडदत्त रास स, 1679 ललित कीर्ति[6]
(7) अगडदत्त रास स 1685 स्थानसागर[7]
(8) अगडदत्त रास 16वी शती गुणविनय[8]
(9) अगडदत्त चौपई स 1703 पुण्य निधान[9]
(10) अगडदत्त रास स 1703 कल्याण सागर[10]

1. रा प्रा वि. प्र जोधपुर ग्र' 273-33 (अ प्र)
2. वही, ग्र 1124 (अ प्र)
3. (क) भण्डारकर प्राच्य विद्या मदिर पूना, ग्रं 605
   (ख) प्राच्य विद्या मन्दिर बडौदा, ग्र 14289
4. वरदा वर्ष 2 अक 3 जुलाई 1959 पृ 2
   श्री भवरलाल नाहटा का लेख अगडदत्त कथा और तत्सम्बन्धी जैन साहित्य
5. अगडदत्त कथा और तत्सबधी जैन साहित्य . श्री भवरलाल नाहटा का लेख
   वरदा वर्ष 2 अक 3 जुलाई 1959
6. रा प्रा वि प्र बीकानेर ग्र 2041
7. अगडदत्त कथा और तत्सबधी जैन साहित्य श्री नाहटा का लेख वरदा वर्ष 2 अक 3 जुलाई 1959
8. वही
9. वही
10. वही

(11) अगडदत्त ऋषि चौपई स 1787 शाति सौभाग्य[1]
(12) अगडदत्त रास अपूर्ण[2]
(13) अगड़दत्त चरित्रम् अपूर्ण[3]

कुशललाभ का अगडदत्त कुमार रास प्राकृत भाषा मे लिखित अगडदत्त चरित्र और 16वी शती के अगडदत्त रास का विकसित रूप है। अत हम यहाँ इसकी तुलना वासुदेव हिंडी नेमिचन्द रचित उत्तराध्ययन टीका, भीम कृत अगडदत्त रास मुनि चौपई आदि पूर्ववर्ती कृतियो मे वर्णित कथा से करेंगे।

आलोच्य कृति मे अगडदत्त को वसन्तपुर के राजा भीमसेन के बलशाली सामत शूरसेन का रूपवान पुत्र कहा गया है जबकि वसुदेव हिण्डी मे वह उज्जैनी के अमोघरथ सारथी का पुत्र, नेमिचन्द के अनुसार वह शखपुर के सुदर राजा की भार्या सुलसा का पुत्र है। भीम ने अपने आगडदत्त रास मे अगडदत्त को चपानगरी के राजा वीरसेन और रानी वीरमती का पुत्र तथा कवि सुमती शखपुरी के राजा सुर-सुंदर का पुत्र बताया है।

अगडदत्त कुमार रास के अनुसार अगडदत्त के रूप गुण का यश सुनकर एक सुभट वसन्तपुर मे आया और राजा भीमसेन ने सामन्त शूरसेन को वहाँ बुलवाया। सुभट और शूरसेन के द्वन्द्व-युद्ध मे शूरसेन मारा गया। अगडदत्त की माता ने राज्य मे अपने अनादर को देखते हुये पुत्र को विद्याध्ययन के लिए उसके पिता की इच्छानुसार उनके मित्र उपाध्याय सोमदत्त के पास चपापुर मे भेजा।

यही वृतान्त वसुदेव हिण्डी मे वर्णित है। पर यहाँ स्थान का नाम कोशाम्बी तथा गुरु का नाम आचार्य दृढप्रहारी दिया गया है। इसके विपरीत उत्तराध्ययन वृति, भीमकृत अगडदत्तरास तथा सुमति रचित अगडदत्त मुनि चौपई मे इतर रूप मे प्रस्तुत हुआ है। इन कथा रूपो मे नगरवासी अगडदत्त पर व्यभिचारो का लाछन लगाते हैं परिणाम स्वरूप राजा उसे देश निकाला देता है और वह वहाँ से बनारस पहुंच कर गुरु से शिक्षा ग्रहण करता है।

कुशललाभ के अनुसार वसन्तपुर के एक व्यवहारी (जिसके पास सोमदत्त ने अगडदत्त के भोजनादि की व्यवस्था कर रखी थी) की विवाहित कन्या मदनमजरी को अगडदत्त ने शिक्षा पूर्ण कर लेने के पश्चात् विवाह का वचन दिया।

यही प्रसग अन्य कथा रूपो मे भी मिलता है। पर मदनमजरी एव उसके पिता के नामो मे अन्तर है। वसुदेव हिन्डी मे इसे गृहपतियक्षदत्त की पुत्री उत्तराध्ययन सूत्र वृत्ति मे पिता का नाम बधुदत्त दिया है। भीम ने मदनमजरी के स्थान

1 अगडदत्त कथा और तत्सबधी जैन साहित्य श्री नाहटा का लेख वरदा वर्ष 2 अंक 3 जुलाई 1959
2 वही
3 मुनि श्री कल्याण विजय जी संग्रहालय में 584 जालोर

पर विपया नाम दिया है और उसे विनयशाह राजा के प्रधान मतिसागर की पुत्री कहा है। सुमति ने इस प्रवत्स्य पतिका को त्रिलोचना तथा उनके पिता को बंधुदत्त कहा है। प्राय सभी कथा रूपो मे मदनमजरी के अगड़दत्त के प्रति आसक्ति का कारण उसके पति का विदेश गमन कहा है, जबकि भीम कृत अगडदत्त रास मे इसका कारण उसके पति का कुबडा होना कहा है। इसी वासनावश वह अगडदत्त पर गवाक्ष मे कंकर मारा करती थी।

विद्या अध्ययन के पश्चात् जब अगडदत्त ने स्वदेश लौटने की आज्ञा मागी तो सोमदत्त राजा के पास पहुँचा और अगडदत्त मदनमजरी के प्रेम प्रसग की चर्चा की। राजा ने अगडदत्त के वैभव को सुनकर उसे अपना प्रधान नियुक्त किया। इसी समय नगर के महाजन दिन प्रतिदिन हो रही चोरियो की शिकायत लेकर राजा के पास उपस्थित हुए। अगडदत्त चोर को 7 दिन मे ढूंढ लाने का वचन देकर चल पडा।

प्राकृत के कथा रूपो मे तो यही वृतान्त है किन्तु राजस्थानी और गुजराती रूपान्तरो मे भिन्नता है कि अगडदत्त ने मदमस्त हाथी को अपने वश मे कर लिया। इस कौशल से प्रसन्न होकर राजा ने कुमार को अपने सेनापति पद से सम्मानित किया।

चोर की खोज के पश्चात् कुशललाभ ने मदनमजरी का विवाह अगडदत्त के साथ करवा दिया है। जबकि अन्य रूपान्तरो मे राजा की पुत्री कमलसेना अथवा वीरमती के साथ अगडदत्त के विवाह का वर्णन है। आलोच्य कृति मे भी वीरमती नाम की पात्रा है पर वह भुजगम नामक चोर की बहिन है।

कुशललाभ ने चपावती से लौटते हुए अन्य कठिनाईयो के साथ अगड़दत्त के पिता के हत्यारे भ्रमगसेन के वध का भी उल्लेख किया है। यह प्रसंग अन्य पूर्ववती रूपान्तरो मे नही मिलता। प्राकृत रूपान्तरो मे अटवी के धनजय चोर का वधकर अगडदत्त का पुन उज्जैनी अथवा बनारस लौटने का वर्णन है। पर आलोच्य कृति मे ऐसा कोई उल्लेख नही है।

आलोच्य कृति मे अगडदत्त को लेने के लिये उसके माता पिता और समस्त राजपरिवार वसन्तपुर की सीमा तक आते हैं। अपने माता पिता आदि को वसन्तपुर के लिये रवाना कर वह स्वय मदनमजरी के साथ रमणार्थ वहाँ ठहर जाता है। यहाँ मदनमजरी को एक विद्याधर ने अन्य पुरुष से रमण करते हुये देखा और उसकी हत्या का विचार किया। इसी बीच उसने मदनमजरी के साथ विलाप करते अगड़दत्त को देखा। सर्प दशित मदनमंजरी के लिये उसके करुणार्द्र निवेदन पर विद्याधर ने मदनमजरी को पुनर्जीवित कर उसके आचरण का वर्णन किया।

यद्यपि यह प्रसग सभी रूपान्तरो मे मिलता है पर कुछ अन्तर के साथ। वसुदेव हिन्डी आदि प्राकृत कथा रूपो मे विद्याधर युगल का उल्लेख है। भीम के अगडदत्तरास मे एक ही विद्याधर का उल्लेख है जो अगडदत्त को सपत्न राजा और

कामुक के दृष्टान्त से प्रतिबोधित किया। इस प्रकार कुशललाभ ने नारी की कुटिलता को मानव जाति के माध्यम से ही स्पष्ट किया है। जबकि भीम ने इस प्रवृत्ति को जन्तु समाज मे भी व्याप्त बताकर इसका सामान्य वर्णन किया है।

शेष कथा सभी रूपान्तरो मे समान है। पर वसुदेव हिन्डी मे अगडदत्त दीक्षित होकर अपने चरित्र का उद्घाटन स्वय करता है तथा नेमिचद की उत्तराध्ययन वृत्ति मे कवि ने अगड़दत्त को दीक्षा देने वाले ऋषि का नाम चारण ऋषि दिया है। आलोच्य कथा मे अगडदत्त देवस्थान मे मिले चोरो के नायक से अपना चरित्र सुनकर ससार की असारता के कारण दीक्षित होता है। यही उल्लेख अन्य पूर्ववर्ती कथारूपो मे वर्णित है।

भीम का अगडदत्त रास पाच खडो मे विभक्त है जिसमे कुल 460 दूहा चौपाई है कुशललाभ ने ऐसा शिल्प ग्रहण नही किया है। उसने तो अन्य पूर्ववर्ती कवियो के शिल्प को ही अपनाया है। साथ ही कुशललाभ ने वसुदेव हिन्डी, भीम, सुमति आदि की भाति ही काव्य मे विस्तृत प्राकृतिक वर्णनो एव नख-शिख वर्णनो को अधिक महत्व नही दिया है। यहाँ तो कवि ने प्रसगवश दो तीन चौपइयो मे अगडदत्त और मदनमजरी का रूप वर्णन कर दिया है। साथ ही पूर्ववर्ती सभी कवियो ने प्रारम्भ मे सरस्वती की प्रार्थना करते हुये उसका नखशिख वर्णन किया है। किन्तु कुशललाभ ने इस प्रसग को भी महत्व नही दिया है। उसने सरस्वती की प्रारम्भ मे वदना तो की है पर धार्मिक दृष्टि का ही उसमे आचरण है। शृ गार उससे कोसो दूर रहा है। इस प्रकार कवि ने नैतिकता को प्रधानता दी है जबकि अन्य कवियो ने लौकिक शृंगार को।

उक्त अध्ययन के पश्चात् हम कुशललाभ की अगडदत्त कथा मे अन्य पूर्ववर्ती कथा के साथ निम्नलिखित साम्य एव वैषम्य का अनुभव करते हैं.

साम्य

(1) अगडदत्त अत्यन्त रूपवान नायक है, जिस पर प्रत्येक नारी आसक्त है।

(2) उपाध्याय ने उसे माता पिता की आज्ञा पालन का आचरण दिया।

(3) परिव्राजक चोर का पता सात दिनो मे लगा लाने का बीडा अगडदत्त ही उठाता है।

(4) छ दिन तक भटकने के उपरान्त सातवें दिन परिव्राजक रूप मे चोर को वह ढूंढ लेता है और उसको मार कर राजा के समक्ष उपस्थित होता है।

(5) राजा अपनी पुत्री अथवा गृहपति की पुत्री से अगडदत्त का विवाह कर देता है।

(6) मार्ग की कठिनाईया एव उन पर अगडदत्त की विजय प्राप्ति।

(7) विद्याधर द्वारा नायिका को जीवित करना तथा नारी की कुटिलता का अगड़दत्त को प्रतिबोध कराना।

(8) देवस्थल पर चोरो के साथ मदनमजरी का प्रणय एव अगड़दत्त पर खडग प्रहार तथा चोरो का दीक्षित होना ।
(9) रमणोपरान्त अगड़दत्त का मुनि द्वारा अपने चरित्र को जानना एव दीक्षित होना ।

वैषम्य

(1) पात्रो, स्थानो के नामो का अन्तर
(2) अगड़दत्त के अध्ययनार्थ प्रदेश गमन की घटना
(3) मदनमजरी एवं अगड़दत्त के विवाह का प्रसग
(4) अटवी मे भुजगम नामक चोर को मारकर पुन. चपानगरी न लौटना
(5) अपने पिता के हत्यारे अमगसेन का वध
(6) अगडदत्त के माता पिता का मार्ग मे मिलन एव मदनमंजरी के साथ उसका मार्ग मे ही रुकना ।
(7) विद्याधर का अगडदत्त को प्रतिवोधन
(8) नायिका एव सरस्वती का नखशिख वर्णन ।

सप्तम अध्याय

कवि के आख्यान काव्यों में समाज और संस्कृति

जैन कथाकाव्यो मे सामाजिक जीवन के जो चित्र अंकित हैं वे बडे ही सुगठित एव सुव्यवस्थित हैं। इन कथा काव्यो मे नर-नारी के प्रणय सबधो का चित्रण, संयोग वियोग पक्ष, मानसिक व दैहिक क्रियाओ का चित्रण मुख्य रूप से हुआ है। फिर भी वर्ण्य विषय के प्रतिपादन मे घटनाओ के क्रम मे कथापात्रो के व्यवहार, सवाद, कथोपकथन तथा अवान्तर कथाओ मे वर्णित परिस्थितियो के आधार पर तत्कालीन लोकजीवन, उसका रहन सहन लोकरीतिरिवाज आदि के चित्रण से तत्कालीन समाज और सस्कृति का स्पष्ट चित्र दृष्टि गोचर होता है। इन कथाओ मे प्राचीन काल एव मध्य युग के कथानक विद्यमान है। अत रचनाकार ने अपने समय की आधार पीठिका पर वर्णित कथानक को अपनाया है। पूर्व से लेकर लेखक के समय तक की परिस्थितियो एव सास्कृतिक उद्भावनाओ का चित्रण इन कथा काव्यो मे हुआ है।

तत्कालीन समाज और सस्कृति का चित्रण प्रस्तुत करते समय हमने अध्ययन मे इस बात का ध्यान रखा है कि कृतिकार जिस समाज का चित्रण कर रहा है वह कौन से युग का समाज है।

उस समय धार्मिक स्वतत्रता के साथ-साथ जैन धर्म की गरिमा को प्रदर्शित करने के लिये यथा सभव उपलब्ध साधनो को अपनाया जाता था। सामाजिक व्यवस्था को सुरक्षित रखने के लिये कठोर दण्ड विधान था। अपराधो के होने से समाज मे अव्यवस्था आ जाती है जिससे शासन शीघ्र ही नष्ट हो जाता है साथ ही समाज मे भी अराजकता उत्पन्न हो जाती है। इन जैन कथाओ के अध्ययन से यही ज्ञात होता है कि राजा सामाजिक जीवन मे सुख शाति लाने के लिये सदैव प्रयत्नशील रहता था और समाज विरोधी तत्वो को नष्ट करने के लिये उचित साधनो का प्रयोग भी करता था।

सामाजिक जीवन

(क) वर्ण व्यवस्था

'ढोला मारु' कथा का समाज मध्ययुगीन सामन्ती समाज है। यह ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र चार भागो मे विभाजित है। वर्ण व्यवस्था का भारतीय सस्कृति मे महत्वपूर्ण स्थान रहा है।

मनु के अनुसार ब्राह्मण के कर्म हैं--"अध्ययन-अध्यापन, यजन-याजन, दान और प्रतिग्रह। अध्यापन, याजन और प्रतिग्रह कर्म जीविका के निमित्त हैं।"[1]

प्रारम्भ मे हिन्दू समाज के सचालन मे प्रमुख हाथ ब्राह्मणो का ही था। परन्तु 'ढोला मारू' के मध्यकालीन सामन्त युग मे सार्वभौमता इनसे छिन गई। ब्राह्मणो को 'उत्तम' अवश्य ही समझा जाता था परन्तु वे क्षत्रियो के ही आश्रित थे। वे उन्ही के विभिन्न धार्मिक क्रिया कलाप कराकर जीविकोपार्जन करते थे। 'माधवानल कामकदला' मे भी राजा का मत्री पुरोहित ही होता है।[2]

मनुस्मृति के अनुसार ब्राह्मण के वध से वढ कर और कोई पाप नही।[3] शायद इसलिये मारवणी की माता ने पुरोहित को ढोला के पास नरवर नही भेजा कि कही मालवणी के गुप्तचर इसका वध न कर दें।

'माधवानल कामकदला' मे भी राजा क्रुद्ध होकर जब ब्राह्मण माधव का वध करना चाहता है तब राज्य सभासद मे एकत्र समस्त व्यक्ति खडे होकर ब्राह्मण की हत्या का विरोध करते हैं।[4]

> अवध्या ब्राह्मणा गाव स्त्रियो बालास्तपस्विन
> तेपा चान्न न भुजीत ये चान्ये शरण गता

सस्कृत के इस श्लोक मे भी ब्राह्मण को अवध्य वताया गया है।

क्षत्रिय

क्षत्रिय समाज की आधार शिला रहे हैं। प्रजा की रक्षा का भार सदैव ही क्षत्रियो पर रहा है। शुक्राचार्य के अनुसार जो प्रजा का रक्षण करने मे निपुण हो, शूर एव पराक्रमी हो, जो दुष्टो का दमन करने मे समर्थ हो वही क्षत्रिय कहलाता है।[5]

1 मानव धर्मशास्त्र 10/75-76
2 माधवानल कामकंदला चउपई कुशललाभ
गायकवाड आरियन्टल सीरिज वड़ोदा पृ 46
3 मनुस्मृति 8/11
4 माधवानल कामकंदला चौपई-छंद सं 222
कुपिउ खडग करि कढिइ साही, मेल्हि मुक्ष पहिलउ किउ पसाउ
राज सभा बोलइ सुहु कोई, ब्रह्म पुत्र नवि मारइ कोइ
5. शुक्र नीति . 1-41

प्रस्तुत कथा काव्यो की कहानी क्षेत्रीय समाज की कहानियाँ है । ढोला मध्य युग का सामत है। वह शूरवीर और साथ ही ललित गुणों का आगार भी है। 'माधवानल कामकंदला' के सभी राजा क्षत्रिय हैं। प्रजा की रक्षा करना वे अपना कर्तव्य समझते हैं। माधव पर लगाये गये आरोप की जाँच राजा स्वय करता है।[1]

'तेजसार रास' का कथा नायक भी क्षत्रिय कुमार है। 'भीमसेन राजहस सम्बन्ध चौपई' मे भीमसेन क्षत्रिय राजा है और उनका कुवेर राजहंस हैं। राजकुमारी रूपमती के स्वयवर मे उपस्थित सभी राजा क्षत्रिय हैं।[2]

वैश्य

इस वर्ग का कार्य व्यापार करना रहा है। वैश्य वर्ग के हाथ मे समाज की अर्थ व्यवस्था रहती थी। 'भीमसेन राजहस चौपई' व 'ढोला मारवणी चौपई' मे 'सौदागर" घोडो के व्यापारी के रूप मे कथा मे अवतरित हुये हैं।

शूद्र

मनु के अनुसार शूद्र का एक मात्र कर्म है ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य की सेवा सुश्रुषा करना।[3] इन कथा काव्यो मे इनकी सामाजिक अवस्था का प्रत्यक्ष चित्रण नहीं मिलता। परन्तु परोक्षत. आभास अवश्य मिलता है।

वैदिक काल मे वर्ण व्यवस्था गुण और कर्म के अनुसार थी। कभी कभी अपने गुण कर्म के अनुसार व्यक्ति वर्ण परिवर्तन भी कर सकता था पर कालान्तर मे इस परिवर्तन मे जडता आने लगी और इसका सम्बन्ध व्यक्ति के गुण कर्म पर आधारित न होकर जन्म से होने लगा तथा व्यवसाय के आधार पर अनेक जातियाँ वन गई। 'माधवानल कामकदला प्रवन्ध' [4] तथा नलराज चौपई[5] मे अनेक जातियो का वर्णन मिलता है।

'ढोला मारवणी चौपई' में पुरोहित चारण, रैवारी, जोगी विणजारा, खवास; ढाढी डूम जाति का प्रसगानुकूल वर्णन मिलता है। इन जातियो की भी कई उपजातियाँ हो गई थी। गोत्रो की सख्या भी वढ गई थी। कुशललाभ ने राजपूत जाति के कई गोत्रो का वर्णन 'भीमसेन राजहस चौपई' मे किया है।[6]

(ख) पारिवारिक जीवन

सगठन का आधार परिवार ही होता है। तत्कालीन समाज मे आज ही की भाँति सयुक्त परिवार प्रणाली प्रचलित थी। परिवार मे माता पिता पुत्र पुत्रियाँ भाई

1. माधवानल कामकन्दला चउपई दोहा सख्या 136
2. भीमसेन राजहंस सम्बन्ध चौपई ग्रथाक 1217 दोहा संख्या 513 से 522
3 मनु स्मृति 1/91
4. गणपति कृत माधवानल कामकंदला प्रबन्ध (चतुर्थ अंग) पृ. 73 से 76 तक
5 समय सुन्दर कृत नलराज चौपई (ह लि ग्रं.)
6. दोहा सख्या 513 से 522

पुत्र जनमउ परम आणंद संतोष्या परीयण सहू
वेद नाद वाजित्र वाजइ याचक जन जय जय करइ
दीयइ दान मोटइ दीवाजइ नगर महोच्छव नव नवा
सफल मनोरथ सार राजहंस नामइ कुमर अति सुन्दर आकार ॥ 371 ॥

विवाह

संस्कारो मे सवसे अधिक महत्वपूर्ण संस्कार विवाह माना गया है। ऋग्वेद के अनुसार विवाह का उद्देश्य गृहस्थाश्रम ग्रहण कर देव कार्य करते हुये वंशानुक्रम मे सन्तान प्राप्ति थी।[1] ऐतरेय ब्राह्मण[2] तथा शतपथ ब्राह्मण[3] मे भी सन्तान प्राप्ति के कारण ही विवाह को महत्व दिया है। मनु के अनुसार विवाह का लक्ष्य निम्नलिखित है

अपत्य धर्म कामाणि शुश्रूषा रति रुत्तमा।
दाराधी नस्त था स्वर्गः पितृणामात्मनश्चह ॥
(मनुस्मृति 9/28)

कुशललाभ के कथा काव्यो मे भी विवाह का उद्देश्य धर्म, काम मोक्ष की प्राप्ति माना गया है। सतानोत्पत्ति पर इन कथाकारो ने विशेष वल दिया है। 'माधवानल कामकदला चौपई' मे कुशललाभ ने विवाह का उद्देश्य सन्तानोत्पत्ति और भोग वतलाया हैं तथा यह दोनो कार्य पुण्य के फल वतलाये गये हैं।[4]

ढोला मारवणी चौपई' मे नायक नायिका का सामाजिक मानमर्यादा एव परम्परा के अनुसार विवाह होता है। विवाह के पूर्व प्रेम जैसी कोई वात नही होती ढोला मारू व माधवानल की कथा मे स्वकीय प्रेम को ही विशिष्ट स्थान दिया गया है।

विवाह से पूर्व वर और वधू का अनेक सामाजिक व व्यक्तिगत दृष्टियो से परीक्षण किया जाता है। वर वधू के निर्वाचन मे कुल व गुण दोष देखे जाते हैं। कन्याओ के वर चयन मे प्रमुख भाग माता पिता का ही होता था।[5] कभी कभी

1. ऋग्वेद 10, 85, 326, 5, 3, 2, 5, 28, 3
2. ऐतरेय ब्राह्मण 33, 1, 1 का 2, 4
3 शतपथ ब्राह्मण 5, 2, 1, 10
4 च्यारि पुत्र जार्या सन्तान प्रगटा मन्दिर नवइ निधान
विविध विषय सुख भोगवइ राजऋद्धि महाप्पु
कुशललाभ इणि परिकहइ ओ सविपुण्य प्रमाण
'कुशललाभ कृत माधवानल कामकंदला गायकवाड़ ओरियन्टल सीरिज वडोदा'
5. मारवणी किणि कारणि आज, धणु लडावइ काइ महाराज।
पिंगल राजा हसि वोलियो, नाव मरूह कुमरि सु कियो ॥ 177 ॥
ढोला मारवणी चोपई ह. प्र.

ब्राह्मण, नाई अथवा अन्य कोई सन्देश वाहक की सूचना के आधार पर ही वर और वधू का चयन कर लिया जाता था।[1]

किन्तु इन कथाओ से यह भी ज्ञात होता है कि कन्याओ को वर चयन की पूरी स्वतन्त्रता भी थी। 'भीमसेन राजहस चौपई' मे उल्लेख है कि जब रूपमजरी के पिता रिणकेसरी उसकी इच्छा जानते हुये भी सगरराय से उसका रिश्ता कर लेते हैं तो वह अपनी प्रतिज्ञा का स्पष्ट सकेत देते हुये कहती है, कि सगरराय उसके भाई के समान है। अपनी इच्छा के विरुद्ध विवाह कर देने पर वह अग्नि मे जलने की धमकी भी देती है।[2] ऐसी प्रतिज्ञा 'तेजसार रास चौपई' मे एणामुखी करती है। एणामुखी वन मे तेजसार को देख लेती है और घर आकर रोती है। माँ जब रुदन का कारण पूछती है तो वह बताती है-

आज गई थी अटवी मझार इक मैं पेख्यउ राजकुमार
ते मुझने परणावे मात, नही तर करसु आतम घात ॥84॥

और पुत्री की इच्छा पूर्ण करने के लिए माता उस राजकुमार को चारो दिशाओ मे ढूढती फिरती है।[3]

धर्म सूत्र, गृह्य सूत्र स्मृतियो मे विवाह के आठ प्रकार बताये गये हैं ब्राह्म, प्रजापत्य, आर्य, दैव, गान्धर्व, आसुर, राक्षस और पैशाच। डा रामगोपाल गोयल ने इन विवाहो को दो वर्गों मे विभक्त किया है। पहले वर्ग मे प्रथम चार प्रकार के विवाह मे विवाह का समस्त उत्तरदायित्व पिता का रहता है और वह अपनी इच्छा अनुसार योग्य वर ढूँढकर कन्या का विवाह कर देता है। दूसरे वर्ग के विवाह मे पिता लडकी को अपना वर ढूढने की अनुमति दे देता है और लडकी अपनी इच्छानुसार वर ढूढकर विवाह कर लेती है या कोई पुरुष उसका हरण कर लेता है।[4]

1. (क) भीमसेन राजहंस सम्बन्ध चौपई ह ग्र ला द ग 1217 दोहासख्या 70-80
(ख) भीमसेन मोटउ भूपाल राजहस युवराज विशाल
ते तेडवा दूत तिण ठाम आवी राय नइ कीयउ प्रणाम
वही दोहा संख्या 469
2 माहरइ मनि जे मइवर वरउ, अगज सहित मइ मगी करयउ
वर सूं भीमसेन भरतार अथवा अगनि प्रवेस अपार ॥ 156 ॥
भीमसेन राजहंस सम्बन्ध चौपई ह ग ग. 1217
3 तेजसार रास चौप ह ग्रं मुनिश्री कल्याण विजयजी संग्रहालय जालोर, ग्र 2039
दोहा सख्य 85
4 राजस्थानी प्रेमाख्यान परंपरा और प्रगति डा रामगोपाल गोयल पृ० 476
प्रथम संस्करण 1969

चाचा आदि सम्मिलित रूप से एक ही घर मे निवास करते थे। माता पिता की आज्ञा मानने वाला पुत्र ही उत्तम प्रकृति का गिना जाता था। पुत्र पुत्री की शादी माता पिता अपनी इच्छानुसार करते थे। पुत्र वधु सास का आदर करती थी। पुत्र वधु द्वारा सास व ससुर के चरण छूने की प्रथा थी और सास ससुर बदले मे कुछ देते थे

> पगि ससुरानइ कियो प्रणाम् तिहाँ दीया मोटा सउ ग्राम
> सासू प्रणमी कियो जुहार दीया सहि सोवन सिणगार[1]

'माधवानल कामँकदला' मे माधव व कदला अपने माता पिता भाई बहिन सभी परिवार वालो से मिलते है।[2]

'भीमसेन राजहस चौपई' मे भी वहू रूपमती ससुर के पैर छूती है।[3] तेजसार जब माता के पैर छूता है तो वह उसे सच्चा सुपुत्र बताती है।[4]

परिवार मे पुत्र का बड़ा महत्वपूर्ण स्थान था। वह कुल का दीपक कहलाता था

> तुम्ह कुल माहि दीप समान हुस्यइ पुत्र तेरूप निधान

ससुराल के लिये विदाई के समय माता अपनी कन्या को परिवार की समुचित सेवा करने की सीख देती है

> कुमरी प्रतइ माइ इम कहइ करयो तिम जिम जस गह गहइ
> प्री सू धर्यो अधिकी प्रीति चचल पणउ मधराय चीति ॥ 544 ॥

समाज मे मैत्री सम्बन्ध उच्च कोटि का गिना जाता था। मित्र विपत्ति मे फँसे मित्र की रक्षा करना अपना परम कर्तव्य समझता था।' भीमसेन राजहस चौपई मे भीमसेन का मत्री पुत्र हितसागर मित्र है[5] वह कठिन समय मे मित्र से सलाह लेता है[6] और मित्र उसे उपाय बताता है।[7]

(ग) संस्कार

हिन्दू धर्मशास्त्रो मे कहा है कि सस्कार नये गुणो का उत्पादक है और तप से

---

1. ढोला मारवणी चौपई ह ग्रं डा जावलिया से प्राप्त प्राप्ति
2. माय ताय बन्धव वहिन मिलियउ सहु परिवार
   कामकदला उगतइ, सुख माणइ ससार ॥ 643 ॥
   कुशललाभ कृत 'माधवानल कामकंदला चौपई' गायकवाड़ ओरियन्टल सीरिज वडोदा पृ 440
3. भीमसेन राजहंस चौपई ला द ग्र 1217 दोहा संख्या 562
4. तेजसार रास ग्रंथाक 26546 रा. प्रा. वि. प्र. जोधपुर दोहा संख्या 354
5. दोहा सख्या 34
6. दो सं. 114
7. दो सं 115, 116

दोष अथवा पाप, अपराध का निवारण होता है ।[1] मनु का कहना हैं–'द्वि जातियों के बीज तथा गर्भ से उत्पन्न पाप गर्भावस्था मे किये गये होम के द्वारा और जन्म लेने के पश्चात् जात कर्म चोल आदि के द्वारा शान्त हो जाते हैं ।[2] सस्कार शुद्धि और योग्यता के लिये किये जाते हैं । याज्ञवल्क्य की यही धारणा है "एवमेनं शमयाति बीज गर्भ समुद्भवम् ।"[3] मानव मन प्रसन्नता प्रिय होता है, नाच, गाना उत्सव मनाना हृदय के स्नेह एवं उमग का परिचायक है । अत सस्कारो का यही आशय है ।[4] गौतम ने सस्कारो की संख्या 40 मानी है ।[5] परन्तु मुख्य सेस्कार 16 ही माने गये हैं ।

कुशललाभ के कथा काव्यो मे इन संस्कारो का प्रसंगवश यत्र तत्र उल्लेख मिलता है । तत्कालीन समाज मे गर्भवती के दोहदो को पूर्ण करना पति का कर्तव्य होता था ।[6] गर्भवती के गर्भ मे पुत्र है या पुत्री उसके लिए स्वप्न ज्योतिषियो से पूछा जाता था । तेजसार मे ऐसा ही प्रसग है ज्योतिषि गर्भ के बारे मे बताता है–

पुत्र नही छै उदर सु दरी, जाणिस्ये पुत्री ते सुन्दरी ।। 264 ।।

तत्कालीन समाज मे 'जन्मोत्सव' भी घूमधाम के साथ मनाने की प्रथा प्रचलित थी । 'ढोला मारवणी चौपई' मे ढोला के जन्म पर नल राजा प्रसन्न होता है और घर घर मे मगल बधावे गाये जाते हैं ।[7] पुत्र के जन्म पर ही नही कन्या के जन्म पर भी उत्सव मनाया जाता था । ढोला मारवणी चौपई मे मारवणी के जन्म पर नगर मे बधावे एव मगल गीत गाये जाते हैं ।

माता पिता मनि आणंद घणउं, जनम हूओ मारुवणी तणउ
कीया बधावा नगर मझारि पुत्र तणी परि मगलाचार ।। 133 ।।

तेजसार के जन्म पर राजा उत्सव मनाता है ।[8] भीमसेन राजहंस सम्बन्ध चौपई मे भीमसेन के यहाँ राजहंस का जन्म होने पर सारा परिवार सतुष्ट होता है बाद्य बज रहे हैं, याचक जन जयकार कर रहे है, राजा बड़े बडे दान कर रहा है तथा नगर मे नये नये उत्सव मनाये जा रहे हैं

1 धर्मशास्त्र का इतिहास, लेखक श्री काण अध्याय 6 पृ संख्या 191
2 मनुस्मृति 2/27, 28
3. याज्ञवल्क्य स्मृति, 2/13
4 कवि कालीदास के ग्रंथों पर आधारित भारतीय संस्कृति डा० गायत्री वर्मा पृ. 53
5. धर्मसूत्र गोतम 8/14, 24
6. भीमसेन राजहंस चौपई दोहा संख्या 263
7. पुत्र जनमि हरख्यउ राजान, मनि आणंद्यौ नल राजान ।
घरि घरि उछव मंगल घणा, कीया बधावा पुत्रह तणा ।।
ढोला मारवणी चौपई ।। 150
8. दोहा संख्या 10

पुत्र जनमउ परम आणद सतोष्या परीयण सहू
वेद नाद वाजित्र वाजइ याचक जन जय जय करइ
दीयइ दान मोटइ दीवाजइ नगर महोच्छव नव नवा
सफल मनोरथ सार राजहस नामइ कुमर अति सुन्दर आकार ॥ 371 ॥

विवाह

सस्कारो मे सबसे अधिक महत्वपूर्ण सस्कार विवाह माना गया है। ऋग्वेद के अनुसार विवाह का उद्देश्य गृहस्था श्रम ग्रहण कर देव कार्य करते हुये वशानुक्रम मे सन्तान प्राप्ति थी।[1] ऐतरेय ब्राह्मण[2] तथा शतपथ ब्राह्मण[3] मे भी सन्तान प्राप्ति के कारण ही विवाह को महत्व दिया हैं। मनु के अनुसार विवाह का लक्ष्य निम्नलिखित है

अपत्यं धर्म कामाणि शुश्रूषा रति रुत्तमा।
दाराधी नस्त था स्वर्गः पितृणामात्मनश्चह ॥
(मनुस्मृति 9/28)

कुशललाभ के कथा काव्यो मे भी विवाह का उद्देश्य धर्म, काम मोक्ष की प्राप्ति माना गया है। सतानोत्पत्ति पर इन कथाकारो ने विशेष बल दिया है। 'माधवानल कामकदला चौपई' मे कुशललाभ ने विवाह का उद्देश्य सन्तानोत्पत्ति और भोग बतलाया हैं तथा यह दोनो कार्य पुण्य के फल बतलाये गये हैं।[4]

ढोला मारवणी चौपई' मे नायक नायिका का सामाजिक मानमर्यादा एव परम्परा के अनुसार विवाह होता है। विवाह के पूर्व प्रेम जैसी कोई बात नही होती ढोला मारू व माधवानल की कथा मे स्वकीय प्रेम को ही विशिष्ट स्थान दिया गया है।

विवाह से पूर्व वर और वधू का अनेक सामाजिक व व्यक्तिगत दृष्टियो से परीक्षण किया जाता है। वर वधू के निर्वाचन मे कुल व गुण दोष देखे जाते हैं। कन्याओ के वर चयन मे प्रमुख भाग माता पिता का ही होता था।[5] कभी कभी

1. ऋग्वेद 10, 85, 326, 5, 3, 2, 5, 28, 3
2. ऐतरेय ब्राह्मण 33, 1, 1 का 2, 4
3. शतपथ ब्राह्मण 5, 2, 1, 10
4 च्यारि पुत्र जार्या सन्तान प्रगटा मन्दिर नवइ निधान
विविध विषय सुख भोगवइ राजऋद्धि मडाणु
कुशललाभ इणि परिकहइ अे सविपुण्य प्रमाणु
'कुशललाभ कृत माधवानल कामकंदला गायकवाड आरियन्टल सीरिज वडोदा'
5. मारवणी किणि कारणि आज, धणु लडावइ काइ महाराजा
पिंगल राजा हसि वोलियो, नाव साल्ह कुमरि सु कियो ॥ 177 ॥
ढोला मारवणी चौपई ह प्र.

ब्राह्मण, नाई अथवा अन्य कोई सन्देश वाहक की सूचना के आधार पर ही वर और वधू का चयन कर लिया जाता था ।[1]

किन्तु इन कथाओ से यह भी ज्ञात होता है कि कन्याओ को वर चयन की पूरी स्वतन्त्रता भी थी । 'भीमसेन राजहस चौपई' मे उल्लेख है कि जब रूपमजरी के पिता रिणकेसरी उसकी इच्छा जानते हुये भी सगरराय से उसका रिश्ता कर लेते हैं तो वह अपनी प्रतिज्ञा का स्पष्ट सकेत देते हुये कहती है, कि सगरराय उसके भाई के समान है । अपनी इच्छा के विरुद्ध विवाह कर देने पर वह अग्नि मे जलने की धमकी भी देती है ।[2] ऐसी प्रतिज्ञा 'तेजसार रास चौपई' मे एणामुखी करती है । एणामुखी वन मे तेजसार को देख लेती है और घर आकर रोती है । माँ जब रुदन का कारण पूछती है तो वह बताती है

आज गई थी अटवी मझार इक मैं पेख्यउ राजकुमार
ते मुझने परणावे मात, नही तर करसु आतम घात ॥84॥

और पुत्री की इच्छा पूर्ण करने के लिए माता उस राजकुमार को चारो दिशाओ मे ढूढती फिरती है ।[3]

धर्म सूत्र, गृह्य सूत्र स्मृतियों मे विवाह के आठ प्रकार बताये गये हैं ब्राह्म, प्रजापत्य, आर्य, दैव, गान्धर्व, आसुर, राक्षस और पैशाच । डा रामगोपाल गोयल ने इन विवाहो को दो वर्गों मे विभक्त किया है । पहले वर्ग मे प्रथम चार प्रकार के विवाह मे विवाह का समस्त उत्तरदायित्व पिता का रहता है और वह अपनी इच्छा अनुसार योग्य वर ढूंढकर कन्या का विवाह कर देता है । दूसरे वर्ग के विवाह मे पिता लडकी को अपना वर ढूढने की अनुमति दे देता है और लडकी अपनी इच्छानुसार वर ढूढकर विवाह कर लेती है या कोई पुरुष उसका हरण कर लेता है ।[4]

1 (क) भीमसेन राजहंस सम्बन्ध चोपई ह प्र ला द ग 1217 दोहासख्या 70-80
(ख) भीमसेन मोटउ भूपाल राजहस युवराज विशाल
ते तेड्वा दूत तिण ठाम आवी राय नइ कीयउ प्रणाम
वही दोहा संख्या 469

2 माहरइ मनि जे मइवर वेरउ, अगज सहित भइ अगी करयउ
वर सूं भीमसेन भरतार अथवा अगनि प्रवेस अपार ॥ 156 ॥
भीमसेन राजहंस सम्बन्ध चोपई ह ग ग. 1217

3 तेजसार रास चोप ह प्र मुनिश्री कल्याण विजयजी संग्रहालय जालोर, प्र 2039
दोहा संख्य 85

4 राजस्थानी प्रेमाख्यान परंपरा और प्रगति ' डा रामगोपाल गोयल पृ० 476
प्रथम संस्करण 1969

कुशललाभ के कथा काव्यो मे हमे दोनो वर्गो के विवाह के उदाहरण मिलते हैं। 'ढोला मारवणी चौपई'[1] तथा 'भीमसेन राजहस सम्बन्ध चौपई'[2] मे प्रजापत्य विवाह का ही वर्णन है।

'माधवानल कामकदला चौपई' मे हमे विवाह का नवीनतम रूप देखने को मिलता है। वालक नदी तीर पर शिलारूपी स्त्री को देखते हैं और माधव का उस नारी से पूर्ण विधि-विधान से विवाह कर देते हैं।[3] 'तेजसार रास' वे दूसरे वर्ग के विवाह आते हैं। यहाँ कन्या स्वय अपनी इच्छा से तेजसार को वरण करने का सकल्प करती है[4] तो कही तेजसार विपत्ति मे पडी कन्या को छुडाकर विवाह कर लेता है।[5]

वाल-विवाह प्रथा भी उस समय समाज मे प्रचलित थी। ढोला मारवणी का विवाह क्रमश तीन व डेढ वर्ष की अवोधावस्था मे ही हो जाता है।[6] ढोला के पिता नल का विवाह सोलह वर्ष की आयु मे हुआ था। उस समय उमा देवडी वारह वर्ष की थी।[7] 'माधवानल कामकदला' के माधव का विवाह भी वारह वर्ष की अवस्था मे ही होता है।[8]

सामाजिक व असामाजिक कई कारणो से वहुपत्नी विवाह प्रथा ने भी जन्म ले लिया था। 'ढोला मारवणी चौपई' मे मध्ययुगीन सामन्त समाज मे इस विलासिता का आभास मिलता है। ढोला का दूसरा विवाह मालवा देश की कुमारी मालवणी से होता है।[9] 'माधवानल कामकदला' मे भी माधव के पिता अपने पुत्र को दुखी देखकर उसका दूसरा विवाह कर देते हैं।[10] 'भीमसेन राजहस चौपई' मे तो रानी स्वय कहकर राजा का दूसरा विवाह करवाती है।[11] 'तेजसार रास' के नायक तजसार के तो सात रानियाँ थी और आठवी रानी एणामुखी थी

आवी साते अतेउरी, सासू प्रणमी आणद धरी
नारि आठमी एणामुखी प्रीय ने मन सघली सारखी ॥ 339 ॥

1 दोहा सख्या 167 ढो मा. चौ ह ग्र॰
2 ,, ,, 71 भीमसेन राजहस चौ ह ग्र॰.
3 सिला साथि लेइ वाधि उछेह वृक्ष विहु होज्यो अविहड़ नेह
अगनि जगाडि होम विधि करइ वालक विप्रवेद ऊच्चरइ ॥ 70 ॥
4 दोहा सख्या 285 तेजसार रास चौ ग॰ 26546
5. ,, ,, 52
6. ,, ,, 450 ढो मा चौ
7. ,, ,, 71
8. ,, , 66 माधवानल कामकंदला च
9. ,, , 199 ढो मा चौ.
10 दोहा संख्या 126 मा. का. चौ
11. ,, ,, 329 भीमसेन राजहस चौ. ग॰. 1217

पुत्र प्राप्ति की कामना हेतु भी बहु-विवाह किये जाते थे।'माधवानल कामकदला चौपई' मे प्रोहित शकरदास सब प्रकार से सुखी होते हुए भी पुत्र के अभाव मे दुखी हैं। पुत्र प्राप्ति के लिये वह देवी-देवताओ को मनाने के अतिरिक्त अपार धन तो खर्च करता ही है और बत्तीस रमणियो से विवाह भी करता है

तिणि परणी रमणी बत्तीस, तुहिन पूगी पुत्र जगीस
सत तिविण आपण दूमणउ, करइ उपाय धन खरचइ घणउ ॥48॥

स्वयंवर प्रथा

विवाह मे स्वयवर प्रथा भी उस समय प्रचलित थी। स्वयवर मे वधू अपनी इच्छानुसार वर चयन करने के लिये स्वतन्त्र थी। इसमे वर द्वारा किसी प्रकार की शर्त को पूर्ण करने की रस्म नही होती थी। 'भीमसेन राजहस सम्बन्ध चौपई' मे राजहंस भी अन्य राजाओ की भाँति रूपमजरी के स्वयवर के लिए जाता है।[1] एक सखी स्वयवर मे आये हुये प्रत्येक राजा का गुणगान करती है।[2] राजकुमारी रूपमती देवी से इच्छानुकूल वर प्राप्ति का सकेत पाकर राजहस के कठ मे कुसुम माला डालती है

रूपमती मननीरली कुसुम माल करिलेइ
कुमर तणइ कठइ ठवी नरपति सहू निरषेय ॥ 527 ॥

मनसा वरण की प्रथा

उस युग मे मनसा वरण की प्रथा भी प्रचलित थी। कन्या किसी पथिक, शुक अथवा अन्य सन्देश वाहक से किसी राजकुमार के रूप गुण सौन्दर्य का वर्णन सुनकर उसी से विवाह करने का सकल्प कर लेती थी।

'भीमसेन राजहस चौपई' मे मदनमजरी शुक से भीमसेन के रूप सौन्दर्य का वर्णन सुनती है .

कीर सन्यासी जे परिकही, मदनमजरी ते सग्रही
पूरव भव सनेह प्रमाण, कुमरी ते वर कीयउ प्रणाम ॥ 84 ॥

वह पति रूप मे उसे मानकर प्रणाम ही नही करती वरन् प्रतिज्ञा भी करती है

भीमसेन राजा वर वरू अथवा अगनिदाह अणुसरु
पखी वचने लागी प्रीति चद्र चकोरी रातो चीत ॥ 85 ॥

स्त्री को भी कभी-कभी किन्ही विशेष परिस्थितियो मे दूसरा विवाह करने की अनुमति मिल जाया करती थी। 'अगडदत्त रास चौपई' मे नायिका मदनमजरी का पति व्यापार करने के लिये बाहर गया हुआ है[2] इसी बीच मदनमजरी अगड़दत्त

1. दोहा सख्या 498
2. „ „ 513 से 521
3. दोहा संख्या 38 अगडदत्त रास चौ. पृ॰. 605

को देखती है और उससे प्रणय निवेदन करती है।[1] अगडदत्त अपना अध्ययन समाप्त कर उससे विवाह कर लेने की प्रतिज्ञा करता है।[2]

दहेज

उस समय समाज मे दहेज प्रथा भी प्रचलित थी। हथलेवे मे राजा अपनी कन्या को वस्त्राभूषणो के अतिरिक्त हाथी-घोडे तथा सैकड़ो दासियाँ देता था। मारवणी की माता एक राजा की रानी की हैसियत से खूब दहेज देने को कहती है

> सोवन रतन जड़ित सिणगार पट्टकूल मुगता फल हार
> सोल सिगार सुन्दर सुवेस ए सगल प्रिय हूँ आपेसि ॥ 554 ॥
>
> अरथ गरथ करइ केकाण पाग मेयग सुद्ध खुरसाण
> ए सगलउ ही पिंगल तणउ माडयउ समहू रति उफणउ ॥ 555 ॥

'भीमसेन राजहस सम्बन्ध चौपई' मे राजहंस का रूपमती के साथ विवाह होता है और विदाई के समय उन्हे वहुत कुछ दहेज मे मिलता है

> मत्तमइगल एकसठ आठ तरल कुरंगम सहसइ कार
> वर वहिल्लसउ रथ सुपासण सोवन मइ भाजन कलस
>
> हीर चीर सोवन शयासन आठ धतृ उत्तम आभरण
> दासी दास वहुत कुशललाभ वाचक कहइ आव्या अगले वित ॥ 541 ॥

दास-दासियो के अतिरिक्त कई वार राजा पुत्र के अभाव मे अपने जामाता को अपना राज्य दे देता था। 'तेजसार रास' मे भी व्रजकेसरी पुत्री का विवाह तेजसार के साथ करके पुत्र अभाव मे अपना राज्य भी तेजसार को दे देता है।[3] वह भी दहेज रूप मे ही माना जा सकता है।

एणामुखी के विवाह मे हथलेवे मे उसकी माता अपार रत्न जड़ित आभूषण, वीस करोड़ धन और सव प्रकार की रिद्धि-सिद्धि देती है जिसका कोई अन्त नही है। इसके अतिरिक्त एक विशेष प्रकार का पलंग भी दिया जाता है जो आकाश मे निशंक उड़ता है।[4]

1 ,, ,, 47
2 ,, ,, 50

3. वयर केसरि राजा भणे नहीं पुत्र सन्तान अम्ह तणे
हाथ मेलावण लक्ष्मी घणी, एह राज दीधउ तुम्ह भणी ॥ 206 ॥
ते. रा. चौ ह न गं 26546 रा प्रा. वि प्र जोधपुर

4 हथलेवे वहु सोवनतणी, कोडि वीस घन लपमी घणी
रतन जडित आभरण अनत, दीधो रिद्धि तणो नहीं अन्त ॥ 307 ॥
एक दियो सुन्दर पलग उडे आकाशि निसंक ॥ 308 ॥

वधू को माता की सीख

विवाह के कुछ दिन बाद वर अपनी वधू के साथ अपने नगर को प्रस्थान करना चाहता है। ऐसे समय माता अपनी पुत्री को सीख देती है। जैसे पति से पहले उठना, सास, नणद, जेठानी के चरण स्पर्श करना, पति के भोजन करने के बाद भोजन करना और कुल की लाज रखना।[1]

माता जानती है कि लड़की नये घर मे जायेगी कही कुछ भूल न कर वैठे जिससे कुल की मान-मर्यादा को कोई लाछन लगे। यही सोच कर माता उसे शिक्षा देती है।

कुशललाभ कृत 'भीमसेन राजहस सम्बन्ध चौपई' मे रानी कमलावती अपनी पुत्री मदनमजरी को विदा करते समय कहती है कि हे पुत्री तू ऐसा कार्य करना जिससे यश प्राप्त हो। जब कभी भी पति को क्रोध आये तो तू क्रोध मत करना। अपने कुल की प्रतिष्ठा को रखते हुये नीच व्यक्तियो का सग त्याग देना, प्रेम से अपने पति का स्नेह प्राप्त करने पर ही तू सदैवसुखी रह सकती है।[2]

इसी कथा मे अन्यत्र भी माता की सीख का उल्लेख हुआ है। रूपमती अभी अवोधावस्था मे है, अत चित्त का चचल होना भी स्वाभाविक ही है। माता को डर है कि कही ससुराल मे भी वह चचलता न कर वैठे, अत. उससे कहती है।[3]

> कुमरी प्रतइ माइ इम कहइ कर्‌यो तिम जिम जस गहगहइ
> प्री सू धर्‌यो अधिकी प्रीति चचल पण्उ मथरायां चीत ॥ 544 ॥

वधू के आगमन पर नगरवासियों का खुशियाँ मनाना

राजकुमार या कथानायक वधू को लेकर जब अपने नगर मे आता था तो पिता पुत्र के स्वागतार्थ सामने आता था, दान दिया जाता था। भट्ट लोग जयकार करते थे। मदमस्त हाथियों को सजाया जाता था और वर व वधू को उस पर वैठाया जाता था, नगर मे पच-शब्दी वाजे वजाये जाते थे, तथा वर-वधू के मस्तक पर

1 प्रिय पहिली उठनो प्रभाते
देव गुरु नाम ग्रहण सघाते
सासू जेठाणी नणद पाए पडिजे
पीव पहलो भोजन मत कीजे
उत्तम कुल आचार आदरिजे।

समय सुन्दर कृत नलराज चौ ह ग
राजस्थानी के प्रेमाख्यान परम्परा और प्रगति पृ 482 डा रामगोपाल गोयल

2 भीमसेन राजहस सम्वन्ध चौ दोहा सख्या 196 ग 1227 ला द 5'. अहमदावाद

3. दोहा संख्या 544

चँवर एव छत्र ढाले जाते थे, मंगल गीत गाये जाते थे। विप्र वेदों का उच्चारण करते थे।[1]

'माधव कामकंदला चउपई' में तो माधव और कंदला के आगमन पर नगर वासियों के मनों में उत्साह है। उन्होंने सम्पूर्ण नगर को सजाया है -

नगर सहु सिणगारियउ सयल लोक उच्छाह कीधउ
सपत भूमि मंदिर सहित सुजस सयल समारिसीधउ ॥ 642 ॥

'भीमसेन राजहंस सम्बन्ध चौपई' में भी भीमसेन व मदन मंजरी के आगमन पर नगर में महान् उत्सव मनाये जाते हैं तथा प्रजा जयजयकार करती है।[2]

'अगडदत्त रास चौपई' में अगडदत्त के आगमन पर राजा स्वयं उसके स्वागतार्थ जाता है।[3] यही नहीं पुत्र के आगमन पर माता न्यवछावर भी पुत्र को देती है।[4]

समाज मे नारी का स्थान

इस समय तक नारी के व्यक्तित्व का विकास नहीं हो पाया था। समाज में पुरुष के समक्ष नारी को व्यक्तित्वहीन समझा जाता था। नारी पुरुष की कृपाकांक्षिणी थी। उसके सुख दुःख एवं भाग्य का निर्माता उसका पति ही हुआ करता था, परन्तु इसका यह आशय कदापि नहीं कि नारी पुरुष की दृष्टि में तुच्छ समझी जाती थी। नारी पुरुष को ही अपना सर्वस्व समझती थी। नारी की इन भावना में आदर मिश्रित प्रेम होता था। पति पत्नी का प्रेम सच्चा होता था।

'हू सज्जण पग पानहीं, सज्जण मो गलहार'

वह अपने आपको पति की जूती के समान समझ कर भी गौरवान्वित है। इसमें नारी की दयनीयता नहीं अपितु उसकी विनम्रता प्रतिनिष्ठा एवं शील का परिचय है। नारी की शोभा पुरुष की अधीनता में ही है। पति के बिना नारी का जीवन दुःखमय था। उसके चरित्र पर अनेक कलंक लगने की सम्भावना थी। पति के बिना उसकी स्थिति वैसी होती थी जैसी चन्द्रमा के बिना रात, सूर्य के बिना दिन नदी के बिना पानी ऐसे ही बिना नर के नारी शोभा नहीं पाती।[5]

1. ढोला मारवणी चौपाई ह लि डा जावलिया के निजी संग्रह से प्राप्त
   दोहा संख्या 666 से 669
2. दोहा संख्या 242 भीमसेन राजहंस चौपई ग्रं 1217
3. श्री वसन्तपुर आव्य जिसिइं, सनमुख राजा धाविउ तिसिं ॥ 224 ॥
   अगडदत्त रास चौपई ग 605
4. दोहा संख्या 230
5. नर विण नारी एकली लग्गइ कोडि कलंक ॥ 151 ॥
   \+ \+ \+ \+
   शशि विण निशि दिशि दिवस विणु जिम नदी विणु वारि
   तिय सूदा नर विणु न सोहइ नारि ॥ 152 ॥
   सदयवत्सवीर प्रबन्ध पृ स. 22

तत्कालीन समाज मे नारी के प्रति जहाँ हीन दृष्टि कोण था वहाँ नारी के प्रति स्वस्थ्य दृष्टिकोण भी था। नारी को पटरानी वना कर उसे जो सम्मान दिया जाता था उससे नारी के उच्च व्यक्तित्व होने का आभास मिलता है। अनेक नारियाँ तो विवाह ही इस शर्त पर करती थी कि उसे पटरानी वनाया जाये।[1]

'भीमसेन राजहंस सम्वन्ध चौपई' मे भीमसेन मदमकेरी से विवाह कर नगर लौटते हैं और उसे पटरानी का स्थान देते हैं

ते पटराणी थापी ताम महिमा वाधी नगर महिमाय
राज्य सुखइ पालइ राज्यद प्रजातणइ मनि परमाणद ॥ 245 ॥

राजाओ के कई रानियां तो होती ही थी परन्तु सम्मान उसी रानी को मिलता था जो पटरानी होती थी। उसी का पुत्र उत्तराधिकारी वनने का अधिकार रखता था। तेजसार के भी अनेक रानियाँ थी। सामान्यत राज्य का उत्तराधिकारी पटरानी का पुत्र ही होता था वैराग्य की स्थिति उत्पन्न होने पर राजा तेजसार पटरानी के पुत्र को ही राज्य सौंप देता है—

पटराणी श्रीमतीय कुमार ते थाप्यो निज पाट अपार
एक सुनरवर साथि करी दान पुण्य सविहुं उपगरी ॥ 400 ॥

नारी का सम्मान समाज मे भी वहुत अधिक था 'ढोला मारवणी चउपई से ढोला अपनी रानी मारवणी के लिए 'आत्मदाह' करने के लिये तैयार हो जाता है।[2] इसी भाति वह मारवणी के विना व्यतीत दिनो को अपने पूर्व जन्म का फल समझता हुआ प्रायश्चित करता है

पहिलइ भवे पाप मइ किया, तउ तुझ विन एता दिन गया
सय मुपि पछइ निराते तुझ लही, पाछइ परवसि रहियो सही ॥ 525 ॥

तत्कालीन समाज की नारियाँ अपने शील धर्म के कारण भी आदर की पात्र थी। मालवणी मारवणी से अधिक सुन्दर है परन्तु शील मारु की वरावरी नहीं कर सकती।[3]

नारी को वर चयन की भी स्वतन्त्रता थी। इसका प्रमाण स्वयवर प्रथा है।[4] इसके अतिरिक्त कन्या अपनी इच्छा माता पिता को भी वता देती थी।

1 जउ पटराणी थापइ मुझ, तउ च्यारे परणावुं तुझ
कुमर वोल वन्ध तस कीयउ, विद्याधरी नु रज्यउ हीयु ॥ 151 ॥
'तेजसार रास' ह लि ग्रन्थांक 26546 रा प्रा वि प्र जोधपुर,

2 दोहा सख्या 579,581 ढोला मारवणी चौपई

3 दोहा सख्या 699 ढोला मारवणी चौपई

4 सहू सखी साथइ धरि हाथइ कुसममाल करइ सही
रूपमति कुमारी आवी तिहां ऊभी रही ॥ 500 ॥
भीमसेन राजहस सम्वन्ध चौपई ह लि. ग 1217

'तेजसार रास' मे 'एणामुखी' तेजसार को वर रूप मे पाने की इच्छा माता को बताती है और माता उसकी इस कामना को पूर्ण भी करती हैं ।[1]

तत्कालीन समाज मे पतिव्रता धर्म की भी प्रधानता थी । इसके कई उदाहरण मिलते हैं । 'ढोला मारवणी चोपई' मे मालवणी ऐसी ही एक निष्ठा पतिव्रता स्त्री है । वह अपनी सौत मारवणी के बारे मे सुनकर विकल हो जाती है और बार बार प्रयत्न कर ढोला को रोके रखती है । ढोला के चले जाने पर भी सुक द्वारा अपना मृत्यु सन्देश भेजकर ढोला को बुला लेना चाहती है । उनकी यह सब चेष्टायें पति प्रेम की द्योतक हैं । प्रेम का उज्जवल पक्ष मालवणी की विरहावस्था मे भी निखरा है । पति के वियोग मे उसे कुछ भी अच्छा नही लगता । पानी उसे नाग सदृश लगता है

> ढोला हू तुज बाहिरी, झीलण गइय तलास
> ऊ जल काला नाग जिऊं लहिरी ले ले खाइ ।। 415 ।।

कामकदला माधव के साथ खेल ही खेल मे किये गये पाणिग्रहण से शाप मुक्त हो जाती है परन्तु वह अपने पति को भूल नही पाती और रात्रि मे उससे मिलने आती है । माधव उसे देखकर उसके बारे मे पूछता है

> माधव सूतु धरि आपणइ अपछर देखी नइ इम भणइ
> 'कुण नारी तूं किहइ कामि' हूं तुझ घरणी, तू मुझ सामि ।। 79 ।।

तब वह अपने आपको माधव की पत्नी तथा माधव को अपना स्वामी बताती है यही नही माधव का मरण सुनते ही कामकदला मूर्च्छित होकर गिर पडती है । जिसका पति ही यमपुर पहुंच गया है वह अब बिना आधार कैसे जियेगी ।[2]

'भीमसेन राजहस सम्बन्ध चोपई' मे मदनमजरी भीमसेन को ही पति मानती है । अन्य पुरुष उसके भाई के समान है ।[3]

तत्कालीन समाज मे राजवशो के अनुकूल कन्या को समुचित शिक्षा भी दी जाती है । इस युग की शिक्षा विशेष विचार धारा तथा उद्देश्य पर आधारित थी । उस समय घरेलू शिक्षा का बहुत महत्व था । पिता अपने पुत्र को ऊंची शिक्षा घर मे ही दिलवाया करता था । 'पिंगल शिरोमणि' मे राजकुमार हरराज की शिक्षा के लिये कुशललाभ को अध्यापक रूप मे रखा जाता है । स्त्रियो को ललित कलाओ की

1 दोहा संख्या 285 तेजसार रास चोपई ग 26546

2 तेह वात वेस्या सांभली, आवी मूर्च्छा धरणी ढली
जमपुरि पहुतउ जउ भरतार हिवहू जीवूं किण आधारि ?
माधवानल कामकदला चोपई ।। 575 ।।

3. दोहा संख्या ।। 155 ।।

शिक्षा दी जाती थी। ये नायिकायें नृत्या कला संगीत कला, काव्य आदि मे निपुण हुआ करती थीं।

शिक्षा का प्राथमिक ध्येय आर्थिक सामाजिक और बौद्धिक होने के साथ साथ नैतिक तथा आध्यात्मिक भी था। अर्थ एवं बौद्धिक विकास के साथ शिक्षा द्वारा शांति भी प्राप्त की जाती थी।

इन उद्देश्यो की पूर्ति विभिन्न स्तर के शिक्षा-संस्थाओ द्वारा की जाती थी।[1]

तेजसार गगदत्त ओझा के घर रहकर उसकी सेवा करता है और बदले मे विद्या सीख कर अपना पेट भरता है

> तेजसार तेहनइ घरि रहयन, भणिवा भणी चित गहगहयउ
> ओझा तणी सेव तव करइ विद्या भणइ पेट पिण भरइ ॥ 22 ॥

'ढोला मारवणी चौपई' मे मारु की सगीत प्रियता का बोध उसके द्वारा मारु राग मे सदेश के दोहो से होता है।[2] मारु ढोला के न आने पर चर्चरी नृत्य खेलते हुये होली में जल मरने को कहती है।[3] यह मारु की नृत्य कला का द्योतक है। 'माधवानल कामकदला' की नायिका कदला तो चौसठ कलाओ मे निपुण है।[4] कामकदला जब आठ वर्ष की थी तभी से नाटक एव गीत सगीत आदि का अभ्यास करती थी।[5] माधव भी चौदह विद्याओ का ज्ञाता, बत्तीस लक्षण वाला तथा बहत्तर कलाओ मे निपुण है।[6]

घर मे भी पुस्तको की प्रतिलिपियाँ तैयार करके शिक्षा प्राप्त की जाती थी। स्वय लेखक कुशललाभ ने 'हंसदूत काव्य' की पुष्पिका मे लिखा है

> सवत 1600 वर्षे माघवदि पचम्या दिने श्री खरतगच्छे श्री
> जिनमाणिक्यसूरि विजराज्ये श्री अभयधर्मोपाध्यायाना शिष्य प०
> कुशललाभ मुनिना स्ववाचनार्थं विलेखे। शुभमस्तु लेखक
> पाठकयो ॥ श्री ।[7]

इससे स्पष्ट है कि अच्छी पुस्तको की प्रतिलिपियाँ करके भी शिक्षा प्राप्त की जाती थी। उच्च शिक्षा के लिये राजा, सामन्त आदि अपनी सन्तान को दूसरे देश मे भी अध्ययन के लिए भेज दिया करते थे। 'अगडदत्त रास चौपई' मे अगडदत्त की माता

1. सोम सौभाग्य काव्य सर्ग 2 श्लोक 45, 55
2 ढोला मारवणी चौपई ह लि दोहा सख्या 260 डा० जांगलिया के निजि सग्रह से प्राप्त
3. वही दोहा सख्या 283
4. माधवानल कामकंदला चउपई दोहा सख्या 118 व 166
5 दोहा सख्या 116, 117
6 माधवानल कामकदला चउपई दोहा संख्या 2
7. श्री अभय जैन ग्रंथालय से प्राप्त प्रति का फोटोग्राफ परिशिष्ट मे संलग्न है।

पति की मृत्यु के बाद अगडदत्त को योग्य बनाने के लिये उच्च शिक्षा प्राप्त करने हेतु चपापुर भेजती है।[1]

पर्दा प्रथा

तत्कालीन समाज मे पर्दा प्रथा भी प्रचलित थी। राजा का रनिवास होता था। रानिया उसी रनिवास मे रहती थी। राजा के अतिरिक्त अन्त पुर मे अन्य पुरुष का प्रवेश वर्जित था। ढोला मारवणी चौपई, माधवानल कामकदला, तेजसार रास, भीमसेन राजहस सम्बन्ध चोपई आदि सभी कथा काव्यो मे हमे अन्त.पुर का सकेत मिलता है जिससे पर्दा प्रथा का आभास होता है।

वेश्या वृत्ति

समाज मे वेश्यावृत्ति प्राचीन काल से ही चली आ रही थी। प्रारम्भ मे वेश्या को भी प्रतिष्ठित नारी ही समझा जाता था। कुछ वेश्यायें शील धर्म का पालन करके समाज मे प्रतिष्ठा पाती थी। 'माधवानल कामकदला चउपई' की नायिका कामकदला भी गणिका है और कामसेन के यहाँ राज नर्तकी होने से उसको समाज में वहुत प्रतिष्ठा भी है। कामकदला वेश्या है फिर भी उसे केवल माधव से ही प्रेम है। वह माता द्वारा अपने कुल कर्म का ज्ञान कराने पर भी अपना शील खडित नही करती।[2]

कामकदला के वेश्या होने पर भी हमे उसके चरित्र मे प्रेम निष्ठा त्याग समर्पण एव शीलता का आभास मिलता है। इन्ही गुणो से प्रभावित राजा विक्रमादित्य माधव के लिये कदला दिलवाने हेतु कामावती के राजा कामसेन से सघर्ष करता है। विक्रमादित्य गणिका प्रेम को हीन वताता है तव माधव गणिका की चारित्रिक उज्जवलता के वारे मे कहता है

> माधव कहइ 'सुणउ राजान नारी सगली नहीं समान
> त्रिणि भवन मइ जोया सही कामकंदला उपमा नही' ।। 518 ।।

कुशललाभ ने कामकंदला के शील के वारे मे कहा है

> इक वेश्या कुलि ऊपजी भर जोवन धन लील
> तउ ही निर्मल पालियउ कामकदला सील ।। 648 ।।

समाज मे वेश्याओ का वाहुल्य दुश्चरित्रता का द्योतक है, किन्तु तत्कालीन समाज मे वेश्याओ का वाहुल्य वेश्यावृत्ति के कारण ही था। कुशललाभ ने नगरी का

2 माता भणवानो परिकाइ, देसि विदेसि भणिउंजिहा जाई
पूत्र तणु अति आगह जाणि माता बोलइ मधुरी वाणी ।। 24 ।।
अगडदत्त रास चोपई ग ।। 605 ।।
भण्डारकर आरियन्ट रिसर्च इंस्टीटयूट, पूना

1 'माधवानल कामकंदला चोपई' दोहा संख्या 370, गायकवाड आरियन्टल सीरिज, वडोदा।

वर्णन करते हुए लिखा है कि राजा के अन्तःपुर मे सोलह सौ स्त्रियाँ थी और नगर मे छः सौ वेश्यायें निवास करती थी ।[1] विरही माधव का पता लगाने वाली भी योग विलासिनी नाम की गणिका ही थी ।[2] 'आगडदत्त रास चौपई' मे भी वेश्या घर का उल्लेख हुआ है ।[3] इससे यह भी स्पष्ट होता है । कि वेश्याओ के घर जन साधारण के घरो से दूर एवं अलग होते थे ।

सामाजिक रीति रिवाज और मान्यतायें

ब्राह्मण, बालक, स्त्री वध निषेध

तत्कालीन समाज मे ब्राह्मण, गाय, स्त्री, बालक एवं तपस्वी शरण देने योग्य समझे जाते थे इन्हे मारना निषिद्ध था । संस्कृत मे भी एक श्लोक है

अवध्या ब्राह्मणा गाव' स्त्रियो वाल स्तपस्विन ।।
तेषा चान्न न भुजीत, ये चान्ये शरणगता. ।।

यही रूप हमे 'माधवानल कामकन्दला चउपई' मे उस समय मिलता है जब कामसेन क्रुध हो खडग उठाकर माधव का वध करना चाहता है उसी समय राज्य सभा मे बैठे सभी सभासद बोल उठते हैं कि ब्राह्मण-पुत्र को कोई नही मारता ।[4]

पूर्व जन्म में विश्वास

उस समय लोगो का विश्वास पूर्व जन्म मे भी था कुशललाभ के सभी कथा काव्यो मे पूर्व जन्म सम्बन्धी अनेक उदाहरण मिल जाते हैं । 'माधवानल कामकदला' की नायिका कामकदला अपने पूर्व जन्म मे इन्द्र के यहाँ जयन्ती नाम की अप्सरा थी ।[5]

जैन कथा काव्यो की यह विशेषता है कि नायक या नायिका पर जो सकट आते हैं वे पूर्व जन्म के कार्यो के अनुरूप ही होते हैं । 'तेजसार रास' की व्यंतरी पूर्व जन्म मे श्री दत्ता नाम की रानी थी ।[6] तेजसार को भी केवली पूर्व भव का वृतात सुनाते हैं कि तेजसार पूर्व जन्म मे विमला नामक ब्राह्मण कन्या थी और शुद्ध ध्यान

1 'माधवानल कामकंदला चौपई, दो स 377 गायकवाड आरियन्टल सीरिज, वडोदा
2. दोहा स ख्या 499
3 गुरुवारइ जउ दिनवि रहि, साहसवत नाप परिलहि
जोइ वेशा घर हु वटइ सून हरइ चावरि थउ वटइ ।। 62 ।।
अगडदत्त रास चौपई ग्रं 605
4 दोहा सं ख्या 222 माधवानल कामकंदला चौपई
5 माधवानल कामकंदला चउपई दोहा सं ख्या 14, 204
6 तेजसार रास दोहा सं ख्या 297

को धारण करते हुये इस जन्म में तेजसार राजा के रूप में यहाँ जन्म लिया है।[1] 'भीमसेन राजहंस चौपई' में रूप मंजरी शुक व सन्यासी से भीमसेन के बारे में सुनकर तथा अपने पूर्व जन्म के कर्म फलों के अनुसार उसे पति जानकर रूप मंजरी भीमसेन को मन ही मन प्रणाम करती है।[2]

स्वप्न पर विश्वास

स्वप्न में घटित घटनाओं को सत्य माना जाता था, उन पर विश्वास किया जाता था। 'तेजसार रास' में ज्ञात होता है कि रानी स्वप्न में घृत से परिपूर्ण एवं प्रज्वलित दीपक देखती है जो दीप के समान तेजस्वी पुत्र का द्योतक बतलाया गया है।[3] स्वप्न में भगवान द्वारा या अपने इष्ट देवता द्वारा वरदान देने का विश्वास भी प्रचलित था

> एक राति प्रोहित दुख धरी, सूतउ सुहणइं आव्यउ हरि
> 'सम्मलि प्रोहित सकरदास। हूँ तूठउ तुम्ह पूरउ आस'[4] ॥ 50 ॥

स्वप्न द्वारा भावी घटनाओं की सूचना भी इन कथाओं में मिलती हैं। ढोला से मिलने के पूर्व ही मारवणी को ऐसा ही शुभ स्वप्न आता है। जिसमें वह ढोला से मिलती है[5] जागने पर वह स्वप्न को कोसती है पर सखियाँ उसे समझाती हैं

> इणि परि सुहिणउ लाधउ राति माता इन कहिया परभाति
> कही विचार सपीए सही, ढोलउ तेउ पधारइ वही ॥ 489 ॥

माधवानल कामकंदला में भी पुरोहित शंकरदास स्वप्न में ही पुत्र प्राप्त करता है।[6] 'तेजसार रास' में रानी पद्मावती घृत से परिपूर्ण एवं प्रज्वलित दीप देखती है। यह स्वप्न दीप के समान तेजस्वी पुत्र होने की सूचना देता है जिससे राजा रानी सभी प्रसन्न होते हैं।[7]

शकुन

जीव जन्तुओं की शकुन सूचक क्रियाओं द्वारा भी अशुभ शकुनों का पता लगाया जाता है। 'रामचरित मानस' में शकुन सूचक पशुओं में गाय मृग और लोमड़ी को गिनाया गया है।[8]

1. वही दोहा संख्या 372 से 395
2. भीमसेन राजहंस सम्बन्ध चौपई दोहा संख्या 84
3. तेजसार रास दोहा संख्या 7, 9
4. माधवानल कामकंदला चउपई दोहा संख्या 50
5. जिणि दिन ढोलउ वाटइ वहइ तिणि दिन मारू सहिणउ लहइ
   मिलियो प्रीतम नींद्र मझारि, माता जागलि कहइ विचार ॥ 483 ॥
   ढोला मारवणी चौपई ह लि.
6. दोहा संख्या 50 माधवानल कामकंदला प्रबंध - गायकवाड ओरियन्टल सीरिज
7. तेजसार रास दोहा संख्या 9 ह लि रा प्र वि प्र जोधपुर ग 26546
8. रामचरित मानस बालकाण्ड पृष्ठ 199

कुशललाभ कृत 'भीमसेन राजहस सम्बन्ध चौपई' मे भी पशु पक्षियो से सम्बन्धित अनेक शकुन मिलते हैं जैसे सध्या के समय वहुत से सियारो का एक साथ वायी दिशा मे वोलना[1] मध्यरात्रि मे वायी दिशा मे ऊँचे स्थान पर वैठ उल्लू का वोलना[2] चतुर्थ प्रहर में चीवरी का वडे वृक्ष पर वैठ कर वोलना[3] प्रातः काल के समय तीतर का वोलते हुये वाई दिशा से दाहिनी ओर चले जाना[4] चील का भक्षण सहित दाई दिशा मे वोलते हुए जाना[5] दायी ओर हिरणो का झुण्ड हो जिसमे मृग नायक भी हो तथा उनकी सख्या ऊनी (विषम) हो तो वह राज्य रिद्धि प्रदान करने वाला होता है।[6] श्यामा चिडिया हरे वृक्ष पर वैठी स्वर करती दायी दिशा मे जाये[7] नीलकण्ठ का जल से पूर्ण सरोवर की पाल पर दिखाई देना[8] आदि शुभ शकुन माने हैं।

तत्कालीन समाज मे जन साधारण का शकुन पर भी विश्वास था। उनका जीवन व कार्य शुभ शकुनो द्वारा गतिमान था। घर से जाते समय, शुभ शकुनो को ध्यान मे रखा जाता था। समाज मे शकुन के प्रति प्राचीन काल से ही प्रगाढ आस्था रही है। शकुन अपशकुन साहित्य मे भावी घटनाओ की पूर्व सूचना देने के लिये प्रयुक्त किये जाते हैं। जैसे शरीर के विविध अगो का फडकना, स्वप्न देखना, पशु पक्षी विशेष का दिखाई देना या वोलना आदि।

स्त्री का वाया अग एव पुरुष का दाहिना अग फडकना शुभ माना जाता है। इन अगो मे भुजा नेत्र मुख्य रूप से मगल सूचक माने जाते है। तुलसीदास ने इसी तरह के शकुनो को 'रामचरित मानस' मे भी स्थान दिया है।[9]

'ढोला मारवणी चौपई' मे भी इसी प्रकार के शरीर सूचक शकुनो का उल्लेख हुआ है। मारवणी का वाया नेत्र फडकता है। उसका मन प्रफुल्लित है वह अपनी

1. दोहा स ख्या 475 भीमसेन राजहंस चौपई ग 1217 ला. द ग. अहमदावाद
2 ,, ,, 476
3 ,, ,, 477
4. ,, ,, 478
5 ,, ,, 479
6. ,, ,, 480
7 ,, ,, 481
8 ,, ,, 484
9. भरत नयन भुज दच्छिन फरकत वार
   जानि सगुन मन हरप अति लागे करन विचार
   —रामचरित मानस उत्तरकाण्ड प्रारम्भिक दोहा

सखियों से कहती हैं' हे सखि आज अवश्य ही प्रियतम से मिलन होगा।[1]

अपशकुन

ऐसे कार्य व्यापार जो भावी संकट की सूचना देते हैं अपशकुन माने जाते हैं। जैसे स्त्री का दाया नेत्र फड़कना अथवा पुरुष का बाया नेत्र फड़कना। तुलसीदास जी ने भी मानस मे इन अपशकुनो का प्रयोग किया है। दशरथ मरण पर भरत का भयानक स्वप्न देखना, भरत का अयोध्या मे प्रवेश करते ही अपशकुन होना, खर' सियार का प्रतिकूल बोलना जिसे सुन कर भरत का मन आगत विपत्ति की शंका से त्रसित हो जाता है।[2]

'भीमसेन राजहस चौपई' मे भी अपशकुन का वर्णन किया है। यदि नेवला नीचाई से ऊँची दिशा की ओर जाता हुआ बार बार मुड कर देखता हो, तो वह मन को चिंतित करने वाला होता है।[3]

ज्योतिष एवं ज्योतिषियो मे विश्वास

ज्योतिष एव भविष्य फल मे लोगो की आस्था तत्कालीन समाज मे भी थी। समाज मे ज्योतिषी व भविष्य वक्ता का बहुत सम्मान होता था।

'तेजसार रास' मे यह विश्वास कई स्थानो पर प्रयुक्त हुआ है। स्वप्न वक्ता तेजसार के जन्म की भविष्यवाणी करता है।[4] विजयश्री के होने वाले पति के बारे मे बताना[5] पद्मावती से विवाह करने वाला व्यक्ति चार राज्यो का अधिकारी होगा। ऐसी भविष्यवाणी सत्य होती है और तेजसार चार राज्य प्राप्त करता है[5]

एतलै पाम्याच्यारे राज हय गय रथ पायकदल साज
अरथ गरथ अरि गजण आण जोवो पुण्य तणो परमाण ॥ 259 ॥

तेजसार को अपने पूर्व भव के बारे मे केवली सब कुछ सत्य बताते हैं।[6] 'भीमसेन राजहस चौपई' मे अमरसेन शकुनो के आधार पर भविष्यवाणी करता है

1 डावउ नेत्र फरकयउ तिसइ, सहियर आगइ कहिवइ हेसह
मनि सन्तोष चीति उल्हस आज सपी प्रिय मेलउ हुस्यइ ॥ 491 ॥
ढोला मारवणी चौपई ह. लि

2 असगुन होय नगर पैठारा, रटहिं कुभाति कुखेत करारा
खर सियार बोलहिं प्रतिकूला सुनि सुनि होइ भरत मन सूला
मानस पृष्ठ 318 अयोध्या काण्ड

3 नीचो दिशी थी नवलीयउ ऊँची दिसिळ जाइ
जातउ जोयइ द्रिष्टि सूं तउमन चितउ थाइ ॥ 482 ॥
'भीमसेन राजहंस चौपई' ह लि प्र 1217 लालभाई दलपत
भाई ग्रथालय, अहमदाबाद

4 दोहा सख्या 9 तेजसार रास ग्र. 26546

5. ,, ,, 104

6. ,, ,, 172

कि आज से सातवें दिन वह कन्या (भीमसेन की पत्नी) मिल जायेगी ।[1] इसी तरह की भविष्यवाणी हंसी आकाशवाणी द्वारा करती है ।[2]

इच्छित वर या फल प्राप्ति हेतु देवी देवताओं की आराधना

कन्यायें उत्तम वर प्राप्ति के लिये गौरी की पूजा किया करती थी । तुलसीदास की सीता को भी माता गौरी पूजा के लिये भेजती है ।[3] 'ढोला मारवणी' की मारवणी भी अपनी सखियों के साथ पूजार्थ ही जाती है ।[4]

'माधवानल कामकन्दला चउपई' मे कथाकार ने वर प्राप्ति की पूजा कन्या से न करवा कर माधव से कराई है । माधव शिव मन्दिर मे जाता है[5] और अपनी विरह गाथा शिव मन्दिर मे ही लिखता है ।[6] 'भीमसेन राजहस चौपई' मे तो एक ऐसी देवी का ही उल्लेख आया है कि जो कन्या उस देवी की पूजा करती है वह मनवांछित वर प्राप्त करती है ।[7] मदनमजरी भी यह जानती है, अत वह उस देवी के मन्दिर मे जाकर देवी की सच्चे मन से सेवा व भक्ति करती है ।[8] मदनमजरी देवी से कहती है

> कर जोडी देवीनइ कहइ भीम मेल वउ जीवित रहइ
> एहनी पूजइ माहरी आस, तउ तुझ आगइ धालू गल पास ।। 104 ।।

राजा भीमसेन भी त्रिपुरा देवी के उसी मन्दिर मे अपने मनोरथ पूर्ण करने की प्रार्थना करता है ।[9] प्रतिमती राजकुमारी भी गौरी पूजा के लिये ही जाती है

> गउरि पूजिवा ते वनि गई नदी परइ तव सध्या थई ।। 454 ।।

रूपमजरी भी योग्य वर प्राप्त करने के लिये चक्रेश्वरी देवी की अराधना ही नहीं करती वरन् वह तो यहाँ तक भी कहती है कि देवी आप स्वय अपने श्रीमुख से होने वाले पति का कुछ चिह्न बताओ ।[10] और देवी राजकुमारी को बताती है कि जिस कुमार के सिर पर पुष्पवृष्टि होगी वही तेरा पति होगा ।[11]

1. दोहा संख्या 206 भीमसेन राजहंस चौपई ग्रंथाक 1217 ला द. प्र. अहमदाबाद
2. ,, ,, 496, 97
3. रामचरित मानस बालकाण्ड पृ. 160
4. ढोला मारवणी चौपई स ख्या 227 ह प्र
5. दोहा सख्या 476 माधवानल कामकंदला चउपई ह. प्रं
6. ,, ,, 476, 483, 486
7. ,, ,, 102 भीमसेन राजहंस चौपई ग्रं 1217
8. ,, ,, 103
9. ,, ,, 142
10. ,, ,, 495
11. दोहा संख्या 497 भीमसेन राजहस सम्बन्ध चौपई ग्रंथाक 1217 ला. द. प्रं. अहमदाबाद

साधु संतो व मेहमानो का सम्मान

तत्कालीन समाज मे जन साधारण मे साधुओ के प्रति भक्तिभाव था तथा अतिथि सत्कार श्रद्धा पूर्वक किया जाता था। साधु भी अपने भक्त की रक्षा करते थे।

'ढोला मारवणी चौपई' मे ढोला मारवणी का सन्देश लाने वाले 'मांगणहारो' को बुलाता है और उनका बहुत मान करता है।[1] यही नही ढोला उनका निम्न प्रकार से सत्कार करता है

वीस तुरी आपिया ग्रहास फदिया दिया सहस पचास
वागा वस्त्र अपूरव वली सतोपीय, पूगो मन रली ॥ 314 ॥

कुशललाभ जैन कवि थे इसी कारण उनकी कथाओ मे जैन मुनियो का उल्लेख अधिक हुआ है। जैन मुनि के आगमन पर नगर मे घर-घर मे मगल गीत गाये जाते थे तथा सभी नर एव नारी प्रभु की वन्दना करने जाते थे।[2] राजा भी मुनि के दर्शनार्थ जाता था।[3]

साधु सन्यासी सत्यवक्ता होते थे। लोगो को उन पर अटूट विश्वास था। तेजसार इसी विश्वास के आधार पर केवली से अपने पूर्व जन्म के बारे मे जानने की इच्छा प्रकट करते हैं।[4] सुव्रत स्वामी के सानिध्य से ही तेजसार वैराग्य ले लेते हैं एव उत्तम कार्यों के योग से अत मे शिवपुरी को प्राप्त होते हैं।[5]

'भीमसेन राजहस चौपई' मे भी हमे इसी तरह के अनेक उदाहरण मिलते हैं विशालपुरी मे अवधूत के आगमन[6] पर राजा उसे सब प्रकार से योग्य जानकर भक्तिभाव से प्रणाम् करता है[7] तथा उसे आदर सहित बुलाकर भोजन भी कराता है।[8] भीमसेन अवधूत को बचाकर उसकी प्राण रक्षा करता है।[9] राजहस को आकाश मे आते हुये दो मुनिवर दिखाई देते हैं वह उन्हे आदर सहित आहार देता है।[10] गुरु का नगर मे आगमन सुनकर राजहस एव भीमसेन दोनो ही गुरु की वंदना करने पहुँचते हैं।[11]

1. दोहा संख्या 300 ढोला मारवणी चौपई
2 ,, ,, 361 तेजसार रास ग्रंथांक 26546
3. ,, ,, 664
4 ,, ,, 372
5. ,, ,, 406
6. ,, ,, 66 भीमसेन राजहंस चौपई ग्रं 1217
7 ,, ,, 67
8. ,, ,, 69
9 ,, ,, 127
10. ,, ,, 549
11. ,, ,, 567

आत्म हत्या

समाज मे आत्म हत्या और आत्मदाह की प्रथा भी प्रचलित थी। यह प्रथा एक प्रकार से प्रायश्चित करने के रूप मे प्रचलित थी। मारवणी की सर्पदंश से मृत्यु हो जाने पर ढोला भी अग्नि मे प्रवेश करना चाहता है।[1] राजा विक्रमादित्य माधव व कन्दला की मृत्यु हो जाने पर स्वय प्रायश्चित करने के लिये तलवार प्रहार करने को तैयार हो जाता है।[2] 'तेजसार रास' की नायिका एणामुखी भी प्रतिज्ञा पूर्ण न होने पर आत्मदाह की धमकी देती है।[3] मदनमजरी भी भीमसेन को पति रूप मे प्राप्त करना चाहती है अन्यथा अग्नि मे प्रवेश करने की वात कहती है।[4] मदनमजरी की आशा जब फलीभूत नही होती तो वह गले मे फांसी लगाकर आत्महत्या करना चाहती है।[5] विवाह के वाद भी जब वन मार्ग मे भीमसेन से मदनमजरी का विछोह हो जाता है तब वह विषफल खा लेती है।[6]

अंध-विश्वास

समाज मे नाना प्रकार के अन्धविश्वास प्रचलित थे। जन साधारण तत्र मत्र टोने टोटके मे विश्वास करता था। भूत, प्रेत, डायन, सीकोत्तरी, राक्षसी व व्यतरी आदि आलौकिक शक्तियो मे भी अटूट विश्वास था।[7]

सकति कइ व्यतर साकिनी, राक्षसि सीकोत्तरी डाकिनी
आयी पुत्र लेयण नई काजि, मोटउ कष्ट टलिउ छइ आजि ॥ 73 ॥

इनसे वचने के लिये तत्र मत्र का सहारा लिया जाता था और वहुत सा धन भी खर्च किया जाता था।[8]

आकाश मार्ग से उडना, रूप परिवर्तन करना, अदृश्य हो जाना आदि अनेक सिद्धियो की प्राप्ति के तो अनेक उदाहरण इन कथाओ मे मिलते हैं जिनसे तत्कालीन समाज की अन्ध विश्वास की मनोवृत्ति का पता लगता है। 'ढोला मारवणी चौपई' मे भी तत्र मत्र का उल्लेख हुआ है। साप के काटे जाने पर उसके विष को तत्र मंत्र पढ कर उतारा जाता है, ऐसा लौकिक विश्वास आज भी प्रचलित है। मारवणी को अभिमत्रित जल पिलाया जाता है।[9] मंत्र पढ कर मुष्टि प्रहार

1 दोहा सख्या 579, 581 ढोला मारवणी चौपई
2. ,, ,, 593 माधवानल कामकंदला चउपई
3 ,, ,, 285 तेजसार रास ग्रं 26546
4 ,, ,, 85 भीमसेन राजहंस चौपई ग्रं 1217
5. ,, ,, 169
6. ,, ,, 227
7 ,, ,, 73 माधवानल कामकंदला प्रबन्ध
8. ,, ,, 74
9. ,, ,, 595 ढोला मारवणी चौपई

करने से व्यक्ति प्राण छोड देता है। मत्र की शक्ति से सेना को स्तम्भित कर देना।[1] विद्याबल से रूप परिवर्तन[2], बलि देकर सिद्धि प्राप्त करना[3], रूप परिवर्तन तथा विद्याबल से अदृश्य होना।[4] आदि अनेक अन्ध विश्वास आज भी समाज मे इसी रूप मे प्रचलित है लोगो की आज भी इन पर उतनी ही आस्था है।

रहन-सहन

तत्कालीन समाज मे राजा का स्तर ऊँचा था। किन्तु जनसाधारण का जीवन सरल एव सादगीयुक्त था। प्रत्यक्षत इन कथाओ मे राजा के आवासो का उल्लेख बहुत ही कम हुआ है। राजा महलो मे रहता था। राजा के लिए आनन्दोपयोग की सभी साधन सामग्री महल मे ही उपलब्ध होती थी।

'ढोला मारवणी चौपई' मे ढोला के महल के लिये 'सात भूमि मदिर उत्त ग' (सात मजिल ऊँचे महल) आया है। माधवानल कामकदला मे कदला के आवास का वर्णन भी ऐसा ही है। रानियो की सेवा के लिये सैकडो दासियाँ रहती थी।[5] रानियाँ अथवा राजकुमारियाँ सखियों के साथ बाहर निकालती थी।[6] ढोला के निवास स्थान का इस प्रकार वर्णन आया है

> मोटा महल अनइ मालीया, छोहपक काचें ढालिया।
> गउष अपूरव चदण तणा, रतन जडित मोती झूमणा ॥ 695 ॥

राजा गोविन्दचन्द के रनिवास मे सात सौ नारियाँ थी।[7] वीरसेन की नगरी वाराणसी को इद्रपुरी के समान सुन्दर बताया है।[8] ऊँचे गढ और महलो का भी वर्णन तेजसार मे आया है।[9] स्वर्ण निर्मित सुन्दर आवास मे तेजसार भोग विलासो मे जीवन बिता रहा है।[10] नगरो का विस्तार नौ या बारह योजन तक होता है।[11] नगर मे सरोवर कूप, बावडी, वन, गढ मन्दिर आदि होते थे।[12] राजा के प्रासाद मे

1. दोहा स ख्या 51, 52 तेजसार रास ह 26546
2 ,, ,, 56
3 ,, ,, 85
4 ,, ,, 94
5. दासी तास पंचसइ पासि मारू मनि अति पूगी आस ॥ 670 ॥
   ढोला मारवणी चौपई
6. दोहा स ख्या 218
7. ,, ,, 45 माधवानल कामकदला चउपई
8. ,, ,, 5 तेजसार रास ह लि ग्र 26546
9. ,, ,, 73
10 ,, ,, 317
11. ,, ,, 335
12 ,, ,, 303

पंच शब्द बाजे बजते रहते थे ।[1]

नगर मे बडे-बडे उपवन होते थे । कथा नायक अथवा नायिकाए अपने साथियो के साथ उपवन मे भ्रमणार्थ निकलती थी । भीमसेन प्रजा के हितार्थ एक अपूर्व वन का निर्माण कराते हैं ।[2] अच्छे अवसर पर राजा अपने मित्रो रनिवास एव नृत्याकारो सहित उपवन मे रहता था ।[3] उपवन मे सरोवर के पास ही राजा अपना प्रासाद बनवाता था । 'नदन वन' बहुत ही सुन्दर उपवन था जहाँ राजा वाछित भोग विलास करता था ।[4] राजाओ के पास हाथी घोड़े रथ ऊँट आदि सवारी के लिये होते थे ।

महलो मे गवाक्ष (झरोखे) भी होते थे । सौदागर मारवणी को गवाक्ष पर ही बैठी देखता है और खवास से उसके बारे मे पूछता है ।[5] 'अगडदत्त रास' की नायिका मदनमंजरी अगडदत्त को अपने गवाक्ष से ही देखती है ।[6]

वस्त्र आभूषण एवं शृगार

कुशललाभ की कथाओ के अधिक पात्र राज कुटुम्ब के हैं । अत उनके वस्त्रो मे विविधता है । पुरुषो के वस्त्र अलग होते थे और नारियो के अलग होते थे ।

पुरुषो के वस्त्रो मे पगडी का उल्लेख विशेष रूप से हुआ है

सकती बाँधे बीटुली ढीली मेल्हे लज्ज
सरढी पेट न लेटिउ मूध न मेलउ अज्ज ॥ 480 ॥

'तेजसार रास' मे 'धोती' का भी उल्लेख हुआ है ।[7] ढोला 'मागणहारो' को वस्त्र देता है जिसमे 'वागा' का उल्लेख आया है ।[8] मारवणी व मालवणी नित्य प्रति नये-नये 'वेस' अर्थात् वस्त्र बदलती है । उन वस्त्रो मे वे दोनो इन्द्रलोक की अप्सरायें लगती हैं ।[9]

1. दोहा सख्या 244 भीमसेन राजहस चौपई
2. ,, ,, 20, 21
3. ,, ,, 38
4. ,, ,, 33
5. सांझ समै सउदागरी आप तणे उतारि
बइठो गउखै तिणि समइ नयणे निरखी नारि ॥ 204 ॥
ढोला मारवणी चौपई ह. लि
6. ते गुखइ बइठी सुदरी पेखिउ कुमार प्रीति मनि धरी ॥ 39 ॥
अगड़दत्त रास चौपई ग्रं 605
भण्डारकर आरियन्टल रिसर्च इंस्टीट्यूट, पूना
7. दोहा संख्या 32 तेजसार रास प्र. 26546
8. धागा वस्त्र अपूरब वाली, संतोषीया पुगो मनरली ॥314 ॥
ढोला मारवणी चौपई
9. दोहा संख्या 698

ऊनी वस्त्रो मे कवल का उल्लेख ढोला मारवणी चौपई मे हुआ है। मालवणी मारवाड की निंदा करती हुई कहती है कि वहाँ तो ओढ़ने पहिनने को केवल कवल ही मिलता है।[1] कामकदला को बालक 'कोरा चीर' पहनाते हैं[2] जिससे यह भी स्पष्ट होता है कि विवाह के समय कोरे वस्त्र पहनाये जाते थे। वेश्या कामकंदला नृत्य के समय रेशमी दुपट्टा ओढती है।[3] वेश्यायें नृत्य के समय अगो पर चन्दन का लेप इस प्रकार से करती थी कि वे निर्वस्त्र दिखाई न दें

चदन तनु विलेपन चीर कोई न देखई नग्न शरीर ॥ 177 ॥

स्त्रियो के वस्त्रो मे कचुकी का उल्लेख भी हुआ है। कामकदला माधव को भ्रमर बनाकर अपनी कचुकी में अवस्थित कर लेती है।[4] कंदला 'अनोपम चीर' भी धारण करती है।[5]

इन कथाओ मे दक्षिणी चीर का भी उल्लेख हुआ है। ढोला मालवणी को दक्षिणी चीर लाकर देने को कहता है[6] माधव के वियोग मे कामकदाला दक्षिणी चीर पहिनना भी छोड़ देती है।[7]

विधवा स्त्री का परिधान अलग होता था। इसका परिचय कदला की वियोगावस्था मे होता है

विधवा वेसि ते विरहिणी
दुर्वल देह कीउ पीउ भणी ॥ 367 ॥

स्त्रियाँ साड़ी भी पहनती थी। 'तेजसार रास' मे रानी मृत्यु के समय साड़ी पहने होती है।[8]

आभूषण

प्राचीन काल से ही स्त्रियो की आभूषण प्रियता प्रसिद्ध रही है। स्त्रियो ही नही पुरुष भी आभूषण पहनते थे। माधवानल कामकदाला मे राजा कामसेन माधव

1. दोहा संख्या 686
2. „ „ 69 माधवानल कामकंदला चोपइ
3. „ „ 168
4. भमर रूप माधव कीयउ, कचू विचि छानउ राखीयउ
   विविध प्रकारि नाटिक करइ कंचू विचि-प्रीतडो मति सं भरइ ॥ 106 ॥
   माधवानल कामकदला चोपई 106
5. दोहा संख्या 239
6. „ „ 339 ढोला मारवणी चौपई
7. „ „ 365 माधवानल कामकंदला चोपई
8. „ „ 273 'तेजसार रास' प्र. 26546

की कला से प्रसन्न होकर उसे अपने आभूषण देता है पर मुकुट नही देता।[1] आभूषणों का उल्लेख मात्र है नाम नही गिनाये गये है। इससे यह भी ज्ञात होता है कि राजा लोग ही आभूषणो का प्रयोग करते थे।

रानियो के आभूषणो की तो गिनती ही नही थी। इनके आभूषणो मे रत्न जडित बहिरखा, सीसफूल, एकावल, रखडी, नवसर हार, ककण, नेउर चूडियाँ, मेखला आदि का उल्लेख मिलता है।[2] बहिरखा बाहु पर पहना जाता था। सिर पर शशिफूल सोने की रत्नजडित रखडी लगाई जाती थी। गले के आभूषणो मे नवसर हार और एकावली का उल्लेख हुआ है। कंकण और नेऊर बजने वाले आभूषण थे। हाथो मे सोने की चूडिया और कमर मे छोटी घटिकाओ से युक्त करधनी पहनी जाती थी।

ढोला मारवणी के लिये गहने भेजता है।[3] मारवणी की माता उसे स्वर्ण के रत्न जडित आभूपण तथा मोतियो का हार देती है।[4] मारवणी को जोगी द्वारा जीवन दान दिये जाने पर ढोला जोगिन को नवसर हार उपहार मे देता है।[5] मारवणी सास के चरण स्पर्श करती है और सास उसे स्वर्ण के आभूषण देती है।[6]

आभूषणो का उल्लेख कुशललाभ ने बहुत किया है। इससे नारी का आभूषणो के प्रति मोह तो ज्ञात होता ही है साथ ही उनके माध्यम से तत्कालीन समाज की समृद्धि का भी ज्ञान होता है।

शृंगार

शृंगार सोलह माने जाते हैं।[7] मारवणी[8] और कदला[9] दोनो ही चन्दन

1. दोहा संख्या 187 माधवानल कामकंदला चौपई
2. नाक जिसी दीवानी सिषा, बाहे रतन जडित बहिरखा
   सीस फूल, सोवन राखडी, कंकन मयघडी रतने जडी ॥ 195 ॥
   गले एकावल नवसर हार, ककण नेउर रूण झुणकार ॥ 196 ॥
   खलके चूडी सोवन तणी, क्षुद्र घटिका सोहामणी ॥ 198 ॥
   केहरसिह जिसी कटिलक रतन जडित करि मेषलाक ॥ 199 ॥
3. दोहा संख्या 365 ढोला मारवाणी चौपई
4. ,, ,, 554
5. ढोलउ प्राणदियउ अपार, जोगिणि दीवउ नवसर हार ॥ 596 ॥
6. दोहा संख्या 671 ढोला मारवणी चपई
7. उबटन, मजन मस्सी, स्नान, सुवसन, केश विन्यास नांग भरना, अंजन, महावर, बिंदी, तिल बनाना, मेंहदी, गंध द्रव्य, आभूषण, फूलमाला और पान खाना ये सोलह शृंगार कहे गये है।

   श्री रामचन्द्र वर्मा, प्रामाणिक हिन्दी कोश पृ 1228
8. दोहा संख्या 515 ढोला मारवणी चौपई
9. दोहा संख्या 200 माधवानल कामकदला चौपई

और केसर का उवटन करती हैं।

स्त्रियाँ शरीर में चन्दन का लेप करती थी। नेत्रो में अंजन या काजल डाला जाता था। हथेलियों को सुन्दर बनाने के लिये लाल रंग से रगा जाता था। अधर ताम्बूल से रगे रहते थे।

> अगइ चदन केसर खोलि, अधर दसण रगिल तंबोल
> अजन सिउ अजित आखडी, जाणि विकच कमल पाखडी ॥ 200 ॥

सुरभित तेल का प्रयोग भी किया जाता था।[1] अय द्रव्यों में फूल मृगमद, चोवा[2] का भी उल्लेख हुआ है।

मारवणी एव कामकदला दोनो ही सोलह शृंगार कर प्रिय मिलन को जाती है।[3]

मस्तक पर विन्दी भी लगाई जाती थी वह तिलक के रूप में भी होती थी। संयोग के समय नारियाँ सभी शृंगार करती हैं किन्तु वियोग में उन्हे शृंगार भी अच्छा नही लगता।[4]

खान-पान

ढोला मारवणी की कथा राजस्थान की कथा है अत. उसमे राजस्थानी खाद्यान्न का उल्लेख होना स्वाभाविक है। वाजरी[5], मुरट[6] का उल्लेख विशेष रूप से

1, सुरभि तेल चपक तनु भरइ सह हथि अंगइ मंजण करइ
निरमल जल अंघोलइ नीर, सुन्दर प्रहिरू अनोपम चीर ॥ 239 ॥
2. दोहा संख्या 238
3 (क) हरषित थयो सहू परिवार सोलह कीजइ सहू सिणगार
सोल सिगार मक्षई मारूई, जाणे वरतवि अपछर हुई ॥ 516 ॥
ढोला मारवणी चौपई
(ख) केसरीसिंह वनइ पाखयंउ, एक पखग नइ पखइ मयंउ
कामकंवला रिति अणुहार, सज्या वली सोलह सिणगार ॥ 173 ॥
माधवानल कामकंदला चौपई
(ग) सुन्दरि सोलसिंगार सजि सेज पधारी सखि
प्राण नाथ प्रीतम मिल्यउ उर सरि वइठउ सखि ॥ 128 ॥
ढोला मारवणी चौपई
4. तिजई तिलक कज्जल तंबोल मजण नाहण घोल अंघोल
जिमइ नही सरस आहार, जाँ न मिलइ माधव भरतार ॥366 ॥
माधवानल कामकदला चौपई
5 दोहा संख्या 350 ढोला मारवणी चौपई
6. ,, ,, 685

हुआ है। ढोला मारवणी के संदेश प्रेषकों को भोजन कराता है।[1] और स्वयं भी ससुराल मे पन्द्रह दिन रहकर नित्य नवीन भोजन करता है।[2]

शराब का भी सेवन किया जाता था। ढोला उमर सूमरा के साथ छक कर पीता है

साथइ साझा मद अपराक मने द्रोहनइ पाई छाक
ढोलउ अति परिघल मद पीयइ वीजा आछी छाका वहइ ॥ 619 ॥

मनोरंजन के साधन

मानव मन जब किसी कार्य से ऊब जाता है तो वह मनोरंजन चाहता है। मन के रंजनार्थ मानव ने अनेक साधनो का सृजन किया है। तत्कालीन समाज मे भी नाना प्रकार के मनोविनोद के साधन प्रचलित थे। राजा लोग आखेट खेलते थे।[3] और स्त्रियाँ सरोवर मे जलक्रीडा करती थी कभी-कभी, राजा भी जल क्रीड़ा साथ ही करता था।[4]

मनोरंजन के अन्य साधनो मे नृत्य संगीत एवं नाटक का बहुत प्रचार था। नृत्य समूह के रूप मे भी होते थे। राजकुमार सोहाग सुन्दरी और मंत्री विद्या विलास ने नाटक मे 'समूह नृत्य' किया था।[5] इन्द्र की सभा मे नाटक मनोरंजन का प्रमुख साधन था। नाटको मे स्त्रियाँ भी अभिनय करती थी। इन्द्र प्रसन्न होकर अप्सरा को विशेष नाटक का आदेश देता है [6]

एक दिवसि मनि धरि आणद इद्र समाई वइठउ छइ इद्र
अपछर न दीघउ आदेश 'रचउ आज नाटक नउ वेस' ॥ 12 ॥

1. दोहा संख्या 364
2. भोजन नित नित नवला करइ अधिको भगति जुगति आदरइ
   मारवणी मनि भावइ, पनरह दीह रहयउ सासरइ ॥551 ॥
3. कुमर ते पा घ देषी करी हणउ वाण प्रहार रे
   असवनइ कुमर ऊगरया शध नउ कीधउ सघार रे ॥ 415 ॥
   भीमसेन राजहंस चौपई ह लि ग्रं. 1217
4. (क) सुदरि मदनमजरी साथि निर्भय थई वइठा नर नाथ
   पहिली नंदन वन पेषति सरवर तटि जल केलि करत ॥ 265 ॥
   (ख, नारी कई सरोवर जिहाँ जल क्रीडा जइ कीजे तिहाँ
   सरोवर क्रीडा करी अमोल, तिहा पेरवै केली हुर मोलि ॥ 119 ॥
   तेजसार रास ह लि ग्रं 26546 रा. प्रा. वि. प्र. जोधपुर
5. राजस्थान के प्रेमाख्यान परम्परा और प्रगति डा० रामगोपाल गोयल पृ 504
6. दोहा संख्या 12 माधवानल कामकदला चौपई : गायकवाड़ आरियन्टल सीरिज VOL XCIII

वीणा वादन भी मनोरंजन का ही साधन थी। माधव की वीणा पर नगर की स्त्रियाँ अपनी सुध बुध खो बैठती थी और माधव को देखते ही उसके पीछे चल देती थी।[1]

माधव के वीणा वादन पर राजा उसे आदर देता है।[2] वीणा वादन सुनकर राजा की सात सौ अन्त पुर की रानियाँ मोहित हो जाती हैं।[3]

नृत्य भी मनोरंजन का प्रमुख साधन था। मारवणी चर्चरी नृत्य की ज्ञाता थी। इससे ज्ञात होता है कि उत्सवों पर भी नृत्य होते थे। राजकुमारियाँ केवल मनोरंजनार्थ नृत्य करती थी। राज सभाओं में राजनर्तकियों का नृत्य होता था। ये नर्तकियाँ वेश्या भी होती थी।[4] कामकदला अपनी सखियों सहित सामूहिक नृत्य करती है।[5] होली पर चर्चरी नृत्य का आयोजन किया जाता था।[6]

मनोविनोद का एक साधन पहेली कहना और पूछना भी था जैसे

> कामकदला इम कहइ, 'अजी अछइ वहुराति
> गाहा गूढा, गीयरस, कहइ को नवली वाति[7] ॥ 260 ॥

प्रेहेलिका आयोजन में मनो-विनोद के साथ मानसिक विकास भी होता था। मानसिक विकास के-साधनों में गाहा गूढा गीत, नई-वात कहानी अथवा हास्य व्यंग्य आदि उल्लेखनीय हैं। पहेली और समस्या विनोद बुद्धि विकास के प्रमुख अंग थे। कुशललाभ ने लिखा है कि 'मूर्ख व्यक्ति तो निद्रा में या कलह में अपना अमूल्य समय खो देते हैं किन्तु बुद्धिमान व्यक्ति उस समय को गीतों व शास्त्रों की चर्चा करके ही व्यतीत करते हैं।[8]

जिस प्रकार चतुर व्यक्ति पान खाकर प्रसन्न होता है उसी प्रकार बुद्धिमान

1. सेरी माहि जातु सांभलइ, घरि मुंकी नइ पुठइ पूलइ
   घरना स्वामी पालइ घणू सहिजि न छंडइ स्त्री आपणू ॥ 131 ॥ वही पृ० 392
2 दोहा संख्या 143
3 ,, ,, 150, 151
4. वलती वेश्या कहइ विवेक, माहरइ मनि छइ निश्चय एक
   कामसेन जे नगरी नरेस, तस आगइ हू नृत्य करेसि ॥ 169 ॥
   माधवानल कामकंदला चौपई
5 दोहा संख्या 172
6 फागुण मास वसंत रुत आयउ जइ न सुणेसि
   चांचरिकइ मिस खेलती, होली झंपावेसि ॥ 283 ॥ ढोला मारवणी चौपई ह लि
7 दोहा संख्या 260 माधवानल कामकदला चौपई
8. ,, ,, 262

व्यक्ति कथा श्रवण से ही प्रसन्न होता है।[1]

पहेलियाँ पूछना प्रारम्भ से ही मनुष्य के मनोरंजन का साधन रहा है। इनका उपयोग नायिका नायक के चातुर्य का पता लगाने के लिये भी करती थी। कुशललाभ कृत 'माधवानल कामकदला चउपई' मे समस्या भी प्रस्तुत की गई है। कदला माधव से पूछती है कि चोर ने सुदरी का सर्व श्रृंगार उतार लिया, किन्तु नाक फूली नही उतारी इसका क्या कारण है।[2] चतुर माधव इस समस्या का निदान इस प्रकार करता है

अहर रगि रत्तउ हुउ मुखि कज्जल मसिवन्न
जाणिउ गुंजाहल अछइ, तेणि न ढूंकउ मन्न ॥ 282 ॥

सार्वजनिक उत्सव, पर्व एव त्यौहार

तत्कालीन समाज उत्सव प्रिय समाज था। पुत्र व पुत्री जन्मोत्सव बड़ी धूम-धाम से मनाया जाता था।[3] विवाह उत्सव भी धूमधाम से मनाया जाता था। धार्मिक उत्सवों मे इन्द्र महोत्सव मनाये जाने का वर्णन मिलता है

इन्द्र महोच्छव आव्यउ ईसइ, राय मडाविउ नाटिका तिसइ ॥ 172 ॥

उत्सव एव पर्व के समान त्यौहार भी भारतीय सस्कृति के अभिन्न अग रहे हैं। त्यौहार पर नारी अपनी समस्त चेतना से अपना हर्षोल्लास व्यक्त करती है।

1. "भानुदु ग मानवती रास"
   राजस्थानी प्रेमाख्यान पृ० 506 से उद्धृत डा० गोयल
2. सुंदरि चोर सग्रही सवि लिधा सिणगार
   नकफूली लिधी नही, कही प्रिउ कवण विचार ॥ 281 ॥
   माधवानल कामकंदला चोपई
3. (क) माता पिता मनि आणंद घणउ जनम हुओ मारवणी तणउ
   कीया वधावा नगर मझारि पुत्री तणी वदि मंगलाचार ॥ 133 ॥
   ढोला मारवणी चौपई
   (ख) पुत्र जनमि हरख्यउ राजान मनि आणंदी नल राजान
   घरि घरि उछव मगल घणा कीया वधावा पुत्रह तणा ॥ 150 ॥
   (ग) कीयउ उछव कीयउ अच्छव हुयउ आणंद
   कुटुम्ब सहुई सतोषीयउ नगरमाहि उच्छाह कीधउ ॥ 63 ॥
   माधवानल कामकदला चोपई
   (घ) पूरे दिन पुत्र जनमीयउ राजा घण उ महोच्छव कीयउ ॥ 10 ॥
   तेजसार रास ग्रं. 26546
   (ङ) पुत्र जनमउ परम आणद संतोष्या परीयण सहू
   वेद नाद वाजित्र वाजइ याचक जन जय जय करइ
   पोषइ दान मोटइ दीवाजइ नगर महोछव नव नवा
   सफल मनोरथ सार राजहंस नामइ कुमार अति सुदर आकार ॥ 371 ॥
   भीमसेन राजहंस चोपई ग्रं. 1217

'ढोला मारवणी चोपई' मे होली, सावन की तीज, दशहरा आदि त्यौहारो का वर्णन हुआ है।

श्रावण मास स्त्रियो के लिये आनन्द एवं मगल प्रदान करने वाला है। परदेश गये हुये पति भी इसी माह मे लौट आते हैं। मारवणी का भी प्रिय परदेश मे है और अभी तक नही आया है उस समय मारवणी के भाव देखने योग्य हैं

जउ तू साहिव नावियउ, सावन पहली तीज
वीजल तणइ झबूकडइ मूघ मरेसी खीज ॥ 280 ॥

होली एक ऐसा त्यौहार है जिसे प्रत्येक व्यक्ति पूर्ण स्वच्छन्दता के साथ मनाता है। मारवणी भी ऐसे त्यौहार को ढोला के साथ मनाना चाहती है वह ढोला से कहती है कि यदि तुम वसत ऋतु के फागुन मास मे नही आये तो मारवणी चर्चरी नृत्य के बहाने होली की ज्वाला मे कूद पडेगी।[1]

मालवणी ढोला को रोके रखना चाहती है और वह उससे कहती है

ढोला रहिसि निवारियउ मिलिसि दई कइ लेखि
पूगल हुसइ ज प्राहुणउ दसराहा लग देखि ॥ 359 ॥

मालवणी से अपार स्नेह एवं प्रेम होने के कारण वह रुक जाता है और तब तक दशहरा आ जाता है।[2]

आर्थिक जीवन

तत्कालीन समाज आर्थिक दृष्टि से बहुत ही सम्पन्न था। देश मे बड़े बडे नगर और ग्राम बसे हुये थे। नगरो मे कई मजिलें ऊँचे आवास थे, उपवन सरोवर आदि थे[3] प्रासादो मे अगर धूप चूआ चदन कुसुम कपूर महकते थे, तथा रत्नो का प्रकाश सूर्य का भान कराता था।[4]

1. दोहा संख्या 283 ढोला मारवणी चोपई
2. इणि प्रस्तावइ साल्ह कुमार चिता पालण तणी अपार
   मालवणी मंनि भगतावीयो तेतलइ दस राहउ आवीयउ ॥ 367 ॥
   ढोला मारवणी चोपई ह. लि.
3. मधुकर परिमल लोभइ भमइ रमइ नगर लोक तिहा रमइ
   ऊँचा राज्य योग्य आवास एक कराव्यो सरवर पासि ॥ 32 ॥
   पद्म सरोवर थाप्योनाम नदन वन नामइ अभिराम
   राजा रमइतो यह आवासि विलसइ वाछित भोग विलास ॥ 33 ॥
   भीमसेन राजहंस चोपई ग्रं. 1217
4. अगु मप्त भूमि आवास बहकइ अगर धूप सुवास
   चूआ चदन कुसुम कपूर रतन तेज झलकइ जिमिसूर ॥ 237 ॥
   माधवानल कामकंदला चोपई

राजाओ के यहाँ बहुत से दास एवं दासियाँ भी होती थी जो उनकी समृद्धि सूचक है।[1]

'तेजसार रास' मे वन देवी एक नगर का निर्माण करती है जिसमे सरोवर कूप वन तथा बावडी है, गढ सुरग मन्दिर देहरा तथा भिन्न-भिन्न चोरासी प्रकार के व्यवसायो के बाजार थे जो 'चौरासी चौहटे' कहलाते थे।[2] असख्य लोग वहाँ व्यापार करते थे। नारियाँ रूपवत थी और किन्नर बालायें सरस भाषा मे गीत गाती थी। सभी एक दूसरे को जानते थे पाँच प्रकार के वाद्य यत्र बजते थे। बीस करोड लक्ष्मी हथलेवे मे देना तथा रत्न जडित आभूषण देना रिद्धि सिद्ध सूचक हैं।[3]

नगर सभ्यता पूर्ण विकसित हो चुकी थी। कुशललाभ ने तत्कालीन नगर जीवन मे व्याप्त अजनबीपन की भावना को व्यक्त करते हुये लिखा है कि माधव दिन भर नगर मे घूमता रहा पर कोई उससे बात नहीं करता।[4] सत्य भी है

> तत्र देशे न गन्तव्य, यत्रात्मीयजनो नहि।
> मार्गे हि गच्छता तेषा कुशल को नु पृच्छति॥

कुशललाभ ने भी कहा है

> तिणि देसइ नवि जाईयइ जिहा अप्पणउ न कोई
> सेरी सेरी होडता वत्त न पूछइ कोई॥ 382॥

वाणिज्य एवं व्यवसाय

कुशललाभ ने चोरासी प्रकार के व्यवसायो का उल्लेख मात्र किया है।[5] गणपति ने भी चौरासी प्रकार के व्यवसायों में किराना, कपडे का व्यवसाय, स्वर्णकारी, लोहारी, चित्रकारी लेखन आदि प्रमुख बताये हैं।[6] यह व्यवसाय पैतृक भी हुआ करते थे। माधव भी अपने पिता के साथ राज्य द्वार मे पूजार्थ जाता है।[7]

1 दोहा सख्या 670 ढोला मारवणी चोपई

2 नवो एकज नीपाव्यो नगर, सरोवर कुवा वनि वन
गढ दुरंग मन्दिर देहरा, चोरासी चोहटा चावरा॥ 303॥
'तेजसार रास' ग्रथाक 26546

3. दोहा सख्या 304, 305, 306

4 माधव हिडइ नयर मझारी, रूपवत दीसइ नर नारी
सारउ दिन तिणि नगरी फिरी, कोई न पुछइ आदर करी॥ 380॥
माधवानल कामकन्दला चौपई

5 दोहा सख्या 303 तेजसार रास ग्रं 26546

6 ,, ,, 159 से 222 माधवानल कामकंदलो प्रबन्ध गायकवाड ओरियन्टल सीरिज, वडोदा

7 ,, ,, 128 माधवानल कामकंदला चौपई

इन व्यवसायो के अतिरिक्त पशुओ का धन्धा भी होता था । 'ढोला मारवणी चोपई' एव 'भीमसेन राजहंस चौपई' से विदित होता है कि तत्कालीन समाज मे पशुओ का भी व्यापार होता था । पशुओ के व्यापार मे 'घोडो' का व्यवसाय अधिक प्रचलित था । उस समय अच्छे-अच्छे ऊँटो व घोडो की राजा व सामन्तों द्वारा खरीद होती थी । ढोला मारवणी के सम्मुख कच्छ के 'वडी यूही' वाले ऊँट खरीद कर लाने की इच्छा प्रकट करता है ।[1] इसी तरह ढोला मुलतान के सेलार घोड़े खरीदने की भी इच्छा व्यक्त करता है ।[2]

घोडो का सौदागर नरवर से आकर पूगल मे घोड़े वेचता है और वहीं मालवणी के रहस्य को उद्घाटित करता है ।[3] ईडर के आभूषण[4] तथा दक्षिणी चीर तथा रेशमी वस्त्र का भी व्यवसाय होता था

सहसे लापे साट विसु परिघल आणा वेसु
घरि वइठा ही प्रीतमा, पट्टोला पहिरेसु ।। 357 ।।

मोतियो के व्यापार का उल्लेख भी ढोला मारवणी चौपई मे हुआ है ।[5] 'जिन रक्षित जिन पालित रास' मे जिनपाल व जिनरक्ष व्यापार के लिए समुद्र पार जाते हैं ।[6]

तत्कालीन समाज मे कृषि ही आय को प्रमुख साधन थी । अकाल पड़ने पर एक प्रदेश का राजा दूसरे प्रदेश के राजा की सहायता करता था । 'ढोला मारवणी चौपई मे पूगल राजा अकाल पड़ने पर पुष्कर आते हैं

पूगल थी ऊचाला कीया, धण गोवल सवि साथइं लीया
नगर सकल लोकि परवरया, आवीपुरिपुष्करि उत्तर्या ।। 139 ।।

विवाह अवसर पर अपार धन खर्च होता था गौने मे अमूल्य आभूषण व दास दासी दिये जाना तत्कालीन समाज की समृद्धि का द्योतक है ।

1 काछी करह वियू भिया वलियाल मोहपू चाह,
मालवणी जे तुं कहै, तउ आणुं ए व्यवसाय ।। 354 ।।
ढोला मारवणी चोपई

2 हुरणाषि हसने कहे, तो आणो हेड तोपार
मुलताणी मोमन समा सोहे तुम्ह असवार ।। 348 ।।

3 दोहा सख्या 253 ढोला मारवणी चोपई

4. ,, ,, 235

5. ,, ,, 352

6 वे बंधव व्यापार करता विघ्न रहित प्रहुणे विचरंता
वारह ग्योर समुद्र प्रहता आण्या अणगल धन मनि गमता
जिनरक्षित जिनपालित रास प्र. 2570
महिमा भक्ति जैन ज्ञान भण्डार बडा उपाश्रय बीकानेर

राजनीतिक स्थिति

राज्य का सबसे बडा अधिकारी राजा होता था। राजा निरंकुश होता था उसकी आज्ञा ही कानून होती थी। राजा गोविन्द चन्द माधव को देश छोडने की आज्ञा देता है[1] और माधव को स्वीकार करना पडता है।[2] कुशललाभ ने इसके लिये लिखा है कि 'यदि माता पुत्र को विष दे और पिता उसे बेच दे और राजा यदि सर्वस्व ही हरण कर लें तो इसमे दुःख क्या है ?[3]

यद्यपि राजा को भी लोक रीति नीति का भय बना रहता था।[4]

उस युग मे राजा लोग अपना आधा राज्य राजकुमारियो के दहेज मे दे देते थे।[5] ऐसे भी कई उदाहरण मिलते हैं कि राजा प्रसन्न होकर अपनी पुत्री तो देता ही था साथ ही अपना राज्य भी दे देता था। 'ढोला मारवणी' चौपई' मे ऊमर सूमरा अपने सैनिको से कहता है कि 'जो कोई ढोला को पकड लेगा उसे मैं अपना आधा राज्य दूँगा, जो ढोला को मार देगा अथवा उसे रोक लेगा वह मेरी बेटी से विवाह करेगा।[6]

न्याय व्यवस्था

इन नरेशो की न्याय व्यवस्था सर्व सुलभ थी। जनसाधारण भी किसी भी समय राजा के सामने अपनी फरियाद लेकर पहुच सकता था और राजा उसकी प्रत्येक बात सुनना अपना कर्तव्य समझता था।[7]

सभा मे भी लोग अपनी समस्यायें राजा के सामने रखते थे। भीमसेन की सभा मे परदेसी आता है और वह नगर मे बाडी का अभाव बताता है। राजा उसकी

1. दोहा सख्या 153 माधवानल कामकदला चौपई
2. ,, ,, 159
3. माता यदि विष दद्यात् पिता विक्रयते सुतम्
   राजा हरति सर्वस्व, तत्र का परिवेदना ॥ 155 ॥
4. दोहा संख्या 222
5. ,, ,, 206 तेजसार रास' पृ 26546
6. ढोलानइ आपडइ जि कोइ, अधरा जियो हमारो होइ
   के मारइ कइ आडउ फिरइ, ते बेटी माहरइ वरइ ॥ 638 ॥
   ढोला मारवणी चौपई
7. मली महाजन पुहुता राजि पुछइ राय कहउ किणि काजि
   संभलि गोविंद चंद नरेस अहिम छडिसि तुम्हारू देस
   किणि मुहुंग्या संताप्या आज ? वसउ सुखि थाउ माहरउ राज
   वलतउ कहिइ महाजन वात समलि राजा जग विख्यात ॥ 134 ॥
   माधवानल कामकदला चौपई

बात पर चिंतन करता है तथा शुभ दिन शुभ वार तथा अच्छी भूमि देखकर बाड़ी का निर्माण कराता है ।[1]

राजा अपनी प्रजा के सुख दुःख का स्वयं ध्यान रखता था । महाकाल के मन्दिर मे विरह गाथा लिखी देखकर राजा सोचता है

> माहरइ नगरइ सहु को सुखी, पणि ए कोई मोटउ दुखी
>
> परदुख भजण विरद माहरु कहइ मन्त्रिनइ पिरि करू ॥ 480 ॥

विक्रमादित्य उसे महान् दुःखी समझता है और जब तक उसका दुःख दूर नही होता वह अपने आपको राजा नही मानता ।[2] अपने प्रधान से राजा इस विषय मे बात करता है और नगर मे यह घोषणा करवाता है कि जो कोई इस विरही को ढूंढेगा उसे एक लाख दीनार ईनाम स्वरूप दी जायेगी ।[3]

गुप्तचर

जिस तरह चोर डकैत का पता लगाने के लिये गुप्तचर होते थे उसी तरह दीन दुखियो का पता गणिकायें भी लगाती थीं । 'माधवानल कामकंदला चउपई' मे गोगविलासनी वेश्या राजा विक्रमादित्य से कहती है कि वह उस दुःखी नर को लाकर देगी ।[4] माधव का पता वही लगाती है ।

प्रधान

राजा का अपना प्रधान या मन्त्री होता था । वह राजा का विश्वास पात्र होता था । राजा सभी प्रकार के विमर्श प्रधान से करता था । उसके कहने से राजा युवराज तक को गृह त्यागने के लिए वाध्य कर देता था । 'तेजसार रास' का नायक राजकुमार तेजसार मन्त्री और सौतेले भाई के कुचक्र का शिकार होता है और पिता का कोप भाजन बनता है और एक रात्रि घर छोड़कर चला जाता है ।[5]

1. दोहा सख्या 21 भीमसेन राजहंस चौपई प्र, 1217
2. दोहा सख्या 484 माधवानल कामकंदला चौपई
3. „ „ 491, 492
4. (क) गणिका गोगाविलासिणी पहु छविय आय

   दुखिउ नर हूं लहि दियु सभलि विक्रमराय ॥ 493 ॥

   माधवानल कामकदला चौपई, गायकवाड़ ओरियन्टल सीरिज VOL XCIII

   (ख) वेस्या कहणे मूंकी चोर नृपति में प्रतिहार रे जीव

   हिवे मुख्यो वैश्या करीरे चोर पकडवा दाव रे एहवो

   रूपसेन कुमार नो चरित्र पु=60 राजस्थानी के प्रेमाख्यान डॉ० रामगोपाल पृ० 514
5. दोहा सख्या 15 से 18 'तेजसार रास' ह लि. प्र. 26546

पुरोहित

राजा का एक राज पुरोहित भी होता था। राजा पुरोहित राजा तथा रनिवास के धार्मिक कृत्य करता था। ढोला मारवणी चोपई मे भी पुरोहित को उच्च जाति का कहा गया है।[1] राजा विक्रमादित्य भी अपने प्रधान को विचार विमर्श के लिये बुलाता है।[2] पुष्पावती के राजा गोविन्दचन्द का पुरोहित शकरदास ऐश्वर्य सम्पन्न था।[3]

चारण भाट

तत्कालीन राज्य में चारण भाट आदि भी होते थे, जो राजा की विरुदावली गाते थे और राजा को शौर्य प्रदर्शन के लिए उत्साहित करते थे। पिंगल राजा के पूगल पहुँचने पर भाट राजा की जय जयकार करते हैं।[4] भाट लोग राजाओ को विवाह योग्य एव सुन्दर कन्यायें भी वताते थे।[5] भाट ही ढोला को मारवणी की निरति कराते हैं।[6] चारण भाटो को वस्त्र धन आदि देकर सतुष्ट किया जाता था।[7]

चारण द्वारा भ्रामक सूचना का निराकरण मारवणी का भाट इस प्रकार करता है

दउढ वरसरी, मारुवी त्रिहुँ वरसांरिउ कंत
जणारउ जोवन वहि गयउ तूँ किउं जोवन वन्त ॥ 450 ॥

द्वारपाल

राज्य परिवार तथा धन की रक्षार्थ राजद्वार पर प्रतिहारी या द्वारपाल होता था।[8] 'तेजसार रास' मे द्वार रक्षक का कार्य नारी भी करती है जो हाथ से उत्कृष्ट

1 राजा प्रोहित राखि जइ, जिण की उत्तमिहूंजाति
मोकलि घरउ मंगता विरह जगावइ राति ॥ 267 ॥
ढोला मारवणी चोपई
2. दोहा संख्या 487 माधवानल कामकदला चोपई
3 तेह मउ प्रोहित सकरदास ऋद्धिवंत नइ सील विलास
वार कोडि धन सोवन तणी हय गलयन्थमी पोता तणी ॥ 46 ॥
4. दोहा संख्या 123 ढोला मारवणी चोपई
5. ,, ,, 32, 33
6 ,, ,, 303
7. वीस तुरी आपि वहास फदिया दिया सहस पंचास
वागा वस्त्र अपूरव वली सतोपीया पुगो मनरली ॥ 314 ॥
8. द्वारपाल पूछइ करिरीस कांइ परदेसी धूणइ सीस
वसतु माधव तेहनइ कहइ नाटक तणउ नादं मुझ दहइ ॥ 181 ॥
माधवानल कामकदला चोपई

कोटि के लोहे से बनी तलवार लिये बैठो है । ये नारियां सुन्दर भी होती थी ।[1]

राजा प्रजा का हाल जानने के लिये स्वयं वेश बदल कर घूमा करता था । राजा विक्रमादित्य तो इसके लिये प्रसिद्ध था । सही तथ्य जानने के लिए आगिया वेताल, खापरा चोर और काडिया जुआरी आदि अन्तरंग मित्रो का उसे सहयोग प्राप्त था ।[2]

राजा की नि.सतान मृत्यु हो जाने पर गर्भ स्थित बालक यदि लडका होगा तो वह राज्याधिकारी बनेगा और तब तक के लिये भानजे को राज्याधिकारी भी बनाया जाता था ।[3]

न्याय व्यवस्था बड़ी ही कठोर थी । माधव को देश निकाला देना,[4] इसका सबसे बडा प्रमाण है । भीमसेन राजहस चौपई मे एक अवधूत के वध का आदेश मिलता है, परन्तु भीमसेन उसे बचा लेता है । सन्यासी अपना प्राण राजा द्वारा बचाये जाने के कारण अपने प्रति किये गये उपकार को भूल नही पाता ।[5]

सैन्य-शक्ति

तत्कालीन देश छोटे-छोटे भागो मे विभक्त था । प्रत्येक राजा के पास अपनी और राज्य की सुरक्षा चे लिए सेना होती थी । राजा सदैव अपनी चतुरग सेना के

1. बइठी द्वार एक वरबोला हाथि ककलोह करवाल
नव यौवन अति सुन्दरि नारि, जाणे अपछर नै अणुहारि ॥ 136 ॥
तेजसार रास ग्र, 36546

2 (क) खापर चोर सगलह प्रसिद्ध कडडीय जूयारी वाचा वद्ध
तिहा माधनाम पंडित सुजाण वर दीध सरसती गुण निहाण ॥ 378 ॥
माधवानल कामकंदला चौपई

(ख) सोल सहस अतेउरी नारी छ सहसवेश नगर मझारी
आगीउ ताल वेनाभि जास नित सेव करइ जाणि करिदास ॥ 377 ॥

3 पुत्र नही को राजा तणे मिलीयो नगर लोक इम भणे
पटराणी पिण छै गर्भणी पुत्र हुस्ये तब धास्यै धणी
तालगि भाणेजा ने राज दीजे तो सीझे सहुकाज ॥ 258 ॥
'तेजसार रास' ह. लि. ग्र. 26546

4. दोहा सख्या 155 मा का. चो

5. नगर लोक नृप पास जइ तसकर जिमताणउ
दीयो वध्य आदेश राय तुम प्रिष्ठइ अणाट
मुकाव्यउ तुम्हे मृत्यू थकी कीधउ उपगार
पोपट जपइ राय प्रतइ धव तुमे अवतार ॥ 127 ॥
भीमसेन राज. चौ. प्र 1217

साथ चलता था। सेना का पड़ाव नगर के पास डाला जाता था।[1] माधव की सेना को देखकर राजा कहता है

> दल असल दीसइ छइ सही
> संभ्रमइ पहुचेस्यां नही ॥ 635 ॥

युद्ध को रोकने के लिये राजा दण्डस्वरूप ग्राम भी देने के लिए तैयार रहते थे।[2] इससे ज्ञात होता है कि राजा लोग बेकार की खून-खराबी नही चाहते थे।

कभी-कभी छोटी-छोटी सी बातो पर युद्ध हो जाता था। युद्ध का प्रमुख कारण कोई सुन्दरी या राज्य प्राप्ति की लालसा या प्रतिशोध की भावना होती थी।

'ढोला मारवणी चउपई' मे ऊमर सूमरा रमणी मारवणी को प्राप्त करने के लिये ही ढोला को शराब पिलाकर मारना चाहता है।[3]

राज्य की लालसा भी व्यक्ति को युद्ध के लिये प्रेरित करती है। 'तेजसार रास' मे पद्मावती राजकुमारी के लिये भविष्यवाणी की जाती है कि जो कोई इसे प्राप्त करेगा वह चार राज्यो का अधिकारी होगा।[4] पिता अपनी पुत्री को किसी को नही देना चाहता इसलिते सभी उसके शत्रु हो गये हैं। और उन सबने मिलकर चंपावती नगरी को प्रतिशोध एव राज्य की लालसा से घेर लिया है।[5] युद्ध मे मुख्य रूप से तलवार[6] और भाले[7] काम मे आते थे।

राजा कुशल शासक होता था, अपने वैरियो का दमन कर राज्य मे सुख-शाति बनाये रखता था।[8] अपनी सेना दूर से आते देख लोग भ्रम मे पड जाते थे और सोचते थे[9]

1 दो स 537–538 मा का चौ
2 प्रोहित नइ राजा इम कहइ जिम तिम करिराज मुझ रहइ
देस्यां दड नहितरि गाम, रखे तुम्हे थापइ सग्राम ॥ 636 ॥
3. कहा ए ऊमर सूमरउ मुझ मारिवा मन कीधउ परउ
गीत माहि कहियउ डूंमणी मद पावे तो मारण भणी ॥ 631 ॥
ढो. मा चौ.
4. जन्म कालि मिलीया जोतिषी विण जोइ जन्मोत्री लिखी
परणेस्यै एह राजकुमारि ते पामस्यै राज चियार ॥ 180 ॥
तेजसार रास' जि. ग्रं. 26546 रा. प्रा. वि. प्र. जोधपुर
5. दोहा संख्या 182–184 ते रा, ह. जि. ग्रं. 26546
6 ,, ,, 136
7. ,, ,, 419 ढो. मा. चौ,
8. ,, ,, 15
9. ,, ,, 634 मा. का. चौ.

नगर लोक मनि वीहइ घणउ कटक एह आविउ कुण तणउ
मिलि प्रधान चितवइ उपाय कवण वयरि कुण आव्यउ राय ? ॥634॥

ललित कलाए

उस समय ललित कलायें उन्नत अवस्था मे थी। सगीत, नृत्य एव नाटक की शिक्षा बचपन मे ही दी जाती थी [1] राजकुमार यह सब शिक्षा गुरु के पास रहकर लेता था। 'तेजसार' गगदत्त ओझा से विद्या ग्रहण करता है और वदले मे उसकी सेवा करता हैं।[2]

वास्तु कला

तत्कालीन समाज मे वास्तु कला वड़ी उन्नत थी। तेजसार के लिये व्यतरी नगरी का निर्माण करती है जो सब प्रकार के साधनो, गढ, सरोवर, मदिर, कूप, वावड़ी, वन, देहरा, चौरासी, चौहटा आदि से युक्त है।[3]

इसके अतिरिक्त 'सप्त भूमि ऊँचे आवास' का वर्णन तो वहुत ही स्थानो पर हुआ है जिससे ज्ञात होता है कि उस समय सात मजिले मकान भी होते थे।[4]

घरो मे आगन[5] रखे जाते थे जो उनकी भव्यता एवं विशालता के सूचक हैं। घरो मे गवाक्ष भी होते थे।[6] पशुओ के लिये अलग आवास होता था। ढोला के पास ऊँटशाला थी जिसमे वह अच्छे-अच्छे ऊँट रखता था।[7] मदिरो का निर्माण भी स्थापत्य कला के महत्व का सूचक है। मंदिरो मे जन साधारण ही नही राजा

1 (क) तेह नइ पेटि पुत्रिका वसी रूपवत हुई रभा जिसी
आठ वरसनी हुइ जिस्यइ नाटक गीत कला अभ्यसइ ॥ 116 ॥
(ख) तेहनु कामकदला नाम रूप लिखित जाणि चित्राम
सीखइ भरह पिंगल सगीत गायइ किन्नर सरिसु गीत ॥ 117 ॥
(ग) सुखइ तिहा छइ कामकंदला सीखी सघली नाटक कला
माधवानल नउ हिवइ सम्वन्ध कवियण वोलइ कथा प्रवन्ध ॥ 119 ॥

2. तेजसार तेहनइ घरि रहयउ मणित्रो भणी चित गहगहयउ
ओझा तणी सेव सव करइ विद्या भणइ पेट पिण भरइ ॥ 22 ॥
'तेजसार रास'

3. दोहा संख्या 303–304 'ते. रा.' ह लि. ग्रं. 26546

4. ,, ,, 237 मा का चौ.

5. ,, ,, 419 ढो. मा चौ

6. सांझ समै सउदागरी आप तणै उतरि
वइठो उगपै तिणो समइ नयणे निरखी नारि ॥ 204 ॥

7. ,, ,, 380

लोग[1] तथा राजकुमारियाँ[2] भी जाती थी ।

नगर निर्माण

नगर निर्माण का भी सांस्कृतिक महत्व था । "नागरिकों के जीवन की, उसकी प्रेरक शक्तियों और प्रवृत्तियों की मूर्तिमान अभिव्यक्ति होने के नाते नगर मानवीय कला और सौन्दर्य भावना का सर्वोत्कृष्ट स्मारक है । नगर रचना के मूल में बहुत कुछ उसके निर्माताओं की सभ्यता और संस्कृति निहित रहती है ।"[3] कुशललाभ की कथाओं में अनेक नगर प्रान्तों जैसे पूगल, नरवर, मालवा, मेवाड़, बंगाल, काबुल, काश्मीर, सिंहल द्वीप, गुजरात' सौराष्ट्र, सिंध, आबू, जालोर[4] तथा इन्द्रपुरी,[5] पुष्पावती,[6] कामावती,[7] उज्जैन का उल्लेख 'माधवानल कामकंदला चउपई' में हुआ है । अन्य ग्रन्थों में तेजलपुर, विशालपुरी, चम्पापुरी, वाराणसी, अवावती, सुरपुर नगर, गौड़ देश, अवतीपुर, कपिलपुर, श्रीपुर, धारानगरी, नारदपुरी आदि नगरों का वर्णन भी हुआ है ।

संगीत, नृत्य एवं नाटक

तत्कालीन समाज में संगीत का आदर था । कई प्रकार के नृत्य प्रचलित थे । गणिका कामकंदला अपने नृत्य में इतनी प्रवीण थी कि उसने कुच पर बैठे भ्रमर को 'कंपित पवन' नृत्य के द्वारा बड़ी ही चतुराई से उड़ा दिया है ।[8] कुशललाभ ने इन्द्र

1. महाकाल ईश्वर प्रासाद दीठइ जायइ दुख विषाद
राजा देव जुहारण भणी सुप्रभाति आविउ पुरधणी ॥ 478 ॥
महाकाल हर प्रणामी करी भमती दियइ फिरइ देहरी
भीतइ दीठीनवली गाहु वाचइ राजा मनि उच्छाहु ॥ 479 ॥
मा का चौ.

2, सही समाणी साथि करि मंदिर कूं मल्हपत
सउदागर नेही वहइ सुणिवा प्रीतम वत्त ॥ 227 ॥
ढो मा चौ

3 टाउन प्लानिंग एनशियन्टइंडिया श्री बी. बी दत्त पृ 211
ढोला मारू रा दूहा में काव्य सौष्ठव संस्कृति एवं इतिहास ले डा. भगवतीलाल शर्मा पृ. 305 से उदधृत

4 दोहा संख्या 25 से 34 तक ढो मा चौ

5 ,, ,, 12 मा. का चौ

6. ,, ,, 44

7 ,, ,, 115

8 कामकदला हियइ निसंक कुच ऊपरि तिणिदीधउ डंक
वेदन थइ न जाणइ कोइ कपित पवनि उडावउ सोई ॥ 215 ॥
मा. का. चौ.

की सभा मे अप्सराओ के नृत्य और संगीत का सरस वर्णन किया है ।[1] नाट्य कला भी विकसित अवस्था मे थी ।[2] वाद्य और शास्त्रीय सगीत भी प्रचलित था । माधव सगीत का पारखी था । वीणा वादन मे स्वय तो कुशल था ही किन्तु संगीत सभा से दूर रह कर वाद्यो की ध्वनि से ताल भग को भी पहचान लेता था ।[3] संगीत के सात स्वर और बत्तीस राग-रागनियाँ प्रसिद्ध थीं ।[4] 'ढोला मारवणी चउपई' मे भी मारू एव मल्हार राग का उल्लेख हुआ है ।[5] उस समय गाने वाली जातियाँ भी होती थी । ढाढी, माँगणहार आदि का उल्लेख 'ढोला मारवणी चौपाई मे कई स्थानो पर हुआ है । वाद्य यन्त्रो मे वीणा, परवावज तथा पच शब्द वाद्यो का उल्लेख हुआ ।

काव्य कला

सस्कृत अपभ्र श एव प्रादेशिक भाषाओ मे सरस काव्य लिखे जाते थे । इससे ज्ञात होता है कि काव्य कला का भी समुचित विकास था । कुशललाभ के काव्यों मे उस युग की साहित्यिक परम्पराओ और मान्यताओ का सकेत मिलता है । गाथा, गीत, कथा व पहेली आदि का प्रचलन कदला के इस कथन से ज्ञात होता है

कामकदला इम कहइ, अजी अछइ बहु राति
गाहा गूढा गीयरस, कहइ को नवली वाति ॥ 260 ॥

कामकदला यह भी कहती है कि बुद्धिमान व्यक्ति गीत गाथा कहते और विनोद करते हुये समय व्यतीत करते हैं जबकि मूर्ख नींद या कलह मे समय बरबाद करते हैं ।[6]

विद्वान व्यक्ति को यश और आदर मिलता था । माधव को राजा कामसेन उसकी कला चतुराई से प्रसन्न होकर मुकुट के अलावा सभी शृंगार (आभूषण) दे देता है और देश विदेशो मे माधव का बहुत सम्मान होता है ।[7]

1 जोवइ इन्द्र सभा सुर मिली, नाचइ पात्र प्रेम पूतली
बाजइ बन्तो वीणि सरताल बत्नी सइ मिलि अपछर बाल ॥ 107 ॥
मोडइ अंग नइ तोडइ ताव, मनि संकर अपछर तत्काल ॥ 108 ॥

2 दोहा सख्या ॥ 105, 112

3. वार परवाजि वजावण हार, तिण्हि तिण्हि अेकण दिसि सार
पूरब साहमु ऊभउ सही डावउ तास अंगूठउ नही ॥ 183 ॥

4 सात स्वर पटराग विशाल मिलि छत्तीसइ रागिणी बाल
चउरासी श्रुति तणा प्रकार, ग्राम अठारह तणा विचार ॥ 145 ॥
मा. का चौ.

5. मारवणी मगता दिया मारू राग निपाइ ॥ 270 ॥
ढो. मा. चौ

6. गीत विनोद रस पंडित दीह लीहति
कइ निद्रा कइ कलह करि मूरख दीह गमति ॥ 263 ॥
मा. का, चौ.

7. मुगट टालि बीजउ सिणगार, दीधउ माधव नइ तिणिवार
चतुराइ विद्या परिमाणि देसि विदेसि हुय बहुमा‍न ॥ 187 ॥

धर्म

कुशललाभ के कथा-साहित्य मे हमे जैन धर्म का विस्तृत वर्णन मिलता है। प्रारम्भ से ही जैन लेखको का रचना करने का मुख्य उद्देश्य ही यही था कि सुन्दर कथाओ का आश्रय लेकर जैन धर्म को जनसाधारण तक पहुँचाया जाये। अतः इन कथाओ मे जैन सिद्धान्तो के प्रतिपादन के साथ-साथ दान, शील, तप के माहात्म्य का प्रमुख रूप से उल्लेख मिलता है।

माधवानल कामकदला एव ढोला मारवणी चौपई के पात्र हिन्दू पात्र है और वे हिन्दू-धर्म प्रवृत्ति से परिचालित हैं। इनमे धर्म का वाह्य रूप अधिक दिखाई देता है। साधारण लोग धार्मिक अन्ध-विश्वासो से जकडे हुए थे। तन्त्र-मन्त्र के अतिरिक्त पौराणिक अवतारो और देवी देवताओ के प्रति जनता की गहरी आस्था थी। पौराणिक अवतारो और देवी देवताओ मे विश्वास था।' 'माधवानल कामकदला चौपई' मे भगवान पुरोहित को स्वप्न मे पुत्र प्राप्त होने का वरदान देते हैं।[1] माधवानल कामकदला चौपई' मे महाकाल के मन्दिर का उल्लेख मिलता है।[2] इससे ज्ञात होता है कि जनता ही नही राजा लोग भी मन्दिरो मे पूजार्थ जाते थे। महाकाल के मन्दिर को देखने मात्र से दुःख और विषाद नष्ट हो जाता है इसीलिये राजा विक्रमादित्य प्रात काल ही देव की वन्दना हेतु आता है और वह महाकाल के शिव को प्रणाम कर परिक्रमा करता है [3]

महाकाल ईश्वर प्रसाद, दीठइ जायइ दुख विषाद
राजा देव जुहारण भणी सुप्रभाति आविउ पुर धणी ॥ 478 ॥

भारतीय नारी की भी भगवान के प्रति प्रारम्भ से ही दृढ आस्था रही है। कुमारिया अच्छे व मनवाछित वर प्राप्ति के लिए गौरी देवी की पूजा किया करती थी। मारवणी भी मन्दिर जाती है।[4] परन्तु कवि ने यह स्पष्ट नही किया है कि वह मन्दिर किस देवता का था, अवश्य ही शिव मन्दिर रहा होगा। 'भीमसेन राजहस चौपई, मे तो त्रिपुरा देवी को मनवाछित वर देने वाली कहा गया है।[5]

1 अेक राति प्रोहित दुखधरी सूतउ, सुहणइ आव्यउ हरि
सामलि प्रोहित सकरवास। हू तूठउ तुझ पूरउ आस ॥ 50 ॥
माधवानल कामकदला चौपई

2 दोहा संख्या 474

3 महाकाल हर प्रणमी करी, भमती दियइ फिरइ देहरी ॥ 479 ॥

4 सही समाणी साथि करि, मन्दिर कू मल्ह पन्त
ढोला मारवणी चौपई ॥ 228 ॥

5 इण अवसरि तिणि पुर आराम, तिण महि त्रिपुरा देवी ठाम
कत काजिजे सेवा करइ, ते कन्या वाछित वर वरइ ॥ 102 ॥
भीमसेन राजहस चौपई ग्रं. 1217

मनवाछित वर देने वाली देवी की पूजा और सेवा राजकुमारी मदन मजरी करती है[1] प्रतिमती राजकुमारी भी इद्र महोत्सव पर गोरी पूजा के लिये जाती है।[2] ऐसी ही एक देवी चक्रेश्वरी का नाम भी भीमसेन राजहस मे आया है। रूपमती कुमारी भी मनवांछित वर के लिए उस देवी की पूजा करती है और अपने भावी पति के चिह्न देवी से पूछती है।[3] आकाश वाणी से देवी सकेत करती है

जस मस्तकि रे कुसम वृष्टि अवर थकी
वर सन्ता रे देपइ ते वर पारपी ॥ 497॥

सामान्य जनता पूजा अर्चना के अतिरिक्त तीर्थाटन मे भी विश्वास करती थी। 'ढोला मारवणी चौपई' मे राजा नल पुत्र प्राप्ति के लिए पुष्कर यात्रा करता है -

इक परदेसी इम ऊचरइ जउ पुष्कर तणी जात्रपति करी
कुटुंब सहित पहुचउ तिणि थानि तौ सही हुवे पुत्र सन्तान ॥ 148 ॥

काव्यारम्भ मे सरस्वती वदना[4] से या शत्रुंजय तीर्थ यात्रा महत्व[5] तथा जिनेश्वर स्वामी की वंदना[6] से किया गया है। मूर्ति पूजा का उस समय महत्व था। मन्दिर जाना तो मूर्ति पूजा का द्योतक है ही साथ ही कवि ने बताया है कि जिन स्वामी की प्रतिमा की पूजा करने से इस जन्म मे तथा दूसरे जन्म मे भी सुख प्राप्त होता है।[7] इसमें कवि ने जन्म जन्मान्तर वाद और पूर्व भव के पाप पुण्यों में अटूट आस्था भी व्यक्त की है।[8]

1 दोहा संख्या 103 भीमसेन राजहंस चौपई प्र 1217
2 गउरी पूजिवा ते वनि गई नदी परइ तव सध्या थई ॥ 454 ॥
3 दोहा संख्या 494, 495
4. देवि सरसति देवि सरसति सुमति दातार
सकल सुरासर सामिनी सुणि माता सरसति
विनय करीनइ वीनवुं मुझ धउ अविरल मत्ति
ढोला मारवणी चौपई
5 श्री सित्तंजय गिरि सिखरि रिख यादव जिनराज
पहिलो प्रणम तासु पय जिम सीझइ सवि काज
भीमसेन राजहस चौपई प्र 1217
6 श्री सिद्धारथ कुल तिलक परम जिणे सरवीर
पाय जुगल प्रणमी करी, सोवन वर्ण सरीर
तेजसार रास प्र 26546।
7. प्रतिमा जिननी जिन परइ आराहइ एकत
इस भवि पर भवि सुख लहै, इम भाखई अरिहंत ॥ 3 ॥
8. तेजसार पूछै प्रभु पासि प्रभु मुझ पूरवभव परकासि
कहइ केवली सामलो भूप, पूरव भव वाइहूँ सरूप ॥ 372 ॥

कर्म तणी गति अति कठिन मर्न चीतवै कुमार
किहा राज रिद्धिपुर नयर, किहा अटवी कतार ॥ 76 ॥
जिण अवसर जेणइ समइ जीवकमायु जेह
तिणि तिणि वेला ते लहै सुख दुख नही सन्देह ॥ 77 ॥

जैन मुनि स्वय तो वीतराग होते ही हैं अतः ससार की नश्वरता और क्षणिकता का बोध कराते हुये अपने श्रावको को भी वीतराग होने का उपदेश देते है। 'तेजसार रास' मे राजकुमार तेजसार मुनि सुव्रत स्वामी से दीक्षा लेते है।[1] 'भीमसेन राजहस चौपई' मे भीमसेन तथा राजहंस रिषि श्रीराम से दीक्षा ग्रहण करते हैं।[2] शुद्ध ध्यान, सयम, निर्मल मर्न शुद्ध भाव, दान, शील तप, दया आदि का महत्व ही इन कथाओ मे मुख्य रहा है।[3]

दर्शन

कुशललाभ का समस्त कथा-साहित्य लौकिक प्रेम से सम्वद्ध ईश्वर की प्रार्थना से प्रारम्भ होता है। मगलाचारण मे निराकार ब्रह्म की आराधना मिलती है। सरस्वती ब्रह्मा शिव देवी जिनेश्वर आदि की बन्दनायें जैन और सनातन धर्म के सामजस्य की प्रतीक हैं। इन कथाओ मे धार्मिक सहिष्णुता का भारतीय दृष्टिकोण लक्षित होता है।

इन कथाओ मे सूफियो की तरह कट्टर एकेश्वरवाद या अद्वैतवाद नहीं मिलता उन्होने सभी देवीदेवताओ की आराधना साकार निराकार दोनो रूपों में की है

देवि सरसति देवि सरसति सुमति दातार
कास मीर मुख मडणी ब्रह्म पुत्रिकरिवीण सोहइ
मोहण तरुवर मजरी मुख मयक त्रिहु भुवन मोहइ
पय पंकय प्रणमि करी आणी मनि आणंद
सरस चरित शृगार रस पभिणि सिउ परमाणंद ॥ 1 ॥

1 जिनवर वाणी सुणी गिसाल प्रतिबूधउ तत रिगण भूपाल
जाण्यो एह अथिर संसारि अति दुरलभ मानव अवतार ॥ 398 ॥
श्री मुनि सुव्रत स्वामी पासि चारित्र लीधउ उल्हासि
छठ छठ तप करइ पारणउं सुखि पालइ संयम आपणु ॥ 401 ॥

2 रिषि श्रीराम अंत निजल ही साथ ही भीमसेन रिषि सही
सिद्धाचलइ संथारव करी शुद्ध भावि पामी सिवपुरी ॥ 603 ॥
आठ कर्म सपूरउ करी निर्मल भाव आप मनि धरी
सिद्धशिला प्रभु उत्तम ठामर्ना राजहस पाम्यउ निर्वाण ॥ 61९ ॥
भीमसेन राजहंस चौपई प्रे -1217.

3. दोहा संख्या 574 से 618 तक

परन्तु इसका अर्थ यह नही कि ये कथा काव्य अध्यात्मक पक्ष से सर्वथा शून्य हो। इन आख्यानो मे कर्म और भाग्य को प्रधान माना गया है, जो भारतीय धार्मिक दृष्टिकोण का एक प्रधान अग है। प्रारब्ध पर विश्वास और ईश्वर पर आस्था दोनो ही इन काव्यो मे एक रूप मे देखने को मिलते हैं। यही विश्वास आगे चलकर संसार की अस्थिरता और क्षणिकता के विश्वास मे परिणत हो जाता है

जाण्यो एह अथिर संसारि अति दुर्लभ मानव अवतार ॥ 398 ॥
'तेजसार रास'

कथा के अत मे इनका आध्यात्मिक पक्ष महात्म्य वर्णन मे निखरा है

श्री गुरु मुखि जेणी परि सुण्यउ तिणि परिएह चारितमइ भण्यइ
गुण भणइ गुणइ श्रवणे सांमलइ तेहना सहू मनोरथ फलइ ॥ 623 ॥
भीमसेन राजहंस चौपई

कुशललाभ के समस्त कथा काव्यो मे इसी बात की ओर सकेत किया गया है, कि इनके पढने सुनने वालो को मनोवांछित सुखो की प्राप्ति होती है।

इसके अतिरिक्त इन कथाओ मे सुनने वाले को मन्त्र, भूत प्रेत, शक्ति, सिकोतरी व्यतरी तथा अन्य कई सिद्धियो भी प्राप्त होती हैं।

'ढोला मारवणी चौपई' मे योगी योगिनं अभिमंत्रित जल से ही मारू को जीवित करते हैं

पाणी पयउ गुणनइ मत्र वली अनेरा कीया तन्त्र
मारवणी तिहा साजी थई जोगिणि मनि हरषि गहगही ॥ 595 ॥

'माधवानल कामकदला चौपई' मे वेताल पाताल लोक से अमृत लाकर नायक नायिका को जीवित करता है।[1]

'तेजसार रास' में तो मन्त्र तन्त्र जनित विद्याओ का अनेक वार उल्लेख हुआ है। राक्षस तेजसार को दो विद्या सिखाता है

मन्त्र भणी नइ बाधइ मू ठि प्राण करी मूंकसी जस पूठि ॥ 51 ॥
वीजीवली कटक थमिणी मन्त्र सकति न सकइ हो हणी ॥ 52 ॥

इस प्रकार कवि कुशललाभ अपने समस्त कथा काव्यो में समाज व सस्कृति का सजीव एवं वास्तविक चित्रण प्रस्तुत करने मे पूर्णतः सफल हुये हैं।

1 पातालइ पहुतउ वेताल, आण्यउ अमृतरस असराल
लेई माधव नइ मुखि दीयउ तिसइ विप्र माधव जीवीयउ ॥ 598 ॥
माधवानल कामकंदला चौपई

अष्ठम अध्याय

कथानक रूढ़ियाँ

कथानक-रूढि

अनुकरण मानव की प्रवृति है। विभिन्न कथा-कहानियो मे बार-बार प्रयुक्त होने वाली एक जैसी घटनाओं एव विचारो की, जो लोक को रुचिकर लगते हैं, एक परम्परा चल पडती है। साहित्य एव समाज मे प्रयोग की यह प्रचुरता एव अनुकरण की प्रवृत्ति विभिन्न रूढियो की जनक बन जाती है। साहित्य मे भी पूर्व परम्परा का पालन एवं घटना का निर्वाह होता है जिन्हे रूढि या अभिप्राय कहा जाता है।

कथानक रूढियाँ कथा से सम्बन्ध रखने वाली रूढियाँ हैं, जिनका घटना संयोजन मे अधिक हाथ रहता है। कथा के सुयोजन के लिये कृतिकार जहाँ अपने विवरण आदि से सतुष्ट नही होता, वहाँ वह कथानक मे विभिन्न प्रकार की रूढियो का प्रयोग कर देता है, जिससे कथा प्रवाह तो अक्षुण्ण रहता ही है, साथ ही कृतिकार का कार्य भी सरल हो जाता है। अत इसमे यह सभावना भले ही रहे कि इन कथानक रूढियों की बौद्धिक व्याख्या समझ मे न आये, किन्तु पाठक साहित्यिक सौन्दर्य की सर्जना एव प्रभावोत्पादकता से प्रभावित हुये बिना नही रह पाते। इसी कारण इनकी नियोजना हर प्रकार के साहित्य मे पाई जाती है, विशेष रूप से लोकोन्मुखी साहित्य मे।

इन कथानक विशिष्ट्यो के लिये पाश्चात्य साहित्य मे 'मोटिफ' शब्द प्रयुक्त हुआ है। हिन्दी मे इसके लिये कथा-परिधान, मूल अभिप्राय, रूढ-तत्व, प्रयुक्ति, प्ररूढि आदि सज्ञाये कतिपय विद्वानो ने दी है। नवीनता प्रेमियो द्वारा प्रतीक, प्रयोजना, उपलक्षणा आदि साकेतिक शब्द भी कथानक रूढि के स्थानापन्न रूप मे प्रयुक्त हुये हैं।[1] किन्तु 'मोटिफ' शब्द के अनुकूल अर्थ का प्रकाश न करने के कारण ये शब्द अधिक प्रचलित नहीं हुये हैं।

1 डा० नामवरसिंह साहित्य के विकास मे अपभ्रश का योगदान-पृ० 313

हिन्दी मे 'कथानक-रूढि' शब्द अंग्रेजी के 'फिक्शन-मोटिफ' का पर्याय होकर आया है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपनी पुस्तक 'हिन्दी साहित्य का आदिकाल' मे ऐतिहासिक चरित काव्यो पर विचार करते हुये लिखा है 'ऐतिहासिक चरित का लेखक सभावनाओ पर अधिक बल देता है। सभावनाओ पर बल देने का परिणाम यह हुआ कि हमारे देश के साहित्य मे कथानक को गति और घुमाव देने के लिये कुछ ऐसे अभिप्राय दीर्घकाल से व्यवहृत होते आ रहे हैं, जो बहुत थोडी दूर तक यथार्थ होते हैं और जो आगे चलकर कथानक-रूढि मे बदल गये हैं।[1] इसी प्रसग मे द्विवेदी जी ने सर्वप्रथम विद्वानो का ध्यान भारतीय कथानकों की कतिपय अत्यन्त प्रचलित रूढियो की ओर आकृष्ट किया है।

'शिप्ले' के शब्दो मे 'अभिप्राय छोटे से छोटा और पहचान मे न आने वाला वह तत्व होता है जिसके उपयोग से अपने आप मे एक कहानी तैयार हो जाती है'।[2] भारतीय कथानको मे विद्यमान ऐसे अभिप्रायो पर वे आगे लिखते हैं कि भारतीय कथाओ मे ऐसे अनेक लघु-कथा व्यंजक प्रतीको के प्रयोग हुये हैं। कथाओ मे प्रयुक्त होने वाले इन प्रतीको को कथात्मक 'मोटिफ' अभिप्राय या कथानक रूढि कहा जाने लगा है। धीरे-धीरे कथाओ मे ऐसे अनेक सजातीय कथात्मक प्रतीको के संयोग से कथात्मक 'टाइप' बन जाते हैं।[3] कीथ के मतानुसार जिस प्रकार परम्परा प्राप्त अलौकिक विचारो ने अनेक काव्य सम्बन्धी अभिप्रायो को उत्पन्न किया, उसी प्रकार कथाओ मे इससे कुछ अधिक व्यापक विचारो की प्राय होने वाली आवृत्ति ने भारतीय काल्पनिक कहानियो मे अनेक अभिप्रायो को जन्म दिया है।[4] डा० धीरेन्द्र वर्मा एव उनके सहयोगियो का विचार है कि प्रत्येक देश के साहित्य मे भी अनुकरण तथा अत्यधिक प्रयोग के कारण कुछ साहित्य-सम्बन्धी रूढियाँ बन जाती हैं और यान्त्रिक ढग से उनका प्रयोग साहित्य मे होने लगता है। इन सब रूढियो को साहित्यिक-अभिप्राय कहते हैं।[5]

लोक साहित्य के अनन्य शोधक डा० सत्येन्द्र ने रूढि की व्याख्या इस प्रकार की है 'रूढि और अभिप्राय शब्द का प्रयोग एक दूसरे के पर्याय के रूप मे किया जाता है। अभिप्राय जिसे अंग्रेजी मे 'मोटिफ' कहते हैं, उस शब्द अथवा एक ही ढाचे मे ढले हुये उस विचार को कहते है जो समान परिस्थितियो मे अथवा समान मन स्थिति मे और प्रभाव उत्पन्न करने के लिये किसी एक कृति अथवा एक ही

1. डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी हिन्दी साहित्य का आदिकाल, बिहार राष्ट्र भाषा परिषद्, पटना 1952 ई० पृ० 74
2. शिप्ले ' डिक्शनरी आफ वर्ल्ड लिट्रेचर पृष्ठ 247
3. डिक्शनरी ऑफ वर्ल्ड लिट्रेचर पृ० 248
4. ए हिस्ट्री ऑफ सस्कृत लिट्रेचर पृ० 343 आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1948
5. हिन्दी साहित्य कोष भाग 16 पृष्ठ 186

जाति की विभिन्न कृतियो मे वारम्वार आता है ।[1] इस प्रकार किसी अभिजात अथवा लोक साहित्य की कृति मे कथा अथवा कथा का बोध कराने वाला अभिव्यजक तत्व 'कथानक-रूढि' कहलाता है ।[2]

साहित्य के क्षेत्र मे अनुकरण तथा अत्यधिक प्रयोग के कारण जो रूढियाँ प्रचलित हो जाती हैं और यात्रिक ढग से जिनका प्रयोग होने लगता है, उन्हे प्राय: 'साहित्यिक अभिप्राय' के नाम से जाना जाता है ।

सस्कृत कवियो द्वारा ग्रहण की गई जिन रूढियो को 'कवि-समय' कहा गया है वे वस्तुत भारतीय साहित्य की काव्य रूढियाँ ही हैं । कीथ ने सस्कृत साहित्य मे कवि शिक्षा पर विचार करते हुये भारतीय साहित्य में प्रचलित 'कवि-समय' के लिये मौटिफ शब्द का ही प्रयोग किया है । इसी प्रकार मूर्ति, चित्र और सगीत कलाओ की भी अपनी विभिन्न रूढियाँ होती है और इनमे वरावर इनका उपयोग होता रहता है । लोक कथाओ मे रेखाकन और रूपावतरण की विभिन्न पद्धतियाँ प्रचलित होती हैं, जिनकी पुनरावृत्ति अथवा जिनके सस्करण द्वारा उक्त कथाओ मे नूतन शैलियो का विकास होता रहता है । इन पद्धतियो को कथा-रूढि की सज्ञा दी जा सकती है । इस प्रकार लोक-सगीत और लोक-गीतो की भी अपनी स्वतन्त्र रूढियाँ अथवा परम्परागत विशिष्ट प्रणालियाँ होती हैं । रूढियो का सर्वाधिक प्रचलन लौकिक कथा कहानियो के क्षेत्र मे हुआ है और इस रूप मे इन्होने विद्वानो का ध्यान वहुत अधिक मात्रा मे आकृष्ट किया है ।[3]

किसी देश की साहित्यिक रूढियो के अध्ययन के लिये उस देश के साहित्य मे प्रचलित साहित्य सम्वन्धी अभिप्रायो का अध्ययन आवश्यक होता है । सामान्यत साहित्यिक अभिप्राय और साहित्य-रूढि शब्द का प्रयोग एक दूसरे के पर्याय के रूप मे ही किया जाता है ।

कथानक रूढियो का उद्भव सभावना को लेकर हुआ है । शुक मानव वाणी का अनुकरण कर सकता है । इसी सभावना को लेकर काव्य मे उसे 'सकलशास्त्र विलक्षण' ही वना दिया है । कालान्तर मे इसे अन्य सर्जको ने भी स्वीकार किया और यह पुनरावृत्ति कथानक रूढि वन गई ।

कथानक रूढियो का काव्य मे समुचित प्रयोग न होने पर इनसे अहित की सम्भावना रहती है । अलकार काव्य की सुषमा है किन्तु जिस प्रकार उसके कृत्रिम प्रयास से काव्य के प्रेत वन जाने का भय होता है, उसी प्रकार कथानक-रूढियो का अलकृति मात्र के लिये प्रयोग काव्य प्रयोजन मे साधक की अपेक्षा वाधक वन जाता है ।

1. लोक साहित्य विज्ञान डा० सत्येन्द्र पृ० 71
2. लोक कथाओं की कुछ प्ररूढियाँ (डा० कन्हैया लाल सहल की पुस्तक की भूमिका) पृ० 9
3. स्टैण्डर्ड डिक्शनरी ऑफ फोक-लोर, न्यूयार्क 1949 वाल्यूम 2, मोटिफ, पृ० 753

भारतीय कथा साहित्य को लेकर इन कथानक रूढ़ियों के वैज्ञानिक अध्ययन का सूत्रपात प्रख्यात् प्राच्य विद्या विशारद् जर्मन मनीषी बेनिफी एवं वेबर तथा विन्टर नित्स आदि ने किया। इस क्षेत्र में विशेष रूप से अध्ययन एवं अन्वेषण करने वालों में मॉरिस ब्लूम फील्ड, पेंजर, टॉनी जैकोबी तथा डब्लू. नॉरमन ब्राउन आदि उल्लेखनीय विद्वान रहे हैं। कथानक रूढ़ियों के प्रचुर प्रयोग की बात भारतीय साहित्य तक ही सीमित नहीं है, अपितु फारसी यूनानी एवं अन्य पाश्चात्य देशों के साहित्य में भी ये प्राप्य है। श्री ए. वी कीथ ने भारतीय एवं यूनानी प्रेमाख्यानों में समान रूप से उपलब्ध ऐसी अनेक कथानक रूढ़ियों की ओर संकेत किया है। हिन्दी में भी इस ओर काफी प्रगति हो चुकी है।

कथा सम्बन्धी अभिप्रायों को डा० ब्रजविलास श्रीवास्तव ने दो कोटियाँ बताई हैं।[1] कुछ अभिप्राय प्रायः किसी न किसी ऐसे लोक-विश्वास तथा धारणा पर आधारित होते हैं, जिन्हें वैज्ञानिक दृष्टि से यथार्थ नहीं कहा जा सकता। कवि समयों की तरह वे भी अलौकिक होते हैं और परम्परा प्राप्त होते हैं। 'परकाय प्रवेश' लिंग परिवर्तन 'सत्यक्रिया' किसी बाह्य वस्तु में प्राण का बसना' आदि ऐसे ही अभिप्राय हैं। इनका उपयोग मुख्यरूप से लोक कथाओं में होता है और साहित्य में जहाँ कहीं भी इनका उपयोग हुआ है, लोक कथाओं के प्रभाव के कारण ही हुआ है।

इनके अतिरिक्त कुछ अभिप्राय ऐसे भी होते हैं जिन्हे बिल्कुल असत्य तो नहीं कहा जा सकता किन्तु वास्तविकता की दृष्टि से उन्हें बिल्कुल सच्चा भी नहीं कहा जा सकता। हाँ, यथार्थ से इनका सम्बन्ध कुछ न कुछ अवश्य रहता है। 'किसी विशाल पक्षी की पूंछ पर बैठकर यात्रा करना', देवदूत, श्वेतकेश, स्वप्न में भावी नायिका का दर्शन, समुद्र यात्रा के समय जलपोत का टूटना या डूबना और काष्ठ-फलक के सहारे नायक नायिका की जीवन रक्षा, उजाड़ नगर का मिलना, आदि ऐसे ही अभिप्राय हैं। इस प्रकार के अभिप्राय मुख्य रूप में कवि कल्पित होते हैं। अनुकरण तथा अत्यधिक प्रयोग के कारण ही वे रूढ़ि बन जाते हैं। इन अभिप्रायों के आधार पर हमे ज्ञात होता है कि हिन्दी के मध्यकालीन प्रेमाख्यानक काव्यों की कथायें न तो अरब, फारस तुर्किस्तान आदि इस्लामी देशों में प्रचलित सूफी प्रेमाख्यानों का अनुकरण हैं और न तत्कालीन लोक प्रचलित कथाओं का साहित्यिक रूपान्तर। वे भारतीय शिष्ट कथा साहित्य की जीवन परम्परा की देन है और भारतीय साहित्य के परम्परागत अभिप्रायों को ही लेकर उनकी कथावस्तु का निर्माण किया गया है, यही कारण है कि सूफी और हिन्दू प्रेमाख्यानक काव्यों में उद्देश्यगत् और साम्प्रदायिक भेद होते हुये भी उनकी कथावस्तु का रूपाकार बिल्कुल समान है। रोमांचक कथा प्रबन्धों के रूढ़ अभिप्रायों को समान रूप से कथा-संगठन का

1 मध्यकालीन हिन्दी प्रबन्ध काव्यों में कथानक रूढ़ियाँ · ले ब्रजविलास श्रीवास्तव—पृ० 3, प्रथम संस्करण 1968

आधार बनाने के कारण इस प्रकार की एक रूपता का आ जाना स्वाभाविक ही है।

डा० व्रज बिलास श्रीवास्तव ने 'मध्यकालीन हिन्दी प्रबन्ध काव्यो मे कथानक रूढियाँ' मे मुख्य रूप से कथानक रूढियो को दो भागो मे विभाजित किया है

1. (क) प्रेम मूलक अभिप्राय
   (ख) रोमाचक अभिप्राय
2. लोकाश्रित अभिप्राय ।[1]

डा कन्हैयालाल सहल ने भी कथानक रूढियों का बडा ही सारगर्भित विवेचन किया है ।[2]

शिष्ट कोटि के साहित्य में मिलने वाली कथानक रूढियां मूलतः लोक साहित्य और मुख्यत' लोक कथाओ की देन है। ऐसी रूढियाँ कम ही मिलेगी जिनका परम्परा से प्रचलित लोक-कथाओ से कोई सम्बन्ध न हो। कथानक रूढियो के आदि स्रोत के रूप मे कथानको का मूलाधार प्रचलित लोक कथा होती है।

डा सत्येन्द्र[3] के शब्दो मे इन लोक कथाओ का आधार लोक-मानस होता है। इनमे हमारी आदिम मनोवृत्तियां, आस्था और विश्वास वंशानुक्रम से संचरित होती रहती हैं। इस प्रकार ये हमारे सास्कृतिक इतिहास, आदिम मानव की मनोवृत्तियां उनकी आस्थाओ और विश्वासों रीति-रिवाजो और सामाजिक सस्थाओ के अध्ययन की दृष्टि से वडी महत्वपूर्ण होती हैं। लोक साहित्य के सुप्रसिद्ध पाश्चात्य विद्वान स्टिथ थामसन ने लोककथाओ की महत्ता को व्यक्त करते हुये उन्हे मानव जाति के सास्कृतिक इतिहास का महत्वपूर्ण भाग वतलाया है।[4]

इन लोककथाओ के क्षितिज का विस्तार भी वहुत व्यापक होता है। देश, काल के अनुरूप वातावरण एव मानसिक स्थितियो की भिन्नता के फलस्वरूप एक ही लोककथा के अनेक रूपान्तर हो जाते हैं। इस दृष्टि से 'भारतीय लोक-कथाओ का अपना विशेष महत्व है। उनकी प्रवृत्तियों के सम्बन्ध में यह वात प्रसिद्ध है कि

1. मध्यकालीन हिन्दी प्रबन्ध काव्यो में कथानक रूढियाँ—पृ० 111
2 देखिये लोककथाओ की कुछ प्ररूढियाँ
3 लोक साहित्य का विज्ञान डा० सत्येन्द्र पृ० 71
4 "The Folk tale is an important part of the cultural history of the race The anthropologist and all students of human institution should be able to use the growing mass of life histories of various tales to clarify their own findings. The number of the stories which they understand thoroughly, the Clearer and more accurate becomes, their view of the entire intellectual and aesthetic life of man."

The Folk tale—By Stith Thomson Pg. 448

उनके प्रमुख लक्षणो की पुनरावृत्ति प्राय अन्य कथाओं मे होती रहती है। यह एक वास्तविकता है। पंजाब, बंगाल, बिहार, राजस्थान, महाराष्ट्र अथवा मालवा आदि स्थानो मे अनेक कथायें एक दूसरे से वस्तु पात्र-चित्रण और शैली मे समान होती हैं।"[1]

लोक-कथाओ की लोकप्रियता, उनकी जीवन शक्ति, जनमानस को सहज रूप से आकर्षित करने की शक्ति एव व्यापकता को ध्यान मे रखकर ही राजस्थानी कथाकारो ने अपने कथानको का आधार लोक-कथाओ को बनाया। कथानकों के आदि स्रोत के रूप मे नाना प्रकार के लोकाचारो, लौकिक विश्वासो और लोक चिन्ता द्वारा उत्पन्न आश्चर्य जनक कल्पनाओ को भी स्वीकार किया जा सकता है। इन सबका उपयोग लौकिक एव निजन्धरी कथा कहानियो मे बराबर होता रहा है और फिर लोक साहित्य मे अनेक बार प्रयुक्त एव रूढ होकर यही विश्वास एवं कल्पना के अभिजात साहित्य तक पहुँचा हैं और यहाँ आकर निश्चित प्रकार की कथानक रूढियो के रूप मे परिवर्तित हो गया है। लोकाचारो, लोक-विश्वासो और लोक-कथाओं से ग्रहण की जाने वाली रूढियो के अतिरिक्त भारतीय कथानको मे कुछ रूढियाँ कवि-कल्पित भी मिलती हैं।

तात्पर्य यह है कि, "प्रत्येक देश के साहित्य मे अनुकरण तथा अत्यधिक प्रयोग के कारण कुछ साहित्य सम्बन्धी रूढियाँ बन जाती हैं और यान्त्रिक ढंग से उनका प्रयोग साहित्य मे होने लगता है, इन सभी रूढ़ियो को साहित्यिक-अभिप्राय कहते हैं।"[2]

कथानक शिल्प के तत्वो के साथ ही कुशललाभ के कथा-साहित्य मे कथा-विकास मे प्रयुक्त कथानक-रूढियो का भी विशिष्ट महत्व है। कवि के कथा-गठन मे परम्परागत काव्य रूढियो का गुम्फन वैशिष्ट्य अत्यन्त ही सार्थक है। कथानक को गति प्रदान करने एव एक निश्चित दिशा की ओर अग्रसर करने के लिये कवि ने परम्परागत कथानक रूढियो का आश्रय लिया है। कथा के वर्णन तथा गठन शिल्प की दृष्टि से इन कथानक रूढ़ियो का अत्यधिक महत्व है। ये कथानक रूढियाँ भारतीय काव्य की परम्परागत निधि है। ये रूढियाँ कथानक मे वांछित विकास, विस्तार तथा मोड़ देने सर्वत्र सहायक सिद्ध हुई है।

ढोला मारू की कथानक रूढ़ियाँ

1. स्वप्न दर्शन जन्य प्रेमासक्ति

अपरिचित और अपूर्व दृष्ट नायक नायिका को स्वप्न या चित्र मे देखकर नायक या नायिका के मन में प्रेम का उदय भारतीय कथाओ का एक अत्यन्त प्रचलित

1. भारतीय लोक साहित्य, डा श्याम परमार : पृ. 167
2. हिन्दी साहित्य कोश, भाग 16 : 186

अभिप्राय है। भारतीय साहित्य मे नायक-नायिका के पूर्वानुराग को बहुत महत्व दिया गया है। अत प्रत्यक्ष मिलन के पूर्व ही प्रेमियो मे अनुराग उत्पन्न कराने के लिये कथाकारो ने स्वप्न या चित्र दर्शन जन्य प्रेम के अभिप्राय का सहारा लिया है। यथार्थ मे देखा जाये तो स्वप्न-दर्शन-जन्य-प्रेम कुछ अजीब सा लगता है। स्वप्न मे देखे गये नायक नायिका की वास्तविक उपस्थिति पूर्ण यथार्थ नही है। जिसको पहले कभी देखा ही नही उसके लिये इस बोध के पूर्व ही प्रेमोन्माद की स्थिति असभव सी प्रतीत होती है।

मध्यकालीन हिन्दी प्रेमाख्यानो मे अधिकाश नायक नायिका का पहले प्रत्यक्ष मिलन हुआ, फिर स्वप्न दर्शन या चित्र दर्शन-प्रेम और विरह-जन्य उन्माद का भी विस्तृत वर्णन हुआ है। उदाहरण के लिये नूरमुहम्मद की इन्द्रावती, पुहुकर कृत रस रतन, कासिमसाह दरियावादी कृत हंस जवाहर, मुरलीदास कृत उषा चरित और जीवन लाल नागर के उषाहरण को लिया जा सकता है। इन्द्रावती मे नायक कुमार को स्वप्न मे एक उज्जवल दर्पण दिखाई देता है। उस दर्पण मे चन्द्रमा से भी अधिक उज्जवल एक सुन्दरी को वह देखता है

एक रात मह कुवर सरेखा। सपन बीच दर्पण एक देखा।

× × × × ×

दर्पण मो एक सुन्दर नारी। देखेहु चन्द हुते उजियारी ॥ 3 ॥

बुद्धिमान मन्त्रियो द्वारा स्वप्न की अविश्वसनीयता का उपदेश दिये जाने पर भी उसके इस उन्माद मे कोई कमी नही होती। यही स्वप्न दर्शित-कन्या बाद मे वास्तविक राजकुमारी सिद्ध होती है और उसके देश नाम आदि का पता राजकुंवर को एक सिद्ध योगी द्वारा मालूम होता है।[1] काव्य रस रतन मे स्वप्न मे ही नायक और नायिका को एक दूसरे के नाम, वेश, देश आदि का ज्ञान भी करा दिया है।[2] रस रतन मे वर्णित स्वप्न दर्शन जन्य प्रेम की विशेषता यह है कि इसमे कामदेव और रीति नायक सूरसेन और नायिका रभावती का रूप धारण कर स्वप्न मे उनके सम्मुख उपस्थित होकर एक दूसरे के हृदय मे प्रेम उत्पन्न करते हैं।

उषा की कथा, उषा हरण और उषा चरित मे भी उषा अनिरुद्ध को स्वप्न मे देखती है और विरह व्याकुल हो जाती है। यहाँ पार्वती के वरदान के कारण[3] उषा को अनिरुद्ध की वास्तविक स्थिति का निश्चय तो रहता ही है साथ ही यह भी विश्वास रहता है कि यही व्यक्ति उसका पति होगा। अत प्रत्यक्ष मिलन के पूर्व ही

1. इन्द्रावती स्वप्न खण्ड, दो 14-38
2 रसरतन स्वप्न खड
3. पार्वती ने उषा को वरदान दिया था कि जिसे तुम स्वप्न में देखोगी वही तुम्हारा पति होगा।

उषा के मन में अनिरुद्ध के प्रति आकर्षण को अस्वाभाविक और अविश्वसनीय नहीं कहा जा सकता।

रोमानी कथाओं के लिये अत्यन्त उपयोगी यह अभिप्राय हिन्दी प्रेमाख्यानों की अपनी निजी देन नहीं है। संस्कृत कथा साहित्य में प्रारम्भ से ही इसका उपयोग होता आ रहा है और संस्कृत साहित्य में ही इसने कथानक रूढि का रूप ग्रहण कर लिया था। बाद में प्राकृत और हिन्दी कथा साहित्य में इसका अनेक कथाकारों ने उपयोग किया।

कुतूहलकृत प्राकृत ग्रंथ 'लीलावई कहा' में चित्रदर्शन और स्वप्न दर्शन दोनों का एक साथ प्रयोग है। लीलावती 'सातवाहन हाल' को पहले चित्र में देखती है और चित्र में देखकर वह उससे प्रेम भी करने लगती है किन्तु विरह की भयकर व्यथा उसे 'हाल' से स्वप्न में मिलने के बाद ही होती है।[1] यही इस अभिप्राय की विशिष्टता है। कुतूहल ने लीलावती और हाल के स्वप्न मिलन का बहुत ही शृंगारिक वर्णन किया है। अपनी सखी विचित्र लेखा के आग्रह पर लीलावती उस स्वप्न मिलन का वर्णन करती है।[2] लीलावती का स्वप्न दर्शन अन्य उदाहरणों से भिन्न है। यहाँ स्वप्न के लिये न तो कोई अलौकिक और चमत्कारिक आधार ग्रहण किया गया है, न स्वप्न की यथार्थता के विश्वास को ही आधार बनाया गया है। चित्र में सातवाहन को देखने और प्रेम विभोर होने पर, चित्रकार द्वारा उसका परिचय पाने के बाद उसी की स्मृति में लीन रहने के कारण वह उसे स्वप्न में देखती है। चित्र दर्शन की योजना के कारण नायिका का स्वप्न दर्शन मनोवैज्ञानिक दृष्टि से स्वाभाविक और यथार्थ है।

वासवदत्ता में भी इसी प्रकार नायक और नायिका दोनो एक दूसरे को स्वप्न में देखते हैं और परस्पर आकृष्ट होते हैं। नायक कन्दर्प केतु के स्वप्न का वर्णन करते हुये सुबन्धु ने स्वप्न कन्या वासवदत्ता के रूप सौन्दर्य का बहुत ही काव्यात्मक और अलंकारिक चित्रण किया है।[3]

मुल्ला जामीनुद्दीन अब्दुर रहमान रचित यूसुफ जुलेखा की कथा को आधार बनाकर लिखे गये संस्कृत काव्य कथा कौतुक में भी इसी प्रकार अदृष्टा और अज्ञात कुल नायक को नायिका जुलेखा स्वयं आश्चर्य चकित है कि अज्ञात देश के प्रिय को उसने स्वप्न में कैसे देखा और नाम से भी अपरिचित व्यक्ति को ढूंढेगी कहां ?

अज्ञातवसतिं कान्तं स्वप्ने कस्माद्विलोकितम्।
अव्यक्त नामधेयं तं कथमन्वेषयाम्यहम्॥ 2/69॥

1. लीलावई कहा, 828-855
2 „ „ 848-54
3. वासवदत्ता पृ. 56-79

स्वप्न जन्य अभिप्राय भारतीय व फारसी कथा साहित्य मे ही नही पाश्चात्य कथा साहित्य मे भी कथाकारो द्वारा प्रयुक्त हुआ है। 'रोमान्स ऑफ आर्ट्स ढेले ब्रेटेन'[1] मे नायक आर्थर एक सुन्दरी को स्वप्न मे देखता है और उसके प्रेम मे व्याकुल हो जाता है। टेम्पल् का 'लिजेण्ड्स ऑफ द पंजाब'[2] मे राजकुमारी 'अधिक अनूप और जालालि' की कथा को देखा जा सकता है। कन्याओ के स्वप्न पुरुषो के प्रति आकर्षण और प्रेम का अभिप्राय फ्रीयर 'ओल्ड डेकन डेज'[3] तथा स्विनर्टन द्वारा संगृहीत 'इन्डियन नाइट्स इन्टरटेनमेंट' मे अपने शुद्ध और चमत्कारिक रूप मे प्रयुक्त हुआ है। 'इन्डियन नाइट्स इन्टरटेनमेंट' मे वासवदत्ता की तरह ही नायक नायिका दोनो एक दूसरे को स्वप्न मे देखते और प्रेम करने लगते हैं।

कुशललाभ कृत 'ढोला मारवणी चौपई' में भी मारवणी के हृदय मे ढोला के प्रति प्रेम उसे स्वप्न में देख लेने के बाद हुआ। सौदागर से सुनने के बाद ही मारवणी को स्वप्न मे ढोला दिखाई देता है तभी उसे विरह व्याप्त होता है जो कि स्वाभाविक व मनोवैज्ञानिक है। स्वप्न से जागते ही मारवणी प्रेमासक्त होकर ढोला के विरह से सन्तप्त हो निश्वासें भरने लगती है

साल्ह कुंवर सुपनऊं मिल्यउ, जागि निसासउ खाय।

व्यापक दृष्टि से विचार करने पर 'भावी-प्रिय अथवा प्रिया का स्वप्न मे दर्शन और आकर्षण' भविष्य सूचक स्वप्न के अभिप्राय के अन्तर्गत ही आता है। भारतीय कथाकार कथा मे चमत्कार या कुतूहल उत्पन्न करने के लिये अथवा गत्यावरोध को दूर करने के लिये, जटिल स्थितियो को सुलझाने तथा कथा को नई दिशा देने के लिए प्राय इस अभिप्राय का सहारा लेते रहे हैं।

2. प्रेम के अकुंरण मे सहायक सूत्र-शुक, कुरंजा, हस, सौदागर आदि

इस अभिप्राय का मूल तत्व रूप वर्णन करने वाले पात्र मे नही बल्कि उस वर्णन को सुनकर नायक नायिका के प्रेमाकुल और प्राप्ति के लिये दृढ सकल्प होने मे निहित है। प्रेम कथाओं मे नायक नायिका मे प्रेम उत्पन्न करने और कथा को प्रयत्न की अवस्था तक ले जाने के लिये ही यह अभिप्राय प्रयुक्त होता है, अत कथाकार किसी प्राणी द्वारा किसी सुन्दरी की या सुन्दर नायक की सूचना देकर प्राप्त करने-की प्रेरणा दे सकता है। इस अभिप्राय की विशेषता यही है कि नायक नायिका रूप, गुण, श्रवण मात्र से ही प्रेमोन्माद और विरह की उस मन स्थिति मे पहुँच जाते है जिसमे अपने प्रिय की खोज और उसे किसी प्रकार पाने का प्रयत्न आवश्यक हो जाता है।

1, History of Fress Fiction-L Dunlop Vol. 1, P 258
2 लिजेन्ड्स ऑफ दी पजाब टेम्पल
3. ओल्ड डेकनडेज—फ्रीयर पृ 219, 248-251

कथा सरित्सागर की कई कथाये इसी अभिप्राय से प्रारम्भ होती है। प्रायः किसी भिक्षु, भिक्षुणी या सन्यासिनी द्वारा किसी राजकुमारी या गन्धर्व कन्या के सौन्दर्य की प्रशसा सुनकर नरवाहनदत्त उसके प्रेम मे व्याकुल हो उठते हैं और उसे प्राप्त करने के लिए चल पडते हैं। जो कार्य पद्मावत आदि प्रेमाख्यानो में शुक या हस करता है, वही कार्य कथा सरित्सागर की अनेक कथाओ मे भिक्षुणी या सन्यासिनी करती है। किन्तु 'ढोला मारु री चौपई' मे यह कार्य कथाकार ने वड़े ही कौशल से घोडे के सौदागर से कराया है। सौदागर भी पक्षियो की तरह सर्वत्र गमन करते रहते हैं।

सौदागर का नरवर मे घोडे वेचकर पूगल आना और मारवणी के वारे मे जानकर ढोला के पुन विवाह के विषय मे रहस्योद्घाटन करना कथा मे नया मोड देता है। यह कार्य पद्मावत मे हीरामन शुक द्वारा सम्पन्न होता है, जवकि ढोला मारु मे इसके लिए सौदागर का प्रयोग हुआ है। शुक द्वारा परम्परारूढ़ तथ्य-सूचक के प्रसग का यह राजस्थानी रूपान्तर ही है जो स्थानीय जीवन-परिवेश के सदर्भ मे अधिक सजीव, स्वाभाविक और विश्वसनीय हो गया है। मध्ययुगीन राजस्थान मे घोड़ो के सौदागरो का एक राज्य से दूसरे राज्य मे घोड़े लिये घूमना और राजाओ के घनिष्ट सम्पर्क मे आकर उन्हे देश विदेश की खवरो से सूचित करना सामान्य जीवन—व्यापार था। ढोला मारु मे अन्य काव्यो के शुक अथवा भिक्षु-भिक्षुणी का प्रतिरूप सौदागर आता है[1] :

> घोड़ा नित फेरे परभात, मास पच सूदागर सधि.
> वहुत व हंतो पुगली अवियो, लेई मोल घराने वहयो ॥ 5 ॥

मारवणी को देख वह उसके वारे मे पूछता है और ढोला के दूसरे विवाह का रहस्योद्घाटन करता है[2] ·

> तणी घर छै मालवणी नार, अपछर तणे जाणे उणीहार
> ढोला की तणी रउ वहुप्रीत चतुर पणा लगी लागो चीत ॥ 13 ॥

यही नही वह ढोला की सुन्दरता, उदारता एवं दानशीलता का भी वर्णन करता है जिसे मारवणी छुपकर सुन लेती है जिसे सुनकर मारवणी का मन ईर्ष्या-जन्य अग्नि से दग्ध हो जाता है वह वासी चदन के समान हो गई और आहे भरने लगी। उसे पपीहे के पीउ-पीउ वोलने से प्रीतम का ध्यान आता है।

3 संदेश प्रेषण में सहायक सूत्र ढाढी, खवास, ब्राह्मण आदि

काव्यो मे प्राय. पक्षियो के द्वारा नायिका के सन्देश-प्रेषण की रूढि का प्रयोग

1 ढोला मारवणी चौपई ह ७
2 वही

मिलता है। उदाहरण के लिये नल दमयन्ती काव्य मे हंस नल के पास दमयन्ती का सन्देश ले जाता है। पद्मावत मे यह कार्य शास्त्रज्ञ शुक द्वारा सम्पन्न होता है। नायक-नायिका के प्रेम-व्यापारो मे सहायक और कथा के प्रमुख पात्र के रूप मे शुक का उपयोग मुख्यत. लोक कथाओ और लोकवार्ताओ का प्रचलित अभिप्राय है।

पक्षियो द्वारा सदेश भेजने का अभिप्राय तो मिस्र तथा ग्रीक के कथा-साहित्य मे भी मिलता है, किन्तु कथाओ मे विविध रूप मे पाये जाने वाले शुक-शुकी विशुद्ध भारतीय अभिप्राय है। पाश्चात्य कथा-साहित्य मे किसी पक्षी के शास्त्रज्ञ होने की धारणा को अभिव्यक्ति नही मिली है। पशु-पक्षियो की अपनी भाषा होती है और मनुष्य उस भाषा को समझ भी सकता है।[1]

परन्तु इस प्रकार का भी कथा-साहित्य उपलब्ध है जिसमे सदेश-प्रेषण का कार्य मनुष्यो द्वारा कराया जाता है। वह ब्राह्मण, नाई, ढाढी कोई भी हो सकता है। 'वीसलदेवरास' मे राजमती का सदेश लेजाने का कार्य ब्राह्मण करता है। 'सदेशरासक' मे इसके लिये एक पथचारी की सयोग-सिद्ध योजना की गई है, परन्तु अन्त मे नायक के अकस्मात् आगमन से उसकी आवश्यकता नही पड़ती। ढोला-मारू मे भी मारवणी का सदेश-प्रेषण के लिये पुरोहित को बुलाया जाता है। परन्तु मारवणी के मना करने पर पुरोहित को रोक कर माँगने वालो के द्वारा सदेश भेजने को पुगल राज तैयार हो जाते हैं

पछें प्रोहित राषीयो तेड्या मगणहार
जाणें भेदग गीतातणा वात करे सो विचार ॥ 74 ॥

मारवणी अपना सदेश ढोला तक पहुँचाने के लिये ढाढ़ियो से अनुग्रह करती है

मागण हाथ सदेसडो, लख ढोला पहुँचाय
जोवन हस्ती गुजीयो, तुं आकुश देनी आय ॥ 94 ॥

4 भावी सौत की चिन्ता

लोक-कथाओ मे और लोक-जीवन मे भी किसी एक व्यक्ति की दो पत्नियो के वीच वैर-भाव और उनके द्वारा उत्पन्न किये गये गृह-कलह की घटनायें यत्र-तत्र उपलब्ध हो जाती हैं। सौतिया डाह की यह भावना विमाता विद्रोह के दृश्य भी उपस्थित करती चलती है।

जायसी कृत 'पद्मावत' मे सपत्नियो के वीच विवाद और कलह के चित्र उपस्थित किये गये हैं। नागमती पहले तो भावी सौत की चिन्ता से संत्रस्त होकर

1- Birds and beasts have a language of their own which can sometimes be understood by human beings is a most natural and universal motif of folk tales. Ocean of the history Panzer P. 107

हीरामन शुक का वध करना चाहती है[1] और अन्त मे जब रत्नसेन पद्मावती से विवाह कर लेता है तो नागमती उससे झगड़ पड़ती है। जायसी ने सपत्नियों के बीच इस कलह और झगडे का वर्णन अत्यन्त सरस और शृंगारिक रूप मे किया है। आरम्भ मे नागमती और पद्मावती के मध्य रूप-रंग आदि की स्पर्धा से सम्बद्ध विवाद चलता है और फिर दोनों झगड पडती हैं।[2] इस सौत-संग्राम का अन्त रत्नसेन की मध्यस्थता द्वारा होता है। वह दोनो पत्नियो को एक साथ मिलकर रहने और सुख भोगने की सीख देता है।

ढोला-मारू मे मालवणी नागमती का प्रतिरूप है। नागमती के समान वह भी पूगल से आने वाले प्रत्येक सदेशवाहक को मार्ग मे ही मरवा डालती है। मालवणी की इस योजना का हेतु भी सौत का ही भय है, जो सत्य है, आशंका मात्र नही। क्योकि मालवणी जानती थी कि मारवणी ढोला की पूर्व विवाहिता पत्नी है.

पिंगल दिन प्रति पाठवें, ढोला नीरत न होय
मालवणी मारें तिहा, पिंगल पथिज कोय ॥ 59 ॥

परन्तु ढाढी किसी प्रकार मारवणी का सदेश ढोला तक पहुँचा देते हैं और ढोला भी मालवणी के द्वारा असख्य बाधा डाले जाने पर भी पूगल से मारवणी को ले जाता है। मालवणी मारवणी से झगड पडती है। कुशललाभ ने सपत्नियो के बीच के इस कलह का सजीव वर्णन किया है। आरम्भ मे मालवणी और मारवणी के मध्य मारवाड व मालवा प्रदेश की विशेषताओ और अभावो को लेकर विवाद चलता है।[1] मालवणी कहती है

बावा म देसई स मारूआ वली कुआरी रहेस
हाथ कचोलो, सिरि घडो, पाणी वहत मरेस ॥ 16 ॥

× × × ×

अति अवगुण मारु भुय तणा, मालवणी कहीआ अतिघणा
ढोलो वात सुणी गहि गहि, हसेनें मारवणी प्रते कहि ॥ 20 ॥

ढोला मालवणी से कहता है

सुणी सुंदरि कतो कहे मारु देस वषाण
मारवणी मल्या-पछे, जाण्या जन्म प्रमाण ॥ 26 ॥

5. सिद्धि मार्ग मे अवरोध

नायक-नायिका के सिद्धि मार्ग मे व्यवधान दिखाकर कथानक मे संघर्ष का सृजन किया जाता है जिससे लक्ष्य मे पात्रो की निष्ठा तो परिलक्षित होती ही है,

1. पद्मावत जायसी, नागमती-सुवा संवाद खंड 1
2. पद्मावत जायसी, नागमती-पद्मावती संवाद खंड 1
3. डो. मा. चौ. [illegible]

साथ ही कथानक मे पाठक का कौतूहल एव जिज्ञासा भी बढती है। प्रत्येक कथा साहित्य मे यह रूढि अवश्य मिल जाती है। पद्मावत मे रत्नसेन का समुद्र मे भटक जाना, वेलि मे शिशुपाल का कृष्ण रुकिमणी के परिणय मे रोडे अटकाना आदि ऐसी ही कथानक रूढ़ियाँ है।

ढोला मारू मे मालवणी का पूगल से आने वाले यात्रियो को मरवा डालना,[1] ढोला के पूगल प्रस्थान के समय ऊँट का लगड़ा हो जाना[2], पूगल के मार्ग मे ऊमर सूमरा के चारण द्वारा मारू के विषय मे ढोला को भ्रामक सूचना देना[3], पूगल से लौटते समय ऊमर सूमरा का षडयन्त्र[4] आदि अनेक विघ्न रूप कथा अभिप्राय प्रयुक्त हुये है।

इस कथा रूढि की विशेषता यह है कि नायक इन सभी बाधाओ से बच निकलता है।

6. सदेशवाहक पक्षी या पशु

लोक प्रचलित कथा-कहानियो मे पशु-पक्षी मनुष्य से बातचीत करते हैं; उसका सुख-दुख समझते हैं और यथा समय सहायता भी करते हैं। लोक मानस ने पशु-पक्षियो से एक स्नेह स्थापित किया है, जिसकी अभिव्यक्ति लोक-साहित्य मे पूर्ण रूप से हुई है। 'शकुन्तला मे कालिदास ने मृग-शिशु और वृक्षो के साथ मनुष्य की जिस एकात्मता का चित्र खीच कर अपने को विश्ववन्द्य बना लिया है वह एकात्मता (लोक) गीतो मे (और लोक कथाओ मे भी) सर्वत्र प्रकट है। मेघदूत मे मेघ सदेश-वाहक है। गीतो मे भौरा, कोयल, तोता, चील, श्यामा-पक्षी, घटा, कौआ आदि

1 पिंगल दिन प्रति पाठवैं ढोला नोरत न होय
मालवणी मारे तिहा, पिंगल पंथिज कोय ॥ 59 ॥

ढो मा चौ

2 करहा तो कोडो म०, म्हांको कह यो करेग
ढोले मारू उमह्यो, तु पोडो होय रहेज ॥ 409 ॥

ढो मा चौ

3 ढोला तु उमाहियो जीणि धण सुन्दरि सेम
तीणि मारू रा तन पीन्या, पञ्जर हुआ वेन ॥ 473 ॥

ढो मा. चौ

4 (क) मनि हरख्यो उमर मूमरो मारू पाति कीयो मन परो
कोमला घोड़ा साथें करी उमर चढीयो आणय धरी ॥542 ॥
(ख) उमर मनि मारवणी मोह, ढोला उपरि मांड्यो द्रोह
कूडे मन आदरि थई घणो करहो पंखी ढोला तणो ॥ 550 ॥

ढो. मा चौ.

अनेक चर-अचर हैं जो मनुष्य के सहचर की तरह काम करते दिखाये गये हैं।[1]

प्रेम सम्बन्ध घटक के रूप मे भी पशु-पक्षियो का उपयोग किया जाता है। पद्मावत मे इसका पर्याप्त उपयोग हुआ है। कल्कि पुराण मे सिंघल की पद्मावती के रूप-सौन्दर्य और प्रेमासक्ति का विष्णुयश्म कल्कि के सामने वर्णन निवदत्त नामक शुक ही करता है। पद्मावती का पालित शुक 'हीरामन' का बहेलिये द्वारा पकडा जाना, ब्राह्मण व्यापारी के हाथ बेचा जाना, वहाँ से चित्तौड के राजा रत्नसेन के दरबार मे जाना और राजा का स्नेह भाजन बनना, राजा से पद्मावती के अद्वितीय रूप का वर्णन करना जिससे राजा के मन मे पद्मावती के प्रति आकर्षण-जन्य प्रेम उत्पन्न होता है और वह उसे प्राप्त करने के लिये सिंघल यात्रा करता है। इस अवसर पर हीरामन प्रेमपथ का अगुआ बनता है और रत्नसेन को सिंघल पहुँचाने और पद्मावती से उसको मिलाने मे सफल होता है।[2]

शुक या किसी अन्य पक्षी द्वारा प्रेम-व्यापार मे इस प्रकार की सहायता के अनेक उदाहरण भारतीय कथा-साहित्य मे आसानी से मिल जाते हैं। यह एक ही रूढि विभिन्न कथानको मे विभिन्न प्रकार से प्रयुक्त हुई है। नल दमयन्ती की कहानी मे शुक के स्थान पर हस यह कार्य करता हैं। वह नल के पास जाकर दमयन्ती के प्रति प्रेम और उसे प्राप्त करने की चेष्टा उत्पन्न कराता है। पृथ्वीराज रासो के 'पद्मावती-समय' मे शुक ही इस कार्य को सम्पन्न कराता है। वह समुद्र शिखरगढ़ की कन्या पद्मावती के मन मे पृथ्वीराज के रूप-गुण की प्रशसा द्वारा उसके प्रति आकर्षण और प्रेम उत्पन्न करता है और पद्मावत के हीरामन की भाँति पृथ्वीराज के पास उसका प्रेम-सदेश ले जाता है।

सस्कृत साहित्य मे पक्षियो की चर्चा सबसे अधिक हुई है। इस सम्बन्ध में डा हजारीप्रसाद द्विवेदी का कहना है "जिन दिनो सस्कृत के काव्य नाटको का निर्माण अपने पूरे चढाव पर था, उन दिनो केली गृह और अन्त पुर के प्रासाद प्रांगण से लेकर युद्ध-क्षेत्र और वानप्रस्थो के आश्रम तक कोई न कोई पक्षी भारतीय सहृदय के साथ अवश्य रहा करता था। वह विनोद का, सयोग का योजक था, युद्ध का सदेश वाहक था और जीवन का कोई ऐसा क्षेत्र नही था जहाँ वह मनुष्य का साथ न देता हो।"[3]

ढोलामारू मे करहा शुक आदि का वार्तालाप मिलता है। ढोला जब मालवणी को सोती हुई छोडकर पूगल के लिए प्रस्थान कर जाता है और मालवणी

1 कविता कौमुदी, तीसरा भाग, पं रामनरेश त्रिपाठी बम्बई, 1955, पृ 89

2, पद्मावत जायसी

3. प्राचीन भारत के कलात्मक विनोद, हजारी प्रसाद द्विवेदी, 1952 पृ. 47

जागने पर विरह व्यथा से मूर्छित हो जाती है एवं शुक को ढोला को लौटा लाने के लिये उसके पास भेजती है .

> साल्ह कुमर सूडो कहे, मालवणी मुप जोई
> प्राण तजें से पद्मनि, लछन देसे सोई ।। 449 ।।

यहीं शुक सन्देश-वाहक से अधिक दूत का कार्य करता है। मालवणी ही नही मारवणी भी विरह व्यथा से व्याप्त हो कुरजो से अपना सन्देश ढोला तक पहुँचाने को कहती । उनसे पख मागती है प्रिय से मिलने के लिये

> कु झडी दे अने पपड़ी थाको वनो वहेस
> सयर उलधि प्रीय मीलुं प्रीय मीलि पाछि देस ।। 228 ।।

इस पर कुरझें कहती हैं

> मारू म्हे तो माणस नही म्हे तो कु झडी याँह
> प्रीय सन्देसो पाठवें, लीष दे पपडी याँह ।। 231 ।।

करहा ऐसा वाहन है जो न केवल ढोला को उसकी प्रियतमा से ही मिलाता है, वरन् मार्ग मे उसके दु ख-सुख का साथी भी है

> गाढि वधे वीटली, ढीली मुकें लज
> सरली पेट न लेटोउ, जो मुघ न भेलु अज ।। 513 ।।

मालवणी का करहा से विरह निवेदन आत्मीयता का एक सुन्दर उदाहरण वन कर आया है

> करहा तुम न कुअडा वे धाऊ करें विछोह
> अजी सकेतु वारयोपरइ नही तो कामण मोह ।। 507 ।।
> बाघु वडकी छाहडी नीरू नागरवेल
> डाम सभालु हाय सु नित को चोपडु चपेल ।। 513 ।।

7 योगि योगिन का अविर्भाव

भारतीय कथाओ मे देवी-देवता प्राय पात्रो की सहायता करते हैं। अति प्राकृत जन्म मे निसन्तान राजाओं को पुत्र प्राप्ति प्राय किसी न किसी देवता के वरदान या कृपा से होती है। ये देवी-देवता सकट के समय सहायता भी करते हैं। 'चित्रावली' नामक एक प्रेम कहानी मे नेपाल का राजा सन्तान प्राप्ति के लिये शिवाराधना करता है। शिव-पार्वती उसकी परीक्षा लेने आते हैं और उससे उसका सिर मागते हैं। राजा सिर देने को तैयार हो जाता है तो महादेवजी प्रसन्न होकर उसे पुत्र प्राप्त होने का वरदान देते हैं।[1]

1 ब्रजलोक साहित्य का अध्ययन · डॉ० सत्येन्द्र · पृष्ठ 448

हमारी लोक कथाओ मे जिस देवी-देवता का उल्लेख सबसे अधिक होता है वे हैं, शिव पार्वती। डॉ० सत्येन्द्र ने व्रज की लोक-कथाओं के अभिप्रायो पर विचार करते हुये लिखा है कि "शिव और पार्वती कहानियो मे वहुधा रात्रि मे प्रदक्षिणा को निकलते हैं। वे दुखियो की समस्या को हल करते मिलते हैं। पार्वती जी हठ करती हैं तो शिवजी को मानना पडता है।[1] जायसी कृत 'पद्मावत मे सिहलगढ़ मे प्रवेश के लिये शिवजी रत्नसेन को सिद्धि गुटिका देते हैं। इसके अतिरिक्त जब रत्नसेन पकडा जाता है और उसे सूली पर चढाने की आज्ञा होती है तब शिवजी का आसन डोल उठता है। पार्वती के निवेदन करने पर शिवजी व पार्वती भाट भाटिन का रूपधारण कर अवतरित होते है। गन्धर्व सेन उन्हे पहचान लेता है और पद्मावती की सगाई कर देता है।[2]

लोक-कथाओ मे देवी-देवताओ द्वारा नायक अथवा नायिका की परीक्षा लेने की बात अक्सर आती है। पद्मावत मे पार्वती एक सुन्दर अप्सरा का वेश बदल कर रत्नसेन के प्रेम की परीक्षा लेती है। लौकिक कथानक की यह प्रचलित रूढ़ि 'राम-चरित-मानस' मे भी उपलब्ध होती है। सीता हरण के पश्चात् विरह व्याकुल राम वन मे भटक रहे हैं और इसी समय एक शका का समाधान करने के लिए पार्वती सीता का रूप धारण करती है—

"पुनि पुनि हृदय विचारु करि धरि सीता कर रूप
आगे होइ चलि पथ तेहि जेहिं आवत नरभूप" ।।[3]

किन्तु राम उन्हे पहचान लेते हैं और प्रणाम करके शिवजी की कुशल-क्षेम पूछते हैं।

दुखहरन की पुहुपावती मे समुद्रतट पर मूर्छित पडी उप-नायिका रगीली को पार्वती के आग्रह से शिव अमृत द्वारा चेतन कर देते हैं। पार्वती अपनी नारी सुलभ जिज्ञासा और दयालुता से प्रेरित होकर शिव को किसी व्यक्ति का कष्ट दूर करने या किसी मृत पात्र के पुन जीवन प्रदान करने के लिए बाध्य करती हैं।

ढोला मारू मे मारवणी को जब पीवणा साँप पी जाता है, और उसकी मृत्यु हो जाती है तो ढोला भी चिता बनाकर आत्म-हत्या करना चाहता है। तभी योगी योगिन के रूप मे शिव पार्वती प्रकट होते हैं

तिण वेला कोई जोग्यद्र आयो तिहा करतो आणद
मत्र जत्र जाणे अति घणा उपद पनग पीवणा तणा ।।622-।।

1 व्रजलोक साहित्य का अध्ययन . डॉ० सत्येन्द्र पृ० 500
2 पद्मावत जायसी रत्नसेन सूली खंड
3. रामचरित मानस तुलसीदास प्रथम सोपान दोहा-संख्या 52

योगिन (पार्वती) ढोला की परीक्षा लेती हुई कहती है

जोगणि ढोलो प्रतें उचरे कायरे कायर फोकट मरे
प्री पुठ अस्त्री पर जले, नारी पुठे पुरुष नवी बलें ।। 624 ।।

ढोला नही मानता । योगिन उसकी सत्य प्रीति को देखकर शिवजी से उसे जीवित करने के लिये विनती ही नही करती वरन् स्वय प्राण तजने की बात भी कहती है

जो ऐ स्त्री जीवाउसी नही, तो हुँ प्राण तजे सू सही
पाईय योषध पीवणा तणा, मत्र जत्र तुझ पासें घणा ।। 627 ।।

नारी हठ के आगे शिवजी झुकते हैं और

पाणी पाउ गुणी ने मत्र, वली अनेरा कीधा तत्र
मारवणी तीहा साजी थई, जोगणी मन हरषत गिहगही ।। 629 ।।

योगी योगिन के द्वारा मारवणी के जिन्दा होने पर ढोला आनन्दित हो जाता है और नवसर हार देता है

ढोला मनी आणदीउ अपार जोगण ने दयो नवसर हार
जोगी ने सोवन साकला, पही राव्या अती उतावला ।।630।।

8. प्रकृति वर्णन और विरह निवेदन

प्रकृति के उद्दीपन रूप का विरहाभिव्यक्ति में तीव्रता लाने की दृष्टि से बहुत प्रयोग किया जाता है । इसके लिए कथाकार षड्ऋतु-वर्णन तथा बारहमासा का आयोजन करते हैं । शृगार वर्णन में विरह उद्दीप्त करने के लिए विभिन्न प्राकृतिक चित्रो एव घटनाओ को काव्य बद्ध कर लेना हमारे साहित्य की एक प्राचीन प्रथा है । इसका विकास अभिजात और लोक-साहित्य दोनो मे हुआ है । षट्ऋतु वर्णन प्रणाली अभिजात साहित्य की है और बारहमासा वर्णन की पद्धति लोक-साहित्य से होती हुई अब इस साहित्य तक आ पहुँची है । मानस के राम का उद्वेलित हृदय पावस मे घनघमंड गरजत घन घोरा से और भी उद्दीप्त हो जाता है । तो उधर पद्मावत के बारहमासा मे नागमती की वेदना स्वय वार्तालाप कर रही प्रतीत होती है ।

ढोला मारू मे भी प्रकृति के माध्यम से मारवणी की विरह वेदना को वाणी दी गई है । यद्यपि षट्ऋतु वर्णन और बारहमासा जैसी आयोजना इसमे नही की गई है परन्तु मारवणी एव मालवणी की अपनी-अपनी व्यजना प्रकृति की पृष्ठभूमि से पोषित है

जे तु ढोला नावियो श्रावण पहिली त्रीज
बीजलीया वीललाईया मुध मरेसी पीज ॥ 289 ॥
(मारवणी)

वीछडता ही सजना राता कीश्रा रतन
वारी वेत्रीहु रापीश्रा श्रासूमति ब्रत
एनी रोडी चढे ह—जोई दीस जाता तणी
उभी हाथ मसलेह—जोई वीलपी हुई वलह ॥ 433 ॥
(मालवणी)

9. नखशिख वर्णन रूढ़ि

नायिका के सौन्दर्य-चित्रण के लिये इस रूढि का सहारा लिया जाता है। यह कथानक रूढि के साथ-साथ वर्णन रूढ़ि भी है। काव्य मे इसका प्रयोग अलकृति के लिये भी किया जाता है। ढोलामारू मे भी नायिका मारू का नख शिख सौन्दर्य वर्णन हुआ है। ढोला से भेंट के समय ढाढियो के कथन मे मारू के नखशिख लघु रूप मे वर्णित है

सुंदर सोहग सुन्दरी अधर अलता रग
केसर लकी घण कटी कोमल नेत्र कुरंग ॥ 209 ॥

10. नायिका का अवरोध

आगत विरह व्यथा से बचने के लिये नायिका नायक को अनेक प्रलोभन तथा विभिन्न ऋतुश्रो के यात्रा सकट आदि का आभास देकर उसका प्रस्थान स्थगित करवाती है। 'पृथ्वीराज रासो' मे पृथ्वीराज की रानियाँ उसे विभिन्न ऋतुओ मे इसी तरह प्रवास से रोकती हैं।

'ढोला मारू री चउपई' मे सहनायिका मालवणी ढोला से वरदान माग लेती है —

जे पुगल थी आवे कोई ते पथी मो वस होई
ढोले तेहज कीयो पसाव, मालवणी ईम माडया दाव ॥ 267 ॥

यह प्रबन्ध इसलिये किया गया जिससे ढोला को मारवणी का पता न लगे और वह आगत विरह से बच सके। इसी तरह मालवणी ढोला को ग्रीष्म, वर्षा और शीत तीनो ऋतुओ मे यात्रा सकट बतलाकर रोके रखती है :

सीआले सी पड़े उन्हाले लू वाय
वरसाले मुई चीकणी, कीण रित ढोलो जाय ॥ 383 ॥

जब भी ढोला चलने के लिये कहता है मालवणी की दशा को देखकर रुक जाता है। मालवणी की दशा वास्तव मे दयनीय है

ढोलो चालण चालण करे, धन चलवा न देस
झब झब छोडो पागडा डबडब नयणा मरेस ॥ 396 ॥

चालूं, चालूं मत करो हिम्रा वहीम देसी
जो साच्या हि चालसो तो सुता पलायेस ॥ 397 ॥

11. बीड़ा उठाना

किसी साहसिक कार्य को स्वेच्छा से पूरा करने के लिये समाज मे सूचकों द्वारा सार्वजनिक निमत्रण देने की प्रथा रही है। काव्यो मे इसका कथानक रूढि के रूप मे प्रयोग हुआ है। 'आल्हा खड' मे 'ऊदल' हर कठिन कार्य को करने का बीडा उठाता है।

ढोला मारवणी से मिलने हेतु व्यग्र है और वह पूगल शीघ्र पहुँचना चाहता है। करहा को तेज चलने के लिये ही नहीं कहता वरन् उसे बेतों से मारता भी है। तब करहा इन शब्दो मे मुग्धा मारवणी से मिलवाने का बीडा उठाता है

सकती बाचे बीड़ुली ढीली मेल्हे लज्ज
सरढी पेट न लेटियउ मूँध न मेलउ अज्ज ॥ 513 ॥

12. प्रहेलिका आयोजन

नायक नायिका के परस्पर प्रेमाकर्षण को तीव्रतर बनाने हेतु पहेली बुझाने की कथानक रूढि का आयोजन भी किया जाता है।

ढोला मारू के प्रथम मिलन पर यह कथानक रूढि आयोजित हुई है। ढोला पहेली पूछता है और मारवणी उसका उत्तर देती है। ढोला पूछता है

काया झब कइ कनक जिम सुन्दर केहे सुख्ख
तेह सुरंग जिम हुवई जिण वेहा वहु दुख्ख

तब मारवणी इसका बडा ही सजीव यथार्थ उत्तर देती है

पहुर हुवउ ज पधारिया, मोचाहती चित्त
डेडरिया खिण येइ हुवइ धण बूठइ सरजित

13 जलकेलि

इस अभिप्राय का प्रयोग भी काव्यो मे बहुत हुआ है। 'ईश्वर दास' की 'सत्यवती कथा' मे सखियो सहित नायिका का सरोवर मे जल क्रीडा करने का वर्णन मिलता है। कल्किपुराण मे पद्मनी की जल क्रीडा व पद्मावत मे पद्मिनी की जल-क्रीडा का उल्लेख मिलता है।

जल केलि का विस्तृत वर्णन तो ढोला मारू मे प्राप्त नही है, परन्तु मालवणी के इस कथन से यह रूढि ध्वनित होती है

ढोला हूँ तुझ बाहिरी, झीलण गइय तलाइ
ऊजल काला नाग जिऊँ लहिरी ले ले खाइ

14. प्रेम घटक के रूप मे सखियो द्वारा कार्य

सामान्यत हर प्रेम काव्य मे प्रेम घटक के रूप मे सखियो-द्वारा कार्य किये

जाने की कथानक रूढि मिलती हैं। 'मधुमालती' में जैतमाल सखी यह कार्य करती है, तो 'रूप मंजरी' में इन्दुमती।

ढोला मारू में यह रूढि दो स्थानों पर आई है। प्रथम वार तो उस समय जब मुग्धा विरह के उठते हुये महार्णव की थाह खोज रही होती है तब वह सखियों से नींद न आने का कारण बताती है

मुझनइ नीद न आवइ आज, विरह वियाणी मूंकइ लाज

दूसरी वार जब ढोला के पूगल आगमन पर सखियाँ मारवणी को सजाती हैं और उसके मिलनार्थ सखियाँ ही उसे शयन कक्ष में पहुँचाती है

सखी वढलावी घरि गई प्रिय मिलियो एकंत।

यह रूढि यहाँ राजस्थानी परिवार का शील और संकोच भी प्रदर्शित करती हैं।

माधवानल चौपई की कथानक रूढ़ियाँ

1. मूर्ति कन्या और प्रेम

'मूर्ति अथवा अन्य किसी जड़ वस्तु के रूप में सुन्दरी-नायिकाओं का स्थित होना' भारतीय कथा साहित्य का प्रिय और बहु प्रयुक्त अभिप्राय है। इस अभिप्राय में लोक विश्वास और कवि कल्पना का समान योग दिखाई पड़ता है। इसका नवीन रूप में प्रयोग 'माधवानल चौपई' में इस प्रकार हुआ है

1. नायिका का शाप ग्रस्त होकर पत्थर की मूर्ति में परिवर्तित हो जाना।
2. नायक के स्पर्श व विवाह से सजीव रूप में प्रकट होना और आकर्षण जन्य प्रेम का प्रारम्भ तथा मिलन का सुख।

किसी सजीव व्यक्ति का शापग्रस्त होकर जड़ वस्तु के रूप में परिवर्तित होना और शाप मुक्त होने पर सजीव रूप में प्रकट होना तो लोक आश्रित धारणा हैं, किन्तु इस लोक विश्वास को प्रेमाख्यानों के अनुरूप बनाने के लिये कथाकारों ने कल्पना के आधार पर इसे कुछ विशिष्ट बना दिया है। ऐसी कथाओं में शाप का पात्र उन्होंने सुन्दरी नायिकाओं को ही बनाया है और शाप मुक्ति के उपाय के साथ नायक का सम्बन्ध भी किसी न किसी रूप में जोड़ दिया है। यहाँ तक कि कुछ कथाओं में शाप का भी सहारा नहीं लिया गया है। नायिकायें या सुन्दरियाँ अपनी विशिष्ट शक्ति से मूर्ति, प्रस्तर आदि में स्थित रहती हैं और स्वेच्छा से प्रकट होती है तथा पुनः उसमें प्रवेश कर जाती है। नायक ऐसी मूर्तियों को देखकर या तो आकृष्ट हो जाते हैं और अन्त में उस सुन्दरी को प्राप्त कर लेते हैं या उसके प्रगट होने पर उसे पुनः प्रवेश नहीं करने देते।

'रामचरितमानस' का अहिल्या प्रसंग इस कल्पना के मूल रूप का उत्कृष्ट उदाहरण है। अहिल्या की कथा में भी अहिल्या इसी प्रकार शाप ग्रस्त होकर शिला के रूप में स्थित रहती हैं और राम द्वारा उसका उद्धार होता है। 'शिलायां तिष्ठ' में मूलतः शिला में स्थित होने की ही बात कही गई है जिसे संस्कृत के परवर्ती

रामसाहित्य के आधार पर तुलसीदास ने शिला रूप बना दिया है। किन्तु अहिल्या की कथा मे इस अभिप्राय के रोमानी तत्व नही आये है क्योकि वहाँ उद्देश्य की भिन्नता है।

हिन्दी प्रेमाख्यानो मे माधवानल कामकदला मे इस अभिप्राय का उपयोग किया गया है। जयन्ती अप्सरा है और वह इन्द्र द्वारा दिये गये शाप के कारण जंगल मे प्रस्तर-शिला हो जाती है।[1]

नामि जयंति अपछरा, सुरपति तणइ सरापि
स्वर्ग लोक सुख छंडियां सिला सहइ सतापि ॥ 31 ॥

ईणइ रूपमद आण्यउ आप, कोप्यउ इद्र तसु दियउ सराप
अगहीण सिल पाहाण ह तणी, पृथवीपीठि हुजे पापिणी ॥ 23 ॥

कथाकार ने शाप-मुक्ति के उपाय के साथ नायक का सम्बन्ध भी जोड़ दिया है। जयंती के बार-बार क्षमा मागने पर इन्द्र कहते हैं कि शाप तो असत्य नही हो सकता परन्तु इसके दूर होने का उपाय बता देता हूँ[2]

पहुपावती नगरिनइ ठामि, ब्रह्मपुत्र माधव इणिनामि
करि रामति तुम्ह परिणा विसइ, तदा तुम्ह काया अपछरहुस्यइ ॥ 27 ॥

माधवानल कामकदला में उद्धार के साथ ही माधव और जयन्ती मे प्रेम भी हो जाता है और माधव उस अप्सरा के साथ इन्द्र की सभा में जाता है। यह प्रेम इतना घनिष्ट होता है कि जयन्ती को दुबारा इन्द्र के क्रोध का भाजन बनना पडता है[3]

इन्द्र सभा बीजइ दिनि मिली, तेडी अपछर विरहाकुली
कुपिउ इद्र रोसइ धड हडइ, जाणइ वैस्वानर घृत पडइ ॥ 112 ॥

यही नही वह दुबारा भी श्राप देता है पर इस बार वह उसे वेश्या के घर जन्म लेने का श्राप देता है। इसी शाप के अनुरूप जयन्ती पृथ्वी पर कामकदला के रूप मे अवतरित होती है। आलम ने भी कथा के प्रस्तावक अभिप्राय के रूप मे इसका उपयोग किया है।

शिष्ट साहित्य और लोक साहित्य दोनो मे इस अभिप्राय के उदाहरण मिलते हैं, किन्तु इसका उत्कृष्ट रूप साहित्यिक कथाओ मे ही मिलता है। लोक कथाओ मे प्राय शापादि से पत्थर हो जाने का ही वर्णन अधिक है, नायक नायिका के साथ इस कल्पना को सम्बद्ध करके उसे रोमानी रग देने, जैसा कि कुशललाभ ने किया है, के बहुत कम उदाहरण मिलते हैं। शिष्ट साहित्य की सामान्य कथाओ मे ही नही अलंकृत कथा-काव्यो तक मे इसका प्रयोग हुआ है। सस्कृत कथा साहित्य में कथा

1. माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध—गायकवाड ओरियन्टल सीरिज बड़ौदा
2. वही
3. वही

सरित्सागर, सुबन्धु कृत वासवदत्ता, बाणभट्ट की कादम्बरी, वीरचरित, जैनकथाकोश आदि में इसके अनेक उदाहरण मिलते है। कथा सारित्सागर मे निश्चयदत्त और विद्याधरी अनुरागपरा की प्रेमकथा इसी अभिप्राय से प्रारम्भ होती है।[1] इस कथा मे विद्याधरी स्वेच्छा से स्तम्भ मे प्रवेश करती है।

कथासरित्सागर की ही एक अन्य कथा में अप्सरा कलावती इन्द्र के शाप के कारण एक मदिर के खम्भे पर निमित सालमजिका के रूप मे स्थित हो जाती है। मदिर के गिरने पर ही वह शाप मुक्त हो सकती है। कलावती का प्रेमी ठिण्ठाकराल उस देश के राजा को चतुराई से वश मे कर लेता है और मन्दिर गिरवा देता है।

प्रस्तर कन्या से प्रेम का प्रारम्भ वहाँ नही होता अपितु कथा के मध्य पुरस्सरक अभिप्राय के रूप मे इसका उपयोग करके कथाकार ने नायक नायिका को वियुक्त करके कथा को आगे बढाया है और विरह वेदना तथा वियुक्त नायिका की प्राप्ति के प्रयत्न की ओर कथा को ले गया है। रोमानी कथाओं मे नायिका-प्राप्ति के बाद कथा का विकास प्राय. अवरुद्ध हो जाता है और लगता है कि फल प्राप्ति के साथ ही, अब कथा समाप्त हो जायेगी। किन्तु ऐसे स्थल पर प्राय भारतीय कथाकार ऐसे अवसरो के लिये निश्चित अभिप्रायो मे से किसी एक का सहारा लेकर बड़ी सरलता से कथा को पुन दूसरी दिशा मे मोड़ देता है अथवा उसमें नवीन कुतूहल और रोमाचकता उत्पन्न कर देता है। शाप ऐसे अवसरो के लिये बहुत ही सशक्त माध्यम है। अत. नायिका को नायक से वियुक्त करने के लिये उसे शाप ग्रस्त करके उसे जड वस्तु मे स्थित कर देना और पुन नायक के द्वारा उसके उद्धार से कथा का पर्यवसान करना कथा विकास और रोचकता की दृष्टि से बहुत उपयोगी है। सुबन्धु ने भी अपने कथा काव्य वासवदत्ता में इसी उद्देश्य से इसका उपयोग किया है।[2]

पुत्तलिकाओ के सजीव होने की तो अनेक कथायें मिलती है। विक्रमादित्य कथाचक्र की सिंहासन पुत्तलिकाओ के अतिरिक्त अन्य कई कथाओ मे पुत्तलिकाओ के सजीव होने का अभिप्राय व्यहृत हुआ है। वीरचरित की एक कथा मे एक पिष्टपुत्तलिका सुन्दरी कन्या के रूप मे प्रकट होती है।[3]

शापादि से प्रस्तर हो जाने का वर्णन शिष्ट साहित्य से अधिक लोक कथाओ में मिलता है। बगाल की एक लोक-कथा मे नायक का साथी रहस्योद्घाटन के परिणामस्वरूप प्रस्तर मूर्ति मे बदल जाता है और उसे पुन अपना स्वरूप तभी प्राप्त होता है जब नायक के पुत्र के रक्त से उस मूर्ति को स्नान कराया जाता है।

1. कथा सरित्सागर—आदित्तरंग 37
2. वासवदत्ता, पृ 350
3. Life and stories of Parcvanath—M. Bloom field P. 194

2. नायिका अप्सरा का अवतार

नायिका को अप्सरा का अवतार बतलाना महत्वपूर्ण अलंकृतिमूलक अभिप्राय है, जिसका उपयोग प्राय सभी कवियो ने यान्त्रिक ढग से किया है, चित्रावली की नायिका चित्रावली अप्सरा का अवतार बतलाई गई है

रूपनगर तहँ बसै सो नारी, पुहुमी विधि अछरी औतारी

इसी तरह इन्द्रावती विद्याधरी का अवतार कही गई है

है इन्द्रावती विद्याधरी, विद्याधरी आप अवतरी

रत्नसेन की उपनायिका कल्पलता अप्सरा है, जो शाप के कारण इस पृथ्वी पर अवतरित हुई है। माधवानल कामकन्दला की नायिका कन्दला भी अप्सरा है।[1]

एकतिहाँ माहि अभिराम, अपछरतणउ जयंतीनाम
चंपकवर्ण सुकोमल गात्र, प्रेमसपरित नाचई पात्र ।। 14 ।।

शापग्रस्त अप्सरा का नायिका के रूप मे पृथ्वी पर अवतरित होना भारतीय प्रेमाख्यानो का अत्यन्त प्रिय अभिप्राय है। चन्द्रकृत पृथ्वीराज रासो में सयोगिता और शशिव्रता दोनो नायिकाओ को अप्सरा का अवतार कहा गया है। इन सभी अप्सराओ को अन्य कोई शाप नही मिलता। मानव योनि मे जन्म लेने का ही शाप मिलता है। इसका कारण यह है कि यही शाप कथाकारो और कवियो के उद्देश्य के अनुकूल है, क्योकि वे अपनी नायिका की मृत्यु-लोक की सुन्दरियो मे भी विशिष्ट सिद्ध करना चाहते हैं।

कथा सरित्सागर की अधिकांश कथाओ मे नायिकायें विद्याधरी अथवा अप्सरा का अवतार कही गई है। अधिकाश कथाओ मे अप्सरा के शापग्रस्त होने का प्रसग भी वर्णित है। माधवानल कामकन्दला मे इसी परम्परा का निर्वाह किया गया है। जयन्ती के शापग्रस्त होकर शिलारूप मे स्थित होने तथा माधव द्वारा उसके उद्धार का पूर्व प्रसग सम्कृत तथा प्राकृत की प्रेम कथाओ मे वर्णित इस प्रकार की घटनाओ की याद दिलाता है। सभी अप्सरायें इन्द्र के दरबार मे किसी अपराध या त्रुटि के कारण इन्द्र द्वारा मानव योनि मे अवतरित होने का शाप पाती हैं। जयन्ती को भी इसी प्रकार शाप मिलता है.

देवतणा तू विलसइ भोग, स्वर्ग लोकि नर-सुख सजोग,
तउ हि त्रिपति नुहि तुझ तणी, मनुष्य लोकि जामइ नरमणी ।।113।।

1. एकतिहा माहि अभिराम, अपछर थन्उ जयंती नाम
— माधवानल कामन्दला चोपई

आविउ उदय भवतर पाप, शहमुखि इंद्रइ दीउ सराप
जाइ वेस्या पेटइ अवतरे, थोडइ भोगि घणा दुख भरे ॥ 114 ॥

शशिव्रता के रूप मे चित्ररेखा को भी इसी प्रकार शाप मिलता है।[1]

अप्सराये रूप सौन्दर्य और गुण की चरम कल्पनायें हैं। अत कथाकार अपनी नायिका को अलौकिक सुन्दरी और अपार्थिव विभूति के रूप मे उपस्थित करने के लिये प्राय इस प्रकार के शाप का ही सहारा लेते हैं।

3. नायक का अतिप्राकृत जन्म

अति-प्राकृत जन्म की कथायें सारे ससार मे प्रचलित हैं। महान् नायको की उत्पत्ति प्राय असमान्य वतलाई गई हैं। जैसा कि हार्ट लैण्ड ने लिखा है, यदि नायक साधारण व्यक्तित्व और कृतित्व वाला है, तो उसका जन्म भी अन्य व्यक्तियो से विशिष्ट होना चाहिये, इसलिये प्रत्येक जगह इन नायको के लिये ऐसी कथायें प्रचलित है जिसमे किसी देवी, देवता के रूप मे या देवी फल आदि से इनकी उत्पत्ति वताई गई है।[2]

भारतीय कथाओ मे तो कथाकारो ने जैसे राजा के निस्सतान होने और किसी देवी, देवता के वरदान या उनके द्वारा दिये गये फल से पुत्र प्राप्त करने के प्रसंग से ही कथा का प्रारम्भ किया है। हिन्दी के मध्यकाल के प्राय सभी कथा नायक इसी प्रकार पृथ्वी पर अवतरित होते हैं। कुछ काव्यो और कथाओं मे किसी देवी-देवता के वरदान से नायक की उत्पत्ति वर्णित है और किसी मे ऋषि मुनियो द्वारा दिये गये फल के खाने से रानी के गर्भ धारण की कथा कही गई है।

रामचरित मानस मे दशरथ पुत्र-प्राप्ति के लिये वशिष्ठ से प्रार्थना करते हैं। वशिष्ठ शृंगी ऋषि को बुलाकर पुत्र काम-यज्ञ करवाते हैं।[3]

अग्नि देव स्वय प्रकट होकर चरू देते हैं। यज्ञ के उस हवि को खाने से रानियाँ गर्भवती होती हैं और चार पुत्र उत्पन्न होते हैं। मधुमालती मे तपस्वी द्वारा दिये गये पिण्ड से नायक का जन्म होता है। पहुपावती मे राजपुर नरेश पुत्र प्राप्ति के लिये सात वर्ष भवानी की तपस्या करते हैं किन्तु तब भी इच्छा पूर्ण नही होती अन्त मे राजा अपना मस्तष्क ही काट कर देवी को अर्पित कर देता है। भवानी को

1. तिहि गरव इन्दु समय कलहकरि, क्रोध देव वंडी सुरसं
दच्छिन नरेस नृप तास वंधु पुज गहै अवतार सुम।
—शशिव्रता प्रस्ताव
2. Primitive Paternity E S Hart Land Vol. 1 P. 1
3. सृंगी रिषिहि वसिष्ठ बोलावा, पुत्र काम सुभ जग्य करावा
भगति सहित मुनि आहुति दीन्हें, प्रकटे अगिनि चरु कर लीन्हें।
—बालकाण्ड

अपनी निन्दा का भय होता है और वे अमृत देकर राजा को जिन्दा करती है साथ ही विधि से मांग कर पुत्र भी देती है

तै सेवा कीन्हे सुतलागो,
देएउ पुत्र तोहि विधि से मागी ।

रसरतन के नायक की उत्पत्ति शिव की कृपा से होती है। साथ ही नायिका का जन्म भी दुर्गा की आराधना के परिणाम स्वरूप होता है। चित्रावली में पुत्र प्राप्ति के लिये धर्मार्थ-कार्य करने वाले राजा के पास शिव और पार्वती रूप बदल कर जाते हैं और राजा का मस्तक मागते हैं। राजा अपना मस्तष्क देने को तैयार हो जाता है, तब शिव प्रसन्न होकर उसे पुत्र प्राप्ति का वरदान देते हैं तब नायक का जन्म होता है। ढोला मारू मे ढोला का जन्म पुष्कर यात्रा के पुण्य रूप से होता है। नायको की तरह नायिकायें भी देवी-देवताओ की देन बतलाई गई हैं। इन्द्रावती का जन्म देवी के वरदान से होता है और सत्यवती शिव की उपासना से मानव योनि मे अवतरित होती हैं।

नायक के किसी देवी-देवता का वरदत्त पुत्र होने का अभिप्राय कथाओ और कथा काव्यो मे प्राचीन काल से रूढिवत व्यवहृत होता चला आ रहा है। महाभारत मे अधिकाश राजाओ को इसी प्रकार सन्तान प्राप्ति होती है। कथासरित्सागर के नायक नरवाहनदत्त शिव के वरदान स्वरूप वासवदत्ता के गर्भ से जन्म लेते हैं। दश-कुमार चरित के नायक राजवाहन की उत्पत्ति विष्णु की आराधना के बाद होती है। कादम्बरी के नायक कुमार चन्द्रापीड के पुत्र रूप मे आगमन की सूचना फल के स्वप्न द्वारा पहले से ही मिल जाती है।

माधवानल कामकन्दला मे यह अभिप्राय कुछ भिन्नता लिये हुये हैं। शिव समाधिस्थ हैं। मन के चंचल हो जाने से उमा रमण की इच्छा से स्खलित हो जाते है। विष्णु उसके पृथ्वी पर गिरने की आशका एव उत्पन्न भय से उस विन्दु को अजुली मे लेकर कमलिनी नाल मे रख देते हैं। माधव के नाम से वही विन्दु शकरदास को प्राप्त होता है। उसे स्वप्न मे भगवान कहते हैं—

संकर प्रति कहइ त्रिपुरारि, देसिउपुत्र गंगनइ पारि ॥ 57 ॥

इस तरह माधवानल कामकन्दला में नायक का जन्म शिव के बिंदु द्वारा कमलिनी नाल मे होता है।

4. 4 परिवर्तन

लोकाश्रित कथा अभिप्रायो मे रूप परिवर्तन सम्भवत. सबसे अधिक प्रचलित रहा है। पौराणिक और निजन्धरी सभी प्रकार की कथाओ मे इसका समान रूप से उपयोग किया गया है। कलाकारो ने अपने उद्देश्य की सिद्धि के लिये इस अभिप्राय को कई रूपो एव प्रकारो मे प्रयुक्त किया है। मैक्युलश ने लिखा है, यह अभिप्राय

आदिम मनोविज्ञान से निसृत विचारों एवं धारणाओं पर आधारित है और रूप परिवर्तन की सम्भावना भी आदिम विश्वास की एक प्रमुख धारणा रही है। लोक कथाओं में प्राप्त अभिप्राय के अनेक उदाहरण इस तथ्य की पुष्टि करते हैं।[1]

सुविधा के लिये रूप परिवर्तन के प्रकारों के आधार पर इस अभिप्राय को डा. ब्रज विलास श्रीवास्तव ने तीन भागों में विभाजित किया है :[2]

(1) अलौकिक शक्ति या विद्या द्वारा स्वयं रूप परिवर्तन।
(2) किसी मन्त्रविद् तान्त्रिक आदि के द्वारा रूप परिवर्तन
(3) किसी सरोवर में स्नान करने या किसी वस्तु के खाने पीने से रूप परिवर्तन।

अलौकिक और अति मानव प्राणी स्वेच्छा से जब जो रूप चाहे धारण कर सकते है और धारण करवा सकते हैं। ऐसे अलौकिक प्राणियों की संख्या भारतीय कथा साहित्य में सबसे अधिक है।

भारतीय देवताओं में इन्द्र, शिव पार्वती सूर्य देवता आदि के रूप परिवर्तन की कथायें शास्त्रीय महत्व की हो गई हैं। इन्द्र का ब्राह्मण बन कर दानी राजा की परीक्षा लेना। महाभारत में ब्राह्मण वेषधारी सूर्य देव द्वारा कर्ण को चेतावनी देना, रामचरितमानस में शिव के कहने पर पार्वती का सीता बनकर राम की परीक्षा लेना, पद्मावत में लक्ष्मी का पद्मावती बनकर तथा शिव पार्वती द्वारा रत्नसेन की परीक्षा लेना रूप परिवर्तन कथा अभिप्राय का दूसरा ही रूप है।

मानव विरोधी शक्तियाँ अर्थात् अमानव शक्तियाँ भी रूप बदल कर नायक को पशु पक्षी या सुन्दर स्त्री बनकर संकट में डालते है। रामचरितमानस पे रामायण में रावण ब्राह्मण का रूप बनाकर सीता का हरण करता है। सूपंनखा का रूप परिवर्तन भी महत्वपूर्ण है। राक्षसों के अलावा हनुमान जी भी कई बार रूप परिवर्तन करते हैं। कभी वन्दर तो कभी भूधराकार। सुरसा के साथ हनुमान का रूप परिवर्तन का युद्ध इस अभिप्राय के लोक रूप का उत्कृष्ट उदाहरण है। राक्षस स्त्रियों का सुन्दरी कन्या का रूप धारण करके नायक के सम्मुख आना और उसकी पत्नी बनने का प्रस्ताव करना लोक कथाओं का प्रिय अभिप्राय है।[3]

मन्त्र-तंत्र के द्वारा नायक-नायिका को पशु पक्षी बना देने की कथायें शिष्ट साहित्य और लोक साहित्य दोनों में बहुत मिलती हैं। कथा-सरित्सागर में शशिप्रभा कहीं से शाकिनीसिद्धिसंवरा विद्या से अपने पति वामदत्त को महिष बना देती है।

1. Child hood of fiction P. 149
2. मध्यकालीन हिन्दी प्रबन्ध काव्यों में कथानक रूढ़ियाँ : पृष्ठ 273
3. फोक टेल्स ऑव बंगाल है, पृ० 181

वामदत्त भी अभिमंत्रित सरसों से अपनी पत्नी को अश्व बना देता है।[1]

मंत्र-तंत्र द्वारा रूप परिवर्तन का दूसरा महत्वपूर्ण कथा रूप उन कथाओं में दिखलाई पड़ता है, जिनमे गुप्त प्रेम के लिए नायक को पशु-पक्षी के रूप में बदलकर कोई स्त्री अपने पास रखती है। इन कथाओं में मंत्र सूत्र द्वारा रूप परिवर्तन होता है। काश्मीर की एक कथा में योगिन राजकुमार को मेढा बना देती है। यह मंत्र रात में हटा दिया जाता है। सात वर्ष तक राजकुमार योगिनी की इच्छापूर्ति का साधन बना रहता है।[2] कुशललाभ कृत माधवानल कामकंदला में भी नायिका जयंति अपने प्रेमी नायक माधव को इन्द्र सभा में भ्रमर बनाकर कंचुकी में रख लेती है।[3]

5. आकाश गमन अथवा खेचरी विद्या

रूप परिवर्तन के अतिरिक्त आकाश मार्ग से गमन और अदृश्यता का वर्णन भी कथा काव्यो में प्राय आता है। योग और सिद्धियों ने भारतीय कथा साहित्य को बहुत अधिक प्रभावित किया है। ये सभी चमत्कारिक घटनायें महाभारत से लेकर मध्यकाल के हिन्दी प्रबंधों में बराबर प्रयुक्त होती आई हैं। इस प्रकार की शक्तियों को मानव भी प्राप्त कर सकता है। रामचरित मानस में अतिप्राकृत प्राणी तो आकाश मार्ग से उड़कर ही एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाते हैं। हनुमान भी आकाश मार्ग से उडकर संजीवनी जड़ी लाते हैं। यहाँ हनुमान की अलौकिक शक्ति द्वारा प्रभावपूर्ण एवं चमत्कारिक प्रयोग हुआ है। कथाकार ने कुतूहल शांत करने के लिये कथा कौशल के रूप में आकाश मार्ग से भेजकर संजीवनी मंगाकर स्थिति की जटिलता को सरलता से सुलझा दिया है।

इस अभिप्राय का विशिष्ट रूप उन कथाओं में दिखलाई देता है, जिनमे नायक-नायिका आकाश मार्ग से यात्रा करते हैं। माधवानल कामकन्दला की नायिका जयन्ती अप्सरा होने के कारण नित्य प्रति आकाश मार्ग से आकर माधव से मिल लेती थी पर एक वार शापग्रस्त होने पर वह पुन आने में डरती हुई माधव से ही निवेदन करती है कि यदि उसका प्रेम सच्चा है तो वह स्वयं उससे मिलने उसके घर आवे,

साचउ नेह जाणउ तुहि म सामि, जउ आवू प्रिउ महारइ ठामि
मन लागउ माधव न रहाइ, नित छानउ अपछर घरि जाइ ॥ 104 ॥

1. कथा सरित्सागर—आदित्तरंग 68
2. फोकटेल्स काश्मीर नोलस पृ० 71
3. भमरा रूपइ माधव कीयउ, कूंचू-विधि छानउ राखीयउ
   बिविध प्रकार नाटिक करइ कंचू विचि प्रीउडो मनि सँभरइ ॥ 106 ॥
   माधवानल कामकंदला, चउपई

माधवाजयन्ती का वियोग सहन नही कर सकता। उसका प्रेम भी सच्चा है, अत. वह छुपकर आकाश मार्ग से अप्सरा के घर जाता है। यहाँ माधव यह विद्या किसी से सीखता नही है स्वय ही चला जाता है।

यद्यपि काव्य मे यह निर्देश नही है कि उसे यह विद्या कैसे और कहाँ से प्राप्त हुई, पर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि अतिप्राकृत जन्म के प्रभाव से वह जन्म से ही उक्त विद्या प्राप्त रहा हो, जिसका उल्लेख करना कथाकार ने उचित नही समझा।

लोक-कथाओ मे प्राय ऐसी पादुकाओ का वर्णन मिलता है जिन्हे धारण करके कोई भी व्यक्ति आकाश मे उडकर एक स्थान से दूसरे स्थान पर जा सकता है।[1]

6. अदृश्य होने की शक्ति

आकाश गमन की शक्ति की तरह अदृश्य होने की शक्ति का भी कथाओ मे बहुत उपयोग किया गया है। अदृश्य होने के लिए प्राचीन कथाओ मे अजन, गुटिका, मंत्र या पादुका प्रयोग आदि के विवरण मिलते हैं। चित्रावली मे नायक सुजान नेत्रो मे अजन लगाकर और मुख मे गोटिका रखकर योगी के साथ अदृश्य रूप से रत्नावली की खोज मे निकलता है। वे दोनो सबको देखते हैं किन्तु उन्हें कोई नहीं देखता।

> नैनन्ह मह लुक अजन दीन्हा, औ मुख धालि गोटिका लीन्हा
> डडा ठोकि चले उठि दोऊ, वै देखहि उन्ह देख न कोऊ[2]

किन्तु दिव्य वस्तुओ की सहायता के बिना विद्या द्वारा भी अदृश्य हुआ जा सकता है। वत्सराज उदयन के बन्दी बना लिये जाने पर मत्री योगन्धरायण इस विद्या द्वारा ही महाचण्ड सेन के राजमहल मे पहुँचता है और इस प्रकार अदृश्य होता है कि वत्सराज के अतिरिक्त और कोई उसे देख नही पाता।[3] दशकुमार चरित मे वीरशेखर इस विद्या के द्वारा अदृश्य रूप से अवन्ति सुन्दरी के महल मे प्रवेश करता है। कथासारित्सागर मे 'प्रतिलोमा-नुलोमा' नामक एक ऐसी विद्या का उल्लेख जिसमे केवल सात अक्षर हैं और जिसका अनुलोम अर्थात् सीधा पाठ करने पर व्यक्ति अदृश्य हो सकता है और प्रतिलोम पाठ करने पर जो रूप चाहे धारण कर सकता है। श्रीमदत्त को गंगा द्वारा यह विद्या दी जाती है और इस विद्या को प्राप्त करके वह अनेक साहसिक और रोमांचक कार्य करता है।[4]

1. फोकटेल्स ऑव हिन्दुस्तान, पृ० 76
2. चित्रावली दो. सं 222
3. कथासारित्सागर-आदित्तरंग-12
4. कथासारित्सागर-आदि तरंग—74 पृ॰ 133-135

पश्चात्य कथाओं में भी इस अभिप्राय का बहुत अधिक प्रयोग किया है। ब्रैंड ने अपनी पुस्तक 'पापुलर एन्टिक्विटीज' में यूरोपीय कथाओं में अदृश्यता से सम्बद्ध विविध पद्धतियों का उल्लेख किया है।[1]

माधवानल कामकन्दला में भी इसी प्रकार का अभिप्राय मिलता है। कामकन्दला कामसेन के राज-दरबार में नृत्य कर रही है—इतने में एक भ्रमर आता है और नृत्य करती हुई कामकदला के कुच पर दंशन करता है। नृत्य में बिना किसी प्रकार के व्यतिक्रम के कामकन्दला उस भ्रमर को पवन स्रोत से उड़ा देती है—इस कला को केवल माधव ही देख पाता है।[2]

यहाँ यह अभिप्राय पूर्व जन्म की स्मृति भी कराता है। भ्रमर को कुच पर बैठा देखकर कन्दला की स्मरण शक्ति जागृत होती है और वह माधव को पहचान लेती है

> बिहु कुचविचि भमरू आवीयूं पूरव भव तिणि जाणवीउ
> जाति स्मरण लहइ वरतत, हूँ अपछर, अे माधवकत ॥ 206 ॥

7. मृत व्यक्ति का जीवित होना

मृत व्यक्तियों को जीवित कर देने का अभिप्राय भी कथाओं में बहुत प्रयुक्त हुआ है। इसका सम्बन्ध एक ओर तो मंत्र तंत्र तथा योग विद्या में विश्वास से है और दूसरी ओर मनुष्य की इच्छा पूर्ति से। प्रिय व्यक्तियों के मर जाने पर मनुष्य यह जानते हुये भी कि यह पुन जीवित नहीं हो सकता, यह इच्छा करता है कि किसी तरह यह जीवित हो जाये। मनुष्य की इस इच्छा की पूर्ति चूंकि वास्तविकता में नहीं हो पाती, इसलिए वह विविध उपायों की कल्पना द्वारा कथाओं में इसकी पूर्ति करता है।[3] कभी अतिमानव शक्तियों को सहायक बनाकर उसने अपनी इस कल्पना को कथाओं में वास्तविकता का रूप दिया है, तो कभी मृत-सजीवनी, मंत्र-

1 पापुलर ऐन्टिक्विटीज वाल्यूम 1, पृ० 315

2. बीजइ किण हिं न जाणयउ नहीं, अहे वात माधवि सांभलही
धन्य धन्य अे नाटिय कला, गणिका धन्य अे कामकन्दला ॥ 216 ॥
माधवानल कामकन्दला चउपई

3 After the death of a dear friend neither we, nor primitive People speculate as to what may have become of his soul, but we feel the ardent desire to undo what has happened and in the free play of fancy we see the dead come back to life
Mythology and Folklore Franz Boas Pg. 611

तथा अमृत आदि के द्वारा उसने मृत्यु पर विजय पाने की इच्छा को अभिव्यक्ति दी है।

रामचरित मानस मे मेघनाथ से युद्ध करते हुये लक्ष्मण को शक्ति लग जाती है। वैद्य-सुषेण संजीवनी बूटी मगाकर लक्ष्मण को पुन जीवन प्रदान करते हैं।

माधवानल कामकन्दला की दुखान्त कथा को इस अभिप्राय द्वारा सुखान्त बनाया गया है। निजन्धरी कथाओ के नायक महाराजा विक्रमादित्य उज्जैन के शासक हैं। वे माधव को उसका विरह दूर करने का वचन देते हैं और कामकंदला की प्राप्ति के लिए कामावती आते हैं। विक्रमादित्य कन्दला के प्रेम की परीक्षा लेने के लिये उसे माधवानल की मृत्यु का झूठा समाचार देते हैं—

> नगर-माहि सगलइ जाणीयउ, ब्राह्मण मिली बाहिरि आणीयउ
> मइ दीठउ अतिरूप सरीरि, दाध दियउ सिप्रा-नइ तीरि ॥ 574 ॥

यह सुनते ही कामकन्दला भी मूर्छित हो जाती है। राजा विक्रमादित्य माधव को भी कन्दला की मृत्यु का समाचार इस प्रकार देते हैं

> ताहरउ मरण सुणी ततकाल, कामकन्दला कीधउकाल
> मेह वात माधव संभली अडयउ हस गयउ नीकली ॥ 585 ॥

प्रिया की मृत्यु का समाचार सुनकर माधवानल का भी प्राणन्त हो जाता है। विक्रमादित्य अपने इस भयकर अपराध के प्रायश्चित मे चिता-जलाकर मरने के लिये तैयार होते हैं कि वेताल आकर उन्हे रोकता है और मरने का कारण पूछता है। सारा वृतान्त सुनकर वह पाताल से अमृत लाकर नायक-नायिका को पुन जीवित करता है

> मृतक रूप ते देखि नरिंद, सईहथि मुखि धइ अमृत बिंद
> ते जीवी मनि आणंदीयउ कहइ, कुडू मइ हासउ कीयउ ॥ 600 ॥

'वेताल पच विंशति' मे विक्रमादित्य की तान्त्रिक योगी से रक्षा करने वाले इसी वेताल द्वारा जो कथायें कही गई हैं, उनमे से कई कहानियां राजा, प्रेमी या पत्नी के प्राणोत्सर्ग के लिए प्रस्तुत होने पर दैवी शक्तियो द्वारा उनके मृत प्रियजनो को पुन जीवित कर देने के इसी अभिप्राय को लेकर कही गई हैं। वेताल पच विंशति के अन्य रूपान्तरो मे देवी स्वय वहाँ उपस्थित होती है और वेताल की तरह पाताल से अमृत लाकर मृत लोगो को जीवित करती है।

इसी अभिप्राय मे ऐसी लतायें और जड़ी बूटियाँ भी होती हैं, जिनमे संजीवनी शक्ति होती है। फ्रीयर के 'ओल्ड डेकनडेज' मे मृत राजकुमार को लेकर जगल में वृक्ष के नीचे बैठी हुई राजकुमारी को दो शृगालो की बातचीत से यह सूचना मिलती है कि राजकुमारी जिस वृक्ष के नीचे बैठी है, उसकी पत्तियों का रस यदि राजकुमार के कान, होठ तथा घावों पर लगा दिया जावे तो राजकुमार

जीवित हो जायेगा।[1] रामचरित मानस के हनुमान भी संजीवनी लाकर लक्ष्मण को जीवित करते हैं।

ढोलामारू मे भी मारवणी को पीना साँप पी लेता है तो शिव पार्वती उसे जड़ी-बूटी व मत्र-तत्र से ही पुनः जीवित कर देते है।

8. अज्ञान मे अपराध और, शाप

ऋषि, मुनि, देवी-देवता अथवा किसी अलौकिक-शक्ति सम्पन्न व्यक्ति का कथन कभी मिथ्या नहीं हो सकता। इस विश्वास से भारतीय जीवन अत्यन्त प्राचीन काल से प्रभावित और प्रेरित होता रहा है। इस प्रकार के व्यक्ति प्रसन्न होकर यदि कठिन और असम्भव कार्यो मे की सिद्धि में सहायक हो सकते हैं तो किसी कारण से उनके रूष्ट होने पर किसी का अनिष्ट भी हो सकता है।

भारतीय ऋषियो मुनियो तथा सात्विक ब्राह्मणो का सात्विक रोष ही शाप के रूप मे समूचे भारतीय साहित्य मे दिखाई पड़ता है। भौतिक शक्ति की तुलना मे मे आत्मिक शक्ति की महत्ता और श्रेष्ठता भी शाप की धारणा के मूल मे निहित दिखलाई पडती है। आत्मिक और दिव्य शक्ति रखने वाले व्यक्तियों को जानबूझ कर कष्ट पहुँचाने के अपराध मे शाप तो मिलता ही है अज्ञान मे कोई अपराध हो जाने पर भी उनके क्रोध का पात्र बनना पड़ता है। क्रुद्ध होकर यदि किसी ऐसे व्यक्ति ने शाप दे दिया तो उसका घटित होना निश्चित है, कोई उसे टाल नहीं सकता, शाप की अवधि मे कमी अवश्य कर सकता है या उसको मुक्ति का उपाय बता सकता है। शाप का प्रभाव व्यक्ति पर समान रूपसे पडता है।

ऐसे उपयोगी अभिप्राय से कथाकार को जहाँ कही भी कथा को दूसरी दिशा में मोडना हो, इस अभिप्राय से सहायता मिल सकती है, नायक नायिका के सामान्य सुखमय जीवन मे विषमता लानी हो, उन्हें शाप का पात्र बनाया जा सकता है। भारतीय पौराणिक और निजधरी कथा के इस प्रकार के शापो से भारी हुई हैं। कभी जान पात्र बूझकर ऐसा अपराध करता है, जिसके कारण उसे शाप मिलता है और कभी अनजान मे ही उससे कोई ऐसी गलती हो जाती है जिसके लिये उसे शाप का फल भुगतान पडता है। इस अभिप्राय के दो रूप हो गये हैं

1 जानबूझ कर अपराध और शाप

2. अज्ञान मे अपराध और शाप

रामचरितमानस मे रामावतार की प्रस्तावना इसी शाप की पौराणिक कल्पना को लेकर खड़ी की गई है। रामवतार की की हेतु कथाओ मे शाप को ही विष्णु के मानव योनि मे जन्म लेने का कारण बतलाया गया है।

जानबूझ कर अपराध करने के परिणाम स्वरूप शाप का अभिप्राय भी मुख्यत.

---

1. ओल्ड डेकन डेज, पृ० 136

पौराणिक और धार्मिक कथाओ मे ही आता है। इन कथाओं मे देवताओ, ऋषियों और धार्मिक व्यक्तियो की उपेक्षा करने या उन्हें कष्ट देने के परिणाम रूप धर्मद्रोही और अत्याचारी व्यक्तियो को शाप का भागी बनाकर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से धर्म पर चलने का उपदेश देना ही कथा का मुख्य उद्देश्य रहा है।

निजन्धरी कथाओ, कथा-काव्यो आदि मे अज्ञान मे अपराध और शाप का ही अभिप्राय रूप मे प्रयोग हुआ है। अज्ञान मे पात्रो से ऐसे कार्य हो जाते हैं जो किसी के क्रोध को जागृत कर दें। अतः कथाकार पात्र और चरित्र किसी को भी शाप का भागी बनाकर कथा को अभीष्ट दिशा मे ले जा सकता है। रामचरितमानस मे राजा भानुप्रताप को बिना किसी अपराध के शाप मिल जाता है इसका दूसरा उदाहरण श्रवणकुमार के अन्धे पिता द्वारा दशरथ को दिया गया शाप है। मृग के भ्रम में अनजान मे दशरथ के बाण से श्रवण कुमार की मृत्यु होती है जिससे दशरथ को अत्यधिक कष्ट होता है। किन्तु अन्धे पिता द्वारा उन्हें अपनी ही तरह पुत्र-वियोग मे जाने का शाप मिलता है। इस शाप के परिणाम स्वरूप दशरथ की राम के वियोग मे मृत्यु होती है। तुलसीदास ने शाप का सकेत मात्र दिया है

तापस अन्ध साप सुध आई। कौसल्यहि सब कथा सुनाई।

शाप का यही कथा रूप कथाओ मे विशेष रूप से मिलता है। पाण्डु को भी इसी प्रकार शाप मिलता है। पाण्डु ने दशरथ की तरह ही आखेट के समय मृग-मृगी को बाण से मार दिया, किन्तु वे ऋषि व उनकी पत्नी मृग-रूप में आनन्द मे मग्न थे। पाण्डु को यह पता नही था। ऋषि ने राजा को शाप दे दिया 'अपनी पत्नी के साथ सहवास करते हुए जिस अवस्था में मेरी मृत्यु हो रही है, उसी अवस्था तुम्हारी मृत्यु होगी। शाप का ऐसा कथा रूप दशकुमारचरित मे राजा साम्ब की कथा मे भी दिखाई देता है। कथासरित्सागर मे विद्याधर चित्रांगद को इसी प्रकार का शाप मिलता है।

कथा शिल्प के रूप मे इस अभिप्राय का सबसे सुन्दर उपयोग कालिदास के के अभिज्ञान शाकुन्तल मे मिलता है। अज्ञान मे अपराध के कारण ही शकुन्तला को दुर्वासा का शाप मिलता है। महाभारत के शकुन्तलोपख्यान मे दुर्वासा शाप की घटना नही है। कालिदास की घटना द्वारा दुष्यन्त के चरित्र को निष्कलक बना दिया है, क्योकि दुष्यन्त शाप के कारण शकुन्तला को नही पहचान पाता।

माधवानल कामकन्दला मे भी यह अभिप्राय दो जगह प्रयुक्त हुआ है। नायिका जयन्ती को इन्द्र से अपने रूप की प्रशसा सुनकर गर्व हो जाता है और वह बीच मे ही नाटक भग कर देती है, जिससे इन्द्र कुपित होकर शाप देता है

ईणइ रूपमद आण्यउ आप, कोप्यउ इन्द्र तसु दियउ सराप
अंगहीण सिल पाहाण हत्तणी, पृथ्वी पीठि हुजे पापिणी

जयन्ती के बार बार क्षमा मांगने पर इन्द्र उसे शाप से मुक्त होने का उपाय भी बताते हैं

प्रहुपावती नगरिनइ ठामि, ब्रह्मपुत्र माधव इणि नामि
करि रामति तुझ परणाविसइ, तदा तुझ काया अपछर हुस्यइ
॥ 27 ॥

दूसरी बार इस अभिप्राय का प्रयोग कथाकार ने नायक नायिका के सुखी जीवन को विषम बनाने के लिये किया है। माधव जयन्ति के यहाँ सुख से रहता है, परन्तु इन्द्र की सभा मे नृत्य करते समय जयन्ती उसे भ्रमर बना कर कचुकी मे छुपा लेती है। यह जयन्ती का अज्ञान था। इन्द्र सब बात जान जाता है और माधव से नेह तथा स्वर्ग लोक मे उसे लाने के अपराध मे जयन्ती को कुपित होकर वेश्या के यहाँ जन्म लेने का शाप देता है। शाप के कारण ही जयन्ती कामावती नगरी मे वेश्या के यहाँ कामकदला गणिका के रूप मे जन्म लेती है।

इस अभिप्राय के प्रयोग से कथाकार को माधव के विरह को प्रस्तुत करने का अच्छा अवसर मिला है। साथ ही अप्सरा का मानव योनि मे जन्म और उसके गुणो को असामान्य बताया गया है।

चरित्र चित्रण की दृष्टि से भी यह अभिप्राय बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ है। कथाकार को इस अभिप्राय से नायक नायिका के चरित्र को विकसित एव प्रभावशाली बनाने का अवसर मिलता है। इसके प्रयोग से सामान्य सुखी नायक नायिका के जीवन मे सघर्ष आता है फिर उनका विद्रोह हो जाता है और दोनो एक दूसरे को प्राप्त करने के प्रयत्न करते हैं। माधवानल कामकदला का नायक माधव भी जयन्ती को ढूँढने के लिए विरह-व्यथित अवस्था मे निकल पडता है। कथाकार ने माधव की विरहावस्था का बहुत ही सजीव वर्णन किया है। वह विक्रमादित्य के समझाये जाने पर भी कामकदला को छोड़ने को तैयार नही होता। यहाँ नायक के चरित्र की श्रेष्ठता मिलती है। अन्त मे कथाकार नायक नायिका का मिलन कामसेन राजा के यहाँ करा कर कथा को सुखान्त बनाता है।

9. देवी देवता (आविष्ट पात्र)

भारतीय कथाओ मे देवी देवता प्राय पात्रो की सहायता करते हैं। देवी देवताओ मे इन्द्र एव शिव पार्वती की चर्चा अधिक मिलती है। लोककथाओ मे तो प्राय शिव पार्वती भ्रमण के लिये निकलते है और किसी दुख मे पडे व्यक्ति को देखकर पार्वती अपनी दयालुता से प्रेरित होकर शिव को उसका दु ख दूर करने के लिए बाध्य करती है।

कुशललाभ ने इस अभिप्राय का प्रयोग कुछ नवीनता के साथ किया है। विरह व्यथित माधव शिव मन्दिर मे अपनी विरह गाथा लिखता है जिसे पढ़कर विक्रमादित्य उस विरही को ढूँढने एव उसके दुख दूर करने का वचन देते हैं। विक्रमादित्य ही शिव पार्वती की तरह माधव और कदला के प्रेम की परीक्षा लेते हैं।

नायक नायिका एक दूसरे का मरण सुनकर प्राण त्याग देते हैं। राजा विक्रमादित्य अपने कृत के प्रायश्चित स्वरूप स्वय भी आत्महत्या करना चाहते हैं। वे मानव हैं, इसलिये जीवित तो कर नही सकते। उसी समय राजा का सहायक मित्र वेताल आता है जो राजा की सहायता करने के लिए 'विक्रमचक्र की कथाओ' मे प्रसिद्ध है। वेताल देवी देवताओ की तरह ठीक समय पर आकार पाताल से अमृत लाता है और कामकदला व माधव को पुन.जीवित करता है। अन्य कथाओ मे वेताल शव मे प्रविष्ट होकर कौतुक दिखाता है।

इस तरह कथाकार ने अलौकिक पात्रो मे दिव्य-पात्र शिव पार्वती अर्थात् देवी देवता का सहारा न लेकर अदिव्य पात्र वेताल का ही उपयोग किया है।

10. भविष्य सूचक स्वप्न

स्वप्न भविष्य की सूचना देते हैं यह विश्वास किसी न किसी रूप मे सभी देशो मे वर्तमान रहा है। कथाकारो को यह अभिप्राय बहुत ही प्रिय रहा है। यही कारण है कि भारतीय कथायें भविष्य मे घटित होने वाली घटनाओ की सूचना देने वाले विविध प्रकार के स्वप्नो से भरी हुई हैं। कथा-सरित्सागर मे स्वप्न तीन प्रकार के बताये गये हैं—अन्यार्थ, यथार्थ और अयार्थ। जिस स्वप्न के फल का तुरन्त पता चल जाये उसे अन्यार्थ, जिसमे देवता द्वारा कोई आदेश दिया जाये वह यथार्थ तथा गाढ अनुभव और चिन्ता आदि के कारण देखा हुआ स्वप्न अयार्थ कहलाता हैं।[1] साथ ही स्वप्नफल का शीघ्र या देर से प्राप्त होना स्वप्न देखने के काल पर निर्भर करता है। यह विश्वास किया जाता है कि रात्रि के अन्तिम प्रहर मे देखा हुआ स्वप्न शीघ्र फल देने वाला होता हैं।[2] यह अभिप्राय रामचरितमानस तथा अन्य काव्यो मे किसी न किसी रूप मे प्रयुक्त हुआ है। कही तो कथा को इससे गति मिलती है और कही शुद्ध चमत्कार उत्पन्न करने और आश्चर्य तत्व ले आने के लिए इसका उपयोग हुआ है। रामचरितमानस मे राक्षसो के वध, रावण की मृत्यु और विभीषण की राज्य प्राप्ति के सम्बन्ध मे त्रिजटा द्वारा देखा गया स्वप्न चमत्कारिकता,के साथ साथ भविष्य की भी सूचना देता है।

1. स्वप्नश्चानेकधान्यार्थो यथार्थोऽयार्थ एव च।
   य सद्य. सूचयत्यर्थमन्यार्थ सोऽभिधीयते ॥
   प्रसन्नदेवता देशरूप स्वप्नो यथार्थक।
   गाढानुभव चिन्तादिकृतमाहुर पार्थकम् ॥
   46/147-148
2. चिरशीघ्रफलत्वं च तस्य काल विशेषत।
   एष रात्र्यन्तदृष्टेस्तु स्वप्न शीघ्र फलप्रद ॥ 46/151

माधवानल कामकन्दला मे भी इस अभिप्राय का प्रयोग हुआ है। पुरोहित शंकरदास पुत्राभाव से सदैव दुःखी रहता हैं। पुरोहित शंकरदास यहाँ यथार्थ स्वप्न देखता है—

> अेक राति प्रोहित दुखधरी, सूतउ सुहणक आव्यउ हरि
> संभलि प्रोहित संकरदास। हू त्रूठउ तुम्ह पूरउ आस ॥ 50 ॥

शिवजी स्वप्न मे पुत्र प्राप्ति का उपाय वताते हैं जिससे शंकरदास को गंगातट पर स्वप्न के अनुसार ही पुत्र की प्राप्ति होती है। इस अभिप्राय के प्रयोग से कही तो कथा की गति मिलती है और कही शुद्ध चमत्कार उत्पन्न करने और आश्चर्य तत्व ले आने के लिये इसका उपयोग होता है।

कुशललाभ ने इस अभिप्राय का प्रयोग कथा को गति प्रदान करने के उद्देश्य से किया है। स्वप्न से प्राप्त पुत्र ही कथा का नायक है और उसी के सहारे पूर्ण कथा चलती है। पुत्र प्राप्ति के वाद माधव के जन्म उत्सव व शिलारूपी अप्सरा से विवाह विछोह और माधव का विरह व्यथित हो घूमता आदि कथा मोड़ो से कथा को गति मिली है। कथाकार अपने उद्देश्य के अनुसार कथा मे इस अभिप्राय का प्रयोग करता है।

11. किसी स्त्री के प्रेम का तिरस्कार और मिथ्या लांछन

हिन्दी प्रवन्धो मे गणपति कृत माधवानल कामकदला मे नायक का देश निष्कासन इसी प्रकार होता है। माधव पुष्पावती के महाराज गोविन्दचन्द का रक्षित पुत्र था, जिस पर महाराज की पटरानी रुद्रादेवी आसक्त हो गई। एक दिन उन्होंने अपना प्रेम माधव पर प्रकट किन्तु माधव ने इस प्रेम को अनुचित वतलाया। रुद्रादेवी ने माधव के इस व्यवहार पर क्रुद्ध होकर प्रतिशोध लेने का निश्चय किया और कोप भवन मे जा पहुची। राजा के पूछने पर उन्होने बताया कि माधव बड़ा कामी है और उसकी दृष्टि रनिवास की प्रत्येक नारी पर है। आज उसने मेरे साथ भी कुत्सित व्यवहार करना चाहा था। राजा ने माधव को अपने राज्य से निकाल दिया जो कि स्वाभाविक ही था।[1]

जैसा कि पेंजर ने लिखा है 'किसी स्त्री के प्रेम का तिरस्कार होने पर उसका प्रतिशोध के लिये षडयन्त्र करना स्वाभाविक है और यह अभिप्राय ससार के प्रत्येक कथा संग्रह मे किसी न किसी रूप मे मिलता हैं।[2]

1 माधवानल कामकंदला प्रवन्ध–गायकवाड ओरियन्टल सीरिज पृष्ठ 42–47

2 'As is only natural, the Motif of the revenge of a woman whose love has been scorned enters in the nearly collection of steries in the world

The Ceean of Story Vol. II P. 120

कुशललाभ कृत माधवानल कामकंदला मे कवि ने इस अभिप्राय का प्रयोग परम्परा से कुछ हट कर और नये एव मौलिक रूप मे किया है। माधव पुष्पावती के राज्य पुरोहित का पुत्र है। वह राजा के यहाँ मन्दिर मे पूजा हेतु जाता है। माधव नगर मे जहाँ भी जाता है नारियाँ उसकी सुन्दरता और कला के वशीभूत हो गृह-कार्य छोड उसे देखने को आतुर हो जिस मार्ग से माधवजाता है, उसी मार्ग पर चल देती हैं। कथाकार ने यहाँ माधव को इन सब बातो से अनभिज्ञ बताया है।

प्रजा राजा को सब वृतात कह कर अन्त मे फैसला करती है कि या तो माधव को देश से निकाला जाये या प्रजा को। राजा माधव को बुलाकर कला-प्रदर्शन देखता है। माधव के रूप पर राजा की सातो रानियाँ मोहित हो जाती हैं और कुछ तो इतनी कामासक्त हो जाती हैं, कि राजा उन्हे देखकर क्रोधित होता है और माधव को देश निकाला दे देता है

त्रिण्हि पाननउ बीडउ करी, राजा घणू कोप मनिधरी।
माधवनइ दीधउ आदेश, तू छडिजे अह मारू देस ॥ 153 ॥

यहाँ कथाकार ने न तो किसी स्त्री से प्रेम निवेदन ही कराया, न ही किसी स्त्री ने मिथ्या लाछन ही लगाया है। कवि ने अपने कल्पना चातुर्य से इस अभिप्राय का नूतन रूप प्रस्तुत किया है। उन्होने माधव की अत्यधिक सुन्दरता को ही इसका दोषी ठहराया है

अति रूपइ सीता अपहरी, अति दानइ बलि बध्यउ हरि
अति गवइ रावण गजीउ, अति सर्वत्र सदा वरजीउ ॥ 150 ॥

अति सर्वत्र बुरी होती है। सीता अत्यधिक रूपवान थी, इसलिये रावण ने उसका हरण किया—दान की अधिकता के कारण ही हरि ने बलि को बाधा। रावण को अपनी शक्ति का अतिगर्व था, वह भी चूर हुआ। अत माधव का अत्यधिक रूपवान होना ही उसके लिये कठिनाईयों का कारण बना।

12 कथा के पात्र-प्रेम-संघटक और सन्देश वाहक के रूप मे

प्रेम-सघटक के रूप मे कथाकारो ने शुक हंस आदि पक्षियो का सहारा लिया है। कुछ काव्यो मे यह कार्य सखियो द्वारा भी सम्पन्न हुआ है। 'मधुमालती' मे जैतमाल की सखी यह कार्य करती हैं तो 'रूप मंजरी' मे इन्दुमती।

ढोलामारू मे भी यह रूढि दो स्थानो पर आई है। प्रथम बार तो उस समय जब मुग्धा नायिका मारू विरह के उठते हुये महार्णव की थाह खोज रही होती है। सखियाँ रानी को मारवणी की विरह-व्यथा से अवगत करा कर इस अभिप्राय को सफल बनाती हैं। दूसरी बार ढोला के पूगल पहुँचने पर मारवणी की सखियाँ ही मारवणी को ढोला से मिलनार्थ उसके शयन कक्ष मे पहुँचाती हैं।

कुशललाभ ने ढोला मारू में यह कार्य जहाँ सखियों से सम्पन्न कराया है वहाँ माधवानल कामकदला में यही कार्य उज्जैन के शासक विक्रमादित्य से करवाया है। विरह व्यथित माधव उज्जेन पहुँचता है और शिव मन्दिर में अपनी विरह-गाथा लिखता है। विक्रमादित्य उस गाथा से न केवल विरही माधव का ही पता लगाते हैं, वरन् उसे कदला से मिलवाने का वचन भी देते हैं और कामवती नगर मे माधव और कदला का मिलन भी करवा देते हैं।[1]

13. प्रहेलिका-आयोजन

नायक नायिका के परस्पर प्रेमाकर्षण को तीव्र बनाने के लिये पहेली पूछने की कथानक रूढि का प्रयोग किया है। ढोला एवं मारू के प्रथम स्नेह मिलन पर यह कथानक रूढि आयोजित हुई है। ढोला पहेली पूछता है और मारू उसको उत्तर देती है।

माधवानल-कामकदला मे भी इसी प्रकार का प्रयोग हमे मिलता है। कामकदला कहती है

कामकदला इम कहइ 'अजी अछइ वहु राति
गाहा गूढा गीयरस, कहइ को नवली वाति ॥ 260 ॥

माधव कामकदला से पहेली पूछता है

सु दरि। मदिर अप्पणइ रमणी नाद सलीण
वीण अलापी देखिसि, किण गुण मूकी वीण ? ॥ 283 ॥

कामकदला इस पहेली का उत्तर इस प्रकार देती है

विरह वियापी रयणि-भरि, प्रितम विणतनु खीण
ससहरथि मृग मोहिउ, तिणि हसि मूकी वीण ॥ 284 ॥

प्रहेलिका आयोजन एक ओर राजस्थान के सामाजिक परिवेश को उद्घाटित करता है तो दूसरी ओर नायक नायिका के चरित्र के विकास मे भी पूर्ण रूप से सहायक होता है। इस प्रसग मे साहित्यिक विनोद की यही उपयोगिता है कि इससे रति भाव का उद्दीपन होता है। अधिकाश पहेलियाँ साहित्य विश्रुत हैं। इनमे नायक नायिका की मौलिक कल्पना को ढूँढना व्यर्थ है क्योकि ऐसे अवसरो पर साहित्य प्रसिद्ध पूर्वागत पहेलियो का प्रयोग ही उचित समझा जाता है। ऐसा प्रयोग प्राचीन भारतीय कहानियो और विशेषत' प्रेम कहानियो मे वाक्चातुर्य और विनोद वृत्ति का बहुत सा साहित्य भरा पडा है। प्राकृत और अपभ्रंशकाल के दूहा साहित्य मे इस प्रकार का कुछ भाग अब भी सुरक्षित मिलता है। माधवानल कामकंदला मे

1. नगरमांहि महोच्छव कीयउ, राजा विकमधरितेडीयउ
कामकंदला तेडी करी, माधव दीधी सुन्दरी
माधवानल कामकंदला चउपई—616

प्रयुक्त अधिकाश प्रहेलिकायें अपभ्रंश साहित्य से लेकर कथा मे अनस्यूत कर दी गई हैं।

गाहागीत विनोद रस, सगुणाँ दीह लियति
कइ निद्रा कह कलह करि मूरखि दीह गमति ॥ 263 ॥

हितोपदेश के निम्न श्लोक का भाव इस दोहे मे बडी सुन्दरता के साथ प्रकट किया गया है

काव्यशास्त्र विनोदेन कालोगच्छेति धीमताम्
व्यसनेन च मूर्खाणा निद्रया कलहेन वा ॥ 262 ॥

14. प्रेम परीक्षा

कभी कभी नायक अथवा नायिका की मृत्यु पर उसी के समान रूप धारण करके जाना या उसी नायक के समान रूप गुण वाली कन्या से विवाह प्रस्ताव रखकर प्रेम निष्ठा की परीक्षा ली जाती है। इनके अलावा कभी कथाकार नायक नायिका के प्रेम की परीक्षा लेने के लिये एक दूसरे को नायक और नायिका की मृत्यु की झूंठी सूचना दे देता है।

ऐसे ही अभिप्राय का प्रयोग माधवानल कामकंदला मे हुआ है। विक्रमादित्य द्वारा दिये गये प्रलोभनो मे न आकर माधव गणिका कदला को ही प्राप्त करना चाहता है। तव विक्रमादित्य सेना सहित कामावती आता है।[1]

तेजसार रास की कथानक रूढियाँ

1, स्वप्न द्वारा भावी घटनाओ की सूचना

कथानायक या किसी अन्य पात्र द्वारा देखे गये स्वप्नो के अनुरूप भावी घटनाओ की आयोजना भारतीय कथानको की अत्यन्त प्रचलित रूढि है। विभिन्न कथाकारो ने कथानक को गति, विस्तार अथवा मोड देने के लिये इस रूढि का प्रयोग विभिन्न प्रकार से किया है। वाणभट्ट के 'हर्षचरित' मे रानी यशोवती ने स्वप्न देखा कि सूर्य मण्डल से दो कुमार और एक कन्या निकल कर पृथ्वी पर उतरे और उसके उदर मे प्रविष्ट हो गये। कालान्तर मे इस स्वप्न-फल के विचारानुसार रानी ने राज्यवर्धन, हर्षवर्धन और राज्यश्री को जन्म दिया।[3] इसी प्रकार 'दशकुमार चरित' मे मगध की

1. माधवसहित कटक संजती, आव्यउ नगरी कामावती
दल कतयंच नगर गोयरह राजाविहू परीक्षा करइ ॥ 538 ॥
2 कामकंदला कामिणी माधव विप्र सुजाण
साचू नेह स्यूं जाणिइ, जे इम छंडइ प्राण ॥ 590 ॥
3 हर्ष चरित (एक सांस्कृतिक अध्ययन) डा० वासुदेवशरण पटना 1953 पृ 64

पटरानी वसुमति ने रात के अन्तिम प्रहर मे एक सुखदायक सपना देखा, कि महाराज राजहस को कही से कल्पवृक्ष का फल मिल गया है।[1] स्त्रियो का स्वप्न मे फल देखा जाना सन्तानवती होने का प्रतीक माना जाता है। गर्भवती होने से पूर्व स्वप्न देखा जाना एक प्रचलित अभिप्राय रहा है। यहाँ तक कि लोकगीतो मे भी इस अभिप्राय का उल्लेख मिलता है

पहिल सपन एक देखेउँ, अपने मदिर मे रे
सासु सपने का करउ विचार सपन सुम पावँऊ
सपने ससुर राजा दशरथ बगिया लगावइ हो
सासु बगिया मे फुलइ गुलाव भँवर रस बिसलइ हो।[2]

गर्भ या सन्तान से सम्बद्ध सपनो मे फूल, के अलावा किसी योगी द्वारा दिया गया फल खाने से भी सतान प्राप्ति होती है।

तेजसार रास के कथाकार कुशललाभ ने इस अभिप्राय को नवीन रूप दिया है। वीरसेन राजा की रानी पद्मावती स्वप्न मे घृत से परिपूर्ण प्रज्वलित दीपक देखती है। रानी यह स्वप्न राजा को बताती है। स्वप्न फल बताने वालो से राजा स्वप्न के बारे मे पूछता है तब वे कहते हैं

तुम्ह कुल माहि दीप समान, हुस्यइ पुत्रते रूप निधान
सुपन कथक सतोष्या सहू, माता पिता मन उच्छव बहू ॥ 9 ॥

2. फल खाने से गर्भस्थिति

यही नही कुशललाभ ने प्राचीन प्रचलित अभिप्राय 'फल खाने से गर्भ धारण' को भी अपने कथा काव्य मे अपनाया है। अवतीपुर के राजा जय के कोई सन्तान नहीं होती है और वह इसी दुख से बहुत दुखी रहता है। रानी पुत्र प्राप्ति के लिये सभी देवी देवताओ को पूजती है तब एक योगी उसे फल देता है जिसके प्रभाव से रानी को गर्भ रहता है

देव देवनी पूजा करै, राणी पुत्र काजि बहु फिरै
तिसै एक फल जोगी दीयो, तास प्रमाण गर्भ तस थयो ॥ 55 ॥

3. विमाता विद्रोह या सौतिया डाह

लोक कथाओ मे और लोकजीवन मे भी किसी एक व्यक्ति की दो पत्नियो के बीच वैर-भाव और उनके द्वारा उत्पन्न किये गये गृह कलह के उदाहरण बहुत मिल जाते हैं। सौतिया डाह की यह भावना विमाता विद्रोह के दृश्य भी उपस्थित कर देती है।

1. दशकुमार चरित, अनुवादक प० निरजनदेव, बंबई प्रथम संस्करण—पृ० 18
2 कविता कौमुदी (तीसरा भाग) पं० रामनरेश त्रिपाठी, बंबई 1955 पृ० 195

विमाता के द्वारा सौत की सन्तान के प्रति विद्वेष और उसके विरुद्ध विभिन्न षड्यन्त्रों का आयोजन लोक-कथाओं का एक प्रिय अभिप्राय है। उदाहरण के लिये 'ध्रुव' की कहानी ली जा सकती है। राजा ने बड़ी रानी के आग्रह से सन्तान प्राप्ति के लिये दूसरा विवाह किया। नई रानी ने आते ही बड़ी रानी को निकाल दिया। कुछ समय बाद दोनों के पुत्र पैदा हुये। छोटी रानी ने अपने पुत्र को राजगद्दी का वास्तविक उत्तराधिकारी बताया और बड़ी रानी का पुत्र 'ध्रुव' जंगल में तपस्या करने चला गया।[1] लोक-कथाओं का यह अभिप्राय थोड़े-बहुत परिवर्तन के साथ मानस मे भी चित्रित है। लोक-जीवन की एक साधारण विमाता की भांति कैकेयी राजा दशरथ से अपने पुत्र भरत के लिये राज्य मांगती है और राम को चौदह वर्ष का वनवास। उसे राजा से दो वरदान लेने थे उनका यथावत् उसने उपयोग किया। वह चाहती तो राजा से और कुछ मांग सकती थी, किन्तु सौत के पुत्र राम को राजा के रूप मे देखना उसे स्वीकार नही था और उसने वही किया जो लोक-कथाओं की विमातायें अपनी सौत के पुत्र के लिये अक्सर करती हैं। राम निर्वासन का यह प्रसग वाल्मिकी रामायण के अनुरूप ही है। डा कामिल बुल्के ने राम के वनवास के कारण को 'सबसे प्राचीन', 'प्रचलित' और 'प्रामाणिक' माना है।[2]

किन्तु लोक प्रचलित कथाओं मे विमाताओं द्वारा इस प्रकार के आचरण के अनेक उल्लेख मिलते हैं। 'तेजसार रास' में भी हमे यह कथा अभिप्राय देखने को मिलता है। राजा वीरसेन अपनी प्रथम पत्नी की मृत्यु के पश्चात् दूसरा विवाह कर लेते हैं। पूर्व पत्नी से उनके तेजसार और दूसरी से विक्रमसिंह नाम के दो पुत्र हैं। विक्रमसिंह की माता जानती है कि तेजसार बड़ा है और राज्याधिकारी भी वही होगा। विमाता यह कब सहन करे कि उसका पुत्र गद्दी पर न बैठे और सौत का पुत्र राज्य सुख भोगे। अत वह राजा व मंत्रियों को तेजसार के विरुद्ध भड़काती है। परिणाम-स्वरूप तेजसार गृह कलह के कारण गृह त्यागकर चला जाता है

जाण्यु रोष पिता मन घणो ते जीतु नसि है ताजणो
मत्र रे कोयु अटकलइ मध्य राति तिहां थी नीकलइ ॥ 18 ॥

विमाता व विमाता पुत्र के कारण राजा भी तेजसार से नाराज हैं। इसलिये मध्यरात्रि को तेजसार घर छोड़कर चला जाता है। तेजसार रास की कथा मे तेजसार का गृह त्यागना लोक-कथाओं के विमाता विद्रोह या विमाता द्वारा किये गये षड्यन्त्र का ही रूप है।

4. वन में मार्ग भूलना

कथा को नई दिशा देने और रोमाचक घटनाओं की योजना द्वारा चमत्कार और कुतूहल उत्पन्न करने के लिये कथाओं मे इस अभिप्राय का प्रयोग सबसे अधिक

1 आदि हिन्दी की कहानियाँ और गीते—राहुल सांस्कृत्यायन पटना, 1951 पृ. 12-13
2. रामकथा, डा. कामिल बुल्के प्रयाग 1950, पृ. 320

हुआ है। कलाकार इसके प्रयोग द्वारा अपनी वस्तु योजना के अनुसार कथा को जिस दिशा में चाहे मोड सकता है। मध्यकाल के कथानको के प्रेम और साहसिक कार्यों का प्रारम्भ प्राय इसी घटना से होता है। नायक आखेट के लिये वन मे जाते हैं और किसी कारण से मार्ग भी अवश्य भूल जाते है। मार्ग मे राक्षस या सुन्दर स्त्री का मिलना अथवा अन्य घटना के घटित होने से नायक उसका प्रमुख पात्र वन जाता है। जिससे कथा अपने आप आगे वढती हुई दूसरी दिशा को ग्रहण करती है।

तेजसार का गृह त्यागकर जगल मे जाना और वहाँ उसे राक्षस का मिलना कथा को नया मोड देता है। राक्षस उसे मार डालने का प्रपच करता है। किन्तु तेजसार अपनी तीक्ष्ण बुद्धि से अपने वचाव के उपाय सोच लेता है।

अमानवीय शक्तियाँ कभी-कभी नायक के सहायक के रूप मे भी अवतरित होती हैं। तेजसार भी अपनी युक्ति से वच तो निकलता है परन्तु राक्षस उसका पीछा करता है। ऐसे समय पर योगी उसे एक मत्रित दड देता है जिससे वह राक्षस को मारता है

झाली दण्ड कुमर नीसरइ देखी से राक्षस मन माहि डरइ
थाई जेहवइ वांवें जइयउ, दड सकति राक्षस मुइ पडयउ ।। 48 ।।

5. राक्षस द्वारा कन्या हरण

किसी राक्षस द्वारा किसी कन्या का हरण भारतीय साहित्य का एक अत्यन्त प्रचलित अभिप्राय है। राक्षस या जोगी कन्याओ का हरण कर उन्हे बदिनी के रूप मे रखता हैं और नायक इन राक्षसो को मारकर उन कन्याओ की रक्षा करता है। इस अभिप्राय का प्रयोग करने वाली कथाओ में राजकन्याये इन अतिमानव शक्तियो द्वारा अपहृत होकर इन जनशून्य नगरो मे लाई जाती हैं। इसी का एक अन्य रूप उन कथाओ मे दिखलाई पडता, है, जिनमे नायक-नायिका मिलन और प्राप्ति के वाद नायिका किसी राक्षस-विद्याधर आदि द्वारा हरण होता है और अन्त मे अपहरण करने वाले को मारकर नायक-नायिका को पुन प्राप्त कर लेता है। सीता हरण की घटना इसी अभिप्राय का कथा रूप है।

वाल्मिकी और होमर के महाकाव्यो मे नायिका हरण ही कथा का मूल अभिप्राय है। कथासरित्सागर मे नरवाहनदत्त की रानी और कथा की नायिका मदनमंचुका का मानसवेग द्वारा उसी प्रकार हरण हुआ जिस प्रकार रावण ने सीता का हरण किया था। सीता की तरह ही माया द्वारा मानसवेग ने मदनमंचुका का हरण कर उसे सेवको से रक्षित उद्यान मे रखा। सीता हरण का पता जहाँ जटायु देता है वहाँ विद्याधरी वेगवती द्वारा मदनमचुका के हरण का वृतांत मालूम होता है। सीता हरण की घटना से ही यह अभिप्राय लिया गया है।

कुतवन कृत 'मृगावती' मे चन्द्रगिरी का राजकुमार रूक्मिणी नाम की राजकुमारी को किसी राक्षस के पजे से छुडाता है। मझनकृत 'मधुमालती' मे राजकुमार

मनोहर एक राक्षस को मारकर उसके द्वारा अपहृत कन्या को मुक्त करता है। सूरसागर में इसी तरह के कई उपाख्यान उपलब्ध होते हैं जिनमें श्रीकृष्ण किसी न किसी राक्षस को मारकर उसके द्वारा अपहृत कन्याओं का उद्धार करते हैं। उदाहरण के लिये भौमासुर 16 हजार राजकुमारियों को हर ले गया था और उन्हें वन्दिनी वना रखा था लेकिन श्रीकृष्ण ने उसे ससैन्य मारकर उन्हें मुक्त करा दिया।[1]

इस प्रकार राक्षस द्वारा कन्याहरण का अभिप्राय अनेक प्राचीन कथाओं में उपलब्ध होता है, कोई राक्षस या असुर किसी राजा की राजकुमारी को चुरा ले जाता है और फिर कोई राजकुमार उसे मारकर राजकुमारी को मुक्त कराता है।

प्राकृत-अपभ्रंश के जैन चरित काव्यों में भी यह अभिप्राय बहुत प्रयुक्त हुआ है। तेजसार रास में कथाकार ने इस अभिप्राय को नवीन रूप दिया है योगी राजकुमारी विजयश्री का अपहरण करता है, और उसे जंगल में ले जाता है। नायक तेजसार उसके करुण क्रन्दन को सुन उस ओर जाता है और राजकुमारी को बंधी हुई देखता है। वह उसे छोड़ने को कहता है, योगी और तेजसार में युद्ध होता है और योगी मारा जाता है

> मन्त्र भणी ने बांधी मूठि, प्राणे योगी हणीयउ पूठि
> कुमर तणी विद्या नवि सही, पडयउ भूमि मूर्छा गतवई ॥ 90 ॥

यहाँ कथाकार ने पूर्वभव का सहारा लिया है। विजयश्री के अपहरण की बात का कथाकार बहुत ही चमत्कारिक ढंग से उद्घाटन कराता है

> ते वलता जपे केवली, सामलि राजा कारण वली
> वार जोयण अटवी कतार लहिस्यै योगी मत्र आधार ॥ 103 ॥
> ते मारिस्ये विद्या ने कामि तेजसार आवेस्यै तिण ठामि
> झूझकरी ते छोडावस्यै, ते भरतार एहनो हुस्यै ॥ 104 ॥

6. रूप परिवर्तन

दिव्य शक्ति या विद्या के द्वारा रूप परिवर्तन की कथाओं से सभी देशों का साहित्य भरा पड़ा है। ये अलौकिक और अतिमानव प्राणी स्वेच्छा से जब जो रूप चाहे धारण कर सकते हैं। भारतीय देवताओं में इन्द्र, सूर्य और शिव-पार्वती आदि गरीब ब्राह्मण, कोढ़ी आदि का रूप धारण करते हैं। देवताओं के अतिरिक्त अन्य अतिमानव शक्तियाँ, मानव विरोधी शक्तियाँ, राक्षस, पिशाच, भूत-वेताल, विद्याधरी, व्यंतरी आदि के कथा रूप विशेष महत्व रखते हैं। वे दुष्ट अतिमानव प्रायः रूप परिवर्तन कर नायक को संकट में डालते हैं।

श्रीमती पुरुष रूप धारण करती है

> मास दिवस लगि जोती फिरी, अनुक्रमि आवी चम्पापुरी
> आपनी करी पुरष नो वेस, पूछे कुणपुर कवण नरेस ॥ 228 ॥

---

1. सूरसागर नागरी प्रचारिणी सभा, काशी द्वितीय संस्करण सं. 2009

- पडयाणी विद्यावल से अपना रूप वदलती है

मूकी वस्त्र लोटइ खड माहि, विद्यावलि ते रासमी
वे पहुर राति वउली जेतलैं पडयाणी ऊठी तेतलै ॥ 56 ॥

तेजसार रास के नायक तेजसार को योगी अपने प्राणो की भीख के वदले मे उसे रूप परिवर्तन की विद्या सिखाता है

एहु मन्त्र तु जपीनइ जोइ, ताहरू रूप न देखइ कोई
वीजइ मन्त्र तु जपीनइ जोइ, जे चीतवइ तिस्यु रूप करई ॥ 194 ॥

योगी उसे एक मन्त्र के जपने से उसके रूप को कोई नही देख पायेगा तथा दूसरे मन्त्र के प्रभाव से वह जैसा रूप चाहेगा, वना सकता है। इस प्रकार दो मन्त्र वह रूप परिवर्तन करने के सीखता है।

तेजसार और विद्याधर का युद्ध होता है और दोनो ही अपने रूप निम्न प्रकार से वदलते है-

विद्याधर वल फेरी रूप, विद्याधर थयउ हाथी रूप
तेजसार पिण मंत्रइ करी सवल रूप थये केसरी
वली विद्याधर फेरी अग कृष्णवर्ण ते थयु भुयग
मोर रूप ते थयो कुमार, पूंछ झालि ऊडयो तेवार ॥ 162–63 ॥

7. मन्त्र युद्ध

तत्र-मत्र देवी शस्त्रास्त्र और माया द्वारा युद्ध के अनेक उदाहरण मानस मे मिलते हैं। मेघनाद और लक्ष्मण युद्ध के समय मेघनाद युद्ध करते-करते गायव हो जाता है या एक साथ ही विभिन्न रूप धारण करके लड़ता है

एकहि एक सकइ नहिं जीति, निश्चर छलवल करइ अनीति।
क्रोधवत तव भयउ अनन्ता भजेउ रथ सारथी तुरता ॥

रावण राम से युद्ध करते समय प्रवल मर्कटो की सेना को देखकर अपनी माया का विस्तार करता है और वेताल, भूत, पिशाच, योगनियाँ आदि आसुरी शक्तियाँ प्रकट होकर वन्दरो और भालुओ को डराने लगती हैं।

तत्र-मत्र या माया द्वारा युद्ध रचना की यह रूढि भारतीय कथाकारो को अत्यन्त प्रिय रही है। कथासरित्सागर मे इस प्रकार के मन्त्र-युद्ध के कई उदाहरण है। पृथ्वीराज रासो के 'चन्द द्वारिकागमन' नामक 42वें समय मे चन्द मत्र-वल से अमरसिंह के रथ को आसमान मे उडा देता है। इसी प्रकार 'महोवायुद्ध' के प्रसग मे आल्हा निद्रास्त्र का प्रयोग करता है और पृथ्वीराज के सैनिको को नीद आने लगती है।[1]

1· पृथ्वीराज रासो की कथानक रूढ़िया—डा० व्रजविलास श्रीवास्तव, वम्बई 1955 पृ० 112

'तेजसार रास' मे इस अभिप्राय का कई स्थानों पर प्रयोग हुआ है। प्रथम बार जब तेजसार राक्षस के चंगुल से छूटकर एक योगी के यहाँ शरण लेता है तब योगी उसे एक दण्ड देता है-

एह दण्ड जेहुनर हुवइ पास, भूत प्रेत नवि जाइ तासि ॥ 47 ॥

राक्षस तेजसार को दो विद्या देता है

मन्त्र मणीनउ बांधइ मूंठि प्राण करी मूकावि जस पूठि
ते पडस्यइ मूर्छा गत सही, विद्या ते कुमरइं संग्रही ॥ 51 ॥
बीजीवली घटक थमणी मन्त्र शक्ति न मचाइ वो हणी
विद्या सीखावि राक्षस गयउ, कुमर दीपक अति हरषित थयउ ॥ 52 ॥

तीसरी जगह जब विद्याधर के साथ तेजसार का युद्ध होता है और दोनों रूप परिवर्तन करके लड़ते हैं तब विद्याधर समझ जाता है कि यह कोई साधारण व्यक्ति नही है

तब विद्याधर चिन्तइ नरो, पुरुष एह नही पाधरो ॥ 63 ॥

तब वह युद्ध छोड़कर शक्ति देव की उपासना करता है

तेह मन्त्र तिण समरयो जिसे ते प्रजपति मानी तिसै
कुमर एकलउ एकार पासि, देवी फूक चढी आकासि ॥ 65 ॥

8. मन्त्र द्वारा स्थान परिवर्तन

इस रूढि का प्रयोग शेख कुतुबन ने 'मृगावती' में दो स्थानों पर किया है। मृगावती मन्त्र शक्ति द्वारा स्थान परिवर्तन की विधा जानती है और जब कचेन नगर का राजकुमार उस पर मोहित होता है तो वह उसे धोखा देकर अन्य स्थान को चली जाती है। राजकुमार किसी तरह उसे ढूँढ लेता है और दोनों का विवाह हो जाता है, किन्तु मृगावती राजकुमार को फिर धोखा देती है और वह अपनी मन्त्र शक्ति से उड जाती है। राजकुमार उसकी खोज में योगी बन जाता है।[1]

कुशललाभ कृत 'तेजसार रास' मे कथाकार ने इस अभिप्राय का नवीनतम प्रयोग किया है। विद्याधरी श्रीमती तेजसार का पता लगाने जाती है तब अपनी अन्य बहिनो के लिए मन्त्र बल से प्रसाद आदि बनाती है

श्रीमती यै विद्या परमाणि, कीयउ नवो मन्दिर तिण ठाणि
अन्न घृत परयल संग्रही, आविवा श्रवण स्ववधि मासनी कही ॥ 225 ॥

ऐसा ही प्रयोग कथाकार ने राजकुमारी एणामुखी के विवाह के समय किया है। व्यतरी अपनी मन्त्रशक्ति द्वारा एक ऐसे आवास का निर्माण करती है जो सब प्रकार के साधनो से सम्पन्न है.

तिणै पिण तेजसार पेखीयो, विकस्यो हस्यो बहूनो होयो
मातानी मन पूगी आस तिहा विकूर्व्यउ नवउ आवास ॥ 289 ॥

1. हिन्दी प्रेमाख्यान काव्य डा० कमल कुल श्रेष्ठ अजमेर 1953 पृ. 33

सतर भक्ष भोजन आहार, वेन देवी त्रेवडइति चार
हीर चीर सोवन पटकूल आण्या बहू आभरण अमूलि ॥ 290 ॥

इसके अतिरिक्त तेजसार की माता जो मर कर व्यतरी हो गई थी तेजसार के विवाह अवसर पर एक नगर का ही निर्माण मन्त्र द्वारा करती हैं

नवो एक नीपाव्यो नगर, सरोवर वावि कूप वन पवर
गढ दुरग मन्दिर देहरा, चौरासी चौहटा चावरा ॥ 303 ॥

समरसेन से युद्ध मे विजय प्राप्त कर तेजसार ने अवतीपुर मे अपना राज्य स्थापित किया। तेजसार अपनी सास से कहता है कि ऐसा कार्य करो जिससे आपका नाम सदैव बना रहे। तब वह भी एक नगर बसाती है जो सुरपुर के समान है।[1]

9. स्थानान्तरण द्वारा प्रेम संघटन

कई कथा काव्यो मे स्थानान्तरण द्वारा प्रेम सघटन के अभिप्राय का भी सहारा लिया गया है। इन काव्यो मे नायक नायिका के परस्पर आकर्षण और प्रेम द्वारा कथा का प्रारम्भ करने के लिए प्रस्तावक रूप मे ही इसका भी उपयोग किया गया है। इस अभिप्राय के आधार पर निर्मित कथा इस प्रकार है

जब तेजसार मृगो के साथ जाती हुई राजकुमारी को देखता है तो वह उसकी ओर आकर्षित होता है, एणामुखी राजकुमारी तेजसार को देखकर केवल आकर्षित ही नहीं होती वरन् उसमे काम व्याप्त हो जाता है और भविष्य मे वह उसी व्यक्ति को वरण करने का निश्चय करती है। एणामुखी अपनी माता जो कि व्यतरी है, उससे भी यही कहती है

ते मुझने परणावो मात, नही तर करिसु आतमघात
पुत्री नो मन जाणी करी, तुझ जोवा हुँ चिहुँ दिशिफिरी ॥ 385 ॥

रात्रि में सोये हुये नायक को यक्ष अप्सरा गधर्व व्यंतरी आदि अति मानव प्राणी उठा लाते हैं और वांछित नायिका राजकुमारी से विवाह कर देते हैं।

तेजसार मे भी एणामुखी की माता व्यतरी है और वह अपनी पुत्री की इच्छानुसार शादी करने के लिये तेजसार को चंपावती नगरी से रात्रि मे उठा लाती है

1 तेजसार सासू प्रति कहै कीजै तेय नाम जिम रहे
अटवी माँहि नगर एक नवो, जइ वास्यो सुरपुर जेहवो
तेजसार रास ग्र 26546 ॥ 333 ॥
तिन वातइ सासू गहगही आण्या लाख लोक तिहा सही
गढ मठ मन्दिर पौलि प्रगाढ नव बारह जोयण विस्तार ॥ 335 ॥
तेजलपुर तिण नगरी नाम पुण्यै मीझे सगला काम
एतलै पाम्यो बीजो राज करहू अनेक धर्मना काज ॥ 336 ॥

तेजसार तुम्ह लेवा काज चंपानगरी आवी आज
पउढयौ दीठउ मंदिर माँहि मड ऊपाडयउ वाहे साहि ।। 386 ।।

अन्य कथा काव्यों मे अतिमानव शक्तियाँ लक्ष्य सिद्धि के पश्चात् नायक या नायिका को यथा स्थान पहुँचा देते हैं। परन्तु तेजसार मे कथाकार ने इसे नवीन रूप देने के लिये व्यतरी द्वारा एक नये आवास का निर्माण कराता है और वही पर नायक नायिका आनन्द से रहते हैं।

मझन ने मधुमालती मे नायक नायिका के परस्पर आकर्षण और प्रेम के लिये इसी अभिप्राय का सहारा लिया है।[1] चित्रावली मे भी चित्र दर्शन जन्य आकर्षण के लिये इसी अभिप्राय को आधार बनाया गया है।[2] इन्द्रावती मे माणिक की अवान्तर कथा मे भी नायक के अज्ञान में स्थानान्तरण द्वारा ही नायिका से मिलन और प्रेम का प्रारम्भ होता है।[3]

संस्कृत साहित्य के कथाकाव्यो मे ही नही नाटिकाओ मे भी संघटक अभिप्राय के रूप मे इसको कथा का आधार बनाया गया है। राजशेखर की नाटिका कर्पूर मंजरी की कथावस्तु मुख्यत इसी अभिप्राय पर आधारित हैं। किन्तु इसमे नायक के स्थान पर नायिका ही योगबल से स्थानान्तरण करती है।[4] हिन्दू कथाओ मे देव-अप्सरा राक्षस योगी कापालिक आदि दिव्य व्यक्ति अथवा अलौकिक शक्ति सम्पन्न व्यक्ति स्थानान्तरण का कार्य करते हैं, जबकि जैन कथाओ मे विद्याधर, व्यंतरी, खेचर खेचरी आदि नायक नायिका के मिलन मे इसी प्रकार सहायता करते हैं। जिनदत्त-ख्यान मे एक विद्याधर जिनदत्त को अशोकश्री के महल पहुँचा देता है।[5] करकण्ड-चरिउ मे एक खेचरी करकण्ड को उडा ले जाती है किन्तु यहा वह अभिप्राय देवासुरो द्वारा नायक नायिका हरण की ओर चला जाता है।[6]

10 भविष्यवाणी या ज्योतिषियो द्वारा पूर्व सूचना

इस अभिप्राय का प्रयोग प्रत्येक कथा काव्य मे किसी न किसी रूप मे अवश्य मिलता है। कही युवावस्था मे किसी सुन्दरी पर अनुरक्त होकर देश छोडने और योगी होने की ज्योतिषियो द्वारा पूर्व सूचना होती है तो कही गर्भ स्थित बालक या बालिका होने की सूचना होती है। इसके अतिरिक्त कन्या का विवाह अमुक राजकुमार से होगा या राजकुमार वहाँ का शासक होगा आदि भविष्यवाणी के अनेक

1 मधुमालती, अपछरा खण्ड पृ 22 25
2 चित्रावली देवखण्ड पृ. 27
3 इन्द्रावती पृ 146
4. कर्पूरमंजरी प्रथम अंक
5 जिनदत्ताख्यान पृ 28
6. करकण्डचरिउ प 158

उदाहरण हमे इन कथाकाव्यो मे देखने को मिलते है। रसरतन मे नायक नायिका प्रेम और विवाह कामदेव और रति के संवाद द्वारा पूर्व निश्चय हो जाता है।[1]

मधुमालती मे चौदह वर्ष ग्यारह मास पर बुधवार या वृहस्पति की रात्रि मे कुमार के मन मे प्रेम उत्पन्न होने की सूचना दी गई है और उस प्रेम के कारण नायिका के वियोग मे एक वर्ष तक योगी रूप मे जाने का भी पूर्व कथन है।[2] चित्रावली मे भी निस्सतान राजा के ऊपर कृपालु होकर सतान की कामना पूर्ण होने का वरदान देते समय शिव नायक के योगी होने की पूर्व सूचना भी देते हैं।[3]

तेजसार रास मे भी इस कथा अभिप्राय का कथाकार ने कई जगह प्रयोग किया है। जैन कथाकाव्यो मे पूर्वभव को मुख्य माना जाता है और पूर्वभव के आधार पर ही भविष्यवणी या ज्योतिषियो द्वारा किसी कार्य के होने की पूर्व सूचना दी जाती है।

तेजसार रास मे तेजसार के जन्म की सूचना पहले ही दे दी जाती है

तुम्ह कुल माहि दीप समान, हुस्यइ पुत्र ते रूप निधान
सुपन कथक संतोख्या सहू, माता पिता मन उच्छव बहू

चपावती नगरी का राजा कनककेतु अपनी पुत्री विजयश्री के विवाह के बारे मे केवली (मुनिवर) से पूछता है तव केवली मुनि कहते हैं

ते वलतु जपै केवली, सामली राजा कारणवली
बार जोयण अटवी कतार लहिस्ये जोगी मन्त्र आधार ॥ 103 ॥
ते मारिस्यै विद्या ने कांमि, तेजसार आवस्यै, तिण ठामि
झूझ करी ते छोडावस्यै, तै भरतार एहनो हुस्यें ॥ 104 ॥

राजा वयरकेसरी की कन्या पुष्पावती के लिये ज्योतिषी भविष्यवाणी करते है

जन्मकालि मिलीया ज्योतिषी, तिण जोइ जन्मोत्री लिखी
परणेस्यै एह राजकुमारि, ते पामस्यै राज चियारी ॥ 180 ॥

11. निर्जन स्थान मे सुन्दरी का मिलना

किसी राजकुमार का मार्ग भूलकर या किसी अन्य प्रकार से किसी निर्जन स्थान या किसी उजाड नगर मे पहुचना और किसी सुन्दरी से उसकी भेंट होना लोक-कथानको का एक अत्यन्त प्रचलित अभिप्राय है। इस अभिप्राय का उपयोग बहुधा किसी रोमास की सृष्टि के लिये किया गया है। राजकुमार उस सुन्दरी को किसी संकट से मुक्त कराता है और फिर दोनो मे प्रेम हो जाता है।

1 रसरतन स्वप्नखण्ड 13
2. मधुमालती जन्मोती खण्ड
3. चित्रावली जन्म खण्ड पृ. 19

डा हजारी प्रसाद द्विवेदी ने सभावनी पद पर आश्रित कतिपय कथानक रुढियो.की चर्चा करते हुये इस कथाभिप्राय का उल्लेख किया है।[1]

कथासरित्सागर मे उपलब्ध शक्तिदेव और इन्दीवर की कहानियाँ इसी अभिप्राय पर आधारित है। इन्दीवर एक उजाड नगर में पहुंचता है और वहां एक राक्षस को मारकर उसके द्वारा अपहृत दो राजकुमारियो को मुक्त कराता है। प्रेम मझन ने भी अपनी मधुमालती मे कथा विस्तार की दृष्टि से इस अभिप्राय का सहारा लिया है।

तेजसार रास मे भी तेजसार जब मार्ग भूल जाता है और वह वन में घूमता रहता है तब उसे नारी के रोने का शब्द सुनाई देता है —

रोवती नारी अणुसारि वहितु जोवँ रन्न मझारि
धणं दुखे ते रोवइ सही आव्यो कुमर तिहा किण वही ।। 79 ।।
एकण झाड़ तणै अतरै निरखै कुमर चित्त नाहि डरै
अति सरुप सुन्दर आकारि के अपछर कै देव कुमार ।। 80 ।।

तेजसार इस नारी को योगी से छुड़ाता है और अपने ही साथ लेकर जगल मे घूमता फिरता है। यहाँ अन्य कथा-काव्यो की तरह नायक को प्यास नही लगती। नायिका प्यासी है और तेजसार पानी लाने जाता है और नायिका के पानी पीकर सो जाने के बाद वह तलवार हाथ मे ले वन मे घूमने लगता है और देखता है कि

तिहा परवै हरिणा नु टोल कूदै रमै नै करै कलोल
नवयौवन तिण माहे नारि अपछर नही दीसै अणुसारि ।। 122 ।।

उस कन्या को देखकर राजकुमार तेजसार सोचता है कि यह वन मे अकेली कैसे रहती है। यह कोई अप्सरा है या राजकुमारी। तेजसार कन्या का नाम तथा माता-पिता के कुल और स्थान के बारे मे भी पूछता है किन्तु वह बाला शर्माती हुई मृगो के साथ चली जाती है। नारी भी पुरुष को देखकर काम के वशीभूत हो जाती है और सोचती है

जाण्यु रुपवत नर ऐह, हुवै भरतार मुझ साथि सनेह
स्नेह दृष्टि जोवती गई दीसै नहीं वनतरी थई ।। 126 ।।

कुमार भी यही सोचता है

वलतउ कुमर विलखौ थई चितवै किमइ एह अस्त्री मुझ हुवै
तन मन तणा मनोरथ फलै इम चितवतउ पाछउ वलै ।। 127 ।।

तेजसार वापस उसी स्थान पर आकर देखता है तो उसे विजयश्री दिखाई नहीं देती और वह उसी को खोजने निकलता है तब वह क्या देखता है कि

वइठी द्वार एक वरवाल हाथि ककोहल करवाल
नव यौवन अति सुन्दरि नारि जाणै अपछर नै अणुहारि ।। 136 ।।

तेजसार उस विद्याधरी से विजयश्री के बारे मे पूछता है तब वह कहती है

1 हिन्दी साहित्य का आदि-काल डा हजारी प्रसाद द्विवेदी, पटना 1952, पृ. 74

तब तें हसी बोलइ वर नारि, इण केलिहर कन्या च्यार
ते बैठी छइ राजकुंवरी जोवउ जउ होवइ कना तोहरी ॥ 140 ॥

तेजसार उन पाचो कन्याओ से विवाह कर लेता है और आनन्द से रहता है किन्तु कथाकार कथा को फिर एक नवीन मोड देता है और विद्याधर के साथ तेजसार का युद्ध करवाता है। विद्याधर प्रज्ञपति-विद्या शक्ति से तेजसार को दूर ले जाकर नदी मे गिरा देता है। तेजसार पाँचो नारियो के विछोह से दुखित हुआ घूमता रहता है तब वह एक नगर में आता है वहाँ युद्ध के बाजे रहे हैं तथा धूल आकाश मे उडती हुई देख तेजसार युद्ध होने का अनुमान करता है। वह नगर के समीप पहुँच कर क्या देखता है

पहुतउ नगर समीपि जिसै तिण दीठै एक नारी तिसै
सबलउ एक कबेरी कुंज, पापतिया कटोलउ पुंज ॥ 176 ॥

नारि एक तेहनइ बारणै रोवे छै अति दुख घणै
कुमरै पूछी तेडो करी कहउवात मुझ हेते करी ॥ 177 ॥

तब कुमारी पद्मावती की दासी सब वृतात बताती है कि पद्मावती को प्राप्त करने के लिए ही यह सब युद्ध हो रहा है। तेजसार अपनी विद्या के बल से विजय प्राप्त करता है। पद्मावती का पिता व्रज-केसरी अपने पुत्र-अभाव में कन्या का विवाह तेजसार से कर देते हैं और उसे अपना राज्य भी दे देते हैं

भलै दिवस महूरत वार मेली देश लोक परिवार
दीयो धन सोवन नी धाट तेजसार नृप थाप्यो पाटि ॥ 207 ॥

इस प्रकार तेजसार रास मे जगल वन व सरोवर के पास तेजसार आठ राजकुमारियो को देखता है और उन सभी से वह विवाह भी करता है ।

कथा साहित्य मे प्रेम-सघटक के रूप मे इस अभिप्राय को लिया है। लोक-कथाओ व शिष्ट साहित्य मे नायक-नायिका के मिलन और प्रेम के लिये प्राय इसी अभिप्राय का सहारा लिया गया है। वन मे मार्ग भूलकर या जल की तलाश मे जाकर नायक ऐसे स्थान पर पहुँच जाता है जहाँ उसे अवश्य ही किसी सुन्दरी कन्या के दर्शन होते है। ईश्वरदास ने सत्यवती कथा मे और कुतुबन ने मृगावती मे नायक-नायिका के प्रथम दर्शन द्वारा कथा का प्रारम्भ करने के लिए इसी घटना को आधार बनाया है। इस अभिप्राय का क्षेत्र नायक-नायिका के मिलन तक ही सीमित है। मिलन के बाद कथाकार अपने उद्देश्य के अनुरूप अन्य अभिप्रायो का सहारा लेकर जिधर चाहे कथा को ले जा सकता है।

सस्कृत प्राकृत और अपभ्रश के कथा-काव्यो मे प्रेम-सघटन के लिये इसी अभिप्राय का सबसे अधिक उपयोग किया गया है। जैन कथाकारो ने इस अभिप्राय का बहुत अधिक प्रयोग किया है। 'बमदत्तो मे नायक ब्रह्मदत्त को वन मे भटकते

समय एक महासरोवर के पास वर कन्या श्रीकान्ता दिखलाई पड़ती है जो तेजसार रास की एणामुखी की तरह प्रेम भरी दृष्टि से देखती हुई चली जाती है और बाद में दोनों का विवाह हो जाता है।[1] जैसा कि तेजसार रास में भी होता है। करकण्डु चरिउ में प्यास से व्याकुल होकर जल की तलाश करते समय करकण्डु का सरोवर के पास स्वर्णकांति वाली रत्नलेखा से मिलन और प्रेम होता है।[2] तेजसार रास के कथाकार ने परम्परा से थोड़ा हट कर इस अभिप्राय का प्रयोग किया है। तेजसार रास के नायक तेजसार को प्यास नहीं लगती यहाँ नायिका विजयश्री को प्यास लगती है और नायक के पानी लाने और नायिका के पानी पीकर सो जाने के बाद ही नायक को उस सरोवर के पास वन में अपने उद्देश्य पूर्ति हेतु घुमाता है और वहीं कथाकार नायक एणामुखी राजकुमारी को मृगों के साथ जाते हुये देखता है और आसक्त हो जाता है। नायिका भी उसी से विवाह करने की प्रतिज्ञा ही नहीं करती वरन् आत्मघात करने की धमकी भी देती है .

> ते मुझने परणावो मात नही तर करिसुं आतमघात
> पुत्री नो मन जाणी करी तुझ जोवा हु चिहु दिशिफिरी ॥ 285 ॥

पउमचरिउ में सगर और तिलक केशा का मिलन और प्रेम सरोवर के निकट ही होता है।[3]

इसी अभिप्राय के सहायक अभिप्राय के रूप में कहीं-कहीं नायक राक्षस योगी अतिमानव शक्तियों द्वारा वन्दिनी नायिका का उद्धार भी करता है और यही परिचय प्रेम और विवाह में परिणत हो जाता है। किसी कथा में कथाकार बिना युद्ध के ही नायक को राक्षस से नायिका दिलवा देता है, तो कहीं युद्ध के बाद। भारतीय कथाकारों ने अपनी रुचि और प्रवृत्ति के अनुसार नई पद्धतियों का उपयोग किया है। जैन कथाकारों ने अपनी धार्मिक प्रवृत्ति के कारण राक्षस को पूर्वजन्म में नायक द्वारा किये गये उपकारों का स्मरण दिलाकर नायिका की मुक्ति को सहज साध्य बना दिया है। ऐसी कथाओं में इस धार्मिक-रंग के कारण इस अभिप्राय की रोमांचकता और चमत्कारिकता नष्ट हो गई है। संघर्ष को बचाने के लिये कुछ जैन कथाकारों ने नायिका की मुक्ति के लिये 'दिव्याजनों' के अभिप्राय का सहारा लिया है।

किन्तु लोक-कथाओं में नायिकाओं की मुक्ति इतनी सरल नहीं होती है। कठिन संघर्ष के बाद ही नायक इनकी मुक्ति में सफल होते हैं। प्राय नायकों की ही सहायता से उनकी मुक्ति सम्भव हो पाती है।

1. बमवतो-स० एन. बी वैद्य 1956 पृ० 11
2. करकण्ड चरिउ 8-10
3. पउमचरिउ सन्धि-5

तेजसार रास का नायक तेजसार विजयश्री की मुक्ति योगी से संघर्ष के बाद ही कर पाता है। योगी अपने प्राणो की भिक्षा तेजसार से मागता है और बदले मे उसे रूप परिवर्तन की विद्या सिखाता है।[1]

नायिकाओ की सहायता से भी नायक नायिकाओ को प्राप्त करता है। तेजसार विद्याधर से युद्ध मे पराजित हो जाता है और दूर फैंक दिया जाता है तब नायिका श्रीमती विद्याधर का शीश काटकर तेजसार से मिलने का मार्ग साफ करती है

विजयसिरी तें अवसरि लही, खडग झालि तसु पूठि रही
कते वैर वालवा जागीस, विद्याधर नउ छेद्योसीस ॥ 221 ॥

विजयश्री द्वारा विद्याधर का शीश काटने के बाद ही उन पाँचो कन्याओ को मुक्ति सम्भव होती है। पद्मावती की रक्षा करने से पद्मावती से तो उसका विवाह होता ही है, साथ ही सूरसेन भी अपनी पुत्री सुरसुन्दरी का विवाह तेजसार से कर देता है। पद्मावती और उसकी दासी जब कहती है कि यदि उनकी रक्षा न हुई तो वे आत्महत्या कर लेगी तब तेजसार कहता है

कुमरै जोइ राजकुमारी। अति सरूप सुन्दर आकारि ॥
कहै कुमर कोई भव्य नही। हिव तुम्ह नै ऊगा रिस सही ॥ 192 ॥

वन मे मार्ग भूलने के कारण घटित होने वाली आश्चर्यजनक और रोमाचक घटनाओ का वास्तविक सौन्दर्य और चमत्कार लोक-कथाओ मे ही देखने को मिलता है। इन कथाओ मे ऐसे अवसर पर प्राय रोमाचक और दुखद घटनायें ही घटित होती हैं।

इन सभी उदाहरणो से स्पष्ट है कि कथाकार अपनी कथानक योजना के अनुरूप किसी भी रोमाचक और आश्चर्यजनक घटना की ओर कथा को ले जाने के लिये इस अभिप्राय का सहारा लेता है।

12 दिव्य विद्या

रूप परिवर्तन के साथ दिव्य विद्या का वर्णन भी कथाओ मे आता है। अभिप्राय के मूल स्रोतो से ज्ञात होता है कि योग और सिद्धियो ने भारतीय कथा साहित्य को बहुत अधिक प्रभावित किया है। योगी की प्राय सभी चमत्कारिक शक्तियो का महाभारत से लेकर मध्यकाल तक के कथा-काव्यो मे उपयोग किया गया है। योगी और तपस्वी या राक्षस आदि अतिमानव शक्तियो और उनकी सर्वज्ञता के उपयोग से कथा की जटिल स्थितियो को सुलझाने और उनके कार्यो द्वारा कथा मे चमत्कार और आश्चर्य तत्व ले आने मे कथाकारो को बहुत अधिक सहायता मिली है।

1. तेजसार रास दूहा-94

तेजसार रास का नायक राक्षस को युद्ध मे परास्त कर उससे दो विद्याएँ सीखता है। उस विद्या का प्रयोग वह सिकोतरी पर करता है

मंत्र भणी नै वाधी मूठि तिण रास भी हणी इक मूंठि ।। 72 ।।

दूसरी विद्या का प्रयोग वह सेना को स्तम्भित करने मे करता है

कुमर बोट्या मंत्र प्रमाणि, थम्यउ कटक रहयउ तिण ठाणि
तेजसार क्मारी वाल, रिपु सेना भाजी ततकाल ।। 194 ।।

13. आकाश गमन

अतिमानव शक्तियाँ ही आकाश मे उड़ती है परन्तु कहीं-कही मानव भी आकाश मे उड़ते दिखाये गये हैं। रामचरितमानस के हनुमान आकाश मार्ग से ही उड़कर संजीवनी बूटी लाते हैं। इस अभिप्राय का प्रयोग पाठक को चमत्कृत और प्रभावित करने के अतिरिक्त पाठक के कुतूहल को शान्त करने के लिए भी किया गया है।

किसी योगी-योगिन से विद्या सीखने के उदाहरण भी बहुत मिलते हैं। कथासरित्सागर मे कालरात्री की पूरी कथा उड़ने की विद्या को लेकर कही गई है।[1] तेजसार रास के प्राय. सभी पात्र आकाशगामी है। विद्याधर अपने मंत्र प्रमाण से प्रज्ञपति विद्या का आह्वान करता है

तेहमन्त्र तिण समरयो जिसै, ते प्रज्ञपति आवी तिसै
कुमर एकलउ एकलइ पानि देवी भूक चढी आकासि ।। 165 ।।

यही नही विद्याधरी तेजसार का पता लगाने आकाश मार्ग से ही जाती है

इम कहि ते ऊडी आकासी च्यारे राखी तिण आवासि
जोवैदेश नगर वन घणा, गिरि कदर जोवैं छै घणा ।। 227 ।।

तेजसार से मिलकर वह आकाश मार्ग से ही अपने आवास स्थान वापस आती है

इम कहि ते अडी आकासि, आवी पिण एकै आवासि ।। 239 ।।

यही नही तेजसार रास के सभी पात्र अतिमानव है जो आकाश गमन ही करते हैं। व्यतरियाँ आकाश मार्ग से ही एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाती है। विद्याधरी तो एक आकाश विमान की भी रचना करती है जिसमे बैठकर वे तेजसार से मिलने जाती है।

विद्याधरी रच्यो विमान, जाणे इद्र विमान समान ।। 241 ।।

तेजसार की माता तथा एक अन्य व्यतरी तेजसार को एक पलंग भी देती है जो आकाश मे भी उड़ता है

1 कथासरित्सागर आदित्तरग 20

एक दियो सुन्दर पलंक, उडते आकासि तिसक
इम विवाह थयो अति-चग, जानी मानी वाध्यो रग ॥ 308 ॥

14. अदृश्यता

आकाश गमन की तरह अदृश्यता का भी कथाओ मे वहुत उपयोग किया गया है। कही अदृश्याजन तो कही मुख मे गोटिका रखकर या पादुका पहन कर कथा पात्र अदृश्य हो जाते है। किन्तु दिव्य वस्तुओ की सहायता के विना विद्या द्वारा भी अदृश्य हुआ जा सकता है। इस विद्या को किसी से सीख लेने पर तान्त्रिक-अंजन आदि की आवश्यकता नही रहती। वत्सराज उदयन के वन्दी वना लिये जाने पर मंत्री योगन्धरायण इस विद्या द्वारा ही महाचण्ड सेन के राजमहल मे पहुँचता है और इस प्रकार अदृश्य होता है कि वत्सराज के अतिरिक्त और कोई उसे देख नही पाता।[1]

तेजसार रास के नायक तेजसार को योगी अदृश्य होने की विद्या सिखाता है—

एह मत्र तु जपी-नइ जोई ताहरू रूप न-देखइ कोई
वीजइ मत्र जपै अणुसरै जे चीतवइतिस्यु रूप करइ ॥ 94 ॥

योगी तेजसार को यह दो विद्यायें सिखाता तो है, परन्तु कथाकार नायक तेजसार से इनका प्रयोग कही भी नही करवाता। कथासरित्सागर मे 'प्रतिलोमानुलोम' नामक एक ऐसी विद्या का उल्लेख है जिसमे केवल सात अक्षर हैं और जिसका सीधा पाठ करने पर व्यक्ति अदृश्य हो सकता है और प्रतिलोम पाठ करने पर जो रूप चाहे धारण कर सकता है। भीमदत्त को यह विद्या दी जाती है और इस विद्या को प्राप्त करके वह अनेक साहसी और रोमाचक कार्य करता है।[2]

पाश्चात्य कथाओ मे भी इस अभिप्राय का वहुत अधिक प्रयोग किया गया है। क्रैंड ने अपनी पुस्तक 'पापुलर एन्टिक्विटीज' मे यूरोपीय कथाओ मे अदृश्यता से सम्बध विविध पद्धतियो का उल्लेख किया है।[3]

15. किसी राक्षस द्वारा कोई विघ्न उपस्थित किया जाना

लोक-कथाओं और उनसे अनुप्राणित होने वाले साहित्य मे किसी राक्षस योगी आदि द्वारा कोई प्रपच रचना अथवा कोई विघ्न उपस्थित किये जाने की रूढ़ि का अत्यधिक प्रयोग हुआ है। कथानक को विस्तार देने अथवा उसे अभिलाषित दिशा मे मोडने के लिये अमानवीय शक्तियो द्वारा उत्पन्न की गई विघ्न वाधाएँ लोक साहित्य मे भरी पड़ी हैं।

1. कथासरित्सागर—आदितरग-12
2. कथासारित्सागर आदितरंग 74/133-135
3. पापुलर ऐन्टिक्विटीज, वाल्यूम 1, पृ० 315

तेजसार रास में इस अभिप्राय का प्रयोग कथाकार ने दो बार कथा-विस्तार की दृष्टि से किया है। प्रथम बार जब तेजसार मार्ग भूल जाता है और मार्ग में उसे राक्षस मिलता है राक्षस उसको भक्षण करना चाहता है परन्तु कथाकार ने नायक को चतुराई से राक्षस के पंजे से मुक्त करवा दिया है। राक्षस और नायक का वार्तालाप रोचक और कुतूहल बढ़ाने वाले हैं। इसी वार्तालाप के दौरान नायक अपने बचाव की युक्ति भी सोच लेता है।[1] अपनी इस युक्ति से वह राक्षस के चंगुल से बच निकलता है। राक्षस उसका पीछा करता है तब पुनः योगी द्वारा उसकी रक्षा कथाकार करा देता है। राक्षस के प्रपंच से बचने के बाद तेजसार फिर सिकोतरी के प्रपंच में पड़ जाता है। यह सिकोतरी पुजारनी के लिए तैयारी करती है और सभी बालकों के संहार का प्रपंच करती है किन्तु तेजसार अपनी बुद्धि से इस प्रपंच को जान जाता है तथा राक्षस द्वारा दी गई विद्या से अपनी तथा अन्य बालकों की उस प्रपंच से रक्षा करता है।

> बालक बहु नाठा बीहता, जाण्युं नहीं रहीयें जीवता
> ते नासी बई रूखड़ धड़ई, तेजसार नतमुख जाइभिड़ै ॥ 69 ॥
>
> विद्या वलि रातभि सउहली, मूर्छाभावी धरणी पड़ी
> तेजसार तिहांथी ऊतरी, जोवै नदी तिहा गोदावरी ॥ 73 ॥

16. अतिमानव शक्तियों द्वारा सहायता

अमानवीय शक्तियाँ कहीं-कहीं सहायक रूप में भी अवतरित हुई हैं। ये शक्तियाँ नायक-नायिका की प्राण रक्षा अथवा प्रेम व्यापार में वियोग के पश्चात् मिलन कार्य में भी सहायक हुये हैं। अधिकतर कथा-काव्यों में नायक को उठाकर नायिका के पास पहुँचाया गया है। प्रेम जाग्रत होना और फिर नायक को यथा-स्थान पहुँचा देने के अनेक उदाहरण कथाकाव्यों में मिलते हैं। उसमानकृत चित्रावली में कोई दैत्य सुजान को चित्रावली की चित्रशाला में रख जाता है और राजकुमारी उस चित्र को देखकर मोहित हो जाती है।[2] मंझन कृत 'मधुमालती' में कुछ अप्सरायें मनोहर को निद्रावस्था में मधुमालती की चित्रसारी में रख जाती हैं। दोनों जागते हैं और एक दूसरे के प्रति आकृष्ट होते हैं। फिर सो जाते हैं और तब अप्सरायें राजकुमार को यथा-स्थान वापस पहुँचा आती हैं।[3]

कुशललाभ कृत 'तेजसार रास' के नायक को भी व्यंतरी चम्पापुर से उठा लाती है

1. जब राक्षस बालक जोइस्यइ मुख नइ मूकि पग घोइस्यइ
   हूँ नासिक बगमणी दिसइ, विण्वण सूकइं गम नहु विसइं ॥ 40 ॥
   तेजसार रास प्र॰ 26546
2. डॉ॰ हजारी प्रसाद द्विवेदी—हिन्दी साहित्य दिल्ली 1952 पृ॰ 277
3. हिन्दी प्रेमाख्यान काव्य, डॉ॰ कमल कुलश्रेष्ठ अजमेर 1953 पृ॰ 36

एक दिवस मंदिर आपणइ, पढ्यो नृप आणंदइ घणइ
मध्यराति बउली जेतलं किणही ऊपाढयो तेतलं ॥ 248 ॥

यहाँ व्यंतरी अपनी पुत्री का विवाह तेजसार के साथ करने के लिए उसे उठा लाती है परन्तु छोडकर नहीं आती वरन् वहीं एक नगर का निर्माण करती है जो सब प्रकार के साधनो से युक्त है। वह वहीं रहता है और राज्य करता है।

17. सर्प दंशन

अनेक प्रेम-कथाओ मे सर्प दंशन एव मृत्यु होने की कथानक रूढि भी मिलती है। राजस्थानी लोक-काव्य निहालदे सुल्तान एव सूफी प्रेमाख्यान चदायन मे भी इस रूढि का प्रयोग मिलता है। ढोला मारू री चौपाई मे भी इसका प्रयोग हुआ है। पूगल से लौटते समय मारवणी को पीवणा साँप पी लेता है जिससे उसकी मृत्यु हो जाती है।

ऐसा ही प्रयोग कुशललाभ कृत 'तेजसार रास' मे भी मिलता है। अवंतीपुर के राजा जय के कोई सन्तान नही थी। सन्तान प्राप्ति के लिए राजा ने बड़े यत्न किये। तव एक फल योगी ने राजा को दिया उसके प्रभाव से रानी को गर्भ रहा जिससे राजा-रानी दोनो को प्रसन्नता हुई। एक रात राजा-रानी दोनो ही प्रसन्न चित्त अपने आवास में सो रहे थे कि एक सर्प आया और उसने राजा को डस लिया—

कालै सर्प डस्यो तव राय राजा पखै देश न रहाय
पुत्र नही को राजा तणै, मिलीयो नगर लोक इम भणै ॥ 257 ॥

18. जल केलि

इस अभिप्राय का वर्णन भी काव्यो मे रूढ़ सा हो गया है। ईश्वरदास की 'सत्यवती कथा' मे सखियो सहित नायिका की सरोवर मे जल क्रीडा का वर्णन मिलता है। जल केलि का विस्तृत वर्णन तो ढोला मारू मे नही मिलता लेकिन कथाकार के मालवणी द्वारा कहलवाये गये इस कथन से जल केलि अभिप्राय की स्पष्ट झाकी मिलती है

ढोला हूँ तुझ बाहिरी झीलण गइय तलाइ
अजल काला नाग जिऊ लहिरी लेले खाइ ॥ 393 ॥

इस अभिप्राय का प्रयोग कथाकारो ने अपनी रूचि के अनुरूप किया है। कही नायिका के विरह वर्णन के साथ इस रूढि को लिया गया है तो कही सयोग के समय। ढोला मारू मे मारवणी को ढोला के चले जाने के वाद जल की लहरें काले नाग सी प्रतीत होती है। वही लहरें सयोग मे आनन्द प्रदान करती है।

कुशललाभ कृत तेजसार रास मे इस अभिप्राय का प्रयोग बहुत ही सुन्दर ढग से किया गया है। नायिका विजयश्री को प्यास लगती है नायक पानी लेने जाता है पानी

इतना शीतल और मधुर होता है कि उसे पीकर नायिका नायक को जल केलि के लिये आग्रह करती है

> नारी कहै सरोवर जिहाँ जलक्रीडा जइ कीजै तिहाँ
> सरोवर क्रीडा करी अधोल तिहा पैखवै केली हर ओलि ॥ 119 ॥

विजयश्री कहती है कि जहाँ ऐसा सरोवर है जिसका पानी पीने से ही आत्मा और शरीर तृप्त हो गये हैं उस सरोवर में तो क्रीड़ा करनी चाहिये। नायिका के कहने से नायक और नायिका प्रभूत जल क्रीड़ा करते हैं वह सरोवर केलि की ओट मे हैं।

19. प्रेम घटक के रूप में अन्य पात्रो द्वारा सहयोग

सामान्यत. प्रत्येक प्रेम काव्य मे प्रेम घटक के रूप मे सखियों द्वारा कार्य किये जाने की कथानक रूढि मिलती है। मधुमालती मे जैतमाल की सखी यह कार्य करती है तो रूपमजरी मे इदुमती।

ढोला मारू मे यह अभिप्राय दो स्थानों पर आया है। प्रथम बार तो उस समय जब मुग्धा मारु विरह के उठते हुये महार्णव की थाह खोज रही होती है। सखियाँ ही यहाँ रानी से मारवणी की विरह व्यथा निवेदित करती है। दूसरी बार ढोला के पूगल आने पर मारवणी को उससे मिलनार्थ सखियाँ ही उसके शयन कक्ष मे पहुँचाती है।

कुशललाभ ने तेजसार रास मे इस अभिप्राय का प्रयोग परम्परा से हटकर नवीनता के साथ किया है। तेजसार रास मे प्रेम घटक के रूप मे तेजसार की रानियाँ व्यतरी आदि ही आती है। एक जगह यह कार्य राजकुमारी एणामुखी की माता भी करती है।

एक दिन एणामुखी मृगो के साथ वन मे जाती हुई सरोवर पर तेजसार को देखती है उसे देखकर एणामुखी का हृदय काम के वशीभूत हो वह घर आकर दुःखी रहने लगती है और रोती है। माता के बहुत पूछने पर बताती है[1]।

माता पुत्री की दशा को जानती है और जब पुत्री आत्महत्या की धमकी देती है तो माँ का हृदय पिघल जाता है और वह तेजसार के साथ अपनी पुत्री का विवाह कर देती है

1. घरि आवि आमण दूमणी मइ पूछी न कहै मुख भणी
   नविजोमैं नवि रोती रहे. करि आग्रह पूछी इम केहे
   आज गई थी अटवी मझार एक पेखइ राजकुमार ॥ 284 ॥
   ते मुझने परणावो मात नहीं तर करिसु आतमघात
   पुत्री नो मन जाणीकरी तुझ जोवा छु चिहुँ दिशिफिरी ॥ 285 ॥
   तेजसार रास ग्र. 26546 रा प्रा. वि. प्र. जोधपुर

सामग्री परणेवा तणी; वन देवी तिहा आणी घणी
लगन तणी बेला जब थई बैठो राय गोखि गह गही ॥ 291 ॥

दुर्गा सात्तसी की कथानक रूढ़ियाँ

1. नायक का अति प्रकृत जन्म

देवी का जन्म अलौकिक माना गया है । दुर्गा सप्तशती मे, भगवान विष्णु के मुख से एक महान् तेज प्रकट होता है, इसी प्रकार का तेज ब्रह्मा, शकर तथा इन्द्र आदि देवताओ के शरीर से भी निकलता है । एकत्रित होने पर वह तेज नारी के रूप मे परिणत हो जाता है और वही तेज नारी के रूप मे जाना जाता है ।[1]

कुशललाभ कृत 'दुर्गासात्तसी' मे भी इसी प्रकार का अभिप्राय प्रयुक्त हुआ है । तेतीस करोड देवता देवी की स्तुति करते हैं । राक्षसो के द्वारा दी गई यातनाओ को सुन करणीगर अर्थात् ईश्वर को क्रोध आता है और उनके क्रोध से तेजपुंज देवी का जन्म होता है

करणीगर त्यारह की यह विषम कोप विकराल
हु तसह देव्या हुई देजपुंज तिणताल[2] ॥ 70 ॥

2 वरदान देना।

देवी देवता प्रसन्न होने पर वरदान देते है और क्रोधित होने पर अभिशाप । इन्द्र से त्रिलोकी का राज्य छीन लेने से स्वर्ग मे राक्षसो का आधिपत्य हो गया । उनके द्वारा दी गई प्रताडनाओ से दुखित देवतागण देवी की स्तुति करते है । देवी देवताओ द्वारा की गई वदना से प्रसन्न होकर प्रकट होती है और देवताओ को रक्षा का वरदान देती है

श्याम वरण सुरी एकदम कुसम अर्चना किद्ध
तव देवी वर द्विध अघटी वार अह आधार[3] ॥ 143 ॥

3 वन मे नायिका का देखना : रूप श्रवण द्वारा आसक्ति

इस अभिप्राय का प्रयोग जहाँ अन्य काव्यो मे नायक द्वारा नायिका को देखने के रूप में हुआ है वहाँ दुर्गा सप्तशती मे इस अभिप्राय का प्रयोग परम्परा से थोड़ा हट कर नवीन रूप मे किया गया है ।

1 सचित्र दुर्गासप्तशती-अनुवादक पाण्डेय पं रामनारायण दत्त शास्त्री 'राम' अष्टादश सस्करण सं 2027 पृ 78 द्वितीय अध्याय
2. दुर्गासात्तसी हस्तलिखित ग्रंथ—अनुप सस्कृत लाइब्रेरी, बीकानेर
3. हस्तलिखित ग्रंथ—गाहा—143

दुर्गासप्तशती के समान ही कुशललाभ ने इस अभिप्राय का प्रयोग किया है। चण्डमुंड वन मे देवी को देखते हैं

> तरुवर छाह निर्व्वाण तट पेल पढण पंतेपढी
> विचरंता जन आपेट वर चंड मुंड दष्टे इ चढी ॥ 169 ॥

वन मे देवी को देख चण्ड मुण्ड वापस असुरो के पास आते हैं और देवी के रूप सौन्दर्य का वर्णन करते हैं

> अगह वन एकज अवल मयत्ती मन मोह
> कई आकासा ऊतरी कइ कन्या नागक योह ॥ 172 ॥

इसी प्रकार वे साश्चर्य आगे कहते हैं कि या तो वह नाग कन्या है या इन्द्राणी या श्री या सम्पति अर्थात् लक्ष्मीजी है या ब्रह्माणी है या कोई पद्मनी है। उस अवला का तो रूप ही अनूप है, इस कारण हे राक्षस राज मैं आपसे कह रहा हू कि आप छत्रपति कहलाते हैं अत उसे आपके पास होना चाहिये।[1] चंड मुड द्वारा देवी के रूप सौन्दर्य का वर्णन सुन कर शुभ हर्षित होता है और उसे प्राप्त करने के लिये सुग्रीव को बुलाता है

> कजि कामिण आलोचकीय जोधवचन सुणिजीव
> हुवइ हरष तेडावीयउ शभ राय सुग्रीव ॥ 174 ॥

4. सन्देश वाहक

सन्देश वाहक के रूप मे पशु पक्षी, ब्राह्मण, नाई, ढाढी व दूत आदि का प्रयोग आदि काल से होता आया है। 'दुर्गा सातसी' मे कुशललाभ ने सन्देश वाहक के रूप मे सुग्रीव को दूत बनाकर देवी के पास शुभ निशुभ का सन्देश भिजवाया है।[2]

दुर्गा सप्तशती मे शुभ निशुभ द्वारा दिये गये सन्देश का वर्णन नहीं है वहाँ प्रत्यक्ष रूप मे ही सुग्रीव देवी को सन्देश सुनाता है।[3]

5. तंत्र मंत्र युद्ध

देवी का राक्षसों के साथ युद्ध तान्त्रिक युद्ध है। देवी तांत्रिक शक्ति से अपने केई रूप बना कर शुभ निशुभ के साथ युद्ध करती है। मत्र शक्ति से कितने योद्धा निस्तेज हो भाग खड़े होते हैं कितने ही योद्धाओ पर अभिमत्रित जल छिड़ककर निस्तेज कर दिया जाता है।

1. दुर्गासातसी हस्तलिखित ग्रथ —कवित्त 173
2. दुर्गासातसी हस्तलिखित ग्र थ गाहा 176 से 184
3. दुर्गासातसी-अनुवादक पाण्डेय प रामनारायणदत्तशास्त्री 'राम' पंचम अध्याय पृ 118-120

6. रूप परिवर्तन

रूप परिवर्तन की रूढि कुशललाभ को बहुत ही प्रिय रही है। अलौकिक शक्तियों मे देवता तो अपना रूप बदलते ही हैं, परन्तु अतिमानव शक्तियो मे राक्षस भी कभी सिंह, भैंसा, शेर, पुरुष व गज आदि के रूप बदल कर देवी से युद्ध करते हैं। रक्तबीज के रक्त की एक-एक बूंद से उसी के समान महान् बलवान राक्षस पैदा होकर देवी से युद्ध करने लगते है।

7. पुष्प वृष्टि

पुष्पो की वर्षा करना हर्ष एव प्रसन्नता सूचक कथा अभिप्राय है। रामायण मे तुलसीदासजी देवताओ से रामचन्द्र जी के धनुष तोडने पर पुष्पवृष्टि करवाते हैं—

बरसहिं सुमन रग बहु माला

दुर्गा सप्तशती मे भी देवता पुष्पवृष्टि करना नही भूलते। देवी जहाँ-जहाँ राक्षसो का सहार करती है देवता हर्ष से उन्मत्त हो देवी पर फूल बरसाते हैं

देव्या गणेश्च तैस्तत्र कृत युद्ध महासुरै
ययैपा तुतुषुर्देवा पुष्पवृष्टि मुचो दिवि[1] ॥ 69 ॥

कुशललाभ ने सभी असुरो के मारे जाने व सब आतक समाप्त हो जाने पर पुष्प-वृष्टि कराई है

दुप भागा भगतां तणा असुरा तणउ करिअत
पुहुप विष्ट होवइ प्रधल वयणे वदत ॥ 337 ॥

भीमसेन हंसराज चौपई की कथासक रूढ़ियाँ

1 फल खाने से गर्भाधान

अन्य काव्यो की तरह कवि ने यहाँ भी परम्परा से थोडा हट कर तथा अभिप्राय को नवीन रूप देते हुये कथानक रूढि का प्रयोग किया है। अन्य कथाकाव्यो मे योगी द्वारा दिये गये फल खाने से नायिका को पुत्र प्राप्ति होती है। यहाँ वृक्षो की विशेषता बताते समय उस वृक्ष विशेष के बारे मे कवि कहता है

भणियइ भोज वृक्ष ए भूपति भखइ सहू फल भूत
पाको फल प्रमुदाजड पासइ तउ पामइ वध्या पूत ॥ 51 ॥

2. रूप श्रवण

नायिका रूपमजरी शुक से मधुरवाणी मे भीमसेन के बारे मे पूछती है

कुमरी शुक सू क्रीडा करइ, अमृत वाणी मुखइ अचरइ
पूछइ भीमसेन नउ रूप, शुक सिंघलोते कहइ सरूप ॥ 89 ॥

1 दुर्गा सप्तशती—द्वितीय अध्याय पृ 88

3. वर प्राप्ति के लिये देवी पूजा

इस अभिप्राय को कवि ने नवीन रूप से अपनाया है। परवर्ती कथा काव्यों में नायक, नायिका को मंदिर में ही देखता है या पूजा करने के वहाने आई हुई नायिका को अपहरण कर ले जाता है। भीमसेन राजहंस चौपई की नायिका मदनमंदरी को जब यह ज्ञात होता है कि इसी नगर में त्रिपुरादेवी का मंदिर है जो कन्याओं की इच्छा पूर्ण करती है यह जानकर रूपमंजरी देवी मंदिर में जाती है-

इण अवसरि तिण पुर आराम तिणमहि त्रिपुरा देवी ठाम
कंत कजि जे सेवा करइ ते कन्या वाछित वर वरइ ।। 102 ।।

आगह घणा लोकनी आस पूरी छइ प्रकट्यउ जसवास
इम जाणी कुमरी तिह जाइ, सेवा भगति करइ मन भाइ ।। 103 ।।

4. संदेशवाहक

प्रस्तुत कथा में शुक कई रूपों में कथा-प्रवाह को आगे वढाने में योग देता है। रानी कमलावती को पुत्री के लिये योग्य वर शुक ही वताता है

कीर हसी राणी नइ कहइ, साच कहू जउतू सद्दहइ
भीमसेन आवइ भूपाल, तउ तुम्ह फलइ मनोरथ माल ।। 72 ।।

राजकुमारी जव भीमसेन को अपना पति होना सुनती है तो वह शुक से भीमसेन के रूप सौन्दर्य के वारे में पूछती है

कुमरी शुक सू क्रीडा करइ अमृत वाणी मुखइ ऊचरइ
पूछइ भीमसेन नउ रूप, शुक सिंघलोते कहइ सरूप ।। 89 ।।

और उसे संदेशा ले जाने के लिए कहती है

मया करउ मुझ मीनति मार वहउ विहगम दीठी वात
भेटउ भीमसेन भरतार सदेसा कहियो सुविचार ।। 106 ।।

शुक उसे भीमसेन से मिलाने की प्रतिज्ञा करता है और उसका पत्र भी ले जाता है-

करी प्रतज्ञा कुमरी प्रतइ महीपति मेलिसु माहरी मतइ
सदेसा कागल मुझ साथि, आपउ आपि सिहाद्यो हाथि ।। 108 ।।

पत्र वह भीमसेन के पास पहुँचाता है और उसे राजकुमारी से मिलने एव जीवनदान देने को कहता है

ए कागल नइ एह सदेश, वाचीनइ आवउ उणदेश
मया करी नइ आपउ मान, दउ कुमरी नइ जीवनदान ।। 110 ।।

5. रूप परिवर्तन

अलौकिक शक्ति या दिव्य विद्या द्वारा स्वय का रूप परिवर्तन करके कथा मे कौतूहल की वृद्धि करना है। हस-राज भीमसेन के यहा पुत्र रूप मे जन्म लेता है। हसी उससे अर्थात् अपने प्रियतम से मिलने आती है। बालक हस राजहसी का परिचित स्वर सुनकर चौंकता है और वह चारो ओर देखता हुआ पूर्व प्रीति का स्मरण कर मन ही मन हँसता है। राजा-रानी भी हँसी के उस स्वर को सुनकर पहचान जाते हैं और आदर सहित हसी को बुलाते हैं। वह हसी रूप को छोडकर नारी रूप मे आकर अपने सास-ससुर अर्थात् राजा भीमसेन व रानी मदनमजरी के चरणो मे प्रणाम करती है

रायराणी आदर करी तेडी हसी त्तांम
आवी रूपइ आपणइ प्री नइ करइ प्रणाम ॥ 381 ॥

पंषी रूपइ तें परहरी रचीयइ नारी रूप
सासु सुसरा पय नमी साचउ कहइ सरूप ॥ 382 ॥

कुशललाभ ने हस एवं हसी को देवता रूप मे चित्रित किया है जैसा कि हसी के कथन से स्पष्ट होता है

मइ परणावीए पदमिणी करज्यो अधिक नेह अम्हमणी
मानव तुम्हे अम्हे देवता भोग करता लागइ षता ॥ 535 ॥

देवता पात्रो को रूप परिवर्तन के लिये किसी विद्या या मत्र-तत्र की आवश्यकता नही होती क्योकि यह सिद्धि उन्हे जन्म से ही प्राप्त होती है।

6. दिव्य विद्या-(आकाश-गमन)

दिव्य विद्या देवताओ, योगियो या व्यतरियो आदि के पास होती है। देवता जहाँ इस विद्या का प्रयोग शुभ कार्य के लिये ही करते है वहाँ अतिमानव शक्तियाँ इस विद्या का प्रयोग दोनो रूपो मे करती हैं। इस विद्या द्वारा वे किसी का अनिष्ट भी करते हैं तो प्रसन्न होने पर उसे सब प्रकार से सम्पन्न भी कर देते हैं। ऋषि हसराज को धर्म का उपदेश दे आकाश मे उड़ जाते हैं

वर्तमान योगइ जाणासइ इम कहि रिषि उडया आकासइ
कुमरे तिहा थी करी प्रयाण आव्या निज नगरी अहिठाण ॥ 560 ॥

'भीमसेन राजहस चौपई' मे कुशललाभ ने इस विद्या का प्रयोग कथा प्रवाह के लिये अनूठे एव नवीन रूप मे किया हैं। हस हसी तो देव पात्र होने के कारण आकाश मार्ग से ही आते-जाते हैं

अबर थी नीची ऊतरी बइठा हस महल ऊपरी ॥ 247 ॥

इसी तरह मदनमजरी की दोहद पूर्ण करने के लिये अमृत फल लेने हसी व्यंतरी आकाश मार्ग से ही आते हैं

इम कही ते तरवर सिरि गई अजरामर फल आणउ सही
ते तीनइ उड्या आकासि अनुक्रमि आव्या तिणि आवासि ॥ 358

हसराज रूपमजरी से विवाह करना चाहता है और वह इस कार्य मे अपनी प्रिय पत्नी हसी की सहायता चाहता है वह उसे सकेत से वुलाता है

सकेतइ रे आराधी हसी सुरी शयासन रे कपित कारण मनधरी
निज वल्लभरे मिलवा ऊमाहउ करी आकासइ रे हसी रूपइ अवतारी
॥ 491 ॥

7. अदृश्यता

राजा भीमसेन को एक तपस्वी यह विद्या सिखाता है
लक जून काजल रेषइ नर भमता कोई न देषइ
विपधर विष अलगा वारइ मत्र आप ऊपर उपगारइ ॥ 337 ॥

काजग की रेखा खीचने से वह व्यक्ति अदृश्य हो जायेगा तथा मत्र के जाप से विषधर का विष भी दूर हो जायेगा ।

रूपमजरी के स्वयवर मे आये सभी राजकुमार सोचते हैं कि यह कन्या किसे अपना वर (चुनेगी) वरेगी उसी समय अदृश्य रूप मे हसी वहाँ आती है और अपने पूर्व कथनानुसार राजहस पर पुष्पवर्षा करती है

तिण वेला हसी तिहाँ रूप अद्रिष्ट रचेइ
राजहंस सिर ऊपरेई कुसमह वृष्टि करेइ ॥ 524 ॥

8. शाप देना

शाप अनजान मे या जानबूझ कर भी दिया जाता है । 'भीमसेन राजहस' मे सन्यासी भिक्षा लेने जाता है और कठोर वचन सुनकर उसे क्रोध आ जाता है और वह उसे शाप देता है। कर्म योग से उसी समय उस व्यक्ति को सर्प डस लेता है जिससे उसकी मृत्यु हो जाती है

तू छइ अति जसही कोई दीसइ अनुमान
वाकू रहि रे वे गलउ ए आव्यउ अभिमान
कुवचन सुणतां चड्यउ कोप तस आपज दीधउ
कर्मि योगि ते डसउ काल कहइ एणइ कीधउ ॥ 126 ॥

कथाकार ने श्राप के साथ-साथ कर्मयोग को भी महत्व दिया है ।

9. आकाशवाणी

राजकुमारी रूपमजरी अपनी इष्टदेवी से प्रार्थना करती है और अपने होने वाले पति के वारे मे सोचती है । उसी समय हसी गुप्त रूप से वहाँ आती है और आकाशवाणी से कहती है

तिण वेला रे सावधान रहज्यो सही
जस मस्तकि रे कुसम वृष्टि अंवर थकी

वरस ता रे देवइ ते वर पारखी
पारखू जाणी थई हर्षित सत्यवाणी सुरकही ॥ 497 ॥

नायक अथवा किसी अन्य पात्र को किसी भावी दुर्घटना के प्रति सतर्क करने के लिये अथवा किसी रहस्य की सूचना देने के लिये 'आकाशवाणी' का प्रयोग एकाधिक स्थलो पर उपलब्ध होता है। प्रचलित विश्वासो के अनुसार 'आकाशवाणी' का अर्थ है देववाणी अर्थात् वह अलौकिक आवाज जो आकाश मे अपने आप गूँज गई हो और जिसके आदेशो के प्रति कोई अविश्वास न किया जा सके। आकाशवाणी कथानक की गति को सहायता प्रदान करने वाले विभिन्न उपायो मे से एक माना गया है। जहाँ कही भी कथानक के बीच मे कोई ऐसी समस्या खड़ी होती है जिसका निराकरण स्वय पात्र नही कर पाते वही कवि आकाशवाणी करवा देता है। कालिदास कृत 'शाकुन्तल' मे कण्व को यह सूचना आकाशवाणी द्वारा प्राप्त होती है कि शकुन्तला का विवाह हो गया है और वह शीघ्र ही माता बनने वाली है।[1]

10. शुभ-अशुभ शकुनो द्वारा भावी सकेत -

शकुन या अपशकुन वर्णन की रुढि कथाकारो को अत्यन्त प्रिय रही है। इसका प्रयोग अनेक प्रकार से किया गया है। कोई नायक किसी महत्वपूर्ण कार्य के लिये प्रस्थान करता है, लडाई पर जाते समय, बारात साज कर विवाह के लिये जाते समय कथाकार शुभ-अशुभ शकुनो का वर्णन बहुधा कर देते हैं।

शकुन (सगुन) शब्द का अर्थ पक्षी होता है। वाराह मिहर ने शकुन सूचक पक्षियो की सख्या 21 (इक्कीस) बताई है।[2]

पडित रामनरेश त्रिपाठी ने अपने ग्राम साहित्य मे लोक जीव के शकुन अपशकुनो से सम्बन्धित कई प्रकार की प्रचलित उक्तियो का उल्लेख किया है।[3]

1. कालिदास—'शाकुन्तल'

2.
1 श्यामा	2 श्येन	3. शशघ्न
4 वंजुल	5 मयूर	6 श्रीकर्ण
7 चक्रवाक	8 चाष	9 भाण्डरीक
10 खंजन	11. शुक	12 काक
13 कबूतर (तीन प्रकार के)	14. कुलाल	15 कुक्कुट
16 भारद्वाज	17 हारीत	18. खर
19, गृध्र	20 पणकट	21. चटक

बृहत्संहिता 88/1

3. पं० रामनरेश त्रिपाठी ग्राम साहित्य, तीसरा भाग, 1952 पृ० 191

जायसी ने भी 'पद्मावत' मे शुभ और अशुभ शकुनो का वर्णन किया है।[1] जायसी की तरह तुलसी ने भी शकुन रूढि का पूर्णतया पालन किया है। रामचन्द्रजी की बारात का वर्णन करते हुए उसने अनेक प्रकार के शुभ शकुनो का उल्लेख किया है।[2]

इस प्रकार के शुभ शकुनो की यह रूढि भारतीय भक्ति साहित्य मे भी प्रयुक्त है और इसी के माध्यम से एक ओर तो भावी घटनाओ के प्रति शुभाशा प्रकट की गई है, दूसरी ओर कथानक को थोडा बहुत विस्तार भी दिया गया है।

इसी प्रकार के शुभ व अशुभ शकुनो का वर्णन कुशललाभ ने 'भीमसेन राजहस चौपई' मे किया है। राजहस बारात सजाकर रूपमजरी से विवाह के लिए प्रस्थान करते समय सोचता है, पता नही वह कन्या किसे वरण करेगी यदि वह राजहंस से विवाह करती है तो कुमार के सभी वाछित पूर्ण हो जायेंगे। जो शकुन रात्रि मे देखा जाता है उसका फल प्रात काल मे ही मिल जाता है ऐसा कह-कर कवि ने शुभ शकुनो का वर्णन किया है —

सवी साभि डावा सीयाल बोल्या घणा मिली समकालि
वाहपुर विहू वार जगीस वाछित पामइ विश्वा वीस ॥ 475 ॥

इसी तरह उल्लू, चीवरी, तीतर, समली (चील), हरिण, श्यामा, नीलकण्ठ आदि पक्षियो के क्रियाकलापो द्वारा शुभ शकुनो के सकेत कथाकार ने दिये हैं।[3]

शुभ शकुनो के साथ कथाकार अशुभ शकुनो के बारे मे बताना भी नही भूला है। अपशकुन का वर्णन भावी अमगल का सूचक होता है कुशललाभ ने बताया है कि यदि नेवला नीची दिशा से ऊँची दिशा की ओर जाते हुये बार-बार मुड कर देखता हो तो अवश्य ही चिंता का कारण होता है —

नीची दिसी थी नउलीयउ ऊँची दिसिऊ जाइ
जातउ जोयइ द्रिष्टि सूं तउ मन चितउ थाइ ॥ 482 ॥

इन शुभ शकुनों को जानकर राजहस अपने चतुरग दल सहित अवंतीपुर आता है जहाँ स्वयवर मे उसे ही माला पहनाई जाती है।

11· दोहद कामना

प्रिया की 'दोहद कामना' की पूर्ति के लिये प्रिय द्वारा दुस्तर और कठिन कार्यों का किया जाना एक पूर्व प्रचलित अभिप्राय रहा है। स्त्री की दोहद कामना जीवन की साधारण एव चिरपरिचित घटना है किन्तु कहानीकार के हाथ मे पडकर

1 रामचन्द्र शुक्ल (सम्पादक) जायसी ग्रथावली पद्मावत, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी सं 2008 वि जोगी खंड

2 तुलसीदास, 'रामचरित मानस' प्रथम सोपान 1-4/303

3 कुशललाभ, भीमसेन राजहंस चौपई ह प्र. ला द ग्रथालय अहमदाबाद ग्रंथांक 1217 चौपाई सख्या 475 से 484

यही साधारण घटना अद्भुत बन जाती है। इसी घटना को कहानीकार ने अभिप्राय के रूप मे प्रयुक्त किया है। कहानीकार जिस दिशा मे कहानी को मोडना चाहता है अपने पात्र से वैसी ही दोहद कामना करवाता है। उदाहरण के लिये 'कथा-सरित्सागर' मे मृगावती-रुधिर से पूर्ण लीला-वापी, मे स्नान करने की इच्छा व्यक्त करती है

ततस्तस्यापि दिवसै सहस्रानीक भूपते
वभार गर्भं पाण्डुमुखी राज्ञी मृगावती।
ययाचे साथ भर्तार दर्शनातृप्त लोचनं।
दोहद रूधिरापूर्ण लीलावापी निमज्जन।[1]

जैन कथाकारो का तो यह अत्यन्त ही प्रिय अभिप्राय रहा है। शायद ही कोई ऐसा जैन कथाकार हो जिसने किसी अर्हत् या चक्रवर्तिन् की उत्पत्ति के पूर्व उनकी माता द्वारा उत्तम और पवित्र कार्य करने की दोहद कामना न व्यक्त करवाई हो। कुशललाभ भी जैन कथाकार थे और उन पर भी परम्परा से प्रचलित अभिप्रायो के प्रयोग का प्रभाव पडना अवश्यम्भावी था।

कुशललाभ ने 'भीमसेन राजहस चोपई' मे इस अभिप्राय का प्रयोग अवसरानुकूल कई जगह किया है। रानी मदनमजरी गर्भवती है। गर्भ के कारण उसे दोहद होती है कि शृगार करके राजा सहित हाथी पर बैठकर जहाँ नदी हो वहाँ रमण किया जाये

अनुक्रमि गर्भ थयउ आधान प्रेम प्रसन राय बहुमान
पाच सात डोहला प्रकार इम अभिलाष थई यतिवार ॥ 261 ॥
पर हस्ति पूरण सिणगार सिरछ छत्र चामर अतिसार
राय सहित बइसू मती रगि सपरिवार अतेउर सगि ॥ 262 ॥
नदी जिहा निर्झरण निवाण रमीयइ तिहा रग मंडाण
सहु वात कही राजा भणी परिवा मांडी पूरेवा तणी ॥ 263 ॥

प्रिया की दोहद कामना पूर्ण करने मे कई कठिनाइयो का भी सामना करना पडता है हाथी क्रोध मे भरा हुआ जा रहा है और भय से रानी का मुख कुम्हला जाता है। भीमसेन उसे समझाता है कि, जो होनी है वह होकर रहती है तब रानी कहती है

देव माहरा डोहला भणी तुम्ह नइ आपद आवी घणी,
कहिसइ लोक नारि नइ काजि मृत्यु कष्टि पडियउ महाराज ॥ 274 ॥

कि ससार यही कहेगा कि नारी के कारण आप मृत्यु के मुह मे पडे हैं, मेरी दोहद कामना पूर्ण करने मे आपको कितनी बाधायें आई है।

1. कथा सरित्सागर—2-2

कभी-कभी कथाकार अपने पात्रों से किसी फल आदि के खाने की 'दोहद' करवाता है। मदनमंजरी गर्भवती है और वह 'अमृत फल' खाने की दोहद व्यक्त करती है

स्वामी जी मुझ गर्भ प्रमाण एक डोहलउ थयउ असमान
अमृत फल नउ करू आहार तउ मुझ थायइ हर्ष अपार ॥ 343 ॥

12. जलक्रीड़ा

'भीमसेन हंसराज चौपई' मे कथाकार ने इस अभिप्राय का संकेत मात्र दिया है। राजा-रानी हाथी पर भ्रमण करने को निकलते हैं। वे नंदनवन को देखकर फिर सरोवर के तट पर आकर जलक्रीड़ा करते हैं

सुंदरि मदनमंजरी साथि निर्भय थइ वइठा नरनाथ
पहिली नंदन वन पेषंति सरवर तटि जलकेलि करत ॥ 265 ॥

13. सौदागर आगमन

ढोलामारू के समान 'भीमसेन राजहंस चौपई' मे भी सौदागर घोड़े बेचने के लिते आता है

इण अवसर आव्या घणा ताजा घणा तुरंग
सवल साथ सउदागरी वेचण काजि विडंग ॥ 398 ॥

14. गौरी पूजा

गौरी पूजा का महत्व राजस्थानी लोक जीवन का प्रमुख अंग रहा है। गौरी की पूजा कन्या योग्य वर की प्राप्ति तथा कामनाओं को पूर्ण करने के लिये करती है। 'छिताई वारता' की छिताई शिव-मन्दिर मे जाकर शिव-पूजा करती है। 'वेलि' की रुक्मिणी भी शिव-गौरी पूजनार्थ जाती है जहाँ कृष्ण उसका अपहरण करते हैं। 'पृथ्वीराज रासो' की संयोगिता भी पूजा करते समय ही अपहृत की जाती है। 'रामचरित मानस' मे तुलसीदास ने सीता को वाटिका मे भवानी पूजा के लिये भेजकर इस अभिप्राय का पालन किया है।

'ढोलामारू' की मारवणी सखियो सहित मन्दिर जाती हुई सौदागर से अपने प्रियतम के बारे मे सुनती है। मारू के इस प्रकार देव-पूजा हेतु मन्दिर जाने मे हमे इस रूढ़ि की झलक मिलती है।

'भीमसेन राजहंस चौपई' में त्रिपुरा देवी मन वांछित वर देने वाली कही गई है

इण अवसरि तिणिपुर आराम, तिणमहि त्रिपुरादेवी ठांम
कत काजि जे सेवा करइ ते कन्या वांछित वर वरइ ॥ 102 ॥

राजा भीमसेन भी त्रिपुरापुरी पहुंच कर देवी की कन्या (पत्नी) प्राप्ति हेतु वन्दना करता है

जय जय माता जगदीस्वरी भेटी भावइ भवनेश्वरी
हुं हु तुम्ह सेवक हिंगलाज कृपा करी मुझ सारो काज ॥ 142 ॥

मदनमंजरी भीमसेन को पति रूप मे चाहती है और उसी की प्राप्ति हेतु देवी पूजा करती है। जब कन्या का पिता रिणकेसरी अन्य वर से उसका सम्बन्ध तय कर देता है तो वह देवी मन्दिर मे आती है और कहती है

ते अनुक्रमि आवी वन माहि, देवी सुवर्न चडी दुखदाहि
दइ उलभा देवी भणी, माहरी भगति तुम्हे नविगिणी ॥ 168 ॥

नारदपुरी के राजा रिणकेसरी की पुत्री सखियो सहित प्रतिमति गौरी पूजा के लिये जाते समय नदी मे गिर जाती है

गउरि पूजिवा ते वनि गई नदी परइ तव सध्याथई
इसइ मेघ आव्यउ अपार अधिकउ थया घोर अधार ॥ 454 ॥

इसी अभिप्राय का प्रयोग कथाकार ने एक स्थान पर और किया है। रूपमजरी का स्वयवर रचा गया है। रूपमजरी देवी की स्तुति करती है और कहती है कि अपने श्रीमुख से मेरे वर के वारे मे वताओ तब ही मैं तुम्हे सच्ची जानू

तिण रमणी रे देवी नी पूजा करि जोडि रे
एह वन सुपि ऊचरी, मुझ श्रीमुखि रे
को अहिनाण कहउ परउ जिम जाणी रे
अवरतेह नर अतरउ ॥ 495 ॥

15. पुष्पवृष्टि

रूपमंजरी के स्वयवर मे हसी (देवता) राजहस पर पुष्पवृष्टि करती है।

16. आत्म-हत्या की धमकी

उपेक्षित पात्र द्वारा प्रेमी का ध्यान आकर्षित करने एव प्रेम व्यापार मे प्रभावोत्पादकता लाने के लिये इस प्रकार की कथा रूढि का प्रयोग किया जाता है। इसमे पात्र अग्नि मे जलकर अथवा गले मे फांसी डालकर या अन्न जल छोड़कर अथवा विषफल आदि जहरीले पदार्थ खाकर आत्म-हत्या करने के प्रयत्न करते हैं या मात्र धमकी दी जाती हैं। 'पार्श्वनाथ चरित्र' मे भी यह रूढि मिलती है।

'ढोलामारू' मे ढोला, मारू के सांप द्वारा डसे जाने पर आत्म-हत्या करने को तैयार हो जाता है। इसी प्रकार 'भीमसेन राजहस' की नायिका मदनमजरी तो कई वार आत्महत्या करने के प्रयत्न करती है परन्तु किसी न किसी प्रकार बचाली जाती है।

रूपमजरी शुक से भीमसेन के वारे मे सुनकर उसे मन ही मन प्रणाम करती है और प्रतिज्ञा करती है

भीमसेन राजा वर वरू अथवा अगनि दाघअणुसरू ॥ 85 ॥

ऐसे ही वचन वह देवी की पूजा करते समय गले में फंदा डालकर आत्म-हत्या करने को भी कहती है

> कर जोड़ी देवी नइ कहइ भीमसेन मेलवउ जीवित रहइ
> एह न पूजइ माहरी आस तउ तुम्ह आगइ घालू गलपास ॥ 104 ॥

रूपमंजरी आत्महत्या की धमकी ही नहीं देती वरन् वह देवी के सामने एक पेड पर चढ़कर फांसी भी लगा लेती है

> प्री मेलवा न पूरी आस, हिव हू घालू हू गलि पासि
> कही एम तरु सालइ चढी वेणी वंध छोडइ चडवडी ॥ 169 ॥

एक अन्य स्थान पर वह विषफल खा-कर भी आत्म-हत्या का प्रयत्न करती है

> तापसणी वहती जव गई रांणी तरवर अंतर रही
> विषफल भख्यण वेगइ करइ तें पेषी तापसो पो करइ ॥ 227 ॥

अगड़दत्त कुमार रास की कथानक रूढ़ियाँ

1. रूपदर्शन जन्य प्रेम

अगड़दत्त कुमार के सौन्दर्य को देख—मदनमजरी—के मन में प्रेम का उदय होता है। कुशललाभ ने इस अभिप्राय का नवीन ढग से प्रयोग किया है। जहाँ नायक नायिका में प्रेम का उदय चित्र अथवा स्वप्न देखकर होता है वहाँ कुशललाभ नायक को प्रत्यक्ष दिखाकर प्रेम का उदय कराते हैं। नायिका मदनमजरी नायक अगड़दत्त को देखकर मन में विचार करती है कि किसी तरह यह व्यक्ति मेरा पति हो जाये।[1] अगड़दत्त गुरु से लज्जा के कारण अपना प्रेम प्रकट नहीं कर पाता तो नायिका विभिन्न प्रकार से उसे आकर्षित करती है और अन्त में अपना प्रेम निवेदन अगड़दत्त को स्पष्ट कह ही देती है[2]

> नारी कहि प्रीतम अवधारि मुझ नइ लेई परदेसी पधारी
> आप तणउ कहीउ वरतंत हिव हूउ प्रीय तूं मुझ कंत ॥ 47 ॥

2 बीड़ा उठाना

किसी साहसिक कार्य को करने की जिम्मेवारी लेना ही बीड़ा उठाने के रूप में यह अभिप्राय प्रयुक्त हुआ है। अगड़दत्त चोर पकड़ने का बीड़ा उठाता है।[3]

1. मयण मजरी इम चीतवइ किम हुइ प्रीय माहरउ हवइ
   तउ कुसमह गूयइ सेवइ फुमर भणी तिणि नाषिउ दडउ ॥ 40 ॥
2. वही
3. दोहा सं. 161 वही।

राजा का हाथी जब मदमस्त होकर निकल जाता है तो राजा हाथी को पकड़ने की एक करोड़ दीनार इनाम घोषित करता है। अगडदत्त कुमार दूसरी बार इस समय हाथी को पकड़ने का बीड़ा उठाता है।[1]

3. मंत्र विद्या

चोर मंत्र पढ़ कर ताला खोल लेता है तथा मंत्र के प्रभाव से लोग निद्रावश हो जाते हैं[2] और मंत्र की ही शक्ति से पूरे नगर में भ्रमण करने पर भी चोर को कोई देख नहीं पाता।

फरइ निशंक नगर मा सही मंत्र शक्ति को देखइ नहीं ॥ 77 ॥

मंत्र विद्या का प्रयोग कुशललाभ दूसरी बार उस समय करते हैं जब मदनमंजरी सर्प दंश से मर जाती है और अगडदत्त भी उसी के साथ मरना चाहता है उसी समय विद्याधर आता है और मदनमंजरी के कान में कुछ मंत्र कहता है जिससे वह पुनः जीवित हो जाती है।[3]

4. आकाश गमन अथवा खेचरी विद्या

यह भी एक प्रकार की दिव्य विद्या है। 'अगडदत्त रास चौपई' में सिद्ध व्यक्ति या व्यंतरी आदि ही आकाश मार्ग से आते हैं। मदनमंजरी की धात्री अगडदत्त को मदनमंजरी का प्रेम सन्देश देने आकाश मार्ग से ही आती है।[4] अगडदत्त राजा को बताता है कि यह भुजंगम चोर विद्या के बल से आकाश में उड़ता है

विद्या सबल चोर नइ पासि, आप बलइ उडइ आकासि ॥ 108 ॥

5. वन में मार्ग भूलना

कथा में चमत्कार पैदा करने एवं रोमांचक घटनाओं को नवीन मोड़ देने के लिये इस अभिप्राय का प्रयोग कवि ने किया है। अगडदत्त कुमार सुर सुन्दरी एवं मदनमंजरी से विवाह कर वसंतपुर लौट रहा होता है तब रात्रि के कारण व दो मार्ग होने के कारण, कुमार मार्ग भूल जाता है[5] और कुमार की सारी सेना दूसरे मार्ग पर

1. જે ઝાલી આપઇ ગજરાય કોડી દીનાર દેઉતસ માય
   અગડદત્ત વીડુ ઝાલીઉ પહુટઇ ગજ ઝાલણ ચાલીઉ ॥ 123 ॥
2. दो. स 76
3. दो स 258
4. તેણી ગૈલા એક ગરઢીનાર આવી સમીસાંમે નીં વાર—134
5. दो. सं. 151

चली जाती है ।[1] मार्ग मे अनेक कठिनाईयो का सामना करवाकर कवि ने इस अभि-प्राय को सिद्धि मार्ग के अवरोध तत्व के रूप मे प्रयुक्त किया है ।[2]

6. सन्देश प्रेषण मे सहायक धात्री

कवि नायक नायिकाओ के सन्देश जहा शुक, हंस आदि के द्वारा प्रेषण करते थे वहां कवि कुशललाभ ने सन्देश-प्रेषण का कार्य धात्री से करवा कर अभिप्राय को नवीन रूप दिया है। मदनमजरी की धात्री अगड़दत्त कुमार को सन्देश देती है कि तुमने सुर सुन्दरी से विवाह कर लिया और मदनमजरी को तुमने जो वचन दिया था वह क्या ऐसा ही था ।[3] अगड़दत्त सन्देश के उत्तर में सवा करोड़ का हार अपने सच्चे प्रेम के लिये देता है और धात्री से यह कहना भी नही भूलता कि मदनमजरी से कहना कि उसने जो वचन दिया है वह सच्चा है और यहाँ से लौटते समय उसे अवश्य ही साथ ले जायेगा ।[4] इस प्रकार का सन्देश अगड़दत्त धात्री को देता है ।

निष्कर्षत. कथानक रूढियो की दृष्टि से हमे इन कथा काव्यो मे सौन्दर्य का संवर्धन एव नाटकीयता का नियोजन करने वाली उपर्युक्त कथानक रूढियां मिलती हैं। इनसे कथा प्रवाह को पर्याप्त गति मिली है साथ ही उसमें चमत्कार एव सरसता का सचार भी हुआ है। काव्य कथा के रूप मे शिल्प निर्माण मे इनका समुचित योग है। लघु कथानक के विस्तृत होने का एक कारण इन कथानक रूढियो की उपस्थिति भी है। रूढियो के परिणामस्वरूप कथानक मे जिज्ञासा, आश्चर्य, कुतूहल और सौन्दर्य तत्व का सम्यक् निर्वाह भी हो जाता है। स्वप्नदर्शन जन्य प्रेमासक्ति की रूढि कथा मे एकदम गति का सचार करती है तो सौदागर आगमन एव रहस्योद्घाटन की रूढियाँ कथा को अनूठा मोड़ देती है। विरह-वर्णन, संदेश-प्रेषण एव नखशिख की कथानक रूढ़ियाँ कथा नायिकाओ की मर्मस्पर्शी मनोभावना से सवलित होकर अपूर्व मनोहारिता एव हृदय द्रवणता ला देती है, तो सिद्धि-मार्ग की बाधाएँ नाटकीयता, संघर्ष एवं कुतूहल का सृजन करती है। इस तरह इन कथाकाव्यों के लघु कथानको की आद्योपांत आकर्षक, रोचक और महत्वपूर्ण बनाये रखने मे ये कथानक रूढियां परम्पराविहित है परन्तु उनका अनोखा नियोजन कथा मे नवीनता एव चारुता की सृष्टि करता है।

1. दो. सं. 152
2. दो. स. 154 से 159
3. मयन मजरी इम वीनवइ राजकुमारी ते परणी हवइ
   दीधउ बोहलइ तउ मुझ मणी किसी वात ते वाचा वणी ॥ 136 ॥
4. सवा कोडि नउ दीधउ हार-साचउ दाखिउ प्रेम अपार
   मन मा प्रीति धरजो अम्हतणी, जाता लेइजा सिउ अम्ह भणी ॥ 138 ॥

कुशललाभ के कथा काव्यों की कथानक रूढ़ियों का वैज्ञानिक अध्ययन

कुशललाभ के कथा काव्यो मे प्रयुक्त रूढ़ियो का वर्णन ऊपर विस्तार से किया जा चुका है। किन्तु इस कार्य को वैज्ञानिक आधार देने के लिए आवश्यक है कि अन्तर्राष्ट्रीय विद्वान स्टिथ थामसन की अभिप्राय अनुक्रमणिका (मोटिफ इंडेक्स) प्रणाली के आधार पर इन कथा काव्य रूढियों का सूक्ष्म विश्लेषण वर्गीकरण और क्रमाकन किया जाये।

ब्रज की कुछ लोक कथाओ को लेकर श्रीमती डा. सावित्री सरीन इसी प्रकार का कार्य कर चुकी हैं। उन्होने थामसन द्वारा वर्गीकरण के प्रयुक्त रोमन अक्षरो के स्थान पर देव नागरी अक्षरो का प्रयोग किया है। अक्षरो में उसी रूप को अपनाया जा रहा है। सुविधा के लिये देवनागरी के साथ साथ रोमन अक्षरो को भी कोष्ठक मे मे दिया जा रहा है ताकि किसी कथानक रूढि को मोटिफ इडेक्स मे ढूंढने मे सरलता हो सके। कुशललाभ के कथाकाव्यो मे जो नवीन रूढियाँ प्रयुक्त हुई हैं उनके आगे यहाँ + चिन्ह दिया जा रहा है। जिन कथानक रूढियो के आगे बिन्दु 0 चिन्ह लगा है वे रूढियाँ पौराणिक स्रोत की कथानक रूढ़ियाँ हैं।

डा सरीन द्वारा दिया गया देवनागरी रूप

A	:	क	N	:	त
B	:	ख	O	:	उ
C	:	ग	P	:	थ
D	:	घ	Q	:	द
E	.	च	R		ध
F	.	छ	S	.	न
G	.	ज	T	:	प
H	:	झ	U	:	फ
I	.	ह	V	:	ब
J	.	ट	W		भ
K	:	ठ	X	:	म
L	:	ड	Y	.	व
M	:	ढ	Z		य (ग)

स्टिथ थामसन ने इन अक्षरो का निर्धारण कथानक रूढियो के जिन वर्गों के लिये किया है, वे ये हैं

ए (क) धर्म गाथा अभिप्राय

बी (ख) पशु विषय अभिप्राय

सी (ग) . वर्जन विषय अभिप्राय

डी (घ) . जादुई अभिप्राय

ई (च) ; मृतक सम्बन्धी अभिप्राय

एफ (छ) : चमत्कार विषयक अभिप्राय
जी (ज) : दैव विषयक अभिप्राय
एच (झ) : परीक्षा विषयक अभिप्राय
आई (ह) : ज्ञान एवं बुद्धि विषयक अभिप्राय
जे (ट) : बुद्धिमानी विषयक अभिप्राय
के (ठ) : धोखे विषयक अभिप्राय
एल (ड) . भाग्य परिवर्तन विषयक अभिप्राय
एम (ढ) : भविष्य निर्धारण विषयक अभिप्राय
एन (त) · अवसर तथा भाग्य विषयक अभिप्राय
ओ (उ) . (यह वर्ग अभी अनिर्धारित ही है)
पी (थ) . समाज विषयक अभिप्राय
क्यू (द) : पुरस्कार तथा दण्ड विषयक अभिप्राय
आर (घ) : अपहरण तथा रक्षा (कैदी तथा पलायन) सम्बन्धी अभिप्राय
एस (न) अप्राकृतिक क्रूरता—विषयक अभिप्राय
टी (प) · यौन या विवाह और प्रेम सम्बन्धी अभिप्राय
यू (फ) · जीवन के रूप सम्बन्धी अभिप्राय
व्ही (व) · धर्म विषयक अभिप्राय
डब्लू (भ) · चारित्रिक विशेषताओं विषयक अभिप्राय
एक्स (म) : विनोद (हास्य) विषयक अभिप्राय
वाई (व) (यह वर्ग अभी अनिर्धारित ही है)
जेड़ (य) अभिप्रायों के अन्य विविध समूह (अवर्गीकृत अभिप्राय आदि)

उपर्युक्त वर्गों में से आई (ह) ओ (उ) यू (फ) एक्स (म) और वाई (व) वर्गों को छोड़ शेष सभी वर्गों की कथानक रूढियां कुशललाभ के कथा काव्यों में प्राप्त हुई हैं।

1. क (ए)—धर्म गाथात्मक अभिप्राय

0 + क (ए) 102, 13	दयालु शिव	ढोला मारु चौपई
0 + क (ए) 102, 13	दयालु पार्वती	
0 — क (ए) 124, 1	शिव	ढोला मारु चौपई, माधवानल कामकंदला चौ.
0 + क (ए) 287	इन्द्र	माधवानल कामकंदला
0 क (ए) 524	दयालु	
0 | क (ए) 661	इन्द्र पुर	
0 क (ए) 661, 4	इन्द्र स	

2. ख (बी) पशु पक्षी विषयक अभिप्राय

	ख (बी) 16, 5, 1, 2, 1	सर्प जो मानव को सास से पीता है।	ढोला मारु चौपई
	ख (बी) 131, 2	चतुर तोता	,,
0	ख (बी) 211	पशु का मानव वाणी मे बोलना	भीमसेन राजहस चौपई
	211·3·4	तोता	तेजसार रास
	211 3 3	हस,	भीमसेन हस राज चौ.
	441·1 1	वानर	
	442	गधा	ढोला मारु चौपई
	443 1	ऊट	,,
0 +	ख (बी) 219	दूत हस दूत	भीमसेन हसराज चौपई
0	ख (बी) 219, 1, 6,	तोता दूत	ढोलामारु, तेजसार रास अगड़दत्त रास,
0 +	ख (बी) 299	मैत्री निभाने वाले पशु	,,
0 +	ख (बी) 336	पक्षी तोता, हस ऊट,	,,
0	ख (बी) 336	कृतज्ञ पक्षी (कैद से छुडाने के कारण)	तेजसार रास
0	ख (बी) 441, 1	सहायक वानर	भीमसेन हसराज चौ.

3. ग (सी) वर्जन का निषेध विषयक अभिप्राय

0	ग (सी) 69	मानव और परा मानव (अप्सरा) मे यौन ससर्ग निषिद्ध	माधवानल कामकन्दला चौपई।
0	ग + (सी) 119	पत्नीवत व्यापार का निषेध	स्थुलीभद्र छत्तीसी
0	ग + (सी) 611	वर्जित कक्ष	जिनपालित जिन रक्षित रास तेजसार रास चौपई
0	ग + (सी) 614	वर्जित मार्ग	
0	ग (सी) 614, 1,	वर्जित दिशा दक्षिण दिशा	जि जि रा.
	ग + (सी) 685	(आकाश न जलाना)	माधवानल कामकदला
0	ग (सी) 952	अन्य लोक मे पहुँचना नियावा	तेजसार रास अगड़दत्त रास, भीमसेन राजहस चौपई

		स्थूलिभद्र छत्तीसी, जिनपालित रास
0 ग (सी) 961, 2	पत्थर बनना	माधवानल
0 ग (सी) 961·2 1.	शाप देकर अप्सरा को पत्थर बना देना	काम कंदला चौ. कामकंदला चौपई
961 2·2	सेना को स्तम्भित कर देना	तेजसार रास अगडदत्त रास
0 ग (सी) 962, 2	निषेध भंग करने के कारण व्यक्ति को दूसरे लोक में रहना ही पड़ेगा।	माधवानल कामकन्दला चौपई
0 ग (सी) 987	शापित होना	,,
0 + ग (सी) 989	मरना	ढोला मारू चौपई मा का चौ

4. घ (डी) जादू और रूपान्तर सम्बन्धी अभिप्राय

0 घ (डी) 12	रूपान्तर वेश परिवर्तन	ढो. मा चौ. मा. का. चौ. तेजसार रास अगड़दत्त रास जिन पालित जिन रक्षित रास
0 + घ (डी) 152 6	रूप परिवर्तन हो जाने पर भी पूर्व स्मृति का बने रहना।	मा. का, चौ. भी. ह चौ.
0 + घ (डी) 173	योगी की जादू शक्ति	तेजसार रास अगड़दत्त रास
0 घ (डी) 180	मनुष्य को कीड़ा बना	मा. का. चौ
0 + घ (डी) 231, 1	स्त्री पत्थर बनी	मा का. चौ.
घ (डी) 314, 1, 3,	मृगी का स्त्री रूप में परिवर्तन	तेजसार रास
घ (डी) 439·3	जन्म फल से	भी रा. चौ.
0 + घ (डी) 439· 5.	अप्सरा का नायिका (मानवी) रूप मे अवतार	मा. का. चौ.
0 घ (डी) 439· 5	देवताओं का मानव रूप धारण कर प्रकट होना।	,, दुर्गा सात्तसी
घ (डी) 530	रूप परिवर्तन	तेजसार रास
0 घ (डी) 987.3.	जादू की वस्तु की सहायता	

		से कार्य करना।	जिन पालित जिन रक्षित रास भी. ह. चौ.
0 +	घ (डी) 599	जादू तन्त्र मन्त्र का प्रयोग (विद्याधरी शक्ति से)	अगड़दत्त रास तेज सार रास
0	घ (डी) 1346, 1, 2	अमृत लाकर जीवित करना।	मा. का. चौ.
0	घ (डी) 1361, 23	अदृश्यता।	तेजसार रास अगडदत्त रास
0	घ (डी) 1420, 4	सहायक का आना। (पुकारने या स्मरण करने से)	मा. का चौ. तेजसार रास अगडदत्त रास जि. जि. रास दुर्गा सात्तसी
0	घ (डी) 1532.5.	उड़न खटोले पर बैठकर उड़ना।	तेजसार रास
0	घ (डी) 1712	ज्योतिषी (भविष्य वक्ता)	तेजसार रास भी ह. चौ. अगडदत्त रास
0	घ (डी) 1719,3	परामानवीय जाति	"
0	घ (डी) 1719 3.1.	गधर्व	तेजसार रास
0	घ (डी) 1719.4.	अप्सरा,	मा. का. चौ.
0	घ (डी) 1719.4.1	विद्याधर	तेजरास रास
0	घ (डा) 1719.4 2,	व्यंतरी	भी. ह. चौ.
0	घ (डी) 1810.3.2	देवी देवता का स्वप्न मे दर्शन देना।	सभी काव्यो मे जि. जि. रास
0	घ (डी) 1810,3,3,9	भावी पति का स्वप्न मे दर्शन	ढो. मा. चौ
0	घ (डी) 1812.3.3 0 2.1	प्रतीकात्मक स्वप्नो की व्याख्या।	तेजसार रास माधवानल काम कन्दल। चौपई
0	घ (डी) 1812, 5.1.2	शकुन से भविष्य ज्ञान	ढो. मा. चौ. भी. ह. चौ. तेजसार रास
0 +	घ (डी) 1812, 5 2.1	दायें व बाये अग का फड़कना	ढो. मा. चौ.
0 +	घ (डी) 2163, 2 1	युद्ध मे देवी की सहायता नायक को	तेजसार रास दुर्गा सात्तसी

5. च (ई) मृतक को पुनर्जीवन देने सम्बन्धी अभिप्रश्य

0	च (ई) 52 1 7	सर्प डसे को मन्त्र से जिलाना	ढो. मा. चौ
0	च (ई) 80.	अमृत से जिलाना	मा. का. चौ.
+	च (ई) 251 3	वैताल सहायक रूप मे	"
0	च (ई) 601 1 0.1	पूर्व जन्म याद होना	"
0	च (ई) 460 1	नायक का अतिप्राकृत जन्म	मी रा. चौ मा. का. चौ. दुर्गा सातसी

6 छ (F) चमत्कार सम्बन्धी अभिप्राय

0	छ (F) 11 3	इन्द्रपुरी की यात्रा	मा का चौ
0	छ (F) 174	परामानवीय पत्नी द्वारा नायक को अन्य लोक (इन्द्र लोक) मे जाना।	"
0 +	छ (F) 215	अप्सरा	"
0	छ (F) 234, 3	अप्सरा वस्तु के रूप मे	"
0	छ (F) 252 1 2	इद्र अप्सराओं का राजा।	"
0	छ (F) 252 4 1	अप्सरा का अप्सरा लोक से निष्कासन	"
0	छ (F) 252 4 1.1	अप्सरा दुराचरण के लिये निष्कासित	"
0	छ (F) 301	अप्सरा प्रेमिका	"
0	छ (F) 302 6 2.1	तबला (संगीत के माध्यम से प्रेमिका की प्राप्ति	"
0	छ (F) 531 1	राक्षस विशाल काय	तेजसार रास
0	छ (F) 575 1	असाधारण सुन्दरी	सभी कथा काव्यो की नायिका असाधारण सुन्दरी है।
0	छ (F) 640	असाधारण सौन्दर्य (नायक)	मा. का. चौ.
		आकाशवाणी (नायक नायिका कठिनाई हल करने के लिये)	मी रा चौ
0	छ (F) 966	आकाशवाणी (नायिका प्राप्ति	"

		का उपाय बताना)	तेजसार रास अगड़दत्त रास दुर्गा सातसी
0	छ (F) 1041.2 2 3	मृत्यु (नायक अथवा नायिका की मृत्यु सुनकर)	मा. का चौ.

7. ज (जी) दैयंत (राक्षस) विषयक अभिप्राय

0	ज (जी) 334.11 3	नरभक्षी राक्षस	तेजसार रास, दुर्गासातसी
0	ज (जी)	पिशाच (मानव को कैद कर रखने वाला)	तेजसार रास जि जि. रास अगडदत्त रास
0	ज (जी) 530.2	राक्षस की पुत्री सहायक	ते रास अगड़दत्त रास
0	ज (जी) 534	राक्षस ने अपना रहस्य बताया	तेजसार रास

8. झ (एच) परीक्षा सम्बन्धी अभिप्राय-

0	झ (एच) 324	वर कसौटी	भी रा चौ
0 +	झ (एच) 381	वधू कसौटी (सिंहल द्विप की पद्मिनी)	ढो मा चौ
0	झ (एच) 411	सत् परीक्षा	,,
0	झ (एच) 452	सत् परीक्षा (भेष बदल कर)	मा का चौ ढो मा चौ
0 +	झ (एच) 681.3 2 1	वर कसौटी-कार्य पूरा करना (विवाह की शर्त)	तेजसार रास अ रास भी रा चौ
0 +	झ (एच) 945	पान का बीडा उठाना प्रतीक कार्य भार लेने का	मा का चौ तेजसार रास
0 +	झ (एच) 1236 2	खोज मे (नायिका) साधु सहायता	अगडदत्त रास
0	झ (एच) 1236 2	खोज मे बीहड मार्ग	मा का चौ तेजसार रास अगडदत्त रास भी. रा. चौ.

0	झ (एच) 1385.3	खोज खोयी हुई पत्नी और प्रेमिका की	मा का चौ. ते रास
	1561 7 1	नायिका प्राप्ति के लिए युद्ध	अ रास ते. रास मा का चौ. ढो. मा. चौ.
0	झ (एच) 1556 4	प्रेम मे सत्यता की परीक्षा	मा. का चौ. ते रास अ. रास ढो. मा. चौ.

9. ट (जे) ज्ञान एवं बुद्धि विषयक अभिप्राय

0 +	ट (जे) 882 3	प्रेम पीडित (वियोगी) को ढाढस	मा का. चौ ते. रास अ. रास
0 +	ट (जे) 1115 10 2	चतुर मंत्री—पुत्र नायक का साथी	तेजसार रास
0 +	ट (जे) 1145	पक्षी एवं पशु की सहायता से (नायिका) का पता लगाना	अ रास मी रा. चौ
0 +	ट (जे) 673 1 2	झूठे स्वयवर के ढोंग से नायक का पता लगाना	मी रा. चौ

10 ठ (के) धोखे विषयक अभिप्राय

0	ठ (के) 714 2	पुरुष को छुपा कर रखना (नायिका द्वारा)	मा का चौ.
0	ठ (के) 1840 0 2	स्त्री का पुरुष वेश	तेजसार रास
0	ठ (के) 1961	कपटी साधु	"
0	ठ (के) 2111 2	प्रेम निवेदन ठुकराये जाने पर झूठा अभियोग	तेजसार रास
0	ठ (के] 2114	नायक पर झूठा अभियोग व्यभिचार का	मा का. चौ ते रास
0	ठ (के) 2111 0.1	कपटी भाई	जि जि रास
0	ठ (के) 2221	ईर्ष्यालु सौत (सोतिया डाह)	ढो मा चौ तेजसार रास

0 ठ (के) 2289	खल नायक	ढो मा, चौ. ते. रास अगडदत्त रास दुर्गा सातसी, स्थुली भद्र छत्तीसी

11. ड (एल) भाग्य परिर्तन विषयक अभिप्राय

0 + ड (एल) 161	गणिका का किसी के प्रति एक निष्प्रेम	मा का चौ

12 ढ (एम) भविष्य निर्माण, भविष्यवाणी शाप आदि से सम्बन्धित अभिप्राय

0 + ढ (एम) 130	प्रेमिका ढूढने जाने पर राह मे दूसरी स्त्री से भी विवाह	तेजसार रास
0 + ढ (एम) 149 1	एक साथ विवाह की प्रतिज्ञा	तेजसार रास भी रा चौ
0 + ढ (एम) 302	भविष्यवाणी	मी. रा चौ अगडदत्त रास दुर्गा सातसी तेजसार रास
0 + ढ (एम) 310 2	पुत्री के विवाह की भविष्यवाणी	"
0 + ढ (एम) 310 2 2	स्वामी से मिलाप की भविष्यवाणी	" अ रास भी रा चौ
0 + ढ (एम) 310	खोज मे सफलता (नायक या नायिका को भविष्यवाणी द्वारा.	" तेजसार रास अगडदत्त रास
0 ढ (एम) 314	पुत्र चक्रवर्ती राजा बनेगा	तेजसार रास भी ह चौ.
0 ढ (एम) 314 1	पुत्री रानी बनेगी	तेजसार रास
0 + ढ (एम) 414 13 2	इन्द्र का शाप अप्सरा को	मा का चौ.
414 13 3	इन्द्र का शाप पत्थर बना देना	"
0 + ढ (एम) 4117 6 1	शाप नर्तनी बनी	"
0 + ढ (एम) 420	स्पर्श से शाप मुक्ति (यहाँ विवाह करने से)	"
0 + ढ (एम) 430	शाप पत्थर बनो	"

	करने पर	अगडदत्त रास तेजसार रास
। द (क्यू) 112 3	पुरस्कार—गाव दिये जाना	,,
0 + द (क्यू) 140	सुप्तावस्था मे दूरस्त प्रेमिका के पास पहुँचाया जाना (व्यतरी-द्वारा)	,,
0 द (क्यू) 213	दान से अहकार	मा का चौ.
। द (क्यू) 380	दण्डित कार्य (निषिद्ध कार्य करना)	जि. जि. रास
0 द (क्यू) 431	दण्ड-निष्कासन	मा. का चौ
0 द (क्यू) 433	दण्ड—कैद किया जाना	तेजसार रास
द (क्यू) 467	दण्ड—नदी मे फैंका जाना	,,

16. घ (आर) अपहरण तथा रक्षा विषयक अभिप्राय

0 + घ (आर) 10	अपहरण नायक का	तेजसार रास
+ घ (आर) 11 1	रक्षा नायिका उपनायिका की (राक्षस की कैद से)	,,
। घ (आर) 22	अपहरण मन्त्र वल से	,,
। घ (आर) 111 1 3	रक्षा-राक्षस से नायिका द्वारा नायक की	,,
0 घ (आर) 111.14	देव (राक्षस) को मारकर नायक द्वारा वदिनी नायिका का उद्धार	तेजसार रास
घ (आर) 131 10	रक्षा—साधु-द्वारा	,,
+ घ (आर) 170	रक्षा पागल हाथी से शेर से	,, भी ह चौ.
0 । घ (आर) 220	रक्षा-वेश वदल कर	तेजसार रास

17. न (एस) अप्राकृतिक क्रूरता विषयक अभिप्राय

0 न (एस) 31	क्रूर सौतेले भाई	तेजसार रास जि जि रास
0 न (एस) 31 1	क्रूर सौत	ढो मा चौ

18. प (टी) प्रेम और विवाह यौन सम्बन्धी अभिप्राय

0 + प (टी) 11	प्रेमोदय प्रत्यक्ष दर्शन से	ढो मा चौ तेजसार रास

0	प (टी) 11.1	प्रेमोदय नायक या नायिका के रूप गुण की प्रशंसा सुनकर	दुर्गा सात्तसी अगडदत्त रास भी रा चौ.
0	प (टी) 11.3	प्रमोद स्वप्न दर्शन से	ढो. मा चौ
	प (टी) 12	नायक के जन्मते ही ज्योतिषियो द्वारा भविष्यवाणी	तेजसार रास
0	प (टी) 12 1	नायिका के जन्मते उसके विवाह आदि की ज्योतिषियो द्वारा भविष्यवाणी	,, अगडदत्त रास ते रास
0	प (टी) 22	पूर्व निर्धारित पति पत्नी	भी रा. चौ
0	प (टी) 22 3	पूर्व जन्म की प्रीति की स्मृति	,, मा का. चौ.
0	प (टी) 22 2 3	पूर्व निर्धारित पति पत्नी	,, भी रा चौ.
0 +	प (टी) 24	प्रेम वर्णन (सयोग पक्ष मे)	प्राय. सभी
0 |	प (टी) 24 1	विरह पीडित होना	ढो. मा चौ.
	प (टी)	24 9 2 ग्रीष्म ऋतु	मा का. चौ
	प (ट)	24 9 2 वर्षा ऋतु	ढो मा चौ
	प (ट)	24 9 4 शरद ऋतु	मा का. चौ.
0	प (टी) 51	प्रेम सम्बन्ध घटक के रूप मे-पक्षी तोता हस	भी रा चौ तेजसार रास
+	प (टी) 52	प्रेम सम्बन्ध घटक के रूप मे धात्री	,,
0	प (टी) 55 1	प्रिय खोज मे लगी नायिका	,,
0 +	प (टी) 55.2.1	प्रिय के पास सन्देश भेजना तोता दाढी हस	ढो मा चौ मा का चौ
0	प (टी) 66	प्रिय प्राप्ति हेतु पूजा	,,
	प (टी) 66 1	देवी (पार्वती)	तेजसार रास
0 +	प (टी) 66 1	चक्रेश्वरी देवी	भी रा चौ.
	67 2	शिव	ढो मा चौ
+	प (टी) 69 2	बचपन मे विवाह	ढो मा चौ.
	प (टी) 75	प्रेम वाचिता स्त्री का प्रतिशोध लेना	तेजसार रास

0	प (टी) 75.0 2.	देवता को उपस्थिति में मानव को वरण करने वाला नायक	ढो मा चौ.
0	प (टी) 81	प्रेम में मृत्यु	मा. का. चौ.
0	प (टी) 91 1	राक्षस पुत्री प्रेमिका	तेजसार रास
	प (टी) 91.4	नीच स्त्री से प्रेम	जि. जि. रास
0 +	प (टी) 104	विवाह हेतु युद्ध	ढो. मा. चौ. मा. का चौ तेजसार रास
0	प (टी) 111	मानव और परा मानव का विवाह	मा. का. चौ
0	प (टी) 210	सती पत्नी	" ढो. मा. चौ
	प (टी) 212	वियोग में मरने वाला प्रेमी युगल	मा. का. चौ
0 |	प (टी) 212	प्रेमी की मृत्यु सुन मृत्यु	मा का. चौ
0	प (टी) 252 2	सौतिया डाह	ढो. मा. चौ.
0 +	प (टी) 257 2 1	सौतिया डाह नही	तेजसार रास
	प (टी) 117 12	मूर्ति से किसी युवक का विवाह	मा. का. चौ
0 +	प (टी) 511.10 3	गर्भाधान-साधुप्रदत्त फल	भी. रा. चौ
9	प (टी) 548	जन्म वरदान से (शिव से)	मा का चौ.
0	प (टी) 548.1	जन्म प्रार्थना से यात्रा से	" ढो. मा. चौ
0	प (टी) 1515	अति प्राकृत जन्म	मा का चौ. दुर्गा सातसी तेजसार रास भी ह. चौ

19. व (ह्वी) धर्म और धार्मिक अनुष्ठान विषयक अभिप्राय

		अ. रास
+ व (ह्वी) 310	धार्मिक विश्वास (असत्य भाषण से सेलग यक्ष की पूंछ से पानी में गिरना)	जि जि. रास
+ व (ह्वी) 420	अज्ञान से नायक के मार्ग में	मा. का चो

	मुसीबत आना	तेजसार रास
		अगडदत्त रास
		जि. जि. रास
+ व (व्ही) 420	नाव टूटना जंगल मे भटकना	,,
0 व (व्ही) 462.13	दुष्ट तपस्वी का अपनी जादुई	तेजसार रास
	चमत्कारी शक्तियों का, गलत	अगडदत्त रास
	ढंग से प्रयोग	दुर्गा सात्तसी
0 + व (व्ही) 500	ससारी प्रेम झूठा धर्माचरण	तेजसार रास
	के लिए ससार से विरक्ति	अगडदत्त रास
		भी रा. चौ.
		सेवुली भद्र
		छत्री सी
		जि. जि. रास

20. (डब्ल्यू) चारित्रिक विशेषतायें विषयक अभिप्राय

टिप्पणी 'द' वर्ग से इस वर्ग का विभेद 'गुण' और कार्य के आधार पर किया गया है। उदाहरणार्थ परोपकार जब 'गुण' रूप मे है तब 'भ' वर्ग के अन्तर्गत आयेगा। (जैसे राजा विक्रम) और जब कार्य रूप मे है तब 'द' वर्ग के अन्तर्गत। यह विभेद बहुत सूक्ष्म है।

0 + भ (डब्ल्यू) 20	परोपकार (विक्रम वेताल)	मा. का. चौ.
0 + भ (डब्ल्यू) 27	कृतज्ञता (बन्धन मे पड़े मनुष्य को छुडाना)	तेजसार रास
0 + भ (डब्ल्यू) 150	ईर्ष्यालू भाई	
0 + भ (डब्ल्यू) 154,8,	कृतघ्न पशु-पक्षी	तेजसार रास
		ढो. मा. चौ.
		तेजसार रास
		भी. ह. चौ.

21. य (जेड) अन्य विविध अभिप्राय समूह

य (जेड) 71 5 2	सात समुद्र पार यात्रा नायक की	जि. जि. रास
0 य (जेड) 71 6	प्रतीकात्मक संख्या सात समुद्र	,,
	सातपुर सात लोक	तेजसार रास
		मा. का. चौ.
0 य (जेड) 175 2	प्रेमियो द्वारा प्रतीकात्मक सन्देश	अगडदत्त रास
		ढो. मा. चौ.
		मा. का. चौ.

0 य (जेड) 220	नायक की असाधारण सफलतायें प्रयास	ढो. मा चौ. मा का चौ तेजसार रास अगड़दत्त रास भी. ह चौ. जि. जि. रास दुर्गा सातसी
0 य (जेड) 359	शाप के अनूठे अपवाद (शाप मुक्ति के उपाय)	मा का. चौ.

स्टिथ थामसन द्वारा वर्गीकृत अभिप्रायों एव कुशल लाभ के कथा काव्यों के अभिप्रायों का अध्ययन निम्न तालिका द्वारा किया जा सकता है

अभिप्राय वर्ग	स्टिथ थामसन अभिप्राय	कुशललाभ के काव्यों के अभिप्राय	कुल अभिप्राय
1 धर्म गाथा अभिप्राय	55	7	63
2 पशु पक्षी विषयक अभिप्राय	26	13	39
3 वर्जन या निषेध विषयक अभिप्राय	12	13	25
4 जादू और रूपान्तर	83	28	111
5. मृतक विषयक अभिप्राय	29	5	34
6 चमत्कार विषयक अभिप्राय	26	15	41
7 राक्षस शक्ति विषयक अभिप्राय	7	4	11
8 परीक्षायें	16	11	27
9 ज्ञान एव वुद्धि विषयक अभिप्राय	17	5	22
10. धोखे विषयक अभिप्राय	5	8	13
11. भाग्य का पलटना	1	1	2
12. भविष्यवाणी व शाप आदि	16	14	30
13. अवसर तथा भाग्य विषयक	15	22	37
14 समाज विषयक	64	7	71
15. पुरस्कार तथा दण्ड विषयक	7	10	17
16. अप्राकृतिक क्रूरता	3	2	5
17. अपहरण तथा रक्षा विषयक		8	8

18. प्रेम और विवाह यौन सम्बन्धी	13	38	69
19 धर्म एव धार्मिक अनुष्ठान	54	5	59
20 चारित्रिक विशेषता विषय	6	4	10
21 अन्य विविध समूह	5	5	10

उपरोक्त तालिका के आधार पर हम देखते हैं कि कुशललाभ के कथा काव्यों मे प्रेम और विवाह यौन सम्बन्धी अभिप्रायो का अधिक प्रयोग मिलता है। जादू और रूपान्तर विषय अभिप्राय द्वितीय स्थान पर आते हैं जबकि भविष्यवाणी व शाप विषयक अभिप्रायो का तृतीय स्थान है। भाग्य परिवर्तन, जादू और वर्जना सम्बन्धी अभिप्राय प्राय समान रूप मे प्रयुक्त हुये हैं।

निष्कर्ष रूप मे यह कहा जा सकता है कि कवि के काव्यो मे प्रयुक्त अभिप्राय: के विविध वर्गों द्वारा कथानक ने तद्युगीन काव्य परम्परा मे कथा निर्माणक तत्वो का नवीन एव असाधारण प्रयोग किया है जो लोक तत्वों के अन्तर्गत किसी भी रचना को लोकप्रिय और लोकाभिव्यक्ति की दृष्टि से सम्पुष्ट बनाने मे समर्थ होते हैं। इन लोक तत्वो की आधार शिला के कारण ही कुशललाभ के कथा काव्यो की गरिमा और लोकप्रियता है जो लोक के साथ अभेद्य सम्बन्ध बनाये रखने मे समर्थक एव सक्षम है।

उपसंहार

जैन साहित्य का भण्डार विशाल है । इसमे प्राणी मात्र के कल्याण की भावना निहित है । जैन कथा साहित्य में तत्कालीन सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक व आर्थिक परिस्थितियो का प्रतिबिंब तो मिलता ही है साथ ही इन कथाओ मे आत्मा का प्रतिबिंब भी बहुत ही स्पष्ट रूप से लक्षित होता है । सामान्यत ये जैन कथायें धर्म नीति एव सदाचार से सम्बन्धित हैं । इन कथाओ का आधार ऐतिहासिक पौराणिक एव काल्पनिक रहा है ।

इस युग मे अनेक जैन एव जैनेतर राजस्थानी कवि हुये हैं । इन्होने राजस्थानी के अतिरिक्त अन्य भाषाओ मे भी साहित्य रचना की हैं । वास्तव मे देखा जाये तो हमारे राजस्थानी साहित्य का विकास इन्ही राजस्थानी कवियो के कारण हुआ है । राजस्थानी साहित्य के प्रणेता जैन कवि एव उनका साहित्य निम्नलिखित हैं ·

1 विनयसमुद्र ये उपकेश गच्छीय वाचक हर समुद्र के शिष्य थे । इनका समय वि स 1583 से 1614 तक है । इनकी अब तक प्राप्त रचनाओ की सख्या बीस है । इन्होने कथा काव्य अधिक लिखा है ।

2 हीर कलश खरतरगच्छीय सागरचन्द्र सूरि शाखा के कवि थे । इनका जन्म स. 1595 माना जाता है । ये ज्योतिष के ज्ञाता थे । अब तक इनकी 28 रचनायें उपलब्ध हो चुकी हैं ।

3 हेमरत्नसूरि का समय अनुमान से स 1616 से 1673 माना जाता है । इनकी 'गोरा बादल पद्मिणी चऊपई 1645' प्रसिद्ध है । यह वीर, शृगार एव हास्य रस का कथा काव्य है ।

4 कुशललाभ के समकालीन जैन साहित्यकारों मे समयसुन्दर प्रमुख हुये है । इनका समय स 1620 से 1702 माना जाता है । इनकी अनेक साहित्यिक रचनायें है । जिनका उल्लेख श्री नाहटा जी ने समय सुन्दर कृत 'कुसुमाजलि' के सपादन मे किया है ।

5 ब्रह्म जयसागर का समय 1580 से 1655 तक माना जा सकता है । कवि की प्रमुख रचनायें 11 है । इन्होने गीतो की रचना अधिक की है ।

6. सत वीरचन्द्र भट्टारक लक्ष्मीचन्द के शिष्य थे। इनकी प्रमुख रचनायें आठ हैं इनमें फागु गीत रास एव कथा को प्रमुख रूप से लिया गया है।
7. ब्रह्मरायमल उस काल के राजस्थानी विद्वानो मे से एक हैं इनका नाम विशेष उल्लेखनीय है। इनकी सभी कृतियाँ कथा काव्य है। इनका साहित्य काल 1615 से 1636 रहा है।

इन कवियो के अतिरिक्त भी अनेक जैन कवि हुये है जिन्होने राजस्थानी साहित्य के विकास मे योग दिया है। अब हम इस युग के जैनेतर कवियो को देखेंगे।

संत दादू दयाल जी का जन्म 1601 मे माना जाता है। इनकी रचनाओ का सग्रह 'वाणी' के नाम से प्रसिद्ध है इनमे ज्ञान, सत्सग, गुरु-भक्ति, वैराग्य, माया जीव और ब्रह्म आदि की चर्चा है। इनके अतिरिक्त सत रज्जब जी, स्वामीलालदास जी, सन्त मावजी, स्वामी चरणदास जी, श्री जसनाथ जी आदि राजस्थान के सत कवि हुये है। ये सभी दादू सप्रदाय से प्रभावित थे। अत. धार्मिक ग्रंथो की रचनायें ही इनके द्वारा सभव हुई है।

राजस्थानी के जैन एव जैनेतर कवियो मे कुशललाभ व उनके साहित्य का विशिष्ट स्थान है। कुशललाभ का, जैन कवि होते हुये भी राजस्थानी प्राकृत, अपभ्रंश एव सस्कृत आदि भाषाओ पर पूर्ण अधिकार था। कुशललाभ की अब तक प्राप्त 20 रचनायें लघु और वृहत सभी कोटि की हैं। इन रचनाओ मे कथा काव्य ही कुशललाभ ने अधिक लिखे है। ये कथायें लौकिक प्रेम कथायें होने पर भी काव्य साहित्य मे उच्च कोटि की मानी जाती हैं। कुशललाभ का कथा साहित्य मध्यकालीन राजस्थानी साहित्य की अत्यन्त महत्वपूर्ण उपलब्धि है। इनकी कथायें शृगार रस-प्रधान होने पर भी वीर रस को भी स्वय मे समोकर चलती हैं और इनकी परिणति शात रस मे होती है।

कवि ने राजस्थानी साहित्य मे प्राचीन काल से प्रचलित प्रेमाख्यान परम्परा को नवीन ढग से अपनाया है। इसमे कवि की मौलिकता एव अनोखी सूझ बूझ का परिचय मिलता है। इन्ही कथाओ को लेकर बाद मे भी अनेक कथाओ का प्रणयन हुआ है। राजस्थानी प्रदेश मे नारी को आदर्श रूप मे ही चित्रित कर कवि ने नारी सौन्दर्य का आदर्श स्थापित किया है।

एक ओर दाम्पत्य प्रेम का पवित्र सन्देश लेकर 'माधवानल कामकदला' एव 'ढोला मारवणी' 'तेजसार' 'भीमसेन राजहस' 'अगडदत्त' की ये कथायें आई है वहाँ दूसरी ओर धार्मिक उपदेश पूर्वभव सयम आदि धर्म की शिक्षा भी ये प्रदान करती है।

राजस्थान के प्राकृतिक दृश्यो का वर्णन भी इन कथा काव्यो मे यथार्थ एव कलात्मक रूप से हुआ है। ऋतु, प्रकृति एव पशुओ का वर्णन कवि ने बड़ा ही सजीव एव यथार्थ रूप मे किया है।

ये आख्यान काव्य लौकिक हैं और विरह के आर्द्र क्षण, दाम्पत्य का माधुर्य इनमे है। अत ये कथा काव्य राजस्थानी साहित्य मे विप्रलम्भ शृंगार के अनोखे व उच्च कोटि के मील स्तम्भ है। छन्दो की विविधता के साथ ही प्रौढ कलात्मकता की झलक इनमे अपूर्व रूप से दिखाई देती है। अभिव्यक्ति में कला व भावो का ऐसा समन्वय राजस्थानी साहित्य की अन्य कृतियो मे मिलना दुर्लभ है।

कुशललाभ के सभी आख्यान काव्यो के शीर्षक नायक व नायिका को लेकर रखे गये हैं ये कथायें वृहत् होने पर भी श्रुति मधुर एव विषय की अनुभूति एव रसास्वादन के साथ कथानक की अटूट शृंखला के कारण लघु प्रतीत होती हैं। कही भी इनमे अनावश्यक विस्तार नही होने पाया है। लगता है कवि ने पाठको की रुचि का ध्यान रखते हुये इनकी सरचना की है।

आख्यान काव्यो मे कथानक रूढियो एव काव्य रूढियो का प्रयोग जहाँ परम्परा से प्रचलित है वहाँ कहीं-कही परम्परा से हटकर नवीन कथानक रूढियों का प्रयोग भी कवि ने किया है जो कवि की अपनी मौलिकता का परिचायक है। इन कथानक रूढियो का प्रयोग बडी ही चारुता से हुआ है जिससे कथानक तो सशक्त एव गतिमान हुआ ही है साथ ही कथा मे रोचकता का समावेश भी इन्ही के द्वारा हो पाया है।

कवि के आख्यानो के सभी पात्र उच्चकुल से सम्बन्ध रखने वाले हैं। वे अपने जातीय जीवन का पूर्ण प्रतिनिधित्व करते हैं। पात्रो के चरित्र चित्रण मे कवि ने सूक्ष्म व्यजना से तो काम नही लिया है फिर भी मानवीय गुणो की चारुता से वे रिक्त नही है। अति मानवीय तत्त्व भी कथा मे आये हैं जिनका लोकोन्मुखी कृति मे होना स्वाभाविक ही है।

विप्रलभ रस की प्रधानता के कारण कवि विरही हृदय की गहराईयों को स्पर्श कर विरहिणी के दुख को व्यक्त करने मे सफल हुआ है। दाम्पत्य जीवन के सुख दुख मे हमे भावो की कोमलता ही सर्वत्र दृष्टिगोचर होती है। वियोग के साथ सयोग को भी अभिव्यक्ति मिली है। परन्तु यह सयोग मर्यादा प्रदान है। मासल सौन्दर्य के लिये मर्यादा का उल्लघन कही भी नही हुआ है। सयोग क्षणो की मधुर चेष्टाओ, हाव भावो व हास्य विनोद का कवि ने कम ही चित्रण किया है परन्तु जो कुछ भी है वह मानव प्रेम का पवित्र एकनिष्ठ व निश्छल स्वरूप है।

इन पद आख्यानो में हमे कर्म एव फल का संगम मिलता है। पूर्व जन्म मे जैसा कर्म किया गया है उसी के अनुरूप फल की प्राप्ति कराना कवि का लक्ष्य रहा है। यह सिद्धान्त जैन धर्म से अनुप्राणित है।

कथा काव्य की रचना शैली उत्कृष्ट है। भाषा मे सहज माधुर्य गुण है। लोक की अनूठी सहज मधुर भाषा की रचनायें होने के कारण मध्य युगीन राजस्थानी साहित्य मे ये कृतिया अमर हो गई हैं।

कवि के भाषा प्रयोगो मे विविधता है परन्तु क्लिष्टता या कृत्रिमता का समावेश वहा नही हो पाया है। मुहावरो एव लोकोक्तियो का उचित प्रयोग काव्य के सौन्दर्य एव सौष्ठव को ही बढाता है। प्रतीको का सहारा भी कवि ने अपने ही ढग से लिया है जो कवि की मौलिकता का परिचायक है।

इन कथा काव्यो मे सवादो की बहुलता है फिर भी समस्त सवाद सशक्त सप्राण, भावानुकूल एव अवसरानुकूल है।

राजस्थानी प्रदेश की तत्कालीन सस्कृति एव समाज का चित्रण भी इन कथा-काव्यो मे हुआ है। इन कथाओ मे हमे स्थापत्य चित्र ललित सगीत एव नाट्य कला आदि के अनेक सकेत मिलते है। सामाजिक जीवन मे नारी की स्थिति तथा उसकी उच्च सत्ता का बोध इन कथाओ मे होता है। सामाजिक जीवन के आधार, रहन-सहन, खान-पान, रीति-रिवाज, पर्व एव त्यौहार, विश्वास एव प्रथाये, वस्त्राभूषण शृगार प्रसाधान, मनोविनोद, विवाह के प्रकार आदि बहुमुखी जीवन क्रियाये इसमे व्यजित हुई हैं। आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक, भौगोलिक जीवन का परिचय भी सक्षिप्त रूप मे इन कथाओ मे मिलता है फिर भी ये कथाये तत्कालीन समाज का पूर्ण परिचय देने मे सक्षम है। इन कथाओं मे मध्ययुगीन सामन्ती जीवन और लोक जीवन का स्पन्दन स्पष्ट दिखाई देता है।

अत अनेक दृष्टियो से कुशललाभ के आख्यान काव्यो का राजस्थानी साहित्य मे महत्व निर्विवाद है। कुशललाम के यह काव्य ऐसे है जहा युगीन साहित्य की प्रवृत्तियो के साथ अन्य प्रवृत्तियो को भी उच्च धरातल पर अभिव्यक्त किया गया है। 'पिंगल शिरोमणि' के आधार पर यदि कुशललाभ को रीति कालीन प्रथम, आचार्य कहा जाय तो कोई अतियुक्ति नही होगी। इस ग्रथ का रीति कालीन कवियो और उनके ग्रथो पर प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में प्रभाव अवश्य पडा है। यह पृथक से भी शोध का विषय हो सकता है।

इस प्रकार हम देखते है कि कुशललाभ अपने समय के राजस्थानी साहित्य के एक सशक्त एव उच्च-कोटि के विद्वान कवि हुये हैं। इनकी रचनायें राजस्थानी साहित्य की अक्षुण्ण निधि हैं।

परिशिष्ट

संदर्भ ग्रंथ

हिन्दी, राजस्थानी एवं गुजराती

1 अपभ्रंश साहित्य — डॉ० हरिवंश कोछड़
2 अकबरी दरबार के हिन्दी कवि — डॉ० सरयू प्रसाद अग्रवाल
3. आदि-कालीन हिन्दी साहित्य शोध — डॉ० हरीश
4 आनन्द काव्य महोदधि
5 आधुनिक हिन्दी साहित्य — डॉ० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय
6. ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह — श्री अगरचन्द नाहटा
7 ऐतिहासिक निबन्ध राजस्थान — डॉ० गोपीनाथ शर्मा
8 काव्यादर्श
9 काव्य दर्पण
10 गुजराती और उसका साहित्य — पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश'
11 गुजराती साहित्य का नवीन इतिहास — प्रो० सुरेश चन्द्र त्रिवेदी तथा प्रो विष्णु प्रसाद जानी
12 चिन्तामणि भाग 1 व 2 — आचार्य रामचन्द्र शुक्ल
13 जातक कथायें
14. जातक कालीन भारतीय संस्कृति — प० मोहनलाल मेहता
15 जायसी ग्रंथावली — आचार्य रामचन्द्र शुक्ल
16 जैन भक्ति काव्य की पृष्ठभूमि — डॉ० प्रेम सागर जैन
17. जैन कथाओं का सांस्कृतिक अध्ययन — श्री चन्द जैन
18 जैन साहित्य और इतिहास — नाथूराम प्रेमी
19 जैन ग्रंथ और ग्रंथकार — फतेहचन्द बेलाणी
20 जैन कथा साहित्य — प्रो फूलचंद जैन सारंग
21, जैन गुर्जर कविओ — श्री मोहनलाल दलीचंद देसाई
22 जैन धर्म और दर्शन
23. जैन साहित्य का वृहत् इतिहास भाग 1, 2, 3 व 4

24. डिंगल साहित्य — डॉ० जगदीश प्रसाद
25 डिंगल साहित्य — डॉ० गोवर्द्धन शर्मा
26 ढोला मारू रा दूहा — संपादक त्रय
27 ढोला मारू — कृष्ण विहारी सहल
23 ढोला मारू रा दूहा — प्रो शम्भुसिंह मनोहर
29. ढोला मारू रा दूहा एक प्राचीन प्रेम गीत
30 देव और उनकी कविता — डॉ० नगेन्द्र
31 दक्खिनी हिन्दी का प्रेम गाथा काव्य — डॉ० दशरथराज
32 दो हजार वर्ष पुरानी कहानियाँ — डॉ० जगदीश चन्द्र जैन
33 धर्मशास्त्र का इतिहास — काणे
34. धर्मसूत्र
35. धर्मशास्त्र का इतिहास — श्रीकान्त
36 नागरी प्रचारिणी सभा की खोज रिपोर्ट
37. निमाडी लोकगीत — श्री रामनारायण उपाध्याय
38 पल्लव — पंत
39. पद्मावत — डॉ० वासुदेव शरण अग्रवाल
40 पद्मावत मे लोक तत्व — श्री रविन्द्र भ्रमर
41. प्रकृति और काव्य — डॉ० रघुवंश
42 प्राकृत विमर्श — डॉ० सरयू प्रसाद अग्रवाल
43 पृथ्वीराज रासो मे कथानक रूढ़ियाँ — डॉ० व्रजविलास श्रीवास्तव
44 प्राचीन काव्यो की रूप परम्परा — श्री अगरचन्द नाहटा
45 प्राकृत साहित्य का इतिहास — डॉ० जगदीश चन्द्र जैन
46 प्रामाणिक हिन्दी कोष — श्री रामचन्द्र वर्मा
47. प्राकृत कथा साहित्य और उसकी विशेषतायें — मरुधर केशरी अभिनन्दन ग्रथ
48. पालि साहित्य का इतिहास — श्री भरतसिंह उपाध्याय
49 ब्रज लोक कहानियाँ — डॉ० सत्येन्द्र
50 ब्रज लोक साहित्य का अध्ययन — डॉ० सत्येन्द्र
51 भारतीय लोक साहित्य — श्री श्याम परमार
52 भारतीय प्रेमाख्यान की परम्परा — श्री परशुराम चतुर्वेदी
53 भारतीय धर्म एव संस्कृति — श्री बुद्ध प्रकाश
54 भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता का विकास — श्री बी एन लूनिया

55	भारतीय संस्कृति मे जैन धर्म का योगदान	श्री हीरालाल जैन
56	भोजपुरी लोक गाथा का अध्ययन	डॉ० कृष्णदेव उपाध्याय
57	भारतीय प्रेमाख्यान काव्य	डॉ० हरिकान्त श्रीवास्तव
58.	भारतीय सस्कृति का विकास	डॉ० मगलदेव शास्त्री
59	मनुस्मृति	
60	मध्यकालीन प्रेम साधना	श्री परशुराम चतुर्वेदी
61	मध्यकालीन धर्म साधना	श्री हजारी प्रसाद द्विवेदी
62	मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य का लोक-तात्विक अध्ययन	डॉ० सत्येन्द्र
63	मध्यकालीन हिन्दी काव्य मे भारतीय सस्कृति	श्री मदन गोपाल गुप्त
64	मध्यकालीन प्रवन्ध काव्यो मे कथानक रूढिया	श्री ब्रजविलास श्रीवास्तव
65	मध्यकालीन भारतीय सस्कृति	डॉ० गोरीशकर हीरानन्द ओझा
66	मध्यकालीन काव्य	विनयकुमार मुरलीधर श्रीवास्तव
67	मध्ययुगीन हिन्दी काव्य मे समाज	डॉ० गायत्री वैश्य
68	मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य मे नारी भावना	उषा पाण्डे
69	मध्ययुगीन काव्य साधना	रामचन्द्र तिवारी
70	मध्यकालीन डिंगल काव्य मे नारी (अप्रकाशित शोध प्रवन्ध)	चेतन कुमारी
71	मध्यकालीन हिन्दी कवयित्रिया	सावित्री सिन्हा
72	मध्यकालीन हिन्दी सन्त विचार और साधना	डॉ० केशनी प्रसाद चौरसिया
73.	मध्यकालीन भारत	डॉ० डी पी. गुप्ता
74	मध्यकालीन भारत	लेनपूल
75	मध्यकालीन भारत का इतिहास	ईश्वरी प्रसाद
76	मध्ययुगीन प्रेमाख्यान	श्याम मनोहर पाण्डेय
77	माधवानल कामकन्दला प्रवन्ध	सम्पादक, मजूमदार
78.	महाकवि पुष्पदन्त	डॉ० राजनारायण पाण्डेय
79	माधवानल नाटक	कवि केस
80	मालवी लोक गीत	डॉ० श्याम परमार
81	मुगलकालीन भारत	आशीर्वादीलाल श्रीवास्तव

82	मालवी लोकगीत एक विवेचनात्मक अध्ययन	डॉ० चिन्तामणी उपाध्याय
83.	मारवाड़ का इतिहास	विश्वेश्वर नाथ रेउ
84	मुहता नैणसी री ख्यात	नागरी प्रचारिणी सभा
85.	मुहता नैणसी री ख्यात	अनु० राम नारायण दूगड़
86.	महाभारत	
87.	मध्यकालीन राजस्थान का इतिहास	वी० एन० भार्गव
88.	मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य मे समाज चित्रण	गणेशदत्त
89.	मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य में प्रेम-गाथा काव्य और भक्ति के लोक-वार्ता तत्व	गौरी शंकर
90	राजस्थानी भाषा और साहित्य	मोतीलाल मेनारिया
91.	राजस्थान का इतिहास	डॉ० गोपीनाथ शर्मा
92	राजस्थानी भाषा और साहित्य	डॉ० हीरालाल माहेश्वरी
93	राजस्थानी लोककथा के कुछ मूल अभिप्राय	डॉ० कन्हैयालाल सहल
94	राजस्थानी लोक-साहित्य मे विरह प्रकृति और भक्ति	हनुमन्तसिंह देवरा
95.	राजस्थानी साहित्य कुछ प्रवृत्तिया	डॉ० मानावत
96	राजस्थान एव गुजरात के मध्यकालीन सन्त एव भक्त कवि	मदन कुमार जैन
97	राजस्थानी साहित्य की गौरवपूर्ण परम्परा	अगरचन्द नाहटा
98	राजस्थानी लोक कथायें	डॉ० कन्हैयालाल सहल
99	राजस्थानी शब्द कोष	श्री सीताराम लालस
100.	राजस्थान के जैन सन्त व्यक्तित्व एव कृतित्व	डॉ० कासलीवाल
101.	रामचरित मानस	तुलसीदास
102	राजस्थानी काव्य मे शृंगार भावना	डॉ० दयाकृष्ण विजयवर्गीय
103	राजस्थानी प्रेमाख्यान परम्परा और प्रगति	डॉ० रामगोपाल गोयल
104	राजस्थानी प्रेम कथायें	स० मोहन लाल पुरोहित
105.	राजस्थानी प्रेमाख्यान	सं लक्ष्मीनारायण गोस्वामी

106 राजस्थानी भाषा और साहित्य — नरोत्तम दास स्वामी
107 राजस्थानी साहित्य एक परिचय — नरोत्तम दास स्वामी
108 राजस्थानी साहित्य प्रगति और परम्परा — डॉ० सरनामसिंह शर्मा
109 राजस्थानी साहित्य का महत्व — स रामदेव चोखानी
110 राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारों की सूची — जयपुर
111 राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारों की ग्रंथ सूची भाग, 1,2 व 4 — सं डॉ० कासलीवाल
112 राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारों की ग्रंथ सूची भाग 3 — सं श्री अनूपचन्द न्यायतीर्थ
113 राजस्थानी साहित्य का इतिहास — डॉ० पुरुषोत्तम लाल मेनारिय
114 राजस्थानी साहित्य की रूपरेखा — पं मोतीलाल मेनारिया
115 राजस्थानी साहित्यके सदर्भ सहित श्री कृष्ण रुक्मिणी विवाह सबधी राजस्थानी काव्य — डॉ० पुरुषोत्तम लाल मेनारिया
116. रीति स्वच्छन्द काव्य धारा — डॉ० श्रीकृष्ण चन्द्र शर्मा
117 लोक साहित्य विज्ञान — डॉ० सत्येन्द्र
118 लोक-साहित्य — श्री नीलन विलोचन शर्मा
119 लोक-साहित्य की भूमिका — डॉ० कृष्ण देव उपाध्याय
120 साहित्यालोचन — आचार्य श्याम सुन्दर
121 सिंघी जैन ग्रंथमाला — सं हीरानन्द शास्त्री
122 साहित्य दर्पण — विश्वनाथ
123 सिद्ध साहित्य — डॉ० धर्मवीर भारतीय
124 हिन्दी काव्य धारा मे प्रेम प्रवाह — परशुराम चतुर्वेदी
125 हिन्दी जैन साहित्य का इतिहास — कामता प्रसाद जैन
126 हिन्दी जैन साहित्य परिशीलन भाग 1 व 2 — श्री नेमीचन्द्र जैन
127 हिन्दी जैन भक्ति काव्य और कवि — डॉ० प्रेम सागर जैन
128 हमारी परम्परा — स वियोगी हरि
129 हिन्दी प्रेमाख्यान काव्य — डॉ० कमलकुल श्रेष्ठ
130 हिन्दी प्रेम गाथा काव्य सग्रह — श्री गणेश प्रसाद द्विवेदी
131 हिन्दी के मध्यकालीन खड काव्य — डॉ० सियाराम तिवारी

132	हिन्दी जैन साहित्य पर विशद प्रकाश	जुगल किशोर मुख्तार
133	हिन्दी भक्ति साहित्य मे लोक-तत्व	रविन्द्र भ्रमर
134	हिन्दी साहित्य का वृहद् इतिहास भाग 1, 2, 16	स डॉ० राजवली पाण्डेय
135	हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास	डॉ० गणपति चन्द्र गुप्त
136.	हरियाणा प्रदेश का लोक-साहित्य	डॉ० शकरलाल यादव
137.	हिन्दी महाकाव्य का स्वरूप एव विकास	डॉ० शमुनार्यसिह
138	हिन्दी काव्य मे प्रकृति	श्री रामचन्द्र तिवारी
139	हिन्दी काव्य मे प्रकृति चित्रण	डॉ० किरण कुमारी गुप्ता
140	हिन्दी साहित्य कोष भाग 1	
141	हिन्दी के विकास मे अपभ्रश का योगदान	
142	हिन्दी नीति काव्य	डॉ० भोलानाथ तिवारी
143	हिन्दी महाकाव्यो मे नारी भावना	डॉ० श्याम सुन्दर व्यास
144	हिन्दी शब्द कल्प द्रुम	स प रामनरेश त्रिपाठी
145	हिन्दी कथा कोष	डॉ० भोलानाथ तिवारी
146	हिन्दू सस्कार	राजवली पाण्डेय
147.	राजस्थानी हिन्दी शब्द कोश भाग 1	आ० वदरी प्रसाद साकरिया

पत्रिकायें

1	नागरी प्रचारिणी पत्रिका	वाराणसी
2.	परम्परा	जोधपुर
3	मरु भारती	पिलानी
4	मरुवाणी	जयपुर
5	अणिमा	जयपुर
6	राजस्थान भारती	वीकानेर
7	वरदा	विसाउ
8	सम्मेलन पत्रिका	इलाहाबाद
9.	शोध पत्रिका	उदयपुर
10	हिन्दी अनुशीलन	प्रयाग
11	आलोचना	
12.	जैन भारती	
13.	साहित्य सन्देश	आगरा

14 उत्तर भारती

15. लोक कला — उदयपुर

16. वैचारिकी — बीकानेर

17 मज्झमिका — उदयपुर

18 जैन सिद्धान्त भास्कर

अंग्रेजी सन्दर्भ ग्रंथ

1	Origin and Development of Bengali Language	Dr S K Chatrjee
2	A History of Indian Literature	M. Winternitz
3	Brief History of Jaipur State	Fateh Singh Champawat.
4	Dictionary of World Literature	Joseph T Shiley
5	Folk Tales of Kashmir	
6	Pacifism & Jainism	Sukhlal Sanghavi
7	The Jain Religion and Literature Vol I Part I	
8	Jeysulmere - Report on the administration	
9	Papers regarding Jeysulmere	
10	Brief account of the Jeysulmere	
11	Jainism in Rajasthan	Kailash Chandra Jain
12	Mediaeval India	
13	The Folk Tales	Smith Thomson
14	The colden Bough	Frazer
15	Thirty decisive battles of Jaipur	Rao Bahbur Thakur Narendra Singh
16	Gujrat and its Literature	K M Munshi
17	Theory of Asethetice	Croche

Magazines

1 Journal of American Oriental Society

2 Joural of the Gujrat Reseaich Society Bombay

3 Journal of the Oriental Institute, Baroda

हस्तलिखित ग्रंथ

क्र	ग्रंथांक	शीर्षक	रचना काल	कवि
		अहमदाबाद ला. द ग्रं.		
1	1217	भीमसेन राजहस चौपई	1643	कुशललाभ
2	975	पार्श्वनाथ दशभव चरित्र	1621	,,
3		अगडदत्त रास		,,
		उदयपुर रा प्रा वि प्र		
4	602/2423	जगदवा छंद		,,
		डा जावलिया सग्रह		
5	1	ढोला मारू री चौपई	1617	,,
		जयपुर (श्री वियनचन्द्र ज्ञान भण्डार)		
6	37/80	थभण पार्श्वनाथ स्तवन		,,
7	37/31	नवकार मत्र		,,
		रा. प्रा. वि. प्र.		
8	5211	कछवाहो की ख्यात		
9	6060	गौडी पार्श्वनाथ छद		,,
10		सिहासन बत्तीसी		
		श्री कृपा शंकर त्रिपाठी संग्रह		
11	300	गौडी पार्श्वनाथ छद		,,
12	537	ढोला मारवणी चौपई	1617	,,
		जोधपुर रा. प्रा. वि प्र.		
13	26546	तेजसार रास	1624	,,
		जालौर मुनि कल्याण विजय संग्रह		
14	3592	तेजसार नो रास	अपूर्ण	
15	194/1124	तेजसार रास	1624	,,
16	194/1126	तेजसार रास	1592	जयमदिर
17	198/1155	माधवानलनी चौपई	1616	कुशललाभ
18	11/68	खरतरगच्छीय प्रतिक्रमण सूत्र		
19	126/725	श्रावक चार कुशलखरतरगच्छीय		
20	323/2336	खरतर श्रावक		
21	623/44	श्री तेजसार नो रास		
		पूना भण्डारकर आरियन्टल रिसर्च इस्टीट्यूट		
22		अगडदत्त रास	1624	,,
23	605	अगडदत्त रास चौपई	1624	,,

	अनूप संस्कृत लाइब्रेरी बीकानेर			
24		माधवानल कामकदला चरित्र	1616	कुशललाभ
25		ढोला मारू री चौपई	1617	,,
26		माधवानल कामकदला चोपई	1616	,,
27	49	दुर्गा सात्तसी	अपूर्ण	,,
28	68	दुर्गा सात्तसी		,,
	रा प्रा वि प्र बीकानेर			
29	122, 123, 124	खरतरगच्छ गुर्वावली		
30	1557	ढोला मरवण चौपई	1617	,
31	1650	माधवानल कामकदला चौपई	1616	,,
32	8373(31)	नवकार छंद		,,
33	6641–8	गौडी पार्श्वनाथ जिनस्तवन		
34	6654–25	स्तम्भन पार्श्वनाथ स्तवन		
35	1948	माधवानल भाषा कथा	17वी शदी	आलम
36	2039	तेजसार चौपई	1622	कुशललाभ
37	2041	अगड़दत्त चौपई	1679	ललित कीर्ति
38	6501	ढोला मारू चौपई सचित्र		कुशललाभ
39	1545	तेजसार नृप रास	1592	जयमदिर
40	1569	तेजसार चौपई	1592	जयमदिर
	श्री अभय जैन ग्रंथालय बीकानेर			
41	7744	शत्रुजय तीर्थ यात्रा वर्णन	अपूर्ण	कुशललाभ
42	87/4209	स्थूल भद्र छत्तीसी		,,
43	32870	कवित्त सवैया		,,
	श्री पूज्य जी का उपासरा बीकानेर			
44		भवानीछंद		,,
		महिमा भक्ति जैन ज्ञान भण्डार बड़ा उपाश्रय		
45	2570	जिनपालित जिनरक्षित सधि	1621	,,
46	2569	जिनरक्षित रास चौपई	1621	,,
		भरतपुर दि. जैन मन्दिर दीवान जी, कामा		
47	270	गुणु सुन्दरी चौपई	1648	,,